राम - कथा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

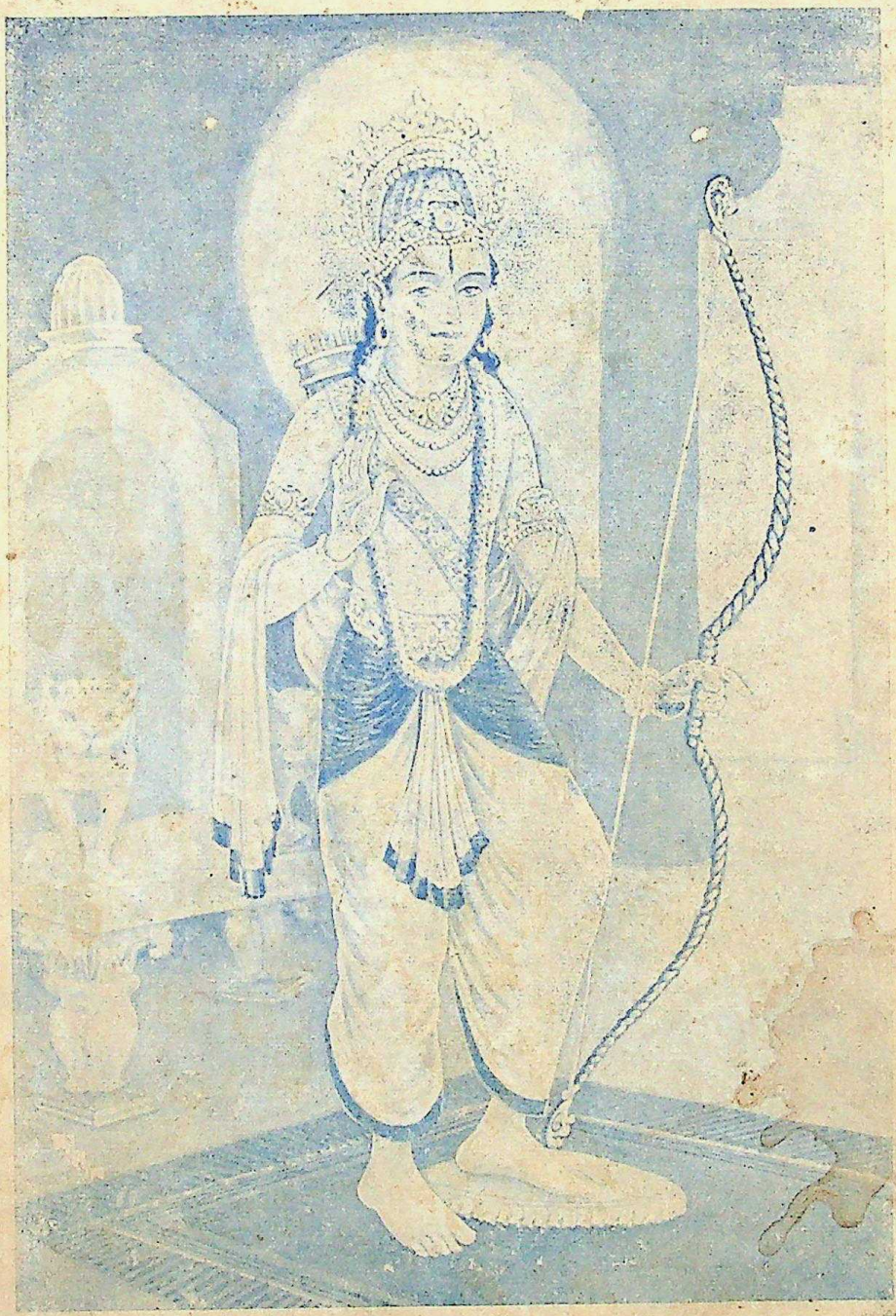

लेखक

पं० बाबूलाल पाण्डेय

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

* श्री रामचन्द्राय नमः *

राम-कथा

लेखक :

बाबूलाल पाण्डेय, एम० ए०

अवकाश प्राप्त अध्यापक

कान्यकुब्ज कालेज

लखनऊ

प्रकाशक :

प्रकाशन गृह, लखनऊ

सजिल्द १०·०० | १९७८ | अजिल्द ८·००

मुद्रक : नवज्योति प्रेस, लखनऊ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

समर्पण

अपने गुरु स्वर्गीय पण्डित हरिमङ्गल मिश्र

के चरण कमलों में

सादर समर्पित

4956

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भूमिका

श्री मैथिली शरण गुप्त ने लिखा है :

राम तुम्हारा चरित स्वयं ही काव्य है,
कोई कवि बन जाय सहज सम्भाव्य है।

राम चरित की यह गरिमा है। आदि कवि वाल्मीकि से प्रारंभ कर संस्कृत ही नहीं, अनेक भारतीय और विदेशी भाषाओं में राम चरित पर काव्यों की रचना हुई है। लाओस, थाईलैण्ड, कम्बोडिया, इंडोनेशिया आदि में राम कथा किसी न किसी रूप में प्रचलित है। राम कथा अत्यन्त मनोरंजक ही नहीं अत्यन्त उदात्त भी है। भगवान राम के चरित्र का दिग्दर्शन कराते हुए आदि कवि ने प्रारंभ ही में नारद से पूछा था —

को न्वस्मिन्सांप्रतं लोके गुणावान्कश्च वीर्यवान्
धर्मज्ञश्च कृतज्ञश्च सत्यवाक्यो दृढ़व्रतः
चादितेक्षा च को युक्तः सर्वेभूतेषु को हितः
विद्वान्कः कः समर्थश्च कश्चैकप्रियदर्शनः
आत्मवान्को जितक्रोधो द्युतिमान्कोऽनसूयकः
कस्य विभ्यति देवाश्च जातरोषस्य संयुगे ।।

ये गुण और जीवन में इन गुणों को मनुष्य के चोले में साकार और क्रियान्वित करने के कारण वे 'मर्यादा पुरुषोत्तम' कहलाने लगे—अर्थात् पुरुषों में सर्वोत्तम। इन गुणों और मर्यादाओं को सिद्धान्त रूप में मनुष्य को पालन करने चाहिए, किन्तु इन्हें वह अपनी कमज़ोरी के कारण कर नहीं पाता। किंतु मनुष्य के रूप में उन्हें पालन कर भगवान राम ने मनुष्य के सम्मुख एक दिव्य उदाहरण रख कर यह प्रमाणित कर दिया कि उसमें उन्हें पालन करने की क्षमता है। इसी उदात्त आदर्श और अपनी कथा की मनोरंजकता के कारण वह इस देश की जनता का कंठहार बन कर उसे अनुप्राणित करती और आशा का संदेश देती रही है तथा इसका सात्विक मनोरंजन करती रही है।

अभी तक यह कथा लोगों के सामने काव्य के रूप में आयी है और आज भी राम काव्य इस देश में सबसे अधिक लोकप्रिय है। किंतु अनेक कारणों से

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
(जिनकी चर्चा यहाँ अनावश्यक है ।) कविता का युग समाप्त हो रहा है । थोड़ी बहुत कविता तो सदैव चलती रहेगी किंतु आधुनिक यंत्रीकरण के युग में गद्य का ही बोलबाला है और अभी तो यही मालूम होता है कि उसका और भी अधिक प्रसार होगा । अतएव आधुनिक पाठक के लिए रामकथा गद्य में भी लिखी जाने लगी है । श्री चक्रवर्ती राजगोपालचारी जी ने अंग्रेजी गद्य में जो रामकथा लिखी वह अप्रत्याशित रूप से लोकप्रिय हुई । हिन्दी में भी इस दिशा में कुछ प्रयास हुए किन्तु वास्तव में इस क्षेत्र में हिन्दी में कोई विशिष्ट कृति सामने नहीं आयी ।

पं० बाबूलाल पाण्डेय ने हिन्दी गद्य में इस ग्रंथ की रचना कर इस क्षेत्र में एक अत्यन्त कल्याणकारी कार्य किया है । वे सारे जीवन अध्यापन कार्य करते रहे और बड़े सफल अध्यापक प्रमाणित हुए । इस कारण उनमें छात्रों से प्रेम होना तथा उन्हें सत्पथ पर ले जाने के लिए प्रेरक साहित्य रचने की इच्छा उत्पन्न होना स्वाभाविक है । स्वाभाविक होते हुए भी आज कितने अध्यापक इस ओर ध्यान भी देते हैं—उसे क्रियान्वित करने का कष्ट उठाने की बात तो दूर ! पाण्डेय जी में एक विशेषता यह है कि वे लेखक भी हैं और उन्हें लेखन का अभ्यास भी है । अतएव इस पुस्तक में हम एक साथ तीन विशेषताएँ पाते हैं ! पहली तो यह कि इसका उद्देश्य बड़ा शिव और जनकल्याणकारी है, दूसरी यह कि अध्यापक होने के कारण इसमें वे सभी प्रसंगों और विषयों को बड़े स्पष्ट और बोधगम्य रूप से समझाने में समर्थ हुए हैं और तीसरी यह कि इसकी सरल भाषा और सुबोध शैली इसे छात्रों ही नहीं, सभी वर्ग के पाठकों के लिए उपयोगी बनाने में समर्थ हुई है । उसकी भाषा सरल और प्राञ्जल है । अतएव भाषा या शैली की दुरुहता इसके प्रचार में कोई बाधा उपस्थित न करेगी ।

पाण्डेयजी ने कथा-वर्णन में मुख्यरूप से तुलसी दास के रामचरित मानस का अनुसरण किया है । यह बहुत उचित भी है क्योंकि हिन्दी में राम के चरित्र को मुख्यतः उसी ग्रन्थ ने घर-घर पहुँचाया है और यहाँ की जनता उसी में वर्णित राम चरित से परिचित है । मैंने इसके कई अंश बड़े ध्यान और रुचि से पढ़े । उनमें वर्णन का ऐसा प्रवाह है कि रोचकता में कोई बाधा नहीं पड़ती, साथ ही प्रसंगों का महत्व भी आँखों से ओझल नहीं होने पाता । विभिन्न पात्रों का चरित्र चित्रण बड़े कौशल और यथा संभव तटस्थता से किया गया है । पुस्तक के मुख्य उद्देश्य (पावन राम चरित का वर्णन और धर्म, सत्य एवं

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
कर्तव्य का महत्व) को सावधानी से ध्यान में रखा है, और वह भी इस प्रकार कि वह पाठक के हृदय पर आघात एवं प्रभाव करता है।

पाण्डेय जी ने यह सुन्दर और महत्वपूर्ण ग्रंथ विशुद्ध स्वान्तः सुखाय और सेवाभावना से लिखा है। उन्होंने अपनी गाढ़ी कमाई से इसे स्वयं प्रकाशित किया है और इस 'पुण्यं, पापहरं, सदा शिव करम्' कथा को अधिकाधिक लोगों को सुलभ बनाने के लिए वे उसे लागत से भी कम मूल्य पर दे रहे हैं। यह कार्य उनकी धार्मिक और निस्पृह वृत्ति का परिचायक है तथा उनकी इस मंगलकारी भावना का प्रमाण है कि वे इसे अधिकाधिक छात्रों तथा धर्म प्रेमी लोगों को सुलभ करने को उत्सुक हैं। इस व्यवसाय प्रधान आर्थिक युग में यह एक चमत्कार है।

मैं पाण्डेय जी को इस अत्यन्त उपयोगी, सुन्दर और प्रेरणादायक ग्रन्थ के प्रणयन और प्रकाशन के लिए हार्दिक बधाई देता हूँ। मुझे इस बात की प्रसन्नता और गर्व है कि हमारे बीच पाण्डेय जी के समान ऐसे उदार और परोपकारी विचारों के साहित्यकार और लेखक विद्यमान हैं।

मुझे विश्वास है कि यह ग्रंथ बहुप्रचारित होगा और इस भौतिकवादी युग में भगवान राम के पवित्र चरित्र को और अधिक प्रचारित कर जनता का कल्याण करेगा।

—श्री नारायण चतुर्वेदी

५३, खुर्शेदबाग
लखनऊ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दो शब्द

'राम कथा' लिखने की प्रेरणा मुझे अपने विद्यार्थियों से मिली। मैंने अनुभव किया कि किशोर अवस्था के बालक राम के चरित्रों और उनसे सम्बन्धित प्रसङ्गों से बड़ी रुचि लेते हैं। मैंने उसी समय लेखनी उठायी। उस उमंग में मैंने दो-चार प्रसंग लिख भी डाले। एक दिन पं० मुरली मनोहर दीक्षित, एम० ए० मेरे घर पधारे। मैंने उन प्रसंगों को उन्हें सुनाया। उन्होंने अभिभावक के नाते मुदित मन सुने और मेरी पीठ ठोंकी। मेरा उत्साह बढ़ा। किन्तु 'गृह कारज नाना जंजाला' के विशाल शैल मार्ग के बाधक हुए। अस्तु कालेज से अवकाश ग्रहण करने पर ही कार्य पूरा हो सका।

'राम कथा' की विषय सामग्री गोस्वामी तुलसीदास के रामचरित मानस से ली गयी है। यत्र-तत्र वाल्मीकीय, अध्यात्म, कम्बन, कृत्तिवास साकेत एवं मानस-पीयूष से भी सहायता ली गयी है। इसमें मौलिकता का अभाव है, पर शैली अपनी है। मैंने यथासाध्य सरल भाषा और सुबोध शैली अपनायी है; किन्तु प्रसङ्गानुकूल भाषा चढ़ गयी है तथा शैली भी जटिल हो गयी है। मेरा विश्वास है कि यह किशोरावस्था के बालकों से लेकर प्रौढ़ावस्था तक के साधारण पढ़े-लिखे लोगों का मनोरंजन करेगी।

मैं अपने उन सब मित्रों और सहयोगियों का ऋणी हूँ, जो समय-समय पर राम-कथा के प्रसंगों को सुनते, सुमंत्रणा देते तथा उत्साह बढ़ाते रहे हैं। इनमें ओंकारनाथ शुक्ल, श्री गंगाप्रसाद मिश्र और पं० राम बहोरी शुक्ल के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। माननीय गार्गीदत्त मिश्र जो मेरे मित्र और भक्ति मार्ग के प्रदर्शक हैं, इस कार्य में सदा प्रेरणा देते रहे हैं। मैं उन्हें किस मुख से धन्यवाद दूँ! अपने शिष्य श्रीकृष्ण अरोड़ा का मैं बड़ा आभारी हूँ, जिन्होंने भगवान राम का चित्र बनाकर पुस्तक की उपयोगिता बढ़ा दी। अन्त में मैं साहित्य-वाचस्पति पं० श्रीनारायण चतुर्वेदी की कृपा का बड़ा आभारी हूँ, जिनकी अमूल्य सम्मति से पुस्तक प्रकाशित हुई। इसे मैं भगवत्कृपा समझता हूँ।

लेखक

३८ नंद भवन, खुर्शेद बाग
लखनऊ

विषय-सूची

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शीर्षक	पृष्ठ
प्रथम खण्ड	
महाराज दशरथ का युवराजत्व	१
कैकेयी से विवाह	२
सुमित्रा से विवाह	४
शनि की दृष्टि और अकाल	५
पुत्रेष्टि यज्ञ और वशिष्ठ	६
राजा रोमपाद और श्रृंगीऋषि	७
राम जन्म	१२
योगिराज शंकर	१३
वाल्यकाल विद्याध्ययन	१४
विश्वामित्र का आगमन	१७
सगर का अश्वमेध और गंगावतरण	२०
ताटका बध	२३
विश्वामित्र का यज्ञ	२६
जनकपुरी की यात्रा-अहिल्योद्धार	२८
जनकपुरी में प्रवेश	३१
मिथिला वर्णन	३२
पुष्प वाटिका, धनुष यज्ञ	३४
रावण-वाणासुर संवाद	४०
जनक का अनुताप,लक्ष्मण का अमर्ष	४३
धनुर्भङ्ग और जयमाला	४४
परशुराम और लक्ष्मण-संवाद	४७
राम विवाह	५१
पाणिग्रहण	५३
शाखोच्चार	५४
दहेज और विदायी	५६
गृह प्रवेश	५८
द्वितीय खण्ड	
राज्याभिषेक की तैयारी	६०
कैकेयी और मंथरा का कुचक्र	६३
मंथरा का जाल	६५
कोप भवन	६८
वन गमन की तैयारी	७३
कौसल्या से विदायी	७४
राम और सीता का प्रत्यालाप	७६
लक्ष्मण की तैयारी	७९
वन-प्रस्थान	८२
राम-केवट संवाद	८३
श्रृंगवेरपुर और निषादराज	८७
लक्ष्मण - गीता	८८
तीर्थराज प्रयाग	८९
भरद्वाज आश्रम	९१
चित्रकूट को प्रस्थान	९२
कामदगिरि और पर्णकुटी	९६
सुमंत्र का अयोध्या लौटना	९८
श्रवणशाप, दशरथ का स्वर्गारोहण	९९
भरत का ननिहाल से लौटना	१०१
दशरथ की महायात्रा	१०४
चित्रकूट चलने की तैयारी	१०५
भरत और निषाद मिलन	१०८
भरद्वाज और भरत की भेंट	१११
भरत और कामद गिरि	११३
राम और भरत की भेंट	११४
चित्रकूट की सभा	११६
नंदिग्राम में भरत	१२१
तृतीय खण्ड	
स्फटिक शिला	१२२
अत्रि के आश्रम में राम और सीता	१२४
अनुसूया द्वारा सीता को उपदेश	१२६
विन्ध्य और दण्डकारण्य	१२९
सीता का संदेह	१३१
विराध - बध	१३२
शरभंग की समाधि	१३४
अस्थियों का ढेर, राम की प्रतिज्ञा	१३७
सुतीक्ष्ण मुनि से भेंट	१३८
अगस्त्य और विन्ध्याचल	१३९
पंचाप्सर और माण्डकर्णि	१४१
अगस्त्य मुनि से भेंट	१४३
रावण और उसके वंशका परिचय	१४४
रावण की तपस्या और वरदान	१४६
रावण की दिग्विजय	१४९
सहस्त्रार्जुन से मैत्री	१५०

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विषय	पृष्ठ
बाली से मैत्री	१५०
पंचवटी में निवास	१५१
शूर्पणखा संवाद	१५३
खर-दूषण तथा राक्षसों का बध	१५६
शूर्पणखा और रावण	१५९
सीता हरण और मारीच	१६१
मारीच बध	१६३
सीताहरण और जटायु	१६५
अशोक वाटिका में सीता	१६७
जटायु का अन्तिम संस्कार	१६९
सीता वियोग, नारद से भेंट	१७०
कबन्ध का बध	१७२
शबरी से भेंट	१७३
हनुमान से परिचय, सुग्रीव से मैत्री	१७६
बाली का परिचय	१८०
बाली का बध	१८२
प्रवर्षण गिरि और वर्षाकाल	१८६
शरदऋतु और चलने की तैयारी	१८९
सुग्रीव की सेना	१९०
सीता की खोज, बानरों का प्रस्थान	१९२
स्वयंप्रभा से भेंट	१९४
संपाति से भेंट	१९६
चतुर्थ खण्ड	
हनुमान का समुद्र संतरण	१९९
सुरसा से भेंट	२००
सिंहिका बध, हनुमान,लंका-प्रवेश	२०१
लंकिनी से भेंट	२०२
लंका की एक रात	२०२
हनुमान की विभीषण से भेंट	२०३
अशोकवाटिका में सीता	२०७
त्रिजटा का स्वप्न	२०९
हनुमान की सीता से भेंट	२१०
बाटिका विध्वंस	२१३
मेघनाद और ब्रह्मपास	२१४
रावण का दरबार	२१५
लंका दहन	२१७
सीता से हनुमान की विदायी	२१९
हनुमान का लंका से लौटना	२१९
राम की सेना का प्रयाण	२२२
विभीषण का लंका त्याग	२२३
समुद्र संतरण की तैयारी	२२७
सेतुबन्ध और रामेश्वर-स्थापना	२३०
लंका में प्रवेश करने पर रावण की प्रतिक्रिया	२३१
सुबेल पर्वत की झाँकी	२३३
राम का विराट रूप	२३४
अंगद और रावण का संवाद	२३५
प्रथम दिन का युद्ध	२४३
माल्यवंत की सम्मति	२४५
मेघनाद का युद्ध	२४६
लक्ष्मण - शक्ति	२४७
कुम्भकर्ण का युद्ध	२५०
मेघनाद बध	२५४
सती सुलोचना	२५६
लक्ष्मण और रावण का युद्ध	२५९
धर्म रथ का वर्णन	२६२
राम - रावण युद्ध	२६७
रावण बध	२७१
मंदोदरी का शोक	२७३
सीता की अग्नि परीक्षा	२७४
पञ्चम खण्ड	
लंका से अयोध्या प्रत्यागमन	२७८
हनुमान और भरत की भेंट	२७९
राम का सिंहासनारोहण	२८२
बन्दरों और रीछों की विदायी	२८६
राम राज्य	२८७
राज्य परिषद	२८९
सीता परित्याग	२९१
आश्रम में लव - कुश का जन्म	२९५
राम का पश्चात्ताप	२९७
रामाश्वमेध	२९८
वाल्मीकि आश्रम और लवकुश	३००
लक्ष्मण का काल	३०५
राम का परमधाम गमन	३०७

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रामकथा

पूर्वार्द्ध

प्रथम खण्ड

महाराज दशरथ का युवराजत्व

इन्दुमती के दिवंगत हो जाने पर महाराज अज को संसार से विरक्ति हो गई। उस समय दशरथ वयस्क न थे। वह मंत्रियों को राज्य-भार सौंप किसी अरण्य में चले गये। वयस्क होने पर दशरथ राज्यपरिषद् की सलाह से राज-काज करने लगे। उनका विवाह कोसल-देश की राजकुमारी कौसल्या के साथ हुआ। राजसिंहासन पर बैठने के उपरान्त उन्होंने देश-देशान्तरों में अपने दूत भेजे। उनसे मैत्री भाव प्रकट किया। राजाओं ने संवेदना सूचक पत्र भेजे। दशरथ को राजा होने पर बधाइयाँ दीं।

दशरथ ने बड़ी योग्यता के साथ राज्य सञ्चालन किया। उन्होंने पूर्वजों की कीर्ति अक्षुण्ण रखने के लिए अश्वमेध यज्ञ किया। वह चक्रवर्ती की उपाधि से विभूषित हुए। उनमें इक्ष्वाकु वंशी राजाओं के सभी गुण विद्यमान थे। वह [2]रघु के समान पराक्रमी, [1]इक्ष्वाकु के समान तेजस्वी, दिलीप के समान सुन्दर थे। उन्होंने निकट एवं दूर के सभी राज्यों से दौत्य सम्बन्ध स्थापित किये। राजाओं ने उनसे मैत्री बनाये रखने में कुशल समझी। जिन्होंने महाराज का विरोध किया वे पराजित हुए। किन्तु चक्रवर्ती जी ने न तो किसी का राज्य छीना और न किसी को अपदस्थ किया। केवल दण्ड लेकर छोड़ दिया। देवा-धिदेव इन्द्र भी उनकी मित्रता के इच्छुक थे। जब वह इन्द्रलोक जाते तो देवेंद्र बढ़कर उनका स्वागत करते और अपने बराबर सिंहासन पर बिठाते। यदि इन्द्र को आवश्यकता पड़ती तो युद्ध में सहायतार्थ महाराज को बुलाते और वह जाकर उनकी सहायता करते थे।

महाराज दशरथ नीति कुशल व बुद्धिमान थे। वह शत्रु एवं मित्र के साथ उचित व्यवहार करते तथा विद्वानों, गुणवानों और ब्राह्मणों का सम्मान करते थे। अनेक कलाकार उनसे जीविका पाते थे। लोग उनकी गुणग्राहकता पर मुग्ध थे। वह अपनी प्रजा का पुत्रवत् पालन करते थे। यदि वह किसी को दुखी देखते

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तो उसकी सहायता करते। प्रजा भी उन पर प्राण निछावर करने को तैयार रहती। राजा और प्रजा में सद्भावना थी। सब सुख थे। केवल एक दुख था। राजा के कोई संतान न थी। प्रजा की इच्छा थी कि यदि महाराज के कोई पुत्र हो जाता तो अच्छा होता। लोग आपस में बातें करते कि यदि कौसल्या के कोई संतान नहीं होती तो महाराज दूसरा विवाह क्यों नहीं कर लेते ? रानी और राजा के कानों में यह चर्चा प्रायः सुनायी पड़ती। कौसल्या भी एकान्त में राजा से कहतीं कि प्रजा जन ठीक ही तो कहते हैं।

कैकेयी से विवाह

कैकेयी केकय नरेश अश्वपति की लाड़ली बेटी थी। जब उसमें यौवन के चिन्ह झलकने लगे तो राजा ने उसके लिए उपयुक्त वर की खोज में पुरोहितों को देश-देशान्तरों में भेजा। एक ज्योतिषी ने अयोध्या आकर महाराज दशरथ से कहा—'आप को नित्य संतान की चिंता लगी रहती है। कैकेयी का हाथ मैंने देखा है। उसकी हस्त रेखाओं से सिद्ध होता है कि वह एक धर्मात्मा व्यक्ति की माँ होगी। उसके ग्रह आपके ग्रहों से मिलते हैं। संतान का सुयोग है। वह सुन्दरी और गुणवती भी है। उसके यौवन का वसन्त काल है। वह मधुलता के समान किसी वृक्ष का सहारा चाहती हैं। उसमें मधु है, सरसता है और लावण्य है। वह आप के रनिवास की शोभा होगी।

राजा ने स्वीकृति दे दी। पुरोहित ने लौट कर अपने महाराज से सारा हाल कह दिया। साथ ही यह भी बताया कि राजा विवाहित हैं। उनके कोई संतान नहीं। वह कैकेयी को पटरानी बना लेंगे। केकय नरेश ने रानी के द्वारा बेटी की सम्मति जाननी चाही।

कैकेयी जैसी सुन्दरी थी वैसी ही गुणवती और चतुर भी। उसने सोचा कि पटरानी बनने से क्या होता है ! आज राजा का मन कौसल्या से भर गया है तो मुझे पटरानी बना रहे हैं। कल जब मेरा यौवन ढल जायगा तब कोई और ढूँढ़ लेंगे। उसके सामने राजमहलों के वे दृश्य नाचने लगे जो नित्य वहाँ हुआ करते हैं। उसने कहा कि यदि राजमाता का पद मुझे मिल जाय तो मैं प्रस्ताव स्वीकार कर सकती हूँ अन्यथा नहीं। अश्वपति ने दूत के द्वारा महाराज दशरथ के पास संदेश भेजवा दिया। महाराज ने दूत को यह कह कर लौटा दिया कि राजकुमारी के प्रस्ताव पर विचार किया जायगा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महाराज दशरथ बड़े नीतिज्ञ थे। उन्हें कौसल्या का पद कैकेयी को देने में संकोच हुआ। पर उस दिन से वह अन्यमनस्क रहने लगे। वह करते कुछ थे, पर सोचते कुछ और थे। उनके मन में अनेक भावनाएँ उठा करती थीं। वह अपने मनोभाव किसी पर व्यक्त न करते। उनका शरीर क्षीण हो गया। मुख पर चिन्ता की रेखायें झलकने लगीं। उनकी दशा देख प्रजावर्ग को चिन्ता हो गयी कि राजा को न जाने क्या हो गया है।

एक दिन वशिष्ठ ने पूछा—'राजन! आप व्यथित क्यों रहते हैं? चिंताओं ने आपके शरीर को जर्जर कर दिया है। जबसे केकय नरेश का राजदूत वापस गया है तब से आपकी मुखमुद्रा मलिन रहती है। आखिर बात क्या है?'

राजा ने हाथ जोड़ कर कहा—'गुरुदेव! आप से कुछ छिपा नहीं। कौसल्या का पद केकय राजकुमारी को देने में संकोच है। यह बात मुझे नियम के विरुद्ध जान पड़ती है। मेरी बुद्धि कुछ काम नहीं देती। बड़ी कठिन समस्या है। यदि आप कोई उपाय बतलाते तो अच्छा होता।'

वशिष्ठ ने कहा—कौसल्या के अभी तक कोई पुत्र हुआ नहीं। आगे होगा या नहीं इसे कौन कह सकता है? जिस सूर्य वंश में कभी किसी ने अधर्म नहीं किया, उसके वंशज अनीति कैसे कर सकते हैं? वे अपनी वंश परम्परा और संस्कृति को कैसे छोड़ सकते हैं? आप विवाह कर लीजिए। इस तरह राज-काज नहीं चल सकता। प्रजापालन और शरीर रक्षा आप का मुख्य कर्त्तव्य है। यदि आपने उसका पालन नहीं किया तो धर्म कहाँ रह गया? धर्म की गति बड़ी सूक्ष्म होती है।

गुरु वशिष्ठ ने मुख्य सचिव को यह संदेश देकर केकय नरेश के पास भेजा कि—हमारे महाराज को विवाह की सब शर्तें स्वीकार हैं। पत्र में विवाह का मुहूर्त और दिन भी लिख दिया। शुभ लग्न में बड़ी धूम-धाम के साथ कैकेयी ने अयोध्या के रनिवास में प्रवेश किया। कौसल्या ने बड़े प्रेम से नवागता रानी का स्वागत किया। कैकेयी ने कौसल्या को बड़ी बहन समझा। उधर कौसल्या ने कैकेयी के सुख में अपना सुख मान लिया। दोनों बड़े स्नेह से रहने लगीं। चार दिन में नये-पुराने सब एक हो गये। उनमें कोई भेद-भाव न रहा।

महाराज ने नयी रानी के लिए कनक भवन बनवा दिया। जिस दिन से वह अयोध्या आयीं उस दिन से वही राजा के साथ सिंहासन पर बैठने लगीं। उन्होंने अपने गुणों से सभी को आकर्षित कर लिया। महाराज तो उनके प्रेम

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में ऐसे भूले कि उन्हें कोई चिन्ता ही न रह गयी। अब कैकेयी ही भीतर-बाहर का सारा काम-काज देखने लगीं। वह इतनी प्रबन्ध-पटु थी कि राजा को कुछ कहने की आवश्यकता ही न पड़ती। शासन कैकेयी का चलता था। नाम राजा का होता था। उसी की आज्ञा से सारे राज-काज होते। राजा भी कैकेयी के बिना पूछे कोई काम न करते। प्रेम ने विश्वास को जीत लिया। किसी को कोई शिकायत न थी। प्रजा का आनन्द बढ़ गया। सब प्रसन्न थे पर राजा के कोई सन्तान न हुई।

सुमित्रा से विवाह

एक दिन सिंहल देश के राजा ने आखेट खेलने का आमंत्रण भेजा। महाराज अपने चुने हुए साथियों को लेकर वहाँ जा पहुँचे। सिंहल राज ने बड़ी धूम-धाम से महाराज का स्वागत किया। उन्हें राजभवन से संलग्न एक उद्यान में ठहराया। सन्ध्या समय राजकुमारी कञ्चन के थाल में भोजन लेकर आयी। वह परम सुन्दरी थी। कुन्दन की तरह रंग, बिम्बाफल की तरह अधर, हरिणी के समान बड़ी-बड़ी कजरारी आँखें देख राजा स्तम्भित हो गये। उमड़ते हुए यौवन और गुलाबी कपोलों को देख उनका मन वश में न रहा। एक अपरिचित को अपनी ओर ताकते देख राजकुमारी लज्जावश अपने कक्ष में चली गयी। रात भर न उसे नींद आयी और न राजा को। प्रातःकाल दशरथ ने अपना विचार सिंहल नरेश से कहा। राजा ने अपनी कन्या के लिए अयाचित वर पाया। उन्होंने अपनी कन्या सहर्ष राजा को दे दी। चलते समय हीरे-मोती-रत्न और हाथी-घोड़े भी दिये। महाराज सुमित्रा को रथ में बिठाकर लौट पड़े। मार्ग में दोनों इतने अधीर हो उठे कि उनके संयम का बाँध टूट गया। दोनों प्रेमालाप करते हुए अयोध्या आ गये।

अयोध्या आने पर सबको पता चला कि महाराज ने तीसरा विवाह कर लिया है। सुमित्रा के लिए नये भवन की रचना करायी गयी। उसे सिंहल देश के रत्नों से सजाया गया। सुमित्रा ने भवन की भीतियों पर सुन्दर चित्रकारी की। उसकी कला देख लोग बिना प्रशंसा किये न रहते। संगीत और नृत्य में भी वह कुशल थी। उसका कण्ठ कोकिल के समान सुरीला था। एक तो सुन्दरी फिर मधुर वाणी। बस सोने में सुगंधि आ गयी। राजा उसके आमोद-प्रमोद में ऐसे भूले कि रात-दिन उसी के रंग-भवन में रहने लगे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शनि की दृष्टि और अकाल

इधर चक्रवर्ती जी भोगविलास में डूबे। उधर शनि की दृष्टि अवध पर पड़ी। एक तो वृष राशि, दूसरे रोहिणी नक्षत्र, उस पर शनिश्चर की दृष्टि। तीनों घोर अमंगल कारी सिद्ध हुए। वर्षाकाल बीत गया पर पानी की एक बूँद भी न गिरी। धान सूख गये। बरसाती फसल मारी गयी। किसानों ने कुओं और तालाबों से सिंचाई की। जाड़े की फसल से कुछ आशा हुई किन्तु सूर्य के भीषण ताप से वह सूख गयी। दाने पतले पड़ गये। अगले वर्ष भी पानी का अभाव रहा। कुएँ, तालाब, नदी, नाले आदि जलाशय सूख गये। न पशुओं के लिए चारा रहा और न पीने के लिए पानी। घास तो सूख ही गयी। पेड़ों में पत्ते भी न रहे। पशु-पक्षी तड़प-तड़प कर मरने तथा इधर-उधर भागने लगे। चारों ओर त्राहि-त्राहि मच गयी। प्रजा रोने और कलपने लगी। उनके बच्चे भूख से तड़प-तड़प कर मरने लगे। उनसे यह हाल देखा न गया। सब लोग मिलकर राज दरबार पहुँचे और अपना दुखड़ा रोने लगे।

राज कर्मचारियों ने प्रजा को पीड़ित देख अन्नागार खोल दिये। वे आवश्यकतानुसार कंधों पर अनाज उठा ले गये। किसी तरह वह वर्ष भी बीता। वर्षा ऋतु फिर आयी पर पानी की एक बूँद न पड़ीं। ऐसा जान पड़ता था कि किसी ने पानी बाँध दिया है। आकाश में बादल आते किन्तु भागते चले जाते थे। अब तो प्रजा का रहा-सहा धैर्य भी छूट गया। सबने कहा कि अवर्षण तो नित्य का नियम हो गया है। अकाल की शाश्वत छाया अवध में मँडराने लगी है। इसमें हमारा दोष नहीं वरन् राजा का दोष है। कुछ लोग कहते कि महाराज तो बड़े धर्मात्मा हैं। पर जनरव को कौन रोक सकता है ? वे कहते कि महाराज भोगविलास में पड़े हैं। प्रजा भूखों मर रही है। वर्षों से महाराज दिखायी नहीं पड़ते। आखिर कारण क्या है ? उन्होंने मंत्रियों से कहा कि हमलोग महाराज के दर्शन करना चाहते हैं।

मंत्रियों ने जनता की चीख-पुकार सुनी। उनका भी धीरज छूट गया। वे निरुत्तर हो गये। उन्होंने मुख्य मंत्री से कहा कि आप ही सुमित्रा के भवन में जाकर राजा से निवेदन करें। अंत में विवश होकर सुमन्त को जाना पड़ा। उन्होंने प्रजा की पुकार महाराज को सुनायी। राजा ने बड़े धैर्य से मंत्री की बातें सुनीं। वह राज दरबार में आये। अकाल की विषम परिस्थिति पर विचार करने के लिए मंत्रिपरिषद बुलायी। सभा में अन्न-संकट तथा अकाल पर वाद-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विवाद हुआ। सचिवों ने बतलाया कि हमलोगों ने इस संकट से बचने का हर संभव प्रयत्न कर डाला है। अन्नागार रिक्त हो गये हैं। भण्डार घर शून्य पड़े हैं। जब खेती में कुछ पैदा ही नहीं होता तो प्रजा राजा को कर कैसे दे सकती है? बड़ी विषम समस्या आ पड़ी है। सब लोग चुप थे। किसी को बोलने का साहस न होता था। राजा भी यह सब सुनकर सन्न रह गये। उन्होंने ज्योतिषियों को बुलाकर पूछा कि राज्य में अवर्षण का क्या कारण है? एक ज्योतिषी ने गणना कर के बतलाया कि शनि की दृष्टि रोहिणी पर है। जब तक वह रहेगी तब तक प्रजा पीड़ित रहेगी।

प्रजावत्सल महाराज शनि से युद्ध करने के लिए शनि लोक को चल पड़े। शनि की दृष्टि पड़ते ही उनका रथ जलने लगा। उनके अस्त्र-शस्त्र विनष्ट हो गये। महाराज विवश हो रथ से कूद पड़े। संयोग-वश जटायु गिद्ध आकाश में मँडरा रहा था। उसने महाराज को गिरते देखा तो अपनी पीठ पर बिठा लिया और धीरे-धीरे पृथ्वी पर उतार लाया। उसने कहा कि शनि से आप सामने से युद्ध नहीं कर सकते। यदि उसे परास्त करना है तो पीछे से लड़िये। महाराज ने पीछे से युद्ध करना वीर-धर्म के विरुद्ध समझा। पर प्रजा की रक्षा के लिए विवश होकर वही करना पड़ा।

महाराज ने जब शनि को ललकारा तो शनि ने उत्तर दिया—,'हमारा और आपका युद्ध कैसा? आप सूर्य कुल भूषण हैं और मैं सूर्य का पुत्र हूँ। ब्रह्माण्ड का भ्रमण करते-करते मैं आपके राज्य के ऊपर से आ निकला। मेरी दृष्टि राज्य पर पड़ी। उसके प्रभाव से अकाल पड़ गया। इससे प्रजा पीड़ित हुई। आप प्रजा को भूल कर अपने सुख में सो रहे थे। मैंने आप को जगा दिया। अब मैं जाता हूँ।

शनि की दृष्टि फिरते ही आकाश में मेघ घिर आये। विद्युत की चमक और बादलों की गरज के साथ पानी बरसने लगा। नदी-नाले उमड़ पड़े। जलाशय भर गये। चारों ओर हरियाली छा गयी। कृषि लहलहाने लगी। वृक्ष हरे-भरे हो गये। जीव-जन्तु, पशु-पक्षी सब प्रसन्न हो उठे। प्रजा में आनन्द की लहर दौड़ गयी। सब सुखी होकर महाराज की जय-जय करने लगे।

पुत्रेष्टि यज्ञ और वशिष्ठ

संसार की गति विचित्र है। भगवान ने सबको सब कुछ नहीं दिया। हर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
व्यक्ति को कोई न कोई अभाव बना रहता है। दशरथ चक्रवर्ती राजा थे। उनके वैभव का ठिकाना न था। वह धन में कुबेर और ऐश्वर्य में इन्द्र थे। पर सन्तान का अभाव था। कहते हैं कि पुत्र के बिना घर सूना रहता है और मित्र के बिना जगत। राजपाट, धन-धान्य किस काम का यदि उसका कोई भोगने वाला न हो। पुत्र को सम्पत्ति देकर मर जाने में मनुष्य को शान्ति मिलती है। शान्ति के बिना मुक्ति नहीं मिलती। बिना पुत्र के मनुष्य पिता के ऋण से मुक्त नहीं होता। शास्त्र कहता है कि पुन नाम नरक से तारने वाला पुत्र ही होता है। इसीलिए प्राणि मात्रमें पुत्र की अभिलाषा रहती है। इसी से सृष्टि का क्रम चलता है। इस क्रम में सहयोग देना प्रत्येक व्यक्ति का धर्म है।

राजा दशरथ ने संतान का मुख देखने के लिए एक नहीं तीन विवाह किये पर उनकी इच्छा पूरी न हुई। भगवान की लीला विचित्र है। जिसके पास खाने-पीने का ठिकाना नहीं, उसे इतनी संतान देता है कि वह उनका पालन-पोषण नहीं कर सकता; और जिसे धन-धान्य दिया है, वह संतान का मुँह देखने को तरसता है। यदि किसी का वश चलता तो मिट्टी का पुतला बना कर उसमें प्राण डाल देता। पर यह मानव की शक्ति के बाहर है। मनुष्य यहीं अपनी हार स्वीकार करता है। मनुष्य जब सारे उपाय करके थक जाता है तो भगवान की शरण में जाता है। वहीं उसे शांति मिलती है। भगवान से कुछ पाने की उसे आशा रहती है। यही आस्था आस्तिक के जीवन का आधार है। नास्तिक व्यक्ति इसीलिए नैराश्यनद में डूब जाता है और आत्महत्या कर लेता है। शरण में जाने वाले को भगवान कोई न कोई उपाय बतला देते हैं।

महाराज दशरथ ने अपनी मानसिक वेदना महर्षि वशिष्ठ से कह सुनायी। उन्होंने कहा कि यदि पुत्र की कामना से आप यज्ञ करें और उसके अधिष्ठाता श्रृंगी ऋषि हों तो आप की इच्छा पूरी हो सकती है। इस समय श्रृंगी ऋषि के समान ब्रह्मचारी दूसरा व्यक्ति नहीं। महाराज ने पूछा कि श्रृंगी ऋषि कौन हैं, और कहाँ रहते हैं ? वशिष्ठ जी ने कहा:—

राजा रोमपाद और श्रृंगी ऋषि

एक बार अंग देश में वैसा ही घोर अकाल पड़ा जैसा आपके राज्य में पड़ा था। सारी प्रजा पीड़ित होकर राजा के यहाँ पहुँची। उसने कहा कि यह अनावृष्टि हमारे कर्मों का फल नहीं वरन् राजा के पापों का फल है। प्रजा के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
दुख से राजा ने आत्मचिंतन किया पर उनकी समझ में कुछ न आया। अतः उन्होंने धर्मज्ञ ब्राह्मणों को बुलाकर इस अकाल का कारण तथा उसके निराकरण का उपाय पूछा।

ब्राह्मणों ने विचार करके बतलाया कि आप की कन्या विवाह योग्य हो गयी है। आपने उसके लिए अभी तक किसी योग्य वर की खोज नहीं की। आप प्रकृति के प्रतिकूल जा रहे हैं। इसीलिए प्रकृति भी आप के विपरीत कार्य कर रही है। यदि शृंगी ऋषि इस राज्य में पदार्पण करें तो पानी बरस सकता है।

शृंगी ऋषि विभाण्डक मुनि के पुत्र थे। उनकी माता का बाल्यकाल में में ही स्वर्गवास हो गया। उनका पालन-पोषण पिता द्वारा आश्रम में ही हुआ। ऋष्यशृंग का जीवन स्वाध्याय एवं तप में व्यतीत होता था। उन्होंने कभी किसी नगर या गाँव में प्रवेश न किया था। न किसी के विषय में वह कुछ जानते ही थे। उन्होंने कभी किसी नारी से बातचीत भी न की थी। ऐसे व्यक्ति को आश्रम से लाना जरा टेढ़ी खीर थी।

राजा रोमपाद ने राज्य भर में घोषणा करा दी कि जो कोई शृंगी को हमारे राज्य में ला देगा, उसे मुँहमाँगा इनाम दिया जायगा। नगर की एक वृद्धा वारवधू ने इस कार्य का बीड़ा उठाया। उसने सोचा कि जब मुनि कुमार को स्त्री और पुरुष का भेद ही नहीं मालूम तो उन्हें बहका कर लाने में कौन सी कठिनाई है! उसने चुन-चुन कर नगर की वारांगनाएँ अपने साथ ले लीं। वे अनिंद्य सुन्दरी, नवयुवती एवं संगीत तथा नृत्य कला में प्रवीण थीं। वे वस्त्राभूषण, प्रसाधन एवं अन्य आवश्यक सामग्री लेकर आश्रम पहुँची। नर्वदा नदी के तट पर डेरा डाल दिया और शुभ अवसर की खोज करने लगी। धीरे-धीरे उन्हें पता चल गया कि विभाण्डक मुनि शृंगी को आश्रम में अकेला छोड़ कर नित्य किसी कन्दरा में तपस्या करने चले जाते हैं। अतः वे उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा करने लगीं।

माघ की बसन्त पञ्चमी थी। लताएँ लहलहा रही थीं। नव पल्लव अंकुरित हो रहे थे। रसाल मंजरी मुकुलित हो रही थी। उसपर भ्रमर गुञ्जार रहे थे। वासन्ती वायु बह रही थी। कोकिल मद भरी तानें ले रही थी। वृद्धा ने यह स्वर्ण अवसर देखा तो सहेलियों से कहा कि चलो आज नृत्य और गान का समारम्भ करें। जब नर्तकियाँ सजधज कर चलीं तो उनके पैर डग-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
गमाये और हृदय धड़कने लगे। उन्हें आशंका हुई कि मुनि-कुमार कहीं शाप देकर हमें भस्म न कर डालें। वृद्धा ने समझाया कि तुम डरती क्यों हो ? क्या तुम अपनी कला में कच्ची हो ? क्या तुम्हें अपने ऊपर विश्वास नहीं ? मैं गर्व नहीं करती पर मुझे अच्छी तरह स्मरण है कि जब मैं यौवन के उषाकाल में थी तो मुझे देख कर न जाने कितने मुनियों की समाधि भंग हो जाती थी। अनेक धनी-मानी और श्रेष्ठी मेरे प्रकोष्ठ में पड़े रहते थे और न जाने कितने मेरे घर का चक्कर काटा करते थे। काञ्चन और कामिनी के मोह जाल से विरले ही बचते हैं। यदि उर्वशी महामुनि विश्वामित्र की तपस्या भंग कर सकती थी तो तुम्हें अबोध बालक को बहकाने में क्या देर लगती है ? वह कौन सा वृक्ष है जिसे ग्रीष्म की वायु ने झकझोर न दिया हो और वह कौनसा व्यक्ति है जो काम से पीड़ित न हुआ हो ? वृद्धा के समझाने से सबकी हिम्मत बँधी।

आश्रम से थोड़ी ही दूर पर नृत्य और संगीत का आयोजन किया गया। सारंगी की मधुर ध्वनि जो शृंगी के कानों में पड़ी तो वह मंत्र मुग्ध हो उसकी ओर खिचे चले आये। उन्होंने देखा कि लास नृत्य हो रहा है। नूपुर बज रहे हैं। एक रमणी मधुर स्वर में आलाप ले रही है। रमणियों के हाव-भाव-कटाक्ष रूपी पंच शरों से बिद्ध वह अपने को भूल गये। एक ने भोली चितवन से उनकी ओर देखा। उसके स्नेह से सिक्त हो उनकी स्नेहलता लहलहा उठी। वृद्धा ने वात्सल्य भाव से अपनी बाहु लता-फैलायी। वह उसकी गोद में ऐसे गिरे जैसे पक्षी नीड़ में गिरता है। उसने अपनी गोद में बिठा लिया। शिर और पीठ पर हाथ फेरा। मस्तक का चुम्बन लिया। मातृ-स्नेह से उनका हृदय पुलकित हो उठा। आज तक उन्हें ऐसा वात्सल्य कभी न मिला था। वह आनन्द विभोर हो गये। उन्हें जान पड़ा कि हम स्वर्ग लोक में विचरण कर रहे हैं। सुन्दरियों ने उन्हें कामोत्तेजक मोदक खिलाये। मधुजल पिलाया। फिर मुनि कुमार को आश्रम तक भेज आईं।

सन्ध्या समय विभाण्डक मुनि आये। शृंगी ने सारी कथा कह सुनायी। आपके चले जाने पर सुरलोक से देवगण आये थे। उनका वर्ण गौर था। उनके डाढ़ी-मूँछ न थी। मस्तक पर अंगराग और जटाजूट ऐसे जान पड़ते थे मानो कैलासवासी शंकर भगवान आ पहुँचे हों। उनके वक्ष उन्नत थे। उनके झीने कौषेय वस्त्रों से देह की कान्ति झलक रही थी। उनकी वाणी कोमल और मधुर थी। वे ऐसे बोलते थे मानों पारिजात के पुष्प झड़ रहे हों।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महामुनि ने कुमार को समझाया कि वे देवी नहीं वरन् दानवी हैं। वे लोगों को ठगने के लिए अरण्य में घूमा करती हैं। अहो भाग्य ! तुम उनके जाल से बच गये। भूलकर कभी उधर न जाना। पर श्रृंगी की समझ में कुछ न आया। वह रात भर उनके धनुषाकार भाल, अरुण विम्बाधर, नागिन सी लहराती चोटी, कदली के समान चिकनी जंघाओं, क्षीण कटि, उन्नत वक्षस्थल और हरिणी के सकान दीर्घ एवं भोले नयनों का ध्यान करते रहे। सुधाकर निकला और डूब गया। एक-एक करके नक्षत्र भी डूबने लगे। वह केवल उनकी ओर ताकते रहे। ब्राह्म मुहूर्त में विभाण्डक जब ध्यानस्थ होकर बैठे तो उनके मानस-पटल पर सारी घटना झलकने लगी। लोक-कल्याण की भावना से उनका चित्त प्रसन्न ही हुआ। उन्होंने किसी प्रकार अपने मन को समझा लिया। पुत्र का मोह छोड़ नित्य की भाँति कन्दरा में तप करने चले गये। विरागी संसार को त्याग देने में कल्याण समझते हैं किन्तु रागी संसार में ही रहने की कामना करते हैं।

श्रृंगी ऋषि के अंग देश में प्रवेश करते ही वर्षा की फुहार गिरने लगी। राज्य भर में चर्चा फैल गयी कि मुनि कुमार आ गये। नगर निवासी उनके दर्शनों के लिए दौड़ पड़े। राजा और रानी ने बड़े प्रेम से उनका स्वागत किया। उन्हें स्नान कराये कौषेय वस्त्र पहनाए। अर्चन-पूजन करके षटरस व्यंजन खिलाये। उच्च आसन पर बिठाया। हाथ जोड़ कर प्रार्थना की—'आप बड़े दयालु और धर्मात्मा हैं। आपके आने से हमारी प्रजा का कष्ट दूर हो गया। हम आपके बड़े कृतज्ञ हैं। आपके दर्शन पाकर हमारा जीवन धन्य हो गया। आप महात्मा हैं। हम आप को क्या दे सकते हैं ? फिर भी अपनी सर्व-प्रिय कन्या हेमलता आपको समर्पित है। यह बड़े शान्त स्वभाव की है। इसी लिए हम इसे शान्ता कहते हैं। यह आपके सर्वथा योग्य है। श्रृंगी ऋषि उनकी बातें सुनकर मंदमंद मुस्कुराने लगे। राजा ने उनकी स्वीकृति समझ ली और दोनों का विवाह कर दिया। महाराज ने उनके लिए एक आश्रम बनवा दिया। दोनों वहीं रह कर सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करने लगे।

महाराज दशरथ ने श्रृंगी ऋषि को बुलाने के लिए सुमंत को भेजा। राजा रोमपाद चक्रवर्ती जी के परम स्नेही और सम्बन्धी थे। उन्होंने महाराज का आमंत्रण सहर्ष स्वीकार किया और जामाता के साथ अयोध्या आये।

सरयू के तट पर एकान्त में विशाल यज्ञशाला की रचना की गयी। उसमें

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अनेक ऋषियों, मुनियों, पण्डितों, अभ्यागतों और दर्शकों के बैठने का प्रबन्ध किया गया। महाराज के रहने के लिए एकान्त शिविर की व्यवस्था की गयी। उन्होंने रानियों के साथ संयम पूर्वक एक वर्ष तक कल्पवास किया। राजा और रानी ने असिधारा व्रत लिया तथा ब्रह्मचर्य का पालन किया। इस यज्ञ में सम्मिलित होने के लिए चक्रवर्ती जी ने अपने सभी सम्बन्धियों एवं मित्रों को आमंत्रित किया। जब यज्ञ का सारा प्रबन्ध हो गया और सब लोग आ गये तो महर्षि वशिष्ठ के कहने से प्रधान अग्निहोत्र का पद श्रृंगी ऋषि को दिया गया। ऋषि ने वेदोक्त विधि से यज्ञ का समारम्भ किया। मंत्रों और ऋचाओं से यज्ञस्थल गूँज उठा। यज्ञ के धुएँ से वायुमण्डल भर गया। उसकी सुगंधि चारों ओर फैल गयी। अन्तिम आहुति देने पर यज्ञ-कुण्ड से प्रचण्ड ज्योति उद्दीप्त हो उठी। अग्नि देव स्वयं हाथ में चरू लेकर प्रकट हो गये। ऋषि ने कहा कि यज्ञ सफल हो गया। उनकी वाणी आकाश मण्डल में गूँज गयी।

श्रृंगी ऋषि ने हवि का अवशिष्ट भाग सोने के कटोरे में यजमान को दे दिया। महाराज ने वह हवि कौसल्या और कैकेयी को आधी-आधी दे दी। उन दोनों ने अपनी खीर का आधा-आधा भाग सुमित्रा को दे दिया। तीनों रानियों ने बड़े प्रेम से खीर खायी और गर्भवती हो गयीं।

आज का नवयुवक इन बातों पर विश्वास नहीं करता। वह बुद्धिवाद में विश्वास करता है। कर्म-काण्ड में उसकी श्रद्धा नहीं। भजन-पूजन को वह ढकोसला कहता है। वह केवल उतना ही मानता है जो विज्ञान सिद्ध है अथवा तर्क में खरा उतरता है। पर विज्ञान का अन्त नहीं है। पता नहीं वह किस दिन किस असम्भव तथ्य को प्रमाणित कर दे। फिर विज्ञान तो साधन मात्र है, साध्य नहीं। साध्य केवल ईश्वर है। वही ज्ञेय है।

यज्ञ समाप्त होने पर महाराज ने ब्राह्मणों को दान-दक्षिणा, अभ्यागतों को सम्मान, सम्बन्धियों को भेंट और भिक्षुकों को वस्त्र-भूषण देकर विदा किया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राम-जन्म

चैत का महीना था। शुक्लपक्ष की नवमी। मंगल का दिन। अभिजित नक्षत्र। दोपहर का समय, न अधिक गर्मी, न अधिक सर्दी। आकाश निर्मल था। शीतल, मंद वायु बह रही थी। महारानी कौसल्या भोजन करके कमरे में विश्राम कर रही थीं। उन्हें एक तीव्र प्रकाश सा जान पड़ा। उसमें मरकतमणि की एक दिव्य मूर्ति दिखायी पड़ी। शिर पर मुकुट, गले में बनमाला, कटि पर पीताम्बर हाथों में शंख, चक्र, गदा और पद्म। कौसल्या ने कभी ऐसा रूप न देखा था। वह मंत्र मुग्ध सी उसे देखने लगीं। उन्हें जान पड़ा कि भगवान ने दर्शन दिये हैं। वह चरणों में गिर पड़ीं। मारे आनंद के उनकी आँखों से आँसू बहने लगे। शरीर में रोमांच हो आया। गला रूँध गया। वह कुछ कहना चाहती थीं, पर मुँह से एक शब्द भी न निकला। वह मन ही मन भगवान की स्तुति करने लगीं। 'आप ने मुझे दर्शन दिये। आज मेरे अहोभाग्य!'

मूर्ति ने कहा कि पूर्व-जन्म में तुमने बड़ी तपस्या करके मुझे पुत्र रूप में माँगा था। आज मैं उस इच्छा को पूरी करने आया हूँ। कौसल्या ने कहा कि यदि यह बात है तो शिशु रूप में मुझे दर्शन दीजिए। भगवान 'एवमस्तु' कह कर अन्तर्धान हो गये।

कौसल्या के पेट में पीड़ा होने लगी। वह घबड़ा कर सूतिकागृह में चली गयीं। उन्हें व्याकुल देख दासियाँ दौड़ीं। एक पानी ले आयी। दूसरी पंखा झलने लगी। तीसरी धाय को बुला लायी। धाय ने देखा कि महरानी चुपचाप पड़ी हैं। बालक रो रहा है। उसका रोना सुन सब लोग दौड़ पड़े। घर भर में शोर मच गया कि महारानी के लड़का हुआ। घंटे, घड़ियाल बजने लगे। शंख ध्वनि होने लगी। जिसने जहाँ सुना, वहीं आनन्द मग्न हो नाचने लगा। राजदरबार में सूचना पहुँची। मंत्रियों और सभासदों ने महाराज को बधाइयाँ दीं। महाराज फूले न समाये। वह गुरु वशिष्ठ के पास पहुँचे। उनके चरणों में गिरे और कहा कि आप का आशीर्वाद मेरे घर में पुत्र रूप से प्रकट हुआ है। आज मेरी अभिलाषायें पूरी हो गयीं। मैं धन्य हो गया। उसी दिन कैकेयी ने एक पुत्र और सुमित्रा ने यमजपुत्रों को जन्म दिया।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गुरु की आज्ञा से महाराज ने नांदी मुख श्राद्ध करके जातकर्म संस्कार किये। नौकर चाकरों को वस्त्राभूषण और ब्राह्मणों को सुवर्ण मुद्राएँ तथा गउवें दान में दीं। जिसने जो माँगा, उसने वही पाया। महाराज के हर्ष का ठिकाना न था। उनकी समझ में न आता था कि किसको क्या दे डालें ? नित्य नवीन उत्सव होते तथा हँसी-खुशी में दिन बीतने लगे।

महाराज ने राज्य भर में सात वर्षों के कर-मुक्ति की घोषणा कर दी। अन्न-भाण्डार याचकों और निर्धनों के लिए खोल दिये गये। बन्दीगृहों से बन्दी मुक्त कर दिये गये।

छठी के दिन विशेष उत्सव मनाया गया। सारे नगर-निवासी आमंत्रित किये गये। गलियों में दधि और केसर की कीच हो गयी। सबको इच्छानुकूल भोजन कराया गया। सन्ध्या समय आरती उतारी गयीं। उस समय बड़े लालन कुछ अनमने हो गये। महारानी ने चक्रवर्ती जी को बुलवा भेजा। महाराज पण्डितों को लेकर रनिवास पहुँचे। उन्होंने बालक को उदास देख कर कहा—इन्हें किसी की नजर लग गयी है। महर्षि वामदेव ने कहा कि इन्हें किसी की कुदृष्टि नहीं लग सकती। फिर भी उनके संतोष के लिए 'नरसिंह' स्तोत्र पढ़ा और अभिमंत्रित जल उनपर छिड़क दिया।

योगिराज शंकर

उसी समय एक दासी ने आकर निवेदन किया कि द्वार पर एक महात्मा खड़े हैं। रानी ने कहा कि उन्हें भिक्षा देकर विदा करो। दासी जब भिक्षा लेकर पहुँची तो योगिराज ने कहा—'हमें भीख न चाहिए। हमें तुम्हारे धन-धान्य की परवाह नहीं। हम तो लालन को देखना चाहते हैं।' ऐसा कह कर उन्होंने अलख जगा दी। वह पद्मासन लगा बैठ गये। योगिराज की बातें सुन रानी सन्नाटे में आ गयीं। वह लालन को अभी सूतिकागृह से बाहर निकालना न चाहती थीं पर किसी को द्वार से विमुख लौटाना भी न चाहती थीं। महाराज की सम्मति से कौसल्या बालक को गोद में लेकर निकलीं। उन्होंने महात्मा को प्रणाम कर बालक को उनके चरणों में डालना चाहा। योगिराज ने उन्हें हाथों में ही ले लिया। वह बड़े कौतूहल से उनके मुख को देखने लगे। उनकी गोद में पहुँचते ही लालन किलकने तथा पैर उछालने लगे। रानी ने प्रार्थना की कि बालक को आशीर्वाद दीजिए कि यह चिरजीवी हो। योगिराज ने कहा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कि तुम बड़ी भाग्यशालिनी हो जिन्हें ऐसा पुत्र प्राप्त हुआ। यह तो अमर होगा ही पर इसके साथ तुम्हारा भी नाम अमर रहेगा। यह कह कर महात्मा अन्तर्धान हो गये। राजा-रानी, दास-दासी आदि उपस्थित लोगों को इस घटना से बड़ा आश्चर्य हुआ। नगर भर में चर्चा फैल गयी कि शंकर भगवान योगिराज का वेश धारण करके आये थे।

वह रात अयोध्या वासियों के लिए आनन्दोत्सव की रात थी। घंटे, घड़ियाल, शंख, भेरी आदि बजाये गये। घर-घर उत्सव मनाये गये। देव विग्रहों को स्नान करा के पुष्प मालाएँ पहनायीं गयीं। अगर, धूप, कपूर, चंदन आदि सुगंधित द्रव्यों से वायुमण्डल भर गया। भीतर-बाहर, गलियों-बाजारों, चौराहों और राजमार्गों पर विभिन्न प्रकार के खेल-तमाशे एवं नाच-रंग होते रहे। इस उत्सव में सारी प्रजा ने भाग लिया। यह कार्य-क्रम कई दिनों तक चलता रहा। ऐसा जान पड़ता था कि हर घर में बालक का जन्म हुआ हैं। वह त्रेता युग था। जब राजा और प्रजा में भेद-भाव न था। सब एक दूसरे के सुख-दुख में सम्मिलित होते थे। उनमें परस्पर सहानुभूति और सद्भावना थी। आज का मनुष्य इतना स्वार्थी हो गया है कि वह पड़ोसी के सुख-दुख का अनुभव ही नहीं करता।

बारहवें दिन नाम संस्करण हुआ। महाराज ने बड़े सम्मान के साथ गुरु वशिष्ठ को बुला भेजा। वशिष्ठ ने कहा 'जिनका वर्ण नील मेघ के समान है तथा जिनके शरीर से विद्युत की सी कान्ति फूट रही है, वह कौसल्या के के आनन्द वर्धन संसार में रमने वाले राम हैं। ऐसे अलौकिक देहधारी तो हमने देखे ही नहीं। कैकेयी की गोद को भरने वाले जो इन्हीं के रूप रंग-वाले हैं, संसार का भरण करने वाले भरत हैं। यह जो गौर वर्ण के सुमित्रानंदन हैं, वह संसार का भार धारण करने वाले शेषावतार लक्ष्मण हैं। सबसे छोटे राजकुमार परमपराक्रमी शत्रु का दमन करने वाले शत्रुघ्न हैं। चारो पुत्र चारों वेदों के साक्षात रूप हैं।' ऐसा कह कर वशिष्ठ जी चले गये। महारानी और महाराज पुत्रों के आमोद-प्रमोद में डूब गये।

बाल्यकाल और विद्याध्ययन

महाराज ने बच्चों के खेलने के लिए आँगन में मोतियों का चूरा बिछवा दिया था। उसी में चारो भाई नित्य खेला करते थे। जब वे किलकारी मारकर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

घुटनों के बल दौड़ते तो राजा बड़े प्रसन्न होते । उनकी क्रीड़ाएँ देखने में राजा इतने तन्मय हो जाते कि उन्हें राज-काज की सुध न रहती । रानियों का समय तो उनकी देख-रेख में ही बीत जाता था । वे उन्हीं के साथ उठती, बैठती, खेलती, खातीं और सो जाती थी । वे पल भर के लिए भी उन्हें अपनी आँखों से ओट न करतीं । वे नित्य भगवान से विनय करतीं तथा देवी-देवताओं से उनकी कुशल मनाती । उनके मंगल के लिए अनेक व्रत-उपवास करतीं, याचकों को दान देतीं और साधुओं की सेवा करती थीं । कोई साधु उनके द्वार से विमुख न लौटता । हर भिक्षुक कुछ न कुछ अवश्य पाता था ।

भगवान की माया बलवती है । उसने जीवमात्र को संतान देकर उसके मोह में बाँध दिया है। हर व्यक्ति को अपने बच्चे बड़े प्यारे लगते हैं, चाहे वह कुरूप ही क्यों न हों । महाराज दशरथ और उनकी रानियाँ भी बालकों के स्नेह में रात-दिन डूबी रहतीं । यों तो सभी कुमार सुन्दर थे पर राम सबसे अधिक सुन्दर लगते थे । वह लीला नायक थे । उनकी लीलाओं का क्या कहना ! वह कभी नाचते, कभी कूदते, कभी हँसते और कभी रोने लगते । उनकी हँसी सबको अच्छी लगती पर उनका रोना किसी को सहन न होता। कभी-कभी वह मचल जाते । लाख समझाने पर भी किसी की न सुनते । वह तभी चुप होते जब उनको वांछित वस्तु मिल जाती । बालकों को रोते देख माताएँ गोद में उठा लेतीं, पुचकारती, प्यार करती और जो माँगते वही देती थीं । अपनी वस्तु पाकर वे हँसने लगते । उनकी हँसी में माताओं की हँसी मिल जाती । घर में उदासी के बादल छँट जाते । मुखचन्द्र की ज्योत्स्ना छिटक जाती । कभी-कभी राम सोने से अचानक जाग पड़ते और रोने लगते । माता कौशल्या उन्हें दूध पिलातीं, मिठाई देतीं, प्यार करतीं और खड़े होकर बहलाती थीं । पर राम तब तक चुप न होते जब तक कैकेयी उन्हें गोद न लेतीं । वह कैकेयी को ही अपनी माँ समझते थे । कैकेयी भी अपना स्नेह उनपर उँड़ेलती रहतीं । इसी तरह भरत भी कौसल्या को अपनी माँ समझते । सारा घर प्रेम सूत्र में बँधा था । ऐसे पारिवारिक सुख के लिए देवगण भी तरसा करते हैं ।

सुख के दिन बीतते देर नहीं लगती । सोम, शनिश्चर गिनते-गिनते सप्ताह और होली-दीवाली गिनते-गिनते साल के साल बीतने लगे । महाराज ने चारो पुत्रों के अन्न-प्राशन, मुण्डन, उपवीत आदि संस्कार साथ-साथ करवाये । शैशव

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
छोड़ कर जब वे कौमारावस्था को प्राप्त हुए तो राजा को कुमारों की शिक्षा की चिंता हुई। वह काम उन्होंने गुरु वशिष्ठ को सौंप दिया।

यज्ञोपवीत होने पर चारो भाई गुरु के घर विद्या पढ़ने जाने लगे। गुरु ने उन्हें बड़े प्रेम से पढ़ाया। राम की बुद्धि प्रखर थी। उनकी स्मरण शक्ति तीव्र थी। उन्हें जो बात सिखायी जाती, वह कभी न भूलते। उन्हें कभी कोई पाठ दुबारा पढ़ने की आवश्यकता न पड़ती। ऐसा जान पड़ता था कि सब पहले का पढ़ा हुआ है। केवल स्मरण दिलाने की आवश्यकता है। सुयोग्य शिष्य को पाकर गुरु को भी पढ़ाने में आनन्द मिलता है। वह उसके सामने अपना सारा ज्ञान-कोष खोल कर रख देता है। जिस प्रकार पिता अपने पुत्र को सर्वस्व दे देता है, उसी प्रकार गुरु भी अपना सारा कोष शिष्य को देने में संकोच नहीं करता। वह पिता ही है, जो पुत्र को अपने से अधिक समृद्ध और सुखी देखना चाहता है। और वह गुरु ही है जो ज्ञान में शिष्य को अपने से बढ़ा देखना चाहता है। अस्तु, वशिष्ठ जी ने वंशानुकूल उन्हें शिक्षा दी। वेदों और शास्त्रों का अध्ययन कराया तथा नीति और धर्म की शिक्षा दी। थोड़े समय में ही वे अनेक विद्याओं में पारंगत हो गये। वशिष्ठ जी को ऐसे सुयोग्य शिष्य पाकर अपने पर गर्व होता था।

राम प्रातः उठते। माता-पिता और गुरु की वन्दना करते। दिन में पठन-पाठन और शास्त्र चिंतन करते, त्रिकाल सन्ध्या करते तथा रात्रि में सो जाते थे। वह बड़ों में श्रद्धा, छोटों से स्नेह, और बराबर वालों से मैत्री भाव रखते थे। जैसे राम थे, वैसे ही भरत। लक्ष्मण और शत्रुघ्न तो उनके प्रतिरूप मात्र थे। हंसों की सी दो जोड़ियाँ जब अवध की गलियों में विचरतीं तो लोग एक-टकी लगाकर उन्हें देखते। नगर-निवासी अपने भाग्य की सराहना करते कि हमें ऐसे राजकुमार देखने को मिले। वे सबसे हँस कर मिलते। सब लोग उन्हें अपना समझते और वे सब को अपना।

मनोविनोद और खेल-कूद में बालकों की भीड़ साथ लगी रहती। वह सबसे हिल-मिल कर खेलते। अपने व्यवहार और बातचीत में यह न प्रकट होने देते कि वे राजकुमार हैं। अभिमान तो उन्हें छू तक न गया था। बालमण्डली के कन्धों पर हाथ रख कर जब वह घूमते तो लोग उन्हें देख स्तब्ध रह जाते। सन्ध्या काल जब वह खेलकर लौटते तो स्त्रियाँ उन्हें देखने के लिए दरवाजों पर खड़ी हो जातीं। वे उन्हें तब तक देखती रहतीं जब तक आँखों से ओझल

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
न हो जाते। वे जिस वीथी से होकर निकलते वहाँ के लोग अपने भाग्य की सराहना करते थे। उनके मुख से लावण्य और वचनों से अमृत टपकता था। सब लोग यही चाहते कि राम हमसे कुछ कहें। वे कोई न कोई ऐसा अवसर ढूँढ़ते रहते जिससे बातचीत कर सकें। राम सबसे दिल खोलकर मिलते और हँस-हँस कर बातें करते थे। उनके मुख पर मंद मुसकान सदा खेलती रहती। उसी को देखने के लिए वे लालायित रहते। यों तो सभी भाई शीलवान और गुणवान थे पर राम को कोई न पाता था। उनका स्वभाव कोमल था। उनके व्यवहार में विनम्रता थी। वह कभी किसी से कड़ी बात न कहते। वह थोड़ा बोलते किन्तु सत्य और मधुर। उनका शील खेल के समय विशेष झलक जाता। उन्हें अपने से छोटों को जिताने में आनन्द मिलता था। राज्य भर में उनके शील और स्वभाव की चर्चा होती रहती। जिसे देखो वही प्रशंसा किया करता। लोग उनकी प्रशंसा करते थकते न थे।

महाराज जब अपने पुत्रों की प्रशंसा सुनते तो फूले न समाते। धन्य हैं वे पिता जिनके ऐसे पुत्र हों। और धन्य हैं! वे पुत्र जिनकी ऐसी प्रशंसा हो। भारत वसुन्धरा को ऐसे ही पुत्रों पर गर्व है। संसार में ऐसा पुत्र मिलना दुर्लभ है। प्रत्येक माँ चाहती है कि उसके राम ऐसा बेटा हो। इसीलिए वह अपनी संतानों के नाम राम और कृष्ण से सम्बद्ध करती है। आर्य भूमि ऐसे महापुरुषों को जन्म देने में बड़ी उर्वर है। इसीलिए यहाँ का निवासी अपनी मातृभूमि पर गर्व करता है। संसार में ऐसे नररत्न कहाँ हैं ?

विश्वामित्र का आगमन

एक दिन विश्वामित्र राजदरबार में आये। महाराज ने सिंहासन से उतर कर उनका स्वागत किया। यथोचित सत्कार कर उच्चासन पर बिठाया। अपने चारों पुत्रों को बुला कर कहा कि महामुनि को प्रणाम करो। यह गाधि तनय क्षत्रिय-कुलभूषण हैं। इन्होंने तप के प्रभाव से राजर्षि से ब्रह्मर्षि की पदवी पा ली है। अपने तपोबल से त्रिशंकु को सदेह स्वर्ग भेजा। देवताओं ने विधि-नियम का उल्लंघन कह उसे लौटा दिया। वह आज भी अधर में लटका है। यों तो आप विश्व के मित्र हैं परन्तु जब क्रुद्ध हो जाते हैं तो सबको स्वाहा कर देते हैं।

विश्वामित्र राजकुमारों की दो जोड़ियाँ देख बड़े प्रसन्न हुए। उन्हें अमर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कीर्ति पाने का आशीर्वाद दिया। फिर राजा से कहा—'राजन ! आप धन्य हैं ! आपने अनुपम पुत्र पाये। मैंने तो ऐसे राजकुमार कभी देखे ही नहीं। ये तो देव-पुत्र जान पड़ते हैं। इन्हें देख कर मुझे बड़ा आनन्द मिला। मेरा अयोध्या आना सुफल हो गया।'

महाराज ने हाथ जोड़ कर कहा—'मेरे अहोभाग्य ! जो आपने आकर मुझे दर्शन दिये। मैं आप की क्या सेवा करूँ ?'

मुनिवर ने कहा—आजकल आश्रम में निशाचरों के उपद्रव बढ़ रहे हैं। उनके अत्याचारों से आश्रम वासी पीड़ित हैं। यदि हम यज्ञादि करते हैं तो वे अपवित्र वस्तुएँ डालकर उसे नष्ट कर देते हैं। हम उन्हें शाप से भस्म कर सकते हैं। पर यज्ञादि शुभकर्मों के समय क्रोध करना वर्जित है। इससे हमारा अनिष्ट होगा। आपके राज्य में ऐसा अनर्थ कभी नहीं हुआ। हम जानते हैं कि आप राजकाज में व्यस्त हैं। फिर भी हम आप की प्रजा हैं। हमारी रक्षा करना आप का धर्म है।

राक्षसों के अत्याचार सुन महाराज की भुजाएँ फड़क उठीं। उनका वक्ष-स्थल उल्लसित होने लगा। उन्होंने कहा कि मैं आप की सेवा करने को हर तरह से प्रस्तुत हूँ। यह धन-धान्य, राज-पाट, सेना और राजकोष सब आपका है। कहिए मैं स्वयं आपके साथ चलूँ अथवा अपने सेनापति को ससैन्य भेज दूँ।

महर्षि ने कहा—मुझे धन-धान्य न चाहिए। राज्य कोष और सेना की भी मुझे आवश्यकता नहीं। हम तपस्वियों को इनसे क्या काम ? यदि हमें धन-धान्य अर्जित करना होता तो इनको त्याग ही क्यों देते ? मैं देखता हूँ कि कुमार राम और लक्ष्मण सयाने हो गये हैं। हमारे यज्ञ की रक्षा करने की इनमें सामर्थ्य है। इन्हें हमारे साथ भेज दीजिए।

महाराज यह सुनकर सन्नाटे में आ गये। उनका चेहरा उतर गया। उन्होंने काँपते हुए स्वर में कहा—'ब्रह्मन ! बड़ी मान्यताओं के बाद बुढ़ापे में लड़के मिले। ये अभी दूध पीते बालक हैं। ये दैत्यों का सामना कैसे कर सकते हैं ? यों तो चारो पुत्र मुझे प्राण समान प्यारे हैं, पर राम सबसे अधिक प्रिय हैं। यदि आप प्राण चाहें तो मैं खड्ग से निकाल कर दे सकता हूँ किन्तु राजकुमारों को देने में संकोच है।'

विश्वामित्र ने तीव्र स्वर में कहा—'राजन ! कहने और करने में बड़ा अन्तर होता है। मुझे आप के प्राणों की आवश्यकता नहीं वरन् राम-लक्ष्मण की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
आवश्यकता है। कर्त्तव्य-पालन बिना त्याग के संभव नहीं। घर में बैठकर आज तक किसी को कीर्ति नहीं मिली। हीरे का मूल्यांकन विदेश में ही होता है। खान में तो वह साधारण पत्थर बना पड़ा रहता है। आप संतान के मोह में भूल रहे हैं। ये मेरे यज्ञ की रक्षा करेंगे और मैं इनकी रक्षा करूँगा।'

महाराज कुछ कहने जा ही रहे थे कि वशिष्ठ जी ने रोक कर कहा—'राजन! आपको बुद्धि-भ्रम हो रहा है। ऋषि-राज के होते हुए कुमारों पर आँच नहीं आ सकती। इनमें सबकुछ करने की शक्ति है पर जिसका जो काम है, उसीके करने में शोभा होती है। इनका काम यज्ञ और तप है। आपका काम इनकी रक्षा करना है। राम-लक्ष्मण को इनके साथ भेज दीजिए। इससे इनको कीर्ति मिलेगी और आप का नाम होगा। मनुष्य को सुयश कामना चाहिए।'

गुरु की बात मान कर महाराज ने कहा कि आप की आज्ञा शिरोधार्य है। अगले दिन प्रातःकाल विश्वामित्र राम-लक्ष्मण को साथ लेकर चल पड़े। उन दिनों पक्की सड़कें न थीं। केवल कच्चे मार्ग और पगदंडियाँ थीं। रास्ते ऊबड़-खाबड़ थे। वे विकट भयंकर वनों से होकर जाते थे। उनमें सिंह, व्याघ्र, भेड़िये आदि हिंसक पशु रहते थे। विश्वामित्र ने वन्य पशुओं के शिकार के बहाने राम-लक्ष्मण को बाणविद्या सिखलायी। मार्ग में अनेक नदी नाले पड़े। मुनि ने उन्हें पार करना और तैरना भी सिखाया। इस प्रकार अनेक बातें उन्होंने अनायास ही सीख ली।

राम-लक्ष्मण कभी घर से बाहर न निकले थे। उन्हें क्षण-क्षण में प्यास लगती तथा मुख कमल-मुरझा जाते थे। मुनिवर ने उन्हें बला और अतिबला विद्यायें सिखायीं। उनके प्रभाव से आत्मबल बढ़ गया। न उन्हें भूख लगती और न प्यास। चलने में थकावट भी न जान पड़ती। यह देख राम-लक्ष्मण का उत्साह बढ़ गया। वे गुरु से अनेक विषयों पर प्रश्न करते चले। महामुनि उनकी जिज्ञासाओं का समाधान करते जाते। इससे दोनों राजकुमार बड़े प्रसन्न हुए। उन्हें घर छोड़ने का किंचित खेद न हुआ।

चलते-चलते वे गंगा और घाघरा के संगम पर पहुँचे। सरयू और गंगा की उत्ताल तरंगों को देख दोनों भाई बड़े प्रसन्न हुए। रात को सबने वहीं विश्राम किया। उनके मन में गंगा का इतिहास जानने की आकांक्षा हुई। विश्वामित्र जी उनके कूतूहल की शान्ति के लिए कहने लगे—ब्रह्मा जी ने कैलास पर्वत पर कठिन तपस्या करके मान-सरोवर को उत्पन्न किया था। उसी सरोवर से पूर्व

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

को सरयू नदी निकली है। भागीरथी तो तुम्हारे पूर्वजों की कीर्ति स्वरूपा ही बह रही है। लक्ष्मण ने पूछा--सो कैसे ?

सगर का अश्वमेघ और गंगावतरण

प्राचीनकाल में तुम्हारे इक्ष्वाकु वंश में सगर नाम के चक्रवर्ती राजा हुए। वे बड़े पराक्रमी और यशस्वी थे। उनके दो रानियाँ थी। एक विदर्भ कुमारी केशिनी और दूसरी सुमति। अधिक आयु हो जाने पर भी उनके कोई पुत्र न हुआ। उन्होंने शंकर भगवान की आराधना की। आशुतोष शंकर ने प्रसन्न हो पुत्र होने का वरदान दिया। उसके प्रभाव से केशिनी ने असमंज नाम का पुत्र और सुमति ने एक चर्म-बिल्व प्रसव किया। यह सुनकर कुछ लोगों ने भंगड़ कह कर शंकर का उपहास किया। बिल्व तोड़ने पर उसमें से साठसहस्र बीज सरीखे पुत्र निकले। यह देख कर सबको बड़ा आश्चर्य हुआ। अब तो परिहास करने वालों की बुद्धि पलट गयी। वे कहने लगे कि देवाधिदेव महादेव की लीला विचित्र है। वह जो न करें सो थोड़ा है। वह जब किसी को कुछ देते हैं तो उसका घर भर देते हैं। उनसे माँग कर फिर दूसरे से माँगने की आवश्यकता नहीं रह जाती। इसी से वह अवढर दानी कहलाते हैं। अस्तु, महाराज ने एक लाख गायें खरीद कर गोशाला में बँधवा दी। उनका दूध पीकर बच्चे परिपुष्ट हो गये।

असमंज बड़ा नटखट हो गया। वह गलियों में खेलते हुए बालकों को सरयू में डुबा देता। पनघट पर जा पनिहारिनों के घड़े फोड़ डालता। राह चलते नारियों के कपड़े फाड़ डालता। राजा के यहाँ नित्य उलाहने आते। वह उसे ताड़ना देते पर उस पर कोई असर न होता। महाराज उसके उद्धत स्वभाव से तंग आ गये। वह सोलह ही साल का था कि राजा ने उसका विवाह कर दिया। उनका विचार था कि कदाचित् नारी के अंकुश से वह सुमार्ग पर आ जाय। पर जो भूले-भटके होते हैं उनके सुधरने की आशा की जा सकती है; किन्तु जिनकी प्रवृत्ति अधोगामी होती है, वे दूसरों को भी ले डूबते हैं। विवाह के बाद अंशुमान नाम का लड़का हुआ। फिर भी सुबुद्धि न आयी। सारी प्रजा उससे त्रस्त हो गयी। अतः महाराज सगर ने उसे अपने राज्य से निकाल दिया। जब फोड़ा विषाक्त हो जाता है तो उसे चीर कर मवाद निकाल देने में ही आराम मिलता है।

सगर ने वंश की मर्यादानुकूल अश्वमेघ किया। इससे इन्द्र को ईर्ष्या हुई।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इन्द्र को सदा भय रहता है कि कोई इतना न बढ़ जाय जो उनका सिंहासन छीन ले। उन्होंने यज्ञ के घोड़े को चोरी से पातालपुरी में कपिल मुनि के आश्रम में बाँध दिया। उस घोड़े की रक्षा का भार अंशुमान पर था। उसके खो जाने से वह दुखी हुआ। उसने पृथ्वी का कोना-कोना छान डाला पर अश्व न मिला। अन्त में वह पितामह के पास लौट गया और सारा हाल कह सुनाया।

सगर ने अपने साठ सहस्र पुत्रों को घोड़े का पता लगाने के लिए भेजा। उन्होंने सारी दुनिया छान डाली। अंत में क्रुद्ध होकर वे भूतल ही खोदने लगे। उन्होंने सौ योजन व्यास का गहरा गर्त खोद डाला। खोदते-खोदते वे पाताल पुरी में पहुँचे। वहाँ कपिल मुनि के आश्रम में बटवृक्ष की जड़ से बँधा हुआ अपना घोड़ा देखा। वे क्रोध से पागल हो महर्षि को बुरा-भला कहने लगे। एक ने कहा कि यह तपस्वी नहीं, धूर्त है। इसीने हमारा घोड़ा चुराया है। यह चोर है। उनके शोर को सुनकर मुनि की समाधि भंग हो गयी। ध्यान में व्याघात पड़ने से उन्होंने क्रोध से सगर पुत्रों की ओर देखा। उनके तेज से राजकुमार भस्म हो गये। दूतों ने जाकर यह समाचार महाराज को सुनाया। वे बड़े दुखी हुए। फिर उन्होंने अंशुमान को बुला कर कहा:—

'वत्स! हमारे साठ सहस्र पुत्र तो चल बसे। अब यज्ञ को स्थगित कर देना ठीक है। अंशुमान ने कहा कि मैं महर्षि से अनुनय करके अश्व वापस लाऊँगा। वह कपिल मुनि के आश्रम में पहुँचा। अपने पितृव्यों की भस्मराशि देख उसे खेद हुआ। चित्त को शांत कर वह बड़ी देर तक मुनि के चरणों में नतमस्तक खड़ा रहा। उसकी विनम्रता देख ऋषि का आक्रोश वाष्प के समान विलीन हो गया। उनका हृदय द्रवित हो गया। उन्होंने कहा—'वत्स! मैं तुम्हारी शालीनता से बड़ा प्रसन्न हूँ। तुम्हारे पितृव्य बड़े उद्धत थे। उन्होंने विचार नहीं किया कि समाधिस्थ योगी को अश्व से क्या काम? यह काम तो पर-संतापी इन्द्र का है। उन्हें दूसरों की कीर्ति अच्छी नहीं लगती। उन्होंने एक ही ढेले में दो पक्षी मार दिये। एक तो तुम्हारे पितामह के यज्ञ में विघ्न पड़ गया। दूसरे मेरी समाधि भंग हो गयी। तुम अपना घोड़ा ले जा सकते हो।'

कपिल की आज्ञा से अंशुमान घोड़ा ले आया। सगर ने यज्ञ का समावर्तन किया पर इस दुर्घटना से उनके चित्त को बड़ा आघात पहुँचा। वह अंशुमान को युवराज बनाकर कुछ ही समय में दिवंगत हो गये। अंशुमान बड़े

4956

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

धर्मात्मा और पराक्रमी थे। उनके वंश में दिलीप और उनके पुत्र भगीरथ बड़े यशस्वी राजा हुए।

महाराज भगीरथ सगर के ही समान पराक्रमी और यशस्वी थे। एक दिन उन्होंने अपने पूर्वज सगर-पुत्रों के भस्म होने का वृतान्त सुना। उन्होंने वशिष्ठ जी से उनके उद्धार का उपाय पूछा। गुरु ने बतलाया कि यदि तुम तप करो तो देवलोक की मंदाकिनी धरातल पर आ सकती हैं। उसके पवित्र जल के स्पर्श से तुम्हारे पुरखे शाप-मुक्त हो सकते हैं। इससे मानव जाति का भी कल्याण होगा। जिसके हृदय में पर उपकार की भावना रहती है, उसके लिए संसार में कोई वस्तु दुर्लभ नहीं।

भगीरथ ने राज्य का भार मंत्री पर छोड़ दिया। वह हिमालय पर तपस्या करने चले गये। उन्होंने ब्रह्म-सरोवर के तट पर एक सहस्र वर्ष तक तपस्या की। उन्होंने कुछ दिन फलाहार किये। कुछ वर्ष जल पीते रहे और कुछ वर्ष भगवान का चरणामृत ही लेते रहे। अनेक वर्षों तक वायु सेवन करते रहे। अन्त में सूर्य की किरणों से शक्ति लेकर ही प्राण धारण किये रहे। उनके तप को देखकर कमलासन ब्रह्मा अत्यन्त प्रसन्न हुए। उन्होंने इस तप का कारण पूछा। भगीरथ ने कहा कि यदि आप थोड़ा सा ब्रह्मद्रव अपने कमण्डल से देने की कृपा करें तो हमारे पूर्वज तर जायँ।

ब्रह्मा ने कहा कि मुझे सृष्टि रचने का गर्व है। इसमें ऐसे व्यक्ति भी हैं जिन्हें अपने पूर्वजों का इतना ध्यान है। एक दिन वह भी आयेगा जब पुत्र अपने प्यासे पिता को पानी न देगा। उस कलिकाल में भागीरथी ही उन पथ-भ्रष्ट लोगों को कर्त्तव्य का स्मरण दिलाती रहेंगी। किन्तु यह तो बताओ कि स्वर्ग की मंदाकिनी का वेग पृथ्वी पर कौन सँभालेगा ? यदि आदि देव शंकर स्वीकार करें तो मैं कमण्डल से उसे छोड़ सकता हूँ।

ब्रह्मा की आज्ञा से भगीरथ कैलास पहुँचे। वह शिव जी की आराधना करने लगे। 'हर-हर बम' के महाघोष से जगकर शंकर ने समाधि खोली। भगीरथ को ध्यानावस्थित देख आशुतोष शंकर ने उनके कानों में कहा—'वरंब्रूहि'। (वर माँगो)

शिव को प्रसन्न जान भगीरथ ने सारा वृतान्त कह सुनाया। भक्त-वत्सल कैलास-पति ने कहा—'गंगा को आने दो। मैं देख लूँगा कि देवी में कितना वेग है ! भगीरथ फिर ब्रह्मा के पास गये। उन्होंने शंकर की बातचीत ज्यों की त्यों सुना दी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शिव जी कैलास शिखर पर खड़े हो गंगा के आने की बाट देखने लगे। उनके हाथ कमर पर और दृष्टि आकाश की ओर थी,। कटि पर बाघम्बर, गले में व्याल-माल और शिर पर जटायें लहरा रही थीं। उसी समय आकाश में मेघ गरजे। विद्युत चमकी। वायु स्तब्ध हो गयी। उधर ब्रह्मा ने कमण्डल से जल छोड़ा। इधर शंकर ने हुंकार भरी। देव-धुनि गंगा अखिल ब्रह्माण्ड को प्रकम्पित करती हुई, वायु वेग से धरातल की ओर बढ़ी। ऐसा जान पड़ता था कि उनके प्रवाह से भूधरों का नाम-निशान मिट जायगा और कैलास पाताल में धँस जायगा। कैलास वासी शंकर के भ्रूमंग देख गंगा विभ्रम से ठिठक गयीं। उनकी स्नेहमयी चितवन तरुणी की लज्जा के समान उन्हीं के अंगों में समा गयी। शिवजी ने बड़े आदर के साथ गंगा को अपने शिर पर बिठा लिया। मंदाकिनी के जल-कण ठोस हिमकण बन कर कैलास के शिखरों की शोभा बढ़ाने लगे। गंगा शिव की जटाओं में ऐसी समायीं कि वहाँ से आगे बढ़ने का नाम ही न लिया। घास की नोक पर पड़ी हुई ओस बिन्दु के समान शंकर की जटाओं में संलग्न गंगा को भगीरथ विभ्रम के साथ देखते रहे। उनकी व्यग्रता देख शंकर ने जटाओं से कुछ जल बिंदु छोड़ दिये। उनसे सात धाराएँ फूटीं। भागीरथी की धारा भारत भूमि की ओर बढ़ी।

महाराज भगीरथ आगे-आगे शंख बजाते चले। पीछे-पीछे भागीरथी बड़ी उमंग से बढ़ती चलीं। उत्साह के कारण दोनों के चरण जल्दी-जल्दी उठ रहे थे। मार्ग विषम एवं संकीर्ण था। जल दोनों कूलों पर चढ़ गया। इससे जह्नु ऋषि का आश्रम जल-प्लावित हो गया। उन्होंने मंत्र पढ़कर गंगा का आच-मन कर लिया। भगीरथ के विनय करने पर उन्होंने कर्ण-कुहर से धारा छोड़ी। वह जाह्नवी कहलायी। भगीरथ प्रसन्न हो अपने पूर्वजों के खोदे हुए मार्ग से कपिलमुनि के आश्रम में पहुँचे। गंगा के पावन जल के स्पर्श से सगर के साठ सहस्र मृत अवशेष पुनीत हो गये। उनकी जीवात्मायें नारकीय ज्वाला को छोड़ परम शान्त हो स्वर्ग चली गयीं। इस प्रकार भगीरथ ने अपने पूर्वजों का ही कल्याण नहीं किया बल्कि मानव जाति का भला किया। सत्पुरुषों के कर्मों का फल उन्हें ही नहीं मिलता वरन् सबको मिलता है। अतः प्रत्येक व्यक्ति को सत्कार्य करने चाहिए। इस प्रकार बातें करते रात बीत गयी।

ताटका बध

प्रातःकाल नाव से संगम को पारकर राम-लक्ष्मण विश्वामित्र के साथ आश्रम

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

की ओर चले । वे एक बीहड़ और शुष्क प्रदेश में पहुँचे । उसमें जहाँ-तहाँ दरारें पड़ गयी थीं । बालू और बजरी बिखरी थी । चलते-चलते दोपहर हो गयी । ऊपर से सूर्य की किरणें आग बरसा रही थीं । नीचे धरती तवे के समान जल रही थी । आकाश में धूल छायी थी । वायु के थपेड़े लग रहे थे । वहाँ न कोई जलाशय दिखायी पड़ता था और न छायादार वृक्ष । पशुपक्षी भी कहीं जा छिपे थे । चारों ओर सन्नाटा था । वायुमण्डल भायँ-भायँ कर रहा था । जीवन के कोई लक्षण न देख राम ने मुनि से पूछा कि यह कैसा शून्य स्थान है ?

विश्वामित्र ने बतलाया कि यह काम वन है । दक्ष प्रजापति की पुत्री के सती हो जाने पर शिव ने मनः शान्ति के लिए यहाँ दीर्घकालीन तप किया था। मन्मथ ने उनके मन को क्षुब्ध करने के लिए पुष्प-धनुष का संधान किया । शंकर ने तीसरा प्रलयंकर नेत्र खोल कर उसे भस्म कर दिया । पति के भस्म होनेपर उसकी स्त्री विलाप करने लगी । कुसुम कोमलाङ्गिनी, कोकिलकण्ठी एवं अनिंद्य सुन्दरी रति का विलाप सुनकर शिव को दया आ गयी । उन्होंने वरदान दिया कि अब से तेरा पति अनंग रहेगा । वह लोगों के मानस का मंथन कर काम-नवनीत के रूप में सदा उत्पन्न होता रहेगा। वह मर कर भी अमर होगा । तेरा सौभाग्य अटल रहेगा । मन-वांछित वरदान पाकर रति चली गयी । यह कामाश्रम आज भी निर्जन पड़ा है ।

इस प्रकार बातचीत करते हुए उस प्रदेश को पार करने में देर न लगी । आगे चलकर वे एक सघन वन में पहुँचे । उसके महाकाय वृक्षों और स्थूल प्रकाण्डों को देख भय लगता था । बाँसों के झुरमुटों से साँय-साँय करती हुई वायु चल रही थी । पेड़ों पर बन्दर चीख रहे थे । वन्य जीव एक झाड़ी से दूसरी झाड़ी में भागते दिखायी पड़ते थे । लक्ष्मण उनके नाम और स्वभाव पूछते जाते थे । राम ने कहा कि संसार में न जाने कितने जीवजन्तु और पेड़-पौधे हैं । उनका जानना और समझना अत्यन्त ज्ञानवर्द्धक है । फिर उन्होंने गुरु से उस वन का नाम पूछा ।

विश्वामित्र ने बतलाया कि किसी समय यहाँ सुकेतु नाम का यक्ष रहता था । उसके कोई संतान न थी । उसने कठिन तपस्या की । तप से प्रसन्न हो ब्रह्मा ने एक सुन्दरी एवं बलवती पुत्री पाने का वरदान दिया । सुकेतु ने कन्या को पाकर अपना जीवन धन्य समझा । उसने लड़की का नाम ताटका रखा । जब वह रूप सम्पन्न युवती हुई तो उसका विवाह सुन्द के साथ कर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
दिया। दोनों की जोड़ी देखने लायक थी। उनके सुबाहु और मारीच नाम के दो पुत्र हुए। वे अमित बलशाली हैं। उन्हें अपने बल का बड़ा गर्व है। वे पास-पड़ोस के नगरों एवं आश्रमों पर आक्रमण किया करते हैं।

एक दिन सुन्द महर्षि अगस्त्य के आश्रम में पहुँचा और पेड़-पौधे उखाड़ने लगा। उससे भयभीत हो मृग एवं पशु आश्रम छोड़ कर भागने लगे। महर्षि ने सुन्द को शाप देकर भस्म कर दिया। तब ताटका क्रुद्ध हो उपद्रव करने लगी। ऋषि ने कहा—'जा राक्षसी हो जा'। राक्षसी होने पर वह और उपद्रव करने लगी। उससे तंग आकर ऋषि दक्षिण देश चले गये। तब से ताटका निर्भय होकर विचरती है। उसने यात्रियों का निकलना बंद कर दिया है। वह जिसे पाती है, उसे खा जाती है। वही हमारे आश्रम पर छापा मारती है। उसके लड़के यज्ञादि में बाधा डालते रहते हैं।

विश्वामित्र ताटका के सम्बन्ध में चर्चा कर ही रहे थे कि वह कान के पर्दे फाड़ने वाला भयंकर शब्द करती हुई आँधी के समान आ पहुँची। ताड़ के समान शरीर, कोयले की तरह रंग, ऊँट की तरह गर्दन, आँखें लाल, बदन पर रीछ के से बाल थे। शिर के बाल पैरों तक लटक रहे थे। कानों में हड्डियों के कुण्डल, गले में नरमुण्डों की माला, भुजाओं पर बेंत के बाजूबन्द। उसके दाँत विकराल थे। उसकी जिभ्या कुत्ते के समान लपलपा रही थी। उसने गरज कर विश्वामित्र से कहा---'तुम्हारे वृद्ध शरीर में तो हड्डियाँ ही हड्डियाँ दिखायी पड़ती हैं। पर इन बालकों के शरीर मांसल और रक्त से भरे-पुरे हैं। आज इनके मांस से मैं अपनी क्षुधा और खून से प्यास शान्त करूँगी।' ऐसा कह कर वह कुमारों की ओर झपटी। विश्वामित्र ने दोनों को पीठ पीछे कर लिया। लक्ष्मण ने धनुषवाण तान कर कहा कि हमारा रास्ता छोड़ दो, नहीं तो हम मार डालेंगे। राम ने कहा—'भैया! अबला पर अस्त्र चलाना ठीक नहीं। विश्वामित्र ने कहा—'कुमार! इसे अबला न समझो। यह बड़ी बलवती है। इसमें एक हजार हाथी का बल है। इसे तुरन्त मारो। नारी समझ कर दया दिखाना ठीक नहीं। लक्ष्मण ने वाण तानते ही वह आकश में उड़ गयी। वह बड़ी मायाविनी थी। उसने चारों ओर धूल उड़ा दी। अँधेरा हो गया और कुछ दिखायी न देने लगा। ऊपर से पत्थर बरसने लगे। आगे बढ़ने का मार्ग ही रुक गया। तब तो राम को क्रोध आया। उन्होंने धनुष पर बाण चढ़ाया और गुरु का नाम लेकर छोड़ दिया। बाण उसकी छाती में लगा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
वह दहाड़ कर गिर पड़ी। उसका प्राणान्त हो गया। राम की बाण विद्या देख मुनिवर बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने कहा:—

'वत्स ! मैं बहुत प्रसन्न हूँ। तुमने मेरी आज्ञा का पालन किया। इस दुष्टा के मरने से जनता का भला हो गया। अब लोग सुखपूर्वक यहाँ से निकल सकेंगे। मैं आशीर्वाद देता हूँ कि तुम्हें दिव्यास्त्र प्राप्त हों। मुझे ये कुशाश्व से मिले थे। ये मंत्र के बल से चलते हैं। संकट काल में जब तुम स्मरण करोगे तो ये तुम्हारे सामने आ जायेंगे। इच्छा मात्र से इनका प्रयोग हो जाता है।' राम ने शिर झुका कर कहा कि आप की बड़ी कृपा है।

विश्वामित्र का यज्ञ

विश्वामित्र राम-लक्ष्मण को लेकर अपने आश्रम पहुँचे। उन्होंने आश्रम में रहने वाले ऋषियों को बुला कर कहा कि यज्ञादि का प्रबन्ध करो। हमारी रक्षा के लिए दशरथ कुमार राम और लक्ष्मण आ गये हैं। इन्होंने मार्ग में ताटका को एक ही बाण से मार डाला। यह सुनकर लोगों को आश्चर्य हुआ और प्रसन्नता भी। आश्चर्य यह कि राम-लक्ष्मण अभी अल्पवय के हैं किन्तु बड़े तेजस्वी हैं। प्रसन्नता इस बात पर कि एक बहुत बड़ी बाधा दूर हो गयी।

यज्ञ की सामग्री जुटायी गयी। समिधाएँ इकट्ठा की गयीं। बेदियाँ बनीं। अग्नि प्रज्वलित हुई। ऋचाओं का स्वर तपोवन में गूँज उठा। यज्ञ-धूम वायु-मण्डल में फैल गया। उसकी सुगन्धि से राक्षसों को पता लग गया कि यज्ञ हो रहा है। वे उधर की ओर बढ़े, जिधर 'स्वाहा-स्वाहा' की ध्वनि हो रही थी। उन्हें आते देख दोनों भाई धनुष-बाण तान कर खड़े हो गये और पूछा—'आप कौन हैं ? यज्ञभूमि में क्यों घुसना चाहते हैं ?'

मारीच ने कहा—'हम लोग यज्ञादि कर्मकाण्ड में विश्वास नहीं करते। भजन-पूजन, तीर्थ-व्रत को ढोंग समझते हैं। ईश्वर में हमारा विश्वास नहीं। तपस्या और भजन करने वाले कायर होते हैं। इसीलिए हम इन सब का विरोध करते हैं।

राम ने पूछा कि तुम लोग विरोध ही करते हो या कुछ करते भी हो। सुबाहु ने कहा कि हम शक्ति के उपासक हैं। उसी में हमारा विश्वास है। उसी शक्ति के अर्जन का हम प्रयास करते हैं। इसी कारण मांस, मज्जा, अण्डे आदि खाते और रुधिर एवं मदिरा पीते हैं। नरमांस हमें बड़ा प्रिय है। आज

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
इन ऋषियों की हड्डियाँ चबाने के लिए हमारे दाँत कड़कड़ा रहे हैं। तुम बच्चे हो। सामने से हट जाओ, नहीं तो तुम्हें चबाते देर न लगेगी।

लक्ष्मण ने बढ़कर कहा—'हम बच्चे हैं पर लोहे के चने हैं। तुम्हारे दाँत टूट जायँगे। हीरे की कनी छोटी होती है। पर जो उसे चाट लेता है, वह मर जाता है। हलाहल को पीकर उसका स्वाद बताना असम्भव है। हमें बालक समझ कर पैर न बढ़ाना, नहीं तो अच्छा न होगा।

सुबाहु और मारीच को अपने बल का बड़ा गर्व था। उन्होंने राजकुमारों की चेतावनी पर ध्यान न दिया। वे किलकारी मार कर उनकी ओर झपटे। दोनों ओर से भयंकर युद्ध होने लगा। राक्षस अपने अस्त्र-शस्त्र फेंक रहे थे। राम-लक्ष्मण अपने बाणों से उन्हें काट रहे थे। उनके हथियार विचित्र थे। कोई मूसल लिए था, कोई गदा। कोई तलवार चलाता था। कोई भाला फेंकता था। कोई ककड़-पत्थर बरसाता था। कोई लकड़ी के कुन्दे और कँटीली डालियाँ। कुछ खप्परों में मल-मूत्र लिए थे। कुछ नर-कपालों में रक्त-मज्जा भरे थे। वे इन्हें फेंक कर आश्रम को दूषित करना चाहते थे। वे जानते थे कि महर्षिगण इनको अपवित्र समझते हैं। वे देखते ही भाग जायँगे और यज्ञ की सामग्री हमें खाने को मिल जायगी।

सुबाहु ने कड़क कर कहा--खबरदार ! आगे न बढ़ना। मैं आज अपनी माँ का बदला तुम से ले लूँगा। यदि भला चाहते हो तो धनुष रख दो। उसे अपनी भुजाओं पर बड़ा गर्व था। लक्ष्मण ने बड़े कौशल से उसकी भुजाएँ काट डालीं। यह देख मारीच क्रुद्ध होकर दौड़ा। वह उन्मत्त होकर बक रहा था। राम ने वह बाण चलाया जो प्रचण्ड अग्नि सा दहक रहा था। उसके तेज से मारीच भाग खड़ा हुआ। बाण ने उसका पीछा किया। अन्त में सौ योजन जाकर उसने हार मान ली। राम का बाण तरकस में लौट आया।

मारीच और सुबाहु की दुर्दशा देख अन्य राक्षसों की हिम्मत छूट गयी। वे भाग खड़े हुए। फिर किसी को आगे बढ़ने का साहस न हुआ। विश्वामित्र का यज्ञ पूर्ण हो गया। यज्ञ की समाप्ति पर ऋषियों ने राम-लक्ष्मण के वीरत्व की भूरि-भूरि प्रशंसा की। उन्होंने आशीर्वाद दिया कि तुम सर्व विजयी बनो। युद्ध में तुम्हें कोई पराजित न कर सके।

राम-लक्ष्मण ने विश्वामित्र को प्रणाम किया। ऋषि ने प्रसन्न होकर उन्हें गले से लगा लिया और कहा—वत्स! तुमने हमारी आशा पूरी की। दोनों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
दीर्घजीवी और सुखी रहो। राम ने कहा कि यह सब तो उस धनुर्विद्या का प्रभाव है, जो आपने मुझे सिखलायी है। अहो भाग्य ! मैं उसमें उत्तीर्ण हो गया। हममें इतनी शक्ति कहाँ जो इन प्रबल राक्षसों को मार सकते। आपने हमें यश दिया। आप धन्य हैं !

जनकपुरी की यात्रा और अहिल्योद्धार

एक दिन विश्वामित्र को समाचार मिला कि जनकपुरी में सीता का स्वयंबर होने जा रहा है। उसमें देश-देश के राजा आमंत्रित किये गये हैं। दोनों राजकुमार स्वयंबर देखने को उत्सुक हुए। विश्वामित्र उन्हें लेकर मिथिलापुरी को चल दिये।

राम-लक्ष्मण वन-उपवन की प्राकृतिक शोभा देखते चले जा रहे थे। चलते-चलते एक सघन वन-खण्ड मिला। चारों ओर घोर सन्नाटा था। न कोई जीव-जन्तु दिखायी देता था और न कोई चिड़िया चहकती थी। लक्ष्मण ने कहा—'भैया ! यह कैसा शून्य स्थान है ! वृक्षों के झुरमुट में यह कुटी कैसी ? चलिये, उसमें कुछ देर विश्राम करें।'

उन्होंने बाँस और केले के झुरमुट में प्रवेश किया। वहाँ एकपरित्यक्त कुटी दिखायी पड़ी। उसके द्वार पर संगमरमर की सी एक शिला पड़ी थी। राम ने कहा—'चलो भीतर चलें। उन्होंने जैसे ही कुटी में प्रवेश करना चाहा, त्योंही शिला सजीव हो उठी। राम को पदस्पर्श से जान पड़ा कि कोई कोमलाङ्गी बाला है। उसके पैर लग जाने का उन्हें बड़ा खेद हुआ। तब तक वह अँगड़ाई लेकर उठ बैठी। उसे जान पड़ा कि मैं गहरी नींद सोकर उठी हूँ। उस दिन की सारी घटनायें उसे स्वप्न के समान जान पड़ीं। उसके कानों में स्वामी के स्वर गूँज रहे थे। 'तेरा उद्धार भगवान ही करेंगे।' आँखें खोलते ही उसे श्यामल मूर्ति दिखायी पड़ी। उसे निश्चय हो गया कि नील मेघ के समान कान्ति वाले विष्णु ने मुझे दर्शन दिये। वह हाथ जोड़कर कहने लगी:—

'हे पतितपावन ! आप की जय हो। आपके दर्शन पा मैं कृतकृत्य हो गयी। मैं आप की क्या प्रशंसा करूँ ? महिमण्डल के रज-कण गिने जा सकते हैं : महासागर के जलसीकरों की गणना हो सकती है, आकाश के नक्षत्रों की गिनती की जा सकती है; किन्तु आप के गुणों का कथन नहीं हो सकता ? ऐसा कहते-कहते उसका गला भर आया। शरीर के रोम-रोम पुलकित हो उठे। आँखों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

से अविरल अश्रु बहने लगे। उसे विश्वास हो गया कि भगवान के चरणों की धूल समस्त पापियों को तार सकती है। उसने करुणाभरी दृष्टि से राम की ओर देखा। फिर आत्मविभोर हो गयी।

राम ने कहा—'देवी ! धन्य हो। तुमने जीवन में महान पुण्य किये। तुम बड़ी पतिव्रता हो। तुम्हारी एक भूल के कारण ऋषि ने शाप दे दिया था। आज तुम उससे मुक्त हो गयी। महर्षि गौतम के वचन सत्य हो गये। ऋषियों की वाणी कभी असत्य नहीं होती। तुम पतिलोक को जाकर यशलाभ करो।'

लक्ष्मण ने देखा कि एक ज्योति सहसा चमकी और विलीन हो गयी। उन्होंने मुनि से पूछा कि यह विचित्र घटना कैसी ? महर्षि ने बतलाया कि महान आत्मायें इसी प्रकार दिव्य लोक को जाया करती हैं। शरीर जड़ है। आत्मा चेतन है। वह ज्योति स्वरूप परमात्मा की एक किरण मात्र है। वह स्थूल शरीर छोड़कर सूक्ष्म रूप से परम तत्त्व में लीन हो जाती है। सर्व साधारण इस गूढ़ रहस्य को नहीं जानते। गौतम ने यही तत्व अहिल्या को समझाने का प्रयत्न किया था। उस समय उसे ज्ञान न था। आज आत्म अनुभव हो गया। लक्ष्मण ने पूछा—'सो कैसे ?'

विश्वामित्रने कहा—'किसी समय यहाँ तपोवन था। इसमें गौतम मुनि अहिल्या के साथ बाणप्रस्थ अवस्था में रहते थे। वे तत्वज्ञानी थे। वह सदा तपस्या और ध्यान में लीन रहते थे। अहिल्या की चित्तवृत्ति शान्त न हुई थी। उसकी वासना रह-रह कर जाग्रत हो उठती थी। वह सांसारिक सुखों के त्याग के पक्ष में न थी। उसकी तर्क बुद्धि उसे स्वीकार न करती थी। वह अनिंद्य सुन्दरी थी। तापसी वेश में वह रति ही जान पड़ती थी। एक दिन देवराज इन्द्र गौतम से मिलने आये। उनकी दृष्टि अहिल्या पर पड़ी तो वासना जाग्रत हो गयी। महर्षि के सामने बातचीत करने का साहस न हुआ। वह प्रणाम कर चुपचाप चले गये।'

इन्द्र देवताओं के स्वामी हैं। उन्हें अपने पद और शक्ति का बड़ा गर्व रहता है। वह प्रायः उनका दुरुपयोग भी करते हैं। प्रभुत्व पाकर मद का आना स्वाभाविक है। दुनिया में जितने बुरे काम हैं, वे प्रायः रात में छिपा कर किये जाते हैं। उस रात तीसरे पहर इन्द्र आश्रम के निकट छिप गये और कुक्कुट के स्वर में बाँग देने लगे। उसे सुन गौतम निद्रा से जाग पड़े। उन्होंने समझा कि ब्राह्म मुहूर्त हो गया। 'ओम' शब्द का उच्चारण कर शैया त्याग दी और कौपीन,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मृगचर्म, कमण्डल लेकर नदी में स्नान करने चल पड़े। स्नान-ध्यान करके जब सूर्य को अर्घ्य देने को हुए तो देखा कि अभी उषाकाल होने में देर है। आकाश में तारे छिटके हुए हैं। वन में शृगाल हुआ रहे हैं। वे अपने आश्रम को लौट पड़े।

महर्षि की चरण पादुकाओं का स्वर सुनते ही इन्द्र चोर की तरह कुटी से निकल भागे। उनका शरीर काँप रहा था। हृदय धड़क रहा था। मारे लज्जा के शिर झुकाये हुए थे। ऋषि को सारी घटना समझते देर न लगी। उन्होंने कड़े स्वर में कहा—

'देवराज ! तेरी बुद्धि नष्ट हो गयी। तू गिरा तो गिरता ही चला गया। तूने शिष्य होकर मर्यादा का उल्लंघन किया। रात के समय एकान्त कुटी में घुसना सन्देह से खाली नहीं हो सकता। तूने घोर पाप किया है। उसका दण्ड भोगने को प्रस्तुत हो जा।' उन्होंने कमण्डल से हाथ में जल ले लिया और कहा—'जा, तेरे शरीर भर में स्त्री के गुप्तांग हो जायँ। तेरी दुरभिलाषा सब पर विदित हो जाय।' फिर उस पर जल छिड़क दिया।

अहिल्या ने स्वामी को क्रोधावेश में देखा तो वह भी थर-थर काँपने लगी। उसे विदित हो गया कि इन्द्र ने स्वामी के वेश में मुझ से छल किया। वह सोचने लगी कि मेरी बुद्धि को क्या हो गया, जो मैं महर्षि और देवेन्द्र में भेद न कर सकी। उसने लज्जा से अपनी दोनों आँखें मूँद ली और सिसक-सिसक कर रोने लगी। महर्षि ने उसे भी शाप दे दिया। 'सुन्दरी ! नहीं पापिनी ! तूने स्पर्श सुख की वासना से दुष्कृत्य किया। तू शिला हो जा। तुझे स्पर्श सुख का कभी अनुभव ही न हो।'

प्रभञ्जन की गति मंद होने पर वायुमण्डल शान्त हो जाता है। बाढ़ के उपरान्त धारा का प्रवाह मंद पड़ जाता है। अहिल्या को शाप दे चुकने पर गौतम का क्रोध भी शान्त हो गया। इन्द्र ने अपना वीभत्स रूप देखा तो उन्हें अपने से ही घृणा होने लगी। वह मुनि के चरणों में गिर पड़े और बोले—'गुरुवर ! मैंने अपराध किया। अतः दण्ड स्वीकार है। किन्तु कुछ तो दया कीजिए। मैं तो कहीं मुँह दिखाने लायक न रहा।'

गौतम ने कहा कि धनुष से छूटे हुए तीर और सत्पुरुष के मुख से निकले हुए वचन वापस नहीं होते। फिर भी शिव के धनुष टूटने का शब्द जब तेरे कानों में पड़ेगा तो ये गुप्तांग तुम्हारे सहस्त्र नेत्र हो जायेंगे। इन्द्र ने कहा कि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आप धन्य हैं ! पाप-ताप इतनी कृपा बहुत है। यह तो शाप नहीं वरन् वरदान है।

स्वामी को शान्त देख अहिल्या ने कहा—'स्वामिन ! मेरा क्या ऐसा अपराध है कि जन्म-जन्मान्तर में भी निष्कृति न मिले। मुझ अबला पर इतनी कठोरता क्यों ? पौरुष के बल पर आप नारी के साथ अन्याय करते हैं। उसकी दुर्बलताओं पर विचार नहीं करते। देव ! मुझे क्षमा करें। मुझसे बड़ी भूल हुई।'

गौतम ने कहा—'प्रत्येक भूल का निराकरण पश्चात्ताप है। यदि तुम्हें अपने कर्म से स्वतः ग्लानि है तो तुम्हारी आत्मा तप कर स्वर्ण के समान शुद्ध हो जायगी। प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्मों का स्वयं उत्तरदायी है। मैं इसमें क्या कर सकता हूँ ? तेरा कल्याण भगवान ही करेंगे। उनके चरण स्पर्श से तुम्हें सच्चा सुख मिलेगा। तुम्हारी कुण्डलिनी जाग्रत हो जायगी। तब प्राणवायु ब्रह्माण्ड को फोड़ ब्रह्म में लय हो जायगी।'

अहिल्या तब से यहाँ पड़ी हुई धूप और वर्षा सहती रही। उसका शरीर शिला के समान जड़ हो गया। उसे न जाड़ा लगता था और न गर्मी। सुख-दुख का भी उसे अनुभव न होता था। आज वह मुक्त हो गयी। राम ! तुम धन्य हो ! तुमने जड़ को चेतन कर दिया।

जनकपुरी में प्रवेश

राम -लक्ष्मण अगले दिन जनकपुरी में पहुँचे। मार्ग में अनेक अमराइयाँ थीं। आम्रमंजरी की सुगंधि वायुमण्डल में गमक रही थी। उस पर भौरें गूँज रहे थे। कोयलें इधर-उधर उड़ कर कुहू-कुहू कर रही थीं। पपीहा पिहू-पिहू की रट लगाये था। जिस समय राम-लक्ष्मण ने नगरी में प्रवेश किया उस समय उषा काल था। भगवान भास्कर प्राची के भाल पर सिंदूर बिन्दु के समान शोभा दे रहे थे। उनके अनुराग से उषा सुन्दरी रागमयी हो रही थी। विश्वामित्र जी ने कहा कि हम लोग बड़े शुभ समय पर आये। शकुन अच्छे झलक पड़ते हैं। चलो किसी सरोवर के तट पर नित्य-कर्म करें।

महाराज जनक को विश्वामित्र के आने का समाचार मिला। वह अपने पुरोहित शतानंद के साथ उनसे मिलने आये। जनक जी ब्रह्मनिष्ठ थे। वह राज-काज तो करते थे पर अपने को भूले रहते थे। वह यथार्थ में विदेह थे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उन्होंने राम-लक्ष्मण की जोड़ी देखी तो थोड़ी देर के लिए आत्मविभोर हो गये। उन्होंने विश्वामित्र को प्रणाम करके पूछा कि ये कुमार किस कुल के भूषण हैं ?

विश्वामित्र ने बतलाया कि ये अवध के महाराज दशरथ के पुत्र हैं। बड़े का नाम राम और छोटे का लक्ष्मण है। हम इन्हें अपने यज्ञ की रक्षा के लिए महाराज से माँग लाये। मार्ग में इन्होंने दुष्टा ताटका को स्वर्ग भेज दिया। सुबाहु और मारीच को पराजित कर हमारे यज्ञ की रक्षा की। जनकपुरी आते समय इनके पदरज की स्पर्श से अहिल्या तर गयी। ये हमारे परम प्रिय शिष्य हैं। हम आपसे इनकी क्या प्रशंसा करें। हमें ऐसे शिष्यों को पाकर गर्व है। फिर उन्होंने राम लक्ष्मण से राजर्षि जनक और शतानंद जी को प्रणाम करने के लिए कहा।

शतानंद जी अपनी माता की सद्गति सुनकर आनन्द से फूले न समाये। उन्होंने बड़े संभ्रम से राजकुमारों को देखा और विश्वामित्र जी से बोले—

आप जिसकी पीठ पर हाथ रखें, वह क्या नहीं कर सकता ? जो शिष्य अपने गुरु के चरण रज की सेवा करते हैं, उनको संसार के सभी वैभव प्राप्त हो जाते हैं। फिर जिन्हें आप ऐसे गुरु मिलें, उनके भाग्य का क्या कहना ! हमारा परम सौभाग्य कि आप हमारे यहाँ इन्हें ले आये। इस प्रकार परस्पर अभिनंदन करके जनक जी ने राम-लक्ष्मण और विश्वामित्र को एक सुन्दर स्थान में ठहराया तथा उनके सुख-सुविधा की पूर्ण व्यवस्था कर दी।

मिथिला वर्णन

महाराज जनक ने अभ्यागतों के लिए बड़ा उत्तम प्रबन्ध किया था। उनके परिचारक अतिथियों के सामने हाथ जोड़े खड़े रहते। उन्हें जो आवश्यकता होती उसे तुरन्त पूरी करते। किसी को कोई कमी मालूम न पड़ती थी। विश्वामित्र महाराज जनक के इस प्रबन्ध को देख बड़े प्रसन्न हुए। भोजन और विश्राम के पश्चात् तीसरे पहर लक्ष्मण की इच्छा नगर देखने की हुई। वह मन ही मन मुस्कुराने लगे। राम ने भाई के मन की ताड़ ली। उन्होंने गुरु से कहा—'गुरुदेव ! लक्ष्मण मिथिला नगरी देखना चाहते हैं। मारे संकोच के वह कहने से डरते हैं। यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं उन्हें दिखा लाऊँ।' विश्वामित्र ने सहर्ष स्वीकृति दे दी। साथ ही कह दिया कि सन्ध्या होते-होते लौट आना।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मिथिलापुरी तो रमणीक थी ही। विवाहोत्सव के कारण विशेष दर्शनीय हो गयी थी। राजमार्ग परिष्कृत थे। गलियों में केवड़े की सुगन्धि उठ रही थी। उनके दोनों ओर झंडियाँ लगी थीं। भवनों के शिखरों पर ध्वजा-पताकाएँ फहरा रही थीं। द्वारों पर कदली-स्तम्भ और जल से भरे घट रखे थे। उनमें मणि-दीप जगमगा रहे थे। देव मन्दिरों में शंख-घड़ियाल और ड्योढ़ियों पर शहनाइयाँ बज रही थीं। घरों में आनन्द बधावे हो रहे थे। लोग अपने-अपने काम में व्यस्त थे। उन्हें दूसरों से बातचीत करने का समय ही न था। ऐसा जान पड़ता था कि घर-घर बेटी का विवाह हो रहा है। वह त्रेता युग था जब राजा और प्रजा में सद्भावना थी। आज वे बातें स्वप्न सी जान पड़ती हैं। गाँवों में जहाँ-तहाँ अब भी झलक मिल जाती है।

राम-लक्ष्मण को नवागन्तुक जान मिथिला के बालकों ने घेर लिया। वे तरह-तरह के प्रश्न करने लगे। थोड़ी ही देर में उनका घना परिचय हो गया। वे ऐसे हिलमिल गये मानो बाल्यकाल के साथी हों। वे कन्धों पर हाथ डाल हँस-हँस कर बातें करने लगे। कोई नगर की सजावट दिखाता, कोई मंदिरों की चित्रकारी। कोई बाजारों की शोभा दिखाता और कोई राज भवनों की। कोई जलपान को पूछता, कोई भोजन का निमंत्रण देता और कोई खेलने को कहता। बालक उनके सरल स्वभाव पर निछावर थे। राम उनके भोलेपन पर मुग्ध थे।

राम-लक्ष्मण बड़े शीलवान हैं। वे किसी का मन तोड़ना नहीं चाहते। वे सबकी रुचि रखते हैं। जिसका घर आ जाता है, वहीं चले जाते हैं। उनके माता-पिता राम-लक्ष्मण की जोड़ी देख अघाते नहीं। वे उनके रूप, शील और गुणों की प्रशंसा करते हैं। मनुष्य की कीर्ति सदा उसके आगे चलती है। स्त्रियों में काना-फूसी हो रही है। कोई कहती है कि राम-सीता की जोड़ी तो अच्छी है। पर राम बालक हैं। वे धनुष कैसे उठा पायेंगे ? इस पर दूसरी कहती है कि ये देखने में छोटे हैं पर शक्तिवान और बलवान हैं। इन्होंने सुबाहु और मारीच जैसे प्रबल राक्षसों को धूल चटायी। धनुष उठाना इनके लिए क्या कठिन है ? अहिल्या की कथा सुनकर तो वे दाँतों तले उँगली दबातीं हैं। उनका विश्वास था कि राम अवश्य धनुष उठाकर सीता का पाणिग्रहण करेंगे। भगवान करे यह सम्बन्ध हो जाय। इस नाते ये कभी न कभी मिथिला आते रहेंगे। हमें इनसे बातें करने और देखने का सौभाग्य मिलता रहेगा।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दोनों भाई बालमण्डली के साथ मिथिला के बाजार में पहुँचे। बाजार की शोभा देखते ही बनती थी। धनिक, वीणक, बजाज, सराफ, महाजन, श्रेष्ठी और जौहरी अपनी वस्तुओं को लिए बैठे थे। मणि, मुक्ता, हीरे, जवाहरात, वस्त्र-आभूषण, हाथी दाँत एवं काष्ठ की कलात्मक वस्तुओं के ढेर लगे थे। दुकानों की सजावट देखते ही बनती थी। जिस बीथी में जो वस्तु बिकती थी उसी के नाम पर वह विख्यात थी। संसार की ऐसी कोई वस्तु नहीं, जो वहाँ न बिकती हो। सभी वस्तुएँ कौड़ियों के दामों पर बिक रही थीं। पर उनके ग्राहक न थे। किसी को किसी वस्तु की आवश्यकता ही न प्रतीत होती। सब को सभी कुछ प्राप्त था। उनमें आत्म-तुष्टि की भावना प्रबल थी। और क्यों न हो ? जहाँ विदेह जैसे निस्पृही भूपति हों, वहाँ यथा राजा तथा प्रजा की उक्ति चरितार्थ होनी ही चाहिए।

राजकुमार जिस दुकान के पास से होकर निकलते, उसके मालिक उन्हें आदर से बुलाते अपनी वस्तु दिखलाते, उसकी प्रशंसा करते और लेने को कहते थे। राम उनका मूल्य पूछते, पर वे दाम न बताते थे। वस्तु लौटाने पर उदास हो जाते। उनको संतुष्ट करने के लिए राजकुमार कह देते कि अच्छा ले लेंगे। उनकी समझ में न आता था कि क्या लें और क्या न लें। महाजन कहते कि आप दामों की चिंता न करें। हम महाराज के पास बिल भेज देंगे।

जनकपुरी बड़ी विशाल थी। घूमते-घूमते सन्ध्या हो गयी। सूर्यदेव अस्ताचल को जाने लगे। राम ने लक्ष्मण से कहा कि भैया, चलो, लौट चलें। मुनिवर चिंतित होंगे। बालक गण उन्हें छोड़ना न चाहते थे। पर आग्रह न कर सके। राजकुमारों ने यह कह कर बिदा ली कि कल फिर मिलेंगे। फिर भी वे कुमारों को निवास स्थान तक भेज आये। राम ने गुरु को जाकर प्रणाम किया। नगर का आँखों देखा वर्णन कह सुनाया। मुनि बड़े प्रसन्न हुए। सन्ध्या वंदनादि करके वे मुनि की सेवा करने लगे। विश्वामित्र जी ने कहा कि घूमने से थक गये होगे। अब जाकर विश्राम करो। फिर लक्ष्मण राम के कमल-चरणों को अपने हृदय से लगाकर शयन करने लगे।

पुष्प-बाटिका

प्रातःकाल ब्राह्ममुहूर्त में राम शैया त्याग कर उठे। लक्ष्मण ने भाई के चरण छुए। फिर दोनों ने गुरु को प्रणाम किया। नित्य-कर्म से निवृत्त होकर पूजा के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लिए पुष्प लेने चले। नगर से मिली हुई जनक की पुष्प-बाटिका थी। उसके चारों ओर पक्की दीवाल बनी थी। उसमें जगह-जगह फाटक लगे थे। फाटकों से फुलवाड़ी के भीतर चौपड़ की सड़कें जाती थीं। उनको जोड़ने वाली अनेक छोटी सड़कें थीं। उनके द्वारा बाटिका अनेक खण्डों में बँटी थी। प्रत्येक खण्ड में कई-कई क्यारियाँ थीं। हर क्यारी अपनी अनुपम छटा दिखला रही थी। चाँदनी खिली थी। सेवती मुकुलित थी। जूही और चमेली की कुञ्जें पुष्पों से मण्डित थीं। हर श्रृंगार के पुष्प पेड़ों के नीचे बिछे थे। मालती मुकुलित थी। रजनीगन्धा अपनी अलग ही बहार दिखा रही थी। कुंजों में स्फटिक शिलाएँ पड़ी थीं। यत्र-तत्र शाखाओं में झूले पड़े थे। तोता-मैना मधुर संलाप कर रहे थे। अनेक पक्षी कलरव करके बाटिका को सजीव बना रहे थे।

दोनों भाई पुष्पोद्यान देख बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने इधर-उधर दृष्टि दौड़ायी। माली बाटिका को सँवार रहे थे। कोई कुंजों को छाँट रहा था। कोई बेलें चढ़ा रहा था। कोई क्यारी गोड़ रहा था। कोई पौधों को सींच रहा था। वे एक माली के पास गये। उससे कहा—'हम गुरु पूजा के लिए फूल तोड़ना चाहते हैं। यदि तुम कहो तो हम ले लें, नहीं तो तुम्हीं तोड़ कर दे दो।' माली ने हाथ जोड़कर कहा—'बाटिका आप की है। आप हमारे राजा के अभ्यागत हैं। आप जिस तरह के जितने फूल चाहें, ले लें।' उसने पत्तों के दो दोने भी फूल रखने के लिए बना दिये। दोनों भाई स्वेच्छा से बिल्वपत्र, तुलसीदल, तथा रंग-बिरंगी सुगन्धित पुष्प चयन करने लगे। पुष्प तोड़ते समय उनकी दृष्टि जलाशय पर पड़ी।

बाटिका के मध्य में एक सरोवर था। उसके चारों ओर संगमरमर की सीढ़ियाँ बनी थीं। उनपर मणि, मुक्ता, नीलम, पुखराज आदि की पच्चीकारी करके जल पक्षियों के चित्र काढ़े गये थे। ऐसा जान पड़ता था कि जलाशय में बिहार करने वाले पक्षियों के वे प्रतिबिम्ब ही हैं। वे रंग-रूप और आकार-प्रकार से सजीव जान पड़ते थे, मानों बोलना चाहते हों और उड़ने के लिए पंख फड़फड़ा रहे हों। सरोवर में अनेक पक्षी बिहार कर रहे थे। कमल और कुमोदिनी के पुष्प खिले थे। उनपर भ्रमर मँडरा रहे थे। शीतल वायु बह रही थी। उसके स्पर्श से जलाशय में लहरें उठ रही थीं। दोनों भाई सीढ़ियों पर बैठकर बड़ी देर तक पक्षियों की जल क्रीड़ा देखते रहे।

लक्ष्मण ने कहा—'भैया! यहाँ तो अयोध्या का सा आनन्द आ रहा है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राम ने कहा कि यहाँ की पुष्करिणी, अमराइयाँ, बेलें और लताएँ तो अपना विशेष महत्त्व रखती हैं। ऐसा जान पड़ता है कि यहाँ दूसरी ही बयार बहती है। जिसे देखो वही आनन्द विभोर है। लताएँ वृक्ष-स्कन्धों से लिपट रही हैं। कमल और कुमुदिनी के पुष्प एक दूसरे की ओर झुक रहे हैं। मराल और कलहंसों के युग्म जलक्रीड़ा कर रहे हैं। हंस कमल नाल तोड़कर क्षीर पी रहे हैं। सारस किनारे खड़े एक दूसरे के पंख खुजला रहे हैं। कबूतर और कबूतरी के जोड़े मुँडेरों पर बैठे गुटुरगूँ कर रहे हैं। मयूर नृत्य कर रहा है। मयूरी मुग्ध हो उसे ताक रही है। आज मेरी दाहिनी आँख फड़क रही है।

लक्ष्मण ने कहा कि बड़ी अम्बा कहा करती थीं कि जब कोई प्रियजन याद करता है तो आँख फड़कती है। यदि किसी प्रिय से मिलन होने को होता है तो भुजा फड़कती है। यदि यात्रा करना है तो तलवे खुजलाते हैं। यदि कुछ प्राप्ति होने वाली है तो हथेली खुजलाने लगती है। हमें अयोध्या छोड़े अधिक दिन हो गये। कदाचित माताएँ हमारी याद कर रही होंगी।

उसी समय जनक नन्दिनी अपनी सखियों के साथ पुष्प-वाटिका में आईं। माँ ने उन्हें पार्वती की पूजा करने के लिए भेजा था। पूजा की थाली और जल-पात्र लेकर वे मंदिर की ओर चलीं। उसी समय एक सखी ने कहा कि जो राज-कुमार कल नगर में आये थे, वे वाटिका में घूम रहे हैं। सीता ने जब से राम के रूप और गुणों की प्रशंसा सुनी थी तब से उन्हें देखने के लिए व्याकुल थीं। यह स्वर्ण-संयोग देख उनकी हृदय-कलिका खिल उठी। कुमारों के देखने की अभिलाषा तीव्र हो उठी। इधर राम के कानों में युवतियों के नूपरों की ध्वनि पड़ी तो वह उधर की ओर देखने लगे। सीता और राम की दृष्टि एक दूसरे पर पड़ी। दो बिछुड़े हुए प्राणी मिल गये। नेत्रों की भाषा में परिचय हुआ। दो हृदयों का विनिमय हो गया। ऐसा जान पड़ा कि वे जन्म-जन्मान्तर से परिचित हैं। सीता के मानस में राम की मूर्ति रम गयी और राम के हृदय पटल पर सीता की प्रतिमा अंकित हो गयी। वे अपने हृदयों को ढूँढ़ने लगे। उनका मानसिक मिलन हो गया। लौकिक मिलन तो लोक-रीति पर ही आधारित था। विवाह के पूर्व किसी प्रकार की बातचीत नियम के प्रतिकूल जान राम ने अपनी आँखें हटा लीं। उन्होंने लक्ष्मण से कहा—यही जनक लली हैं। सखियों के बीच में लाज से सिमटी जा रही हैं पर अपनी कान्ति से छिप नहीं पातीं। पत्तों में फूल नहीं छिप सकता। कमलदलों में पद्मिनी नहीं छिप सकती।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सीता ने लज्जा से आँख नीची कर ली। राम का ध्यान करती हुई वह पार्वती के मंदिर में पहुँची। मूर्ति को स्नान करा केरो ली, अक्षत और पुष्प-माला चढ़ायी। फिर धूप-दीप-नैवेद्य अर्पित कर खड़ी हो गयीं। ध्यान तो वह पार्वती का कर रही थीं पर राम की मूर्ति बार-बार सामने आ जाती थी। नीलमेघ के समान कान्ति, विद्युत के समान पीताम्बर, विशाल वक्षस्थल, पीन स्कन्ध, आजानुबाहु, कन्दली के समान दीर्घ एवं प्रस्फुटित नेत्र भुलाये न भूलते थे। वह हाथ जोड़ मन ही मन कहने लगीं:—

'देवि ! मैं आप की क्या प्रशंसा करूँ ? आपने कठिन तप करके अपने आराध्य देव को प्राप्त कर लिया। शिवजी आपके प्रेम को देख कर इतने रीझे कि अंग में ही समेट लिया। आप अर्द्धांगिनी बन गयीं। भला ऐसी सामर्थ्य और किसमें हो सकती है ? । आप अज हैं, अनादि हैं, अविनाशिनी हैं। आप आदि शक्ति हैं, दुर्गा हैं और अनन्त शक्तिशालिनी हैं। आप सृष्टि रचती, पालन करतीं और फिर नाश कर देती हैं। आप सारे जगत की धात्री हैं। मनुष्य क्या देवता भी आपकी दया के अभिलाषी रहते हैं। मैं न पूजापाठ जानती हूँ, न जप-तप कर सकती हूँ और न उसके लिए मेरे पास समय ही है। केवल मन की शुद्ध भावना लेकर आपके पास आई हूँ। आप जगज्जननी हैं। माँ से बेटी की कोई बात छिपी नहीं रहती। आप मेरे मन की जानती हैं। आप सबके हृदयों में बास करती हैं। फिर मैं आप से क्या कहूँ ?' ऐसा कहते-कहते उनकी आँखें डबडबा गयीं। कण्ठ भर आया। वह कुछ बोल न सकीं। केवल गौरी के चरणों में गिर पड़ीं। उसी समय मंदिर में आकाशवाणी हुई। 'सीते! तुम्हारी मनोकामना पूरी हो।' उसे सुनकर सीता परम प्रसन्न हो प्रतिमा की ओर देखने लगीं। उन्हें पार्वती की मूर्ति मुस्कुराते हुए जान पड़ी। उसके गले से माला खिसक पड़ी। सीता ने उसे प्रसाद मान उठा लिया और रनिवास की ओर चल पड़ीं।

राम फूलों का दोना लिए भाई से बातचीत करते हुए निवास की ओर चल दिये। उनके मन में सीता की मधुर स्मृति बार-बार जाग पड़ती थी। वह सीता की भोली चितवन, लजीले स्वभाव और शील की प्रशंसा करने लगे। उन्होंने लक्ष्मण से कहा—भाई ! आज तक मैंने कभी किसी युवती की ओर आँख नहीं उठायी। पर जनक नन्दिनी को देख कर मेरा मन वश में न रहा। पर नारी के सम्बन्ध में चर्चा करना अनुचित है, पर सीता के सम्बन्ध में बिना

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुछ कहे मन नहीं मानता। कदाचित हम लोगों का परिचय पूर्व जन्म का है। आत्मा के सुदृढ़ सम्बन्ध जन्म-जन्मान्तर तक चलते रहते हैं। संसारमें जब किसी पूर्व परिचित से भेंट हो जाती है तो आत्माएँ एक दूसरे को पहचान लेती हैं। सुनते हैं कि जानकी जनक की-पुत्री नहीं हैं। विदेह राज सीरध्वज ने उन्हें हल कर्षण के समय पाया। राजा और रानी ने पालन-पोषण किया। सीता उनकी पोषिता पुत्री हैं।

लक्ष्मण सीता के सम्बन्ध में अनधिकार चर्चा न करना चाहते थे। अतः बड़े भाई की बातों का समर्थन केवल शिर हिलाकर अथवा हुंकार मात्र से करते रहे। उन्होंने वासस्थान पहुँच गुरु को पुष्प भेंट कर दिये। साथ ही यह भी कहा कि आज के पुष्प बड़े सुन्दर हैं। विश्वामित्र ने कहा—'कदाचित् इसी लिए इतनी देर हो गयी।' राम ने समझ लिया कि गुरुवर की अन्तर्दृष्टि से कुछ छिपा नहीं। उन्होंने सरल स्वभाव पुष्प बाटिका की सारी कथा कह सुनायी। महर्षि उनकी स्पष्ट वादिता से बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने आशीर्वाद दिया कि तुम्हारे मनोरथ सफल हों। यह सुनकर राम और लक्ष्मण बड़े प्रसन्न हुए।

धनुषयज्ञ

नगर के बाहर एक विशाल मैदान धनुष यज्ञ के लिए चुना गया था। उसे परिष्कृत करा कर बहुत बड़ा बितान लगाया गया। बितान में चारों ओर हीरे-जवाहरातों की झालरें लगी थीं। उसे सम्हालने के लिए आम, सुपारी, नारियल और बाँस के स्तम्भ लगाये गये। सभा मण्डप कदली के गाभों, आम्र तथा अशोक के पल्लवों से सजाया गया। मण्डप में साल, सागौन और चंदन के अनेक मंच, आसन एवं पीठिकाएँ बनायी गयी। फर्श पर पारसीक और काश्मीर के रंगविरंगी कालीन और दरियाँ बिछायी गयीं। जरी के काम की रेशमी व सूती चादरें मंचों पर पड़ी थीं। मंचों के पीछे मखमली उपधान लगे थे। इन पर देश-विदेश के राजा बैठे थे। एक ओर महाराज जनक अपने मंत्रि-परिषद के साथ विराजमान थे। उनकी बगल में सुनयना अपनी सखियों के साथ बैठी थीं। दूसरी ओर सीता अपनी सहेलियों के साथ सभाभवन की शोभा बढ़ा रही थी। पूर्व की ओर मयूर सिंहासन पर राम-लक्ष्मण विश्वामित्र के साथ विराज रहे थे। पश्चिम की ओर नगर के श्रेष्ठी, महाजन एवं दर्शकों की भीड़ लगी थी। सीता के मंच के पास देवियों के बैठने का स्थान था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सभा मण्डप दर्शकों से भर गया। आमंत्रित व्यक्ति अपने-अपने आसनों पर जम गये। जनक जी ने मुख्यमंत्री को धनुष मँगाने का आदेश दिया। मंत्री की आज्ञा से हस्ति के समान विशाल शरीर वाले, मुद्गर के समान पुष्ट भुजाओं वाले, वृषम के समान पीन स्कंध वाले एवं स्तम्भ के समान मोटी जंघाओं वाले अनेक मल्ल एक लौह मञ्जूषा खींच लाये। मंजूषा एक लौह-गंत्री पर रखी थी। उसमें आठ पहिए लगे थे। मल्लों ने मंजूषा खोल कर धनुष निकाला। उसे एक ऊँचे मंच पर रख दिया। इसे देखने के लिए जन समूह उमड़ पड़ा।

धनुष क्या था, साक्षात वासुकी नाग जान पड़ता था। इसमें सोने की असंख्य छोटी-छोटी घंटियाँ लगी थीं। उस पर सुवर्ण और चाँदी के पत्र मढ़े थे। उन पर हीरे, मोती और माणिक्य जड़े थे। इसका निर्माण विश्वकर्मा ने किया था। यह शंकर जी को दैत्यों के मारने के लिए दिया गया था। ऐसा ही एक धनुष विष्णु के पास था। एक वार ब्रह्मा ने शिव और विष्णु में झगड़ा करा दिया। दोनों में भयानक युद्ध हुआ। युद्ध विध्वंसकारी हो जाता, यदि देवता बीच में न आ जाते। उन्होंने कहा कि इन धनुषों का निर्माण असुरों के मारने के लिए हुआ था। इनका उद्देश्य पूरा हो चुका। इन्हें अब स्मृति रूप में रख देना चाहिए। विष्णु ने अपना धनुष ऋचीक के पास और शंकर ने निमि के पुत्र देवरात के पास धरोहर रूप में रख दिया। जनक जी को यह पैतृक सम्पत्ति के रूप में मिला। वह नित्य इसकी पूजा करते थे। एक दिन उनके मन में विचार उठा कि मै अपनी पुत्री का विवाह उस वीर पुरुष के साथ करूँगा जिसमें इस धनुष को खींच कर प्रत्यंचा चढ़ाने की शक्ति हो। इसी कारण धनुषयज्ञ का आयोजन किया गया था। धनुष को देखकर जनता में अनेक प्रकार की बातें होने लगी। उसी समय महाराज के बन्दीजन डंके की चोट पर जनक की घोषणा सुनाने के लिए एक ऊँचे मंच पर खड़े हो गये। उन्हें देख सब लोग शान्त हो गये। उन्होने कहा—

'महाराज जनक की प्रतिज्ञा है कि जो वीर इस धनुष की प्रत्यञ्चा खींच कर चढ़ा देगा, उसी के साथ जानकी का विवाह बिना कुल-जाति का विचार किये कर दिया जायगा।'

जनक की प्रतिज्ञा सुन राजागण कमर कसने लगे। वे अपने आसनों पर खड़े हो गये। कोई मारे आनन्द के नाचने लगा। कोई अपनी आस्तीनें समेटने लगा। किसी ने गदा उठायी। किसी ने धनुषबाण। कोई अपनी भुजाओं का

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रदर्शन करने लगा। कोई मुद्गर भाँजने लगा। कुछ लोग धनुष की ओर दौड़ पड़े। उन्होंने सोचा कि जो पहले धनुष की डोरी चढ़ा देगा, उसी के गले में जयमाला पड़ जायगी। हम लोग निराश रह जायँगे अतः धनुष उठाने की वे उतावली करने लगे। उनमें धक्का-मुक्की होने लगी। वे आपस में लड़ने-झगड़ने लगे। सभा सण्डप में कोलाहल मच गया। लोगों को आशंका हुई कि यज्ञस्थल कहीं युद्धस्थल में न बदल जाय।

सभा में अव्यवस्था देखकर मुख्य मंत्री सुमति खड़े हो गये। उन्होंने कहा कि आप लोग सभ्य समाज में बैठने योग्य नहीं। यह महाराज जनक का सभा मण्डप है। इसमें शान्ति अपेक्षित है। यदि कोई व्यक्ति समाज के नियमों का उल्लंघन करेगा तो वह मण्डप से बाहर कर दिया जायगा। आप लोग धीरज रखें। प्रत्येक व्यक्ति को धनुष उठाने और चढ़ाने का अवसर मिलेगा। यह शिवजी का धनुष है। इसे उठाना हँसी-खेल नहीं है।

उस समाज में अनेक विवेकशील राजा भी उपस्थित थे। सुमति की बात उनकी समझ में आ गयी। वे शांतिपूर्वक बैठ गये। अन्य असाधु राजाओं ने उनका तिरस्कार करते हुए कहा—'तुम लोग कायर हो। हम अभी धनुष चढ़ाते हैं। उन्होंने कमर कसी और झट धनुष के पास पहुँचे। उन्होंने अपनी सारी शक्ति लगा दी। धनुष हिला तक नहीं। उनके हाथ-पाँव फूल गये। मस्तक पर पसीने की बूँदें झलकने लगीं। मुख की कान्ति मलिन हो गयी। वे अपना सा मुँह लेकर लौट पड़े। उन्हें लौटते देख अन्य राजा उठे। वे अपने बल की परीक्षा करने लगे उनकी भी वही दशा हुई। जो धनुष चढ़ाने जाता वही मुँह लटका कर वापस लौटता। विचारशील व्यक्ति तो धनुष के पास ही न फटके। किन्तु विवेक शून्य और अविचारी राजाओं ने अपनी प्रतिष्ठा अपने हाथों खोयी। एक-एक करके सभी ने अपने बल की परीक्षा ली, पर असफल रहे। यह हाल देख कुछ तो सभा-मण्डप से चुपचाप चलते बने। बहुतों का मंच की ओर जाने का साहस ही न हुआ। उसी समय सभा भवन में रावण और बाणासुर आ पहुँचे।

रावण-बाणासुर संवाद

रावण और बाणासुर उस युग के प्रतापी राजा थे। उनके आते ही सभा में सन्नाटा छा गया। कुछ तो निराश हो गये कि हमारे मनोरथ अब अपूर्ण रह जायँगे। कुछ आशंका करने लगे कि यदि दोनों ने प्रत्यञ्चा चढ़ा दी तो

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
सीता किसके गले में जयमाला डालेगी ? कदाचित् दोनों में संघर्ष होगा और जो विजयी होगा, उसीको वरमाला मिलेगी। तब तक दोनों में वर्तालाप होने लगा।

रावण—तुम कौन ? और यहाँ कैसे आये ?

बाण— मैं स्वनाम धन्य महाराज बलि का पुत्र बाणासुर हूँ। महाराज जनक के आमंत्रण से धनुषयज्ञ देखने आया हूँ। पर यह तो बताओ कि तुम कौन हो ?

रावण—पौलस्त्य कुलभूषण विश्रवा का पुत्र जगद्विजयी दशानन।

बाण— यह तो तुम्हारे रूप को देखने से ही जान पड़ता है। पर असली नाम क्या है ?

रावण—लोग मुझे रावण कहते हैं।

बाण— कैसा रोने वाला नाम है !

रावण—मैं रोता नहीं, वरन् दूसरों को रुलाया करता हूँ।

बाण— किसे, किसे रुलाया ? जरा मैं भी तो सुनूँ।

रावण—यदि मेरे वीरत्व को देखना हो तो लंकापुरी चल कर देखो। वहाँ देवता मेरा पानी भरते हैं।

बाण— अपने घर में तो कुत्ते भी शेर होते हैं। कुछ बाहर की बताओ।

रावण—मुझे भूलोक से लेकर सुरलोक तक सभी जानते हैं। यदि मेरी वीरता का परिचय पाना हो तो दिक्पालों से पूछो। जब मैं उनसे लड़ने गया तो उन्होंने हाथी बढ़ा दिये। मैंने भी अपनी छाती अड़ा दी। हाथियों ने टक्कर मारी तो उनके ही दाँत टूट गये। वे चिग्घाड़ते हुए भागे। जब मैं देव-लोक पहुँचा तो वहाँ कोई लड़ने वाला न मिला। देवगण मेरे डर से घर छोड़ भाग गये थे।

बाण— तुम किस रावण की बातें करते हो ? एक रावण पिता जी से लड़ने पातालपुरी गया था। हम लोगों ने गधा समझ उसे घुड़साल में बाँध दिया था। एक दिन पुलस्त्य जी उसे छुड़ाने आये। पिता जी ने दया कर उसे छोड़ दिया। क्या तुम वही हो ?

रावण—अरे ! उस रावण की बात न करो। मेरी वीरता का हाल अपने गुरु शंकर से पूछो। मैंने अपने शिर काटकर फूल की तरह उन पर चढ़ा दिये। भोलेश्वर ने प्रसन्न होकर मुझे दशशिर होने का वरदान दिया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बाण— जिसके अनेक मुख होते हैं, उसकी बात भी अनेक तरह की होती हैं। अपने मुँह अपनी प्रशंसा अच्छी कर लेते हो। पर वीरता की कसौटी यह धनुष है। यदि साहस हो तो इसे चढ़ा कर अपने बल का परिचय दो।

रावण—मैं तो इसे कब का उठा चुका।

बाण— तुमने कब उठाया ? मैंने तो देखा नहीं।

रावण—मैं एक बार दिग्वजय करता हुआ कैलास पहुँचा। उस समय शिवजी समाधि लगाये बैठे थे। मैंने सोचा कि इनकी समाधि कौन भंग करे ? मैं कैलास को ही उठा कर लंका ले चला कि घर पर आराध्य देव की अर्चना किया करूँगा। उस समय कैलास पर नांदी भी था, पार्वती भी थीं और यह धनुष भी था। जब शिवजी कहीं चलते तो इसे नाँदी की पीठ पर लाद लेते थे। यदि नांदी से भेंट हो तो उन्हीं से पूछ लेना।

बाण— न जाने कहाँ की उड़ाते हो। सुनी-सुनायी बातों पर विश्वास नहीं होता। यदि तब उठाया था तो अब भी उठाओ। मैं भी देखूँ और यह सारा समाज भी देखे।

रावण—पहले सीता को दिखला दो। धनुष तो चढ़ा ही दूँगा।

बाण— क्या तुमने राजर्षि जनक की प्रतिज्ञा नहीं सुनी ? त्रिलोक में कीर्ति और वैदेही धनुष चढ़ाने पर ही मिलेगी। इसके पूर्व कदापि नहीं।

रावण—मैं बिना धनुष चढ़ाये सीता का वरण करूँगा। तुम मेरा क्या कर सकते हो ?

बाण— मैं वही करूँगा जो सहस्रार्जुन ने किया था।

रावण—सावधान ! जीभ सम्हाल कर बात करना।

बाण— तो क्या मैं तुमसे डरता हूँ !

रावण—मैं तुम्हें द्वन्द्व-युद्ध के लिए आह्वान करता हूँ।

बाण— तुम्हारा जैसा गधे का सिर है वैसी ही तुम्हारी बातें भी मूर्खों की सी है। यह स्वयंवर है। युद्धभूमि नहीं।

रावण—तो फिर और कभी देखा जायगा।

बाण— देखा कब जायगा ? फैसला तो धनुष के हाथ है। अपना बल क्यों नहीं आजमाते ?

रावण—पहले अपना बल दिखाओ, नहीं तो फिर पछताते रहोगे।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar. Digitized by eGangotri Digital Preservation Foundation, Chandigarh

बाण— यह मेरे गुरु का धनुष है। मैं इसके उठाने का अधिकारी नहीं। फिर सीता तो माता के समान हैं। मैं तो वीरों को देखने के लिए आया था पर न जाने कहाँ तुमसे मुठभेड़ हो गयी। ये बन्दीजन न जाने क्या कहते होंगे।

ऐसा कह बाणासुर धनुष को प्रणाम कर चलता बना। उसी समय आकाश-वाणी हुई कि रावण की लंका में आग लग गयी। अतः रावण भी नगरी की रक्षा के लिए भाग खड़ा हुआ।

जनक का अनुताप और लक्ष्मण का अमर्ष

रावण और बाणासुर के चले जाने पर सभा मण्डप में निराशा के बादल छा गये। लोगों की रही-सही हिम्मतें भी पस्त हो गयीं। कोई धनुष के निकट जाने का साहस ही न करता। एक गम्भीर वातावरण उत्पन्न हो गया। लोग एक दूसरे का मुँह ताकने लगे। यह देख महाराज जनक सिंहासन से उठकर खड़े हो गये। उन्होंने उपस्थित लोगों को सम्बोधित करते हुए कहा :—

'उपस्थित राजागण एवं सज्जनो ! आप ने दूर-दूर से आकर यज्ञ में सम्मिलित होने का कष्ट उठाया। इसके हम बड़े आभारी हैं पर मुझे निराशा ही हाथ लगी। हमने इस बात की कभी कल्पना ही न की थी। धनुष का उठाना और चढ़ाना तो दूर, कोई उसे तिल भर खिसका भी न सका। रावण और बाणासुर जैसे सुभट तो देख कर ही चले गये। यदि मैं यह जानता तो कभी ऐसी प्रतिज्ञा न करता। मुझे बड़ा पश्चाताप है कि मेरा प्रण पूरा न हुआ। यदि मैं प्रतिज्ञा भंग करता हुँ तो अपयश होता है, और यदि प्रण पर दृढ़ रहता हूँ तो मेरी कन्या कुमारी रही जाती है। मुझे यही मान कर संतोष करना पड़ेगा कि ब्रह्मा ने सीता के लिए वर की सृष्टि ही नहीं की। मैं इस आयोजन को समाप्त करता हूँ। आप लोग अपने-अपने घर जायँ। मुझे निश्चय हो गया कि पृथ्वी पर वीर नहीं रहे। अब कोई अपनी वीरता की डींग न हाँके।'

जनक की बात पूरी भी न हो पायी थी कि लक्ष्मण तपाक से खड़े हो गये। उन्होंने भाई के चरण स्पर्श किये। फिर आवेश में आकर कहने लगे :—

'वसुन्धरा कभी वीरों से शून्य नहीं हो सकती। महाराज जनक ने जो कुछ कहा उससे वीरों का बड़ा अपमान होता है। रघु की संतान होकर हम ऐसा कभी नहीं सुन सकते। यदि आप की आज्ञा हो तो मैं सारे ब्रह्माण्ड को उठा लूँ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इसे कच्चे घड़े की तरह फोड़ डालूँ। कहिए धनुष को उठाकर सौ योजन की दौड़ लगा डालूँ। इसे मूली की तरह चटाक से तोड़ दूँ।' मैं गर्व नहीं करता। 'यदि ऐसा न करूँ तो आज से धनुष धारण न करूँ।'

ऐसा कह उन्होंने अपना धनुष फेंक दिया। भाई के चरणों में शिर झुकाकर आदेश की प्रतीक्षा करने लगे। लक्ष्मण के दर्प-पूर्ण वचनों को सुन जनक जी स्तब्ध रह गये। सारी सभा सन्नाटे में आ गयी। सब लोग लक्ष्मण की ओर देखने लगे। उनका मुखारविंद अरुणिम था। निश्वास बड़े वेग से चलने लगे। उनके क्रोध से ऐसा जान पड़ता था कि मानों पृथ्वी ही उलट देंगे। विश्वामित्र ने यह देख उन्हें बैठने का संकेत किया। फिर राम से कहा कि धनुष की डोरी चढ़ाकर जनक जी का भ्रम निवारण करो।

धनुर्भङ्ग और जयमाला

गुरु की आज्ञा से राम सहज स्वभाव उठे। गुरु को प्रणाम किया। फिर मंदगति से उस मंच की ओर चले जिस पर धनुष रखा था। सब लोग उनकी ओर ध्यान से देखने लगे। वह विनम्रता और शील की साक्षात मूर्ति लगते थे। शरीर से नीलमणि का सा प्रकाश फूट रहा था। पीताम्बर विद्युत की भाँति झलक रहा था। शिर पर किरीट-मुकुट,कानों में कुण्डल और दाहिनी भुजा पर भुजबन्द शोभा दे रहे थे। उनके अंग-प्रत्यंग साँचे में ढले जान पड़ते थे। फूल की तरह शरीर, अरविंद के समान मुख, काली आँखें, घनी भौंहें, तारुण्य की अरुणिमा और स्निग्ध दृष्टि सबको आकर्षित कर रही थी। किसी ने मुख देखा किसी ने नेत्र, किसी ने नासिका और किसी ने घुँघराले बाल। जिसने जो अंग देखा, वह उसे देखता ही रहा। उनके मुख पर लावण्य और तेज का अद्भुत समन्वय था। किशोरावस्था बीत रही थी। तारुण्य झलक रहा था। अंग-प्रत्यंग से कोमलता, लावण्य और वीरत्व प्रकट हो रहा था।

राम एक थे। लोगों ने अपनी-अपनी रुचि के अनुसार उन्हें विभिन्न देखा। ज्ञानियों ने उन्हें अनन्त ब्रह्म की साकार मूर्ति समझी। योगियों ने उन्हें ज्योति-स्वरूप परमात्मा समझा। सज्जनों को वे सज्जन और दुर्जनों को कालवत दिखायी पड़े। वीरों ने उन्हें वीर और कामियों उन्हें कामरूप जाना। सुनयना को वह बालक ही जान पड़े। उनके वात्सल्य भाव में डूब वह सखियों से कहने लगीं:—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'मेरी समझ में नहीं आता कि महाराज की बुद्धि को आज न जाने क्या हो गया है ! जिस धनुष को बड़े-बड़े योद्धा न उठा सके, उसे कुमार राम कैसे उठा सकते हैं ? इनके हाथ में तो कमलनाल ही शोभा दे सकती है, बज्र के समान कठोर धनुष नहीं। हमारे विचार से तो बेटी का विवाह इनके साथ कर देना चाहिए। ऐसा उपयुक्त वर कहाँ मिलेगा ?'

एक सखी ने कहा—'महारानी ! आप मोह में न पड़ें। राम देखने में अल्प वयस्क हैं, पर इनके काम बड़े-बड़ों के से है। हीरा छोटा होता है पर उसका मूल्य अधिक होता है। मंत्र भी छोटा होता है, पर उसका प्रभाव अमित होता है। उसमें देवताओं तक को वश में रखने की शक्ति होती है। सूर्य तो अग्नि का गोला जान पड़ता है, पर उसके उदय होने पर तीनों लोकों का अंधकार दूर हो जाता हैं। अंकुश कितना छोटा होता है ! पर वह बड़े-बड़े मतवाले हाथियों को वश में कर लेता है। तेजस्वी पुरुषों की आयु नहीं देखी जाती। उनका तेज देखा जाता है।'

जब राम मंच के पास पहुँचे तो उपस्थित नर-नारी अनेक संकल्प-विकल्प करने लगे। उनकी आशा-लताएँ लहलहाने लगीं। उन्होंने धड़कते हुए हृदयों से अपने इष्टदेवों से प्रार्थना की कि यदि हमने पुण्य किये हों तो हमारी अभिलाषा पूरी हो जाय। हमें सीता और राम की जोड़ी बड़ी ठीक जँचती है।

राम जब मंच पर चढ़ने लगे तो सीता का मन विकल हो उठा। वह कभी राम की ओर देखतीं और कभी धनुष की ओर। उनके हृदय में आशा और निराशा की तरंगें उठ रही थीं। उनका मन संदेह के झूले में झूल रहा था। उन्होंने मनमंदिर में इष्टदेव शिव और पार्वती का आह्वान किया—मैं आज तक आप की सेवा करती रही हूँ। अब तक मैंने कुछ नहीं माँगा। उसके फल पाने का अब समय आया है। यदि मैंने कुछ भी सुकृत किये हों तो मेरी मनोभिलाषा पूरी हो जाय। यह धनुष आप का है। जब राम इसे उठाने लगे तो यह अपनी कठोरता छोड़ कोमल हो जाय, जिससे राम को झुकाने और चढ़ाने में प्रयास न हो।

सीता की प्रार्थना शिवजी ने सुनी या नहीं पर उनकी मनोदशा राम ने जान ली। वे सीता का ध्यान कर धनुष को इस तरह ताकने लगे मानो गरुड़ विषधर नाग को देख रहा हो। मन में गुरु को प्रणाम किया। बड़े लाघव से धनुष उठा लिया। उसका एक सिरा पैर के अंगूठे से दबाया। फिर ज्योंही बायें हाथ से धनुष

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

का दूसरा सिरा झुकाने और दाहिने हाथ से डोरी कसने लगे त्योंही धनुष चटाक से टूट गया। लोगों ने उन्हें धनुष उठाते तो देखा, पर डोरी खींचते और चढ़ाते किसी ने न देखा। धनुर्भंग का शब्द सभा मण्डप में ही नहीं वरन् आकाश मण्डल में गूँज गया। चारों ओर से राम पर पुष्प-वृष्टि होने लगी और लोग 'राम की जय' बोलने लगे। सुनयना खुशी से फूल उठीं। जनक जी मुस्करा दिये। सीता की हृदय-कलिका विकसित हो गयी। सखियों का आनंद बढ़ गया। विश्वामित्र जी मन ही मन प्रसन्न हुए और लक्ष्मण तो हर्ष से उछल पड़े। सारे समाज में उत्साह की लहरें दौड़ गयीं। शंखध्वनि होने लगी और बाजे बजने लगे।

शतानंद ने जनक जी से कहा कि आप की प्रतिज्ञा पूरी हो गयी। अब बेटी को राम के गले में जयमाला डाल देनी चाहिए। माँ की आज्ञा से सीता जयमाला लेकर रंग-भूमि में चलीं। उस समय उनकी शोभा दर्शनीय थी। उनके अंग-अंग से लावण्य और सुकुमारता झलक रही थी। चम्पा के समान पीले शरीर पर गुलाबी साड़ी झलमला रही थी। हाथ में चूड़ियाँ, गले में मौक्तिक माल, कानों में अवतंश, कमर में करधनी, पदों में नूपुर और पायल शोभा दे रहे थे। शिर पर शीसफूल, माथे पर बिंदी, नाक में कील। हाथों की लालिमा देखते ही बनती थी। वह रूप में लक्ष्मी, सौंदर्य में रति और शील में सरस्वती ही जान पड़ती थी। उन्हें देखकर लोगों में स्वतः पूज्य भाव उदय हो जाते। मन आपसे आप चरणों में झुक जाता था। वह मंद-मंद गति से मराल के समान मंच की ओर बढ़ीं। उनके पीछे सखियाँ मंगल-गीत गाती हुई चलीं। मंच पर पहुँच उन्होंने राम की ओर मधुर दृष्टि से देखा। राम तो उन्हें देख ही रहे थे। उन्होंने शिर झुका दिया। सीता ने गले में वरमाला पहना दी। चारो ओर से पुष्प-वृष्टि होने लगी। देवियाँ मंगल-गीत गाने लगीं बाजे बजने लगे। पुरोहित शान्ति पाठ पढ़ने लगे। बन्दीजन विरदावली गाने लगे। क्षण भर में समाचार सर्वत्र फैल गया कि सीता और राम का विवाह हो गया।

उस सभा में कुछ दुष्ट प्रकृति के राजा भी थे। वे जहाँ-तहाँ खड़े हो कर अस्त्र-शस्त्र सम्हालने तथा कवचादि पहनने लगे। उन्होंने राम को युद्ध के लिए ललकारा। एक ने कहा 'दोनों भाइयों को पकड़ कर बाँध लो। सीता को छीन लो। हमारे रहते सीता को कौन ले जा सकता है ? यदि जनक जी कुछ बोलें तो उनसे भी निपट लो। राम ने धनुष उठाया तो क्या हुआ ! जब तक हमारी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जान में जान है तब तक जानकी को हम जाने न देंगे। उनकी यह डींग सुनकर साधु राजाओं ने कहा–'धिक्कार है ! ऐसी बातें करते तुम्हें लज्जा नहीं आती। तुम्हारी वीरता का परिचय तो पहले ही मिल चुका। तुम्हारी नाक तो पिनाक के साथ ही चली गयी। अब तो चुल्लू भर पानी में डूब मरने की बात है। मुँह काला करके सभा-भवन से चले जाओ। तुम्हारा इसी में भला है।'

संसार में अनेक ऐसे ईर्ष्यालु और द्वेषी स्वभाव के व्यक्ति होते हैं, जिन्हें दूसरों को कीर्ति अच्छी नहीं लगती, जो पराये काम में विघ्न डालते रहते हैं, जिन्हें दूसरों का काम बिगाड़ने में आनन्द आता है। साधु पुरुषों के समझाने का उन पर कोई प्रभाव न पड़ा। वे लड़ने को उद्यत हो गये। अतः साधु राजाओं ने कहा कि मण्डप से बाहर चलो। पहले हमसे निबट लो। फिर राम-लक्ष्मण से युद्ध करना। क्या तुमने राम लक्ष्मण को अकेला समझ लिया है ? उनके पास सेना नहीं है। राजा दशरथ सौ योजन दूर अयोध्या में हैं। पर हम लोग तो यहाँ हैं। हम अन्याय नहीं देख सकते।

परशुराम और लक्ष्मण-संवाद

सभा मण्डप में कोलाहल हो रहा था कि परशुराम जी वायु-वेग के समान दौड़ते हुए आ पहुँचे। उनके आते ही सन्नाटा छा गया। कपटी और कायर लोग भाग खड़े हुए। सब लोग आश्चर्य-चकित हो उनकी ओर देखने लगे। भस्म-मंडित गौर शरीर, पुष्ट जंघायें और विशाल बाहु उनकी वीरता का परिचय दे रहे थे। शिर पर पिंगल जटायें, कंधे पर यज्ञोपवीत, कटि में मूँजी मेखला, अधो भाग में कौपीन, बगल में मृग चर्म, एक हाथ में कमण्डल और दूसरे में फरसा लिए हुए वह क्षात्र और ब्राह्म तेज की मूर्ति प्रतीत हो रहे थे। उनकी लौह-स्तम्भ-जंघायें विशाल देह के भार को सम्हाले हुए थीं। वह इधर-उधर चलते तो धरणी धमकती थी। उनकी विशाल आँखें और कटीली भौहें दृढ़ता की प्रतीक थीं। लाल आँखों से अग्नि की चिनगारियाँ निकल रही थीं। उन्हें देख कर बड़े-बड़े दिग्गजों का धैर्य छूटने लगा। मारे भय के लोग काँपने लगे। वे जिसे देखते वह सूख जाता था। लोग अपनी-अपनी कुशल मना रहे थे।

परशुराम को मंच पर खड़े देख राजागण चरणों में गिर कर प्रणाम करने तथा अपना परिचय देने लगे। जनक ने शतानंद जी के साथ जाकर उनका स्वागत किया। सीता को बुलाकर प्रणाम करवाया। ऋषि ने आशीर्वाद दिया

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कि तुम्हारा सौभाग्य अचल हो। इसे सुनकर सीता बड़ी प्रसन्न हुईं। फिर उनकी दृष्टि विश्वामित्र पर पड़ी। वह दौड़कर उनसे गले मिले। विश्वामित्र ने राम-लक्ष्मण से परशुराम का परिचय देकर प्रणाम करने को कहा। वह राज-कुमारों को बड़ी देर तक ध्यान से देखते रहे। फिर उन्हें अजर और अमर होने का आशीर्वाद दिया।

अभिनन्दन के पश्चात परशुराम की दृष्टि धनुष पर पड़ी। उसके दो टुकड़े देख उन्हें महान दुख हुआ। उसी के टूटने का समाचार पाकर तो वह महेन्द्र पर्वत से आये थे। उन्होंने दौड़ कर उसे उठा लिया और बड़े ध्यान से उसकी ओर देखने लगे। उनकी पूर्व स्मृतियाँ जागृत हो गयीं। उन्होंने अश्रु बहाते हुए गद-गद कण्ठ से कहा—अरे! गुरु के धनुष की यह दुर्दशा! शिवजी सदा इसे अपने पास रखते थे। जब कहीं बाहर चलते तो नांदी की पीठ पर लाद लेते थे। पार्वती जी इस पर नित्य पुष्प माला चढ़ाया करती थीं। यदि यह मैला हो जाता तो वासुकी अपनी जिह्वा से चाटकर साफ किया करते थे। मुझे धिक्कार है कि मेरे रहते यह टूट गया। उन्होंने आवेश में आकर जनक जी से पूछा—'क्या यह आयोजन इसीलिए है? मुझे शीघ्र बताइये कि इसे किसने तोड़ा? नहीं तो आप का साम्राज्य उलट दूँगा। या तो वह व्यक्ति आत्म समर्पण कर दे, अथवा समाज उसे पकड़ कर मुझे दे दे। नहीं तो मैं सारे समाज को छिन्न-भिन्न कर दूँगा।'

परशुराम को आवेश में देख जनक जी गुम-शुम हो गये। उन्होंने इस अप्रत्याशित घटना की कल्पना ही न की थी। वह धर्म-संकट में पड़ गये। उनके मुख से सत्य-कृष्ण कुछ न निकला। उनके मन में संकल्प-विकल्प उठने लगे। उनकी मनोदशा देख रामचन्द्र अपने स्थान पर खड़े हो गये। उन्होंने हाथ जोड़ कर बड़ी विनम्रता के साथ कोमल वाणी में कहा—'भगवन! अपराध क्षमा हो। इस धनुष का तोड़ने वाला आपका सेवक ही हो सकता है।'

परशुराम—मेरे गुरु का धनुष तोड़ने वाला मेरा सेवक कैसा? वह तो मेरा परम शत्रु है। मैं उससे प्रतिशोध लूँगा।

लक्ष्मण—हमसे वाण-विद्या सीखते हुए अनेक धनुष टूट गये। आप पहले कभी रुष्ट नहीं हुए। आज इस धनुष पर इतनी ममता कैसी?

परशुराम—मूर्ख राजपुत्र! तूने धनुही तोड़ी होंगी। यह शिवजी का धनुष है। इसमें और लड़कन की कमानों में बड़ा अन्तर है। इस प्रकार के दो ही धनुष हैं। इनका निर्माण विश्वकर्मा ने किया था। उनमें से एक विष्णु

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

को दिया गया था, दूसरा शंकर जी को। विष्णु ने अपने धनुष से वृत्तासुर को मारा था और शंकर ने त्रिपुरासुर को। जब इनका कार्य हो चुका तो ये रख दिये गये। विष्णु ने अपना धनुष पितामह ऋचीक को दे दिया। पितामह ने पिता जी को और पिता जी ने मुझे दे दिया। यह अब भी मेरे पास है। शिवजी ने अपना धनुष देवरात के पास रख दिया। उनसे वह जनक को पैतृक सम्पत्ति के रूप में मिला। निमिवंश सदा से शान्ति-प्रिय रहा है। किन्तु आज मुझे शोक के साथ कहना पड़ता है कि जनक ने इसकी दुर्दशा करा डाली। इससे मेरा हृदय धधक रहा है।

लक्ष्मण—मुनिवर! धनुष तो टूट गया। वह जुड़ नहीं सकता। यदि उसे जोड़ना संभव हो तो किसी गुणी कलाकार को बुलाना चाहिए। आप बड़ी देर से खड़े हैं। थक गये होंगे! कृपया बैठ जाइये।

परशुराम—छोकरे! मुझपर व्यंग कसता है? तू मेरे क्रोध को नहीं जानता। मैंने अपने कुठार से सहस्रार्जुन की हजार भुजाएँ काट डालीं। मेरे कुठार की ओर देख। यह किसी पर दया करना नहीं जानता। मैं केवल विश्वामित्र के नाते तुम्हें छोड़ रहा हूँ। नहीं तो बिना मारे न मानता।

लक्ष्मण—भृगुवर! आप बार-बार मुझे फरसा दिखा रहे हैं। ब्राह्मण समझ मैं आप को छोड़ रहा हूँ। जान पड़ता है कि किसी वीर से आप की भेंट नहीं हुई। ब्राह्मण देवता घर के ही बढ़े होते हैं।

परशुराम—अरे अज्ञानी! मैं तुझे बालक समझ कर छोड़ रहा हूँ। पर तू मुझे उत्तेजित कर रहा है।

लक्ष्मण—मैं भी आप को वीर समझ कर ही बातें कर रहा हूँ। आप भी मुझे दुग्ध-पोष्य शिशु न समझें।

'तो सावधान?'—कह कर उन्होंने अपना फरसा सम्हाला। चलाने के पहले विश्वामित्र से बोले—यदि आप इसके अभिभावक हैं तो मना क्यों नहीं करते? आप मेरे स्वभाव को जानते हैं। मेरे हाथ में कुठार है और बैरी सामने खड़ा है।

राम—ऋषिवर! अपराध मेरा है। यदि आपके हाथ में कुठार है तो मेरा शिर सामने हैं। आप के चित्त को जिसमें शान्ति मिले वही कीजिए।

राम की बातें सुनकर परशुराम कुछ शान्त हुए। किन्तु लक्ष्मण ने कहा कि आप ने हमें बिल्कुल भेड़-बकरी ही समझ रखा है। जान पड़ता है कि आप

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

काल रूपी भेड़िया अपने साथ लाये हैं। उसी को हम पर छोड़ना चाहते हैं।

परशुराम—राम! तुम तो विनम्र और शीलवान दीख पड़ते हो, पर तुम्हारा भाई बड़ा धृष्ट है। वह छोटा पर बड़ा खोटा है। ऊपर से सुवर्ण घट के समान सुन्दर है पर इसके अंदर विष भरा है। मैं उस विष को निकाल लूँगा।

लक्ष्मण कुछ कहने ही जा रहे थे कि राम ने उन्हें तर्जनी से मना किया। फिर कहा :—महाराज! क्षमा कीजिए। मुझ से अनजाने भूल हुई। इसने आप को पहचाना नहीं। केवल वंश-गत स्वभाव से उत्तर-प्रत्युत्तर करता रहा। वर्र और बालक एक स्वभाव के होते हैं। साधु पुरुष उन्हें दोष नहीं देते।

परशुराम—क्षमा मेरे स्वभाव के प्रतिकूल है। पर आज तो मेरा स्वभाव ही बदल गया है। मारे क्रोध के छाती जल रही है, पर कुठार नहीं उठता। पता नहीं मुझ में दया कहाँ से आ गयी?

राम—दया ब्राह्मणों का भूषण है। क्रोध पाप की जड़ है। आप तो विप्र हैं। फिर मुनियों को क्रोध करना शोभा नहीं देता।

परशुराम—जान पड़ता है धनुष तोड़कर तुम्हें अहंकार हो गया है। मुझे शांति-पाठ पढ़ा रहे हो। तुम मुझे निरा यज्ञ कराने वाला पुरोहित समझते हो। मैं नरमेध करने वाला ऋषि हूँ। युद्धस्थल ही मेरी यज्ञशाला है। वीरों की चतुरंगिनी सेना हविषा है। चाप स्रुवा है। वाण आहुति हैं। क्रोध ही प्रचण्ड अग्नि है। क्षत्रिय नरेश बलि पशु हैं। मैंने इस परशु से एक नहीं इक्कीस यज्ञ किये हैं। कदाचित तुम मुझे नहीं जानते। इसीलिए विप्र समझ कर उपेक्षा करते हो। यदि ऐसी बात है तो धनुष उठाओ। और युद्ध करो। मैं उसी से संतुष्ट हो जाऊँगा।

राम—हमारा और आप का युद्ध कैसा? आप ब्राह्मण, मैं क्षत्री! कहाँ आप! कहा मैं? क्षत्रिय होकर हम किसी से डरते नहीं। केवल ब्रह्मत्व से डरते और श्रद्धा से शिर झुकाते हैं। आप बड़े आपका नाम 'परशुराम' बड़ा। आप की कीर्ति बड़ी! हम छोटे! हमारा नाम 'राम' छोटा। हमारे धनुष में एक गुण! आप के परम पवित्र नव गुण! हम सब तरह से हारे हैं। हमें क्षमा कीजिए।

परशुराम—'यदि तुम सचमुच राम हो तो मेरे धनुष की प्रत्यञ्चा चढ़ाओ। मेरा सन्देह दूर हो जाय।' ऐसा कह उन्होंने राम की ओर धनुष फेंका। राम ने धनुष उठा लिया। बिना प्रयत्न उसकी डोरी खींच कर चढ़ा दी। फिर चुटकी से

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

टंकारा धनुष पर बाण रख उसे खींचा। उनकी मुष्टिक ज्योंही वक्षस्थल तक गयी त्योंही परशुराम को भृगु के चरण चिह्न दिखायी पड़े। अब तो उनका क्रोध कपूर के समान हवा में उड़ गया। वह दौड़ कर राम के चरणों में गिर पड़े। उन्हें रोक कर राम ने कहा—'आप यह नया कर रहे हैं ? अपने वेश की रक्षा करिये। मर्यादा भंग करना आपको शोभा नहीं देता।'

परशुराम ने राम-लक्ष्सण को गले लगा लिया। मारे स्नेह के उनके शरीर में रोमांच हो आया। उनकी आँखों से अश्रुपात होने लगे। उन्होंने गद्गद वाणी में कहा—

मैंने आप को पहचाना नहीं। मुझसे बड़ी भूल हुई। आप क्षमा शील हैं। करुणावरुणालय हैं ! मैंने अभिमान वश न जाने क्या-क्या कह डाला। क्रोध में मनुष्य अंधा हो जाता है। उसे ज्ञान नहीं रहता। मेरी भी बुद्धि भ्रष्ट हो गयी। मैं इतना भी न समझ सका कि शिव का धनुष चढ़ाने वाला साधारण व्यक्ति नहीं हो सकता। मेरा कार्य समाप्त हो चुका। आप अपना धनुष सम्हालें। मुझे क्षमा करें। आप की जय हो।

राम—आप बड़े कर्मठ व्यक्ति हैं। आप में ब्राह्म और क्षात्र तेज का अद्भुत समन्वय है। क्षत्रियों के दर्प को चूर्ण कर आपने ठीक ही किया। आप के समान कर्मनिष्ठ कौन हो सकता है ? आप की आज्ञा से मैंने प्रत्यञ्चा चढ़ायी, बाण भी रख लिया। बताइये उसका लक्ष्य क्या हो ?

परशुराम—अपराध मैंने किया है। दण्ड मुझे मिलना चाहिए। आप मेरे स्वर्ग जाने की गति रोक दें। मुझे मुक्ति न मिले। मैं अपनी भूल का पश्चाताप जन्म-जन्मान्तर करता रहूँ।

राम ने कहा—'एवमस्तु'।

परशुराम ने अपना वीरवेष उतार डाला। राम-लक्ष्मण की जय-जय करते हुए महेन्द्र पर्वत पर तपस्या करने चले गये। ब्राह्मण को तप में ही परम शान्ति मिलती है।

राम विवाह

परशुराम जी के चले जाने पर आनन्द बधाइयाँ फिर बजने लगीं। लोगों में उत्साह की एक नवीन तरंग उठ पड़ी। विश्वामित्र ने जनक से कहा कि प्रतिज्ञा के अनुसार सीता और राम का विवाह हो गया। अब कुलरीति का

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भी पालन हो जाना चाहिए। महाराज जनक ने अपने पुरोहितों से पूछ कर दूतों द्वारा चक्रवर्ती जी को निमंत्रण भेजा कि आप बारात सजाकर जनकपुरी आवें। पत्र में विवाह का मुहूर्त भी लिख दिया।

जनक जी के द्रुतगामी दूत तीन दिन में अयोध्या पहुँच गये। उन्होंने दरबार में जाकर महाराज दशरथ को पत्र दे दिया। राजा ने मंत्री को पत्र पढ़ कर सुनाने के लिए कहा। राम का समाचार और विवाह का संदेश पाकर महाराज के आनंद का ठिकाना न रहा। उन्होंने दूतों को पास बुला कर पूछा—'भैया ?' क्या तुम राम-लक्ष्मण को पहचानते हो ? क्या तुमने उन्हें कुशलपूर्वक देखा है ?

दूतों ने कहा—आपके पुत्रों को कौन नहीं पहचानता ? सूर्य और चन्द्र को समझने में क्या देर लगती है ? दोनों कुमार नर-पुंगव हैं। पुरुषोत्तम हैं। तेजस्वी हैं। उन्होंने शिव के धनुष को गन्ने की तरह तोड़ डाला। उसे बड़े-बड़े राजा उठा ही न सके। रावण-बाणासुर तो उसे देख कर ही चले गये। धनुष टूटने पर परशुराम आये। पहले तो वह बहुत गर्म पड़े। लाल आँखें दिखायीं। डराया और धमकाया भी। पर दोनों भाई झुकने वाले न थे। उन्होंने निर्भय होकर जवाब-सवाल किये। अंत में वह धनुष-बाण राम को समर्पित कर रोते हुए वन को चले गये। हम क्या, उनकी तो सारी नगरी प्रशंसा करती है।

विवाह का समाचार रनिवास में पहुँचा तो रानियों की खुशी का ठिकाना न रहा। माँ को जितनी खुशी अपने बेटे के विवाह में होती है, उतनी किसी अन्य उत्सव में नहीं होती। उन्होंने घर-घर मिठाइयाँ भेजीं। मंगतों को निछावर और ब्राह्मणों को दान दिये। अयोध्या पुरी में धूम-धाम से बारात की तैयारियाँ होने लगीं। घोड़े, हाथी, रथ, पालकी, शकट-शकटी आदि अनेक वाहन सजाये गये। महाराज दशरथ वशिष्ठ-वामदेव आदि पुरोहितों, मंत्रियों, सचिवों, बंधु-बांधवों, इष्ट-मित्रों एवं नगर के श्रेष्ठी तथा महाजनों को लेकर मिथिला पुरी को चल दिये।

महाराज जनक ने बारात आने के मार्ग को परिष्कृत करा दिया था। झाड़-झंखाड़ साफ करा दिये थे। ऊँचे-नीचे विषम स्थान समतल हो गये थे। गड्ढे भरा दिये थे। नदियों में पुल बँधवा दिये थे। स्थान-स्थान पर जलपान, भोजन, विश्राम आदि का सुन्दर प्रबन्ध कर दिया था। नगर-तोरण पर धूम-धाम से स्वागत हुआ। बारात एक उपवन में ठहरायी। रथों और गाड़ियों को अमराइयों में खड़ा कर दिया। हाथी, घोड़े और बैलों के लिए चारा एवं दाना-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पानी की व्यवस्था की। सम्भ्रान्त अतिथियों को अतिथिशाला में ठहराया। महाराज और उनके परिवार वालों के लिए विशेष व्यवस्था की। जनक जी के परिचारक अतिथियों के सामने हाथ जोड़े खड़े रहते। उन्हें जिस वस्तु की आवश्यकता पड़ती उसे तुरन्त पहुँचाते। किसी को कोई कमी ही न जान पड़ती। उधर महाराज दशरथ ने स्वयं आवश्यक वस्तुओं का प्रबन्ध कर रखा था। जहाँ दोनों ओर सद्भावना हो वहाँ कमी किस बात की ? सब लोग जनक जी के प्रबन्ध की प्रशंसा कर रहे थे।

सन्ध्या समय गोधूलि वेला में बारात सजकर द्वार पर पहुँची। हाथी और घोड़े नाचते हुए चले। अनेक प्रकार के वाद्य बज रहे थे। अगर और कपूर का सुगंधित धूम उठ रहा था। केवड़ा जल छिड़का जा रहा था। केसर का चंदन लगाया गया। महाराज जनक और दशरथ बड़े प्रेम से मिले। एक दूसरे की छाती में पान चिपकाए। पुष्प माला पहनायीं और रोचना लगाया। सब बारातियों को पुष्प मालाएँ पहनायी गयीं तथा केवड़े का इत्र लगाया गया। रानियों ने वर की आरती उतारी, पुष्प माला पहनायीं और विवाह मण्डप में ले गयीं। वहीं सीता भी वैवाहिक वस्त्राभूषण पहन कर आयीं। वर और कन्या को सुन्दर पीठिकाओं पर बिठाया गया। पुरोहितों ने स्वस्त्ययन किया। नारियों ने मंगल गीत गाये।

पाणिग्रहण

जनक और सुनयना ने गाँठ जोड़कर वर और कन्या के पद प्रक्षालन किये। पुनः कुश-जल हाथ में लेकर कन्यादान का संकल्प किया। फिर कन्या का हाथ पकड़ कर वर के हाथों में दे दिया। मंत्रोच्चार के साथ पाणिग्रहण संस्कार हुआ। एक सखी ने वर-कन्या का ग्रन्थि-बन्धन किया। वेदी पर अग्नि प्रज्वलित की गयी। वर-कन्या ने अग्नि की सात प्रदक्षिणाएँ कीं। पुरोहित के संकेत से वर ने कन्या से कहा—'मेरी ओर तुम्हारा चित्त सदा आकर्षित रहे। मेरे विचारों के अनुकूल तुम्हारा मन बना रहे। एकमना होकर मेरी बात सुनो और मानो। यदि पातिव्रत धर्म का पालन करने को कहो तो मैं तुम्हें ग्रहण करने को प्रस्तुत हूँ।'

इसके उत्तर में कन्या ने कहा—'यदि तुम यज्ञ, दान, तप, तीर्थादि शुभ कर्म मेरे साथ करो, यदि हविष्यान्न देकर देवताओं की और काव्यान्न देकर पितरों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

को तृप्त करो, यदि मेरी रक्षा और संतान के पालन-पोषण का भार सम्हालो, यदि देवालय, कूप, तड़ाग, धर्मशाला आदि सार्वजनिक हित के कार्य करने की प्रतिज्ञा करो तो मैं तुम्हारे वामाङ्क में आने को प्रस्तुत हूँ। दोनों की स्वीकृति मिलने पर शतानंद जी ने ध्रुव-दर्शन कराया। यह शुभाशा व्यक्ति की कि तुम्हारा प्रेम ध्रुव के समान अटल रहे।

शाखोच्चार

विवाह मण्डप में जब दोनों ओर के गण्यमान व्यक्ति एकत्र थे तो वशिष्ठ ने शाखोच्चार के समय महाराज दशरथ के कुल का परिचय दिया:—

विष्णु भगवान की नाभि कमल से सर्व प्रथम ब्रह्मा जी उत्पन्न हुए। ब्रह्मा के मरीचि, मरीचि के कश्यप और कश्यप के पुत्र विवस्वान हुए। उन्हीं के नाम पर सूर्य वंश का उद्भव हुआ। विवस्वान के वैवस्वत मनु, मनु के इक्ष्वाकु हुए। वे बड़े तेजस्वी थे। उन्हीं से इक्ष्वाकु वंश चला। इक्ष्वाकु के पुत्र कुक्षि, उनके बाण, उनके अनख्य, उनके पृथु, पृथु के त्रिशंकु उनके धृंधुमार, उनके युवनाश्व, उनके मान्धाता, और उनके पुत्र सुगंधि हुए। सुगंधि के दो पुत्र ध्रुवसंधि और प्रसेनजित हुए। ध्रुवसंधि के भरत, भरत के असित हुए। असित के शत्रुओं ने आक्रमण कर उनका राज्य छीन लिया। पराजित होकर असित हिमालय पर्वत पर च्यवन ऋषि के आश्रम में तपस्या करने चले गये। वहीं उनकी मृत्यु हो गयी। असित के दो रानियाँ थीं। उस समय वे दोनों गर्भवती थीं। एक ने सापत्न्य ज्वाला की ईर्ष्या से दूसरी को विष दे दिया। च्यवन ऋषि की कृपा से वह बच गयी। उसके गर्भ से सगर, सगर के असमंज, असंमंज के अंशुमान, अंशुमान के दिलीप और उनके भगीरथ हुए। भगीरथ ही पतितपावनी गंगा को पृथ्वी पर लाये। भगीरथ के ककुत्स्थ, और ककुत्स्थ के रघु हुए। उनके वंशज रघुवंशी कहलाये। रघु के पुत्र कल्माषपाद, उनके शंखण, उनके सुदर्शन, उनके अग्निवर्ण, उनके शीघ्रग, उनके मरु, उनके प्रशुश्रुक और उनके महाराज अम्बरीष हुए। अम्बरीष के नहुष, नहुष के ययाति, ययाति के नभग, उनके नाभाग उनके अज हुए। अज के पुत्र स्वनाम धन्य महाराज दशरथ इस उत्सव में विराजमान हैं। उन्हीं के पुत्र राम ने जनक की प्रतिज्ञा पूर्ण की है। मैं कुमारी सीता के लिए इन्हें उपयुक्त वर समझता हूँ।

इक्ष्वाकु वंश का परिचय सुनकर शतानंद ने कहा कि जिस प्रकार

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महाराज दशरथ कुलीन हैं, उसी प्रकार महाराज सीरध्वज और उनके भाई कुशध्वज भी उच्च निमि वंश की संतान हैं। मैं इनके कुल को अच्छी तरह जानता हूँ।

उदात्त चरित्रवान निमि महाराज जनक के पूर्वज हैं। निमि के पुत्र मिथि हुए, जिन्होंने अपने बाहुबल से मिथिलापुरी बसायी। वही पहले जनक थे। तभी से इस वंश की उपाधि जनक चली है। मिथि के पुत्र उदावसु, उदावसु के नन्दिवर्धन, उनके सुकेतु और उनके धर्मात्मा देवरात हुए। देवरात बड़े तेजस्वी और शान्त स्वभाव वाले थे। शंकरजी ने अपना धनुष अजगव इन्हीं के पास धरोहर रख दिया था। देवरात के राजर्षि वृहद्रथ, उनके महाबीर, उनके ध्रृतिमान, उनके सुधृति, उनके धृष्टकेतु, उनके हर्यश्व, उनके मरु और मरु के प्रतीधि हुए। प्रतीधि के कीर्तिरथ, उनके देवमणि, उनके विवुध, उनके महीध्रक और उनके कीर्तिराज हुए। कीर्तिराज के पुत्र महारोमा, उनके स्वर्णरोमा और उनके ह्रस्वरोमा हुए। ह्रस्वरोमा के सीरध्वज और कुशध्वज दो पुत्र हैं। एक दिन काशी के राजा सुधन्वा ने मिथिला पर चढ़ायी की। उसने शिवजी का धनुष और सीता को माँगा। युद्ध में सुधन्वा मारा गया। तब से कुशध्वज काशी में रहने लगे। महाराज जनक के सीता और उर्मिला दो कन्यायें हैं। सीता का पाणिग्रहण तो राम ने कर लिया। यदि उर्मिला का विवाह लक्ष्मण से हो जाय तो बड़ा अच्छा हो। मैं इन दोनों कन्याओं के लिए राम और लक्ष्मण को उपयुक्त समझता हूँ।

विश्वामित्र ने कहा—इक्ष्वाकु और निमि कुल सर्वथा संबंध के योग्य हैं। महाराज कुशध्वज के भी दो कन्यायें माण्डवी ओर श्रुति-कीर्ति है। महाराज दशरथ के भी दो और पुत्र भरत और शत्रुघ्न हैं। मैं उनके लिए इन कन्याओं को सर्वथा योग्य पाता हूँ। महाराज जनक और उनके भाई ने महामुनि विश्वामित्र के प्रस्ताव को सहर्ष स्वीकार कर लिया।

वशिष्ठ, वामदेव, विश्वामित्र, शतानंद आदि ऋषियों ने लौकिक तथा वैदिक रीति से चारों के विवाह उसी मण्डप में सम्पन्न करा दिये। कन्याओं ने वरों के गले में जयमाला डाली। कुमारों ने कुमारियों का पाणिग्रहण किया। उनके शिर में सिन्दूर लगाया। अग्नि प्रदक्षिणा की एवम् सप्त पदी द्वारा वैवाहिक प्रतिज्ञाएँ कीं। संगीत और वाद्य से मण्डप गूँज उठा।

मण्डप के कार्य समाप्त हो जाने पर वर-वधू कोहबर में गये। वहाँ का

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हासविलास देखने ही योग्य था। वहाँ नगर की वार-बधुओं ने मांगलिक गीत गाये। उनका कण्ठ बड़ा सुरीला था। वे राम को मधुर-मधुर गालियाँ भी देती रहीं। चारों राजकुमार सिर नीचा किये चुपचाप सुनते रहे। वहीं कंगन छोड़ने एवं पंसासारी की रीतियाँ हुई यदि कुमार जीतते तो सखियाँ कोलाहल करतीं और यदि कुमारियाँ जीततीं तो सखियाँ उन्हें मधुर गालियाँ देतीं। सासों ने कुमारों से दीपक की बत्ती कनक-शलाका से हटाने को कही। कुमारों ने माताओं के अंचल पकड़े। सासुओं ने उन्हें मणिमालाएँ पहनायीं एवं स्वर्ण मुद्राएँ दीं। कुमारों ने उनके चरणस्पर्श किये। उन्होंने आशीर्वाद दिया कि वत्स चिरंजीवी हो।

दहेज और विदायी

जनक जी का प्रेम नित्य नवीन होता जाता था। वह चक्रवर्ती जी को छोड़ना ही न चाहते थे। उनका आतिथ्य करने में उन्हें विशेष आनन्द मिलता था। नित्य नवीन भोजन सामग्री परोसी जाती, मिष्ठान्न एवं फल-फूल अर्पित किये जाते। संगीत एवं वाद्य में दिन बीतते देर न लगी। एक दिन वशिष्ठ जी ने कहला भेजा कि कल चलने की तैयारी है। अयोध्या से चले हमें बहुत दिन हो गये।

जनक जी ने बड़ी धूम-धाम से विदा की तैयारी की। उन्होंने इतना दायज दिया कि सारा मण्डप सामान से भर गया। धन-धान्य, वस्त्र-आभूषण, बर्तन भाण्ड, अनेक प्रकार के पक्वान्न एवं मिष्ठान्न, घोड़े-हाथी, दास-दासी आदि भी दिये। चक्रवर्ती जी ने सोचा कि इतनी सामग्री कौन लाद कर ले जायगा! उन्होंने जो कुछ पाया, उसमें से अधिकांश नौकर-चाकरों को दे दिया। सेवक-गण लेते ही न थे पर महाराज के आग्रह को टाल न सके। जो बचा उसे वे अपने साथ जनवासे ले गये।

राजकुमार वधुओं को विदा कराने रनिवास गये। दोनों रानियों ने उन्हें गले लगाया। राजकुमारियों को बुलाया। फिर उन्हें कुमारों को समर्पित करते हुए कहा—'आज तक तुम हमारी थीं। अब इक्ष्वाकु-वंश की वधू हो गयीं। अपने पति की सदा सेवा करना। इनके सुख-दुख को अपना सुख-दुख समझना। सदा ऐसे काम करना जिससे दोनों वंशों का मुख हमेशा उज्ज्वल बना रहे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फिर उन्होंने राजकुमारों से कहा—'लालन ! हम तुमसे क्या कहें ? तुम स्वयं समझदार हो, पर इतना अवश्य कहती हैं कि ये हमारे कलेजे ही है। इन्हें हम तुम्हारे हाथों में सौंप रही हैं। इन्हें प्रेम से रखना। यदि कुछ भूल हो जाय तो क्षमा करना। एक बात और है--हमें भूल न जाना। कभी-कभी आकर दर्शन देते रहना।'

सास की प्रेम भरी बातें सुनकर राम ने कहा—'आप हमें दूसरा न समझें। आप के लिए जैसे लड़की वैसे ही दामाद। हम आप से कभी दूर नहीं। आप जब बुलायेंगी तभी आ जायँगे। आप हमारे लिए कौसल्या अम्बा ही हैं।'

राम की प्रीति-रीति देख कर माताएँ बड़ी प्रसन्न हुईं। चलते समय का दृश्य बड़ा मार्मिक था। कन्यायें बार-बार अपनी सखियों से लिपट कर रोती थीं। वे कहतीं कि जीवन में फिर कभी भेंट होगी या नहीं ! वयस्कायें समझातीं कि नारी का यही भाग्य है ! वह जन्म कहीं लेती है पर जीवन कहीं बिताती है। अपनों से बिछुड़ने की वेदना होती ही है। तुम अपने प्रियतम को पा गयी। अब उसे ही सर्वस्व समझना। अपना सारा प्रेम उसी पर उड़ेल देना। तभी तुम सुखी होगी। तभी तुम्हें हमारे बिछुड़ने की पीड़ा न होगी। नारी का पति ही परमेश्वर है। हम तुम्हें क्या समझायें ! तुम्हारा मार्ग मंगलमय हो।

सखियों ने कन्याओं को पालकियों में बिठा दिया। बाजे-गाजे के साथ बारात बिदा हुई। महाराज दशरथ ने बहुओं पर हीरे-मोती निछावर कर लुटाये। आगे-आगे बहुओं की पालकियाँ चली। पीछे राजकुमार और बाराती हाथी, घोड़ों और रथों पर बैठ कर चले। मंत्री और पुरोहित महाराज दशरथ के साथ चले। महाराज जनक और उनके सम्बन्धी बारात को बिदा करने दूर तक गये। महाराज दशरथ ने बड़ी विनम्रता के साथ महाजनों एवं श्रेष्ठियों से बिदायी ली। फिर मँगतों एवं भृत्यों को भूषण-वस्त्र आदि देकर बिदा किया। इसके पश्चात् जनक से लौटने को कहा। पर वे उन्हें छोड़ना ही न चाहते थे। आगे जलाशय मिलने पर दशरथ रथ से उतर पड़े और कहा—'राजन ! बहुत दूर आ गये। अब तो हमें जाना ही है।' जनक ने कहा—'आप ऐसे सम्बन्धी पाकर जीवन कृतार्थ हो गया। हम कहाँ तक आपके सौजन्य की प्रशंसा करें। फिर जामाताओं से मिलकर उनके शील और स्नेह की प्रशंसा की। राम से वह बार-बार मिले। राम ने विनयपूर्वक श्वसुर का सम्मान किया और उनसे बिदा माँगी। अन्त में विश्वामित्र को धन्यवाद देकर सीरध्वज और कुशध्वज ने बिदा ली।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आज जनकपुरी सूनी लगती थी। ऐसा जान पड़ता था मानो कुछ खो गया है। महाराज जनक आत्मज्ञानी थे। वे विदेह थे। उन्हें न किसी के मिलने पर हर्ष होता था और न बिछुड़ने पर दुख। पर आज वह भी उदास थे। उन्हें रह-रह कर बेटियों की याद आती थी। उन्हें यह विचार कर संतोष करना पड़ा कि बेटियों को सुयोग्य वर मिल गये। जब राम के शील और स्वभाव का स्मरण करते तो बड़े प्रसन्न होते। वह कहते कि सीता को जैसा वर मिला, वैसा तो हमें त्रिभुवन में ढूँढ़ने पर भी न मिलता। ऐसा जान पड़ता है कि वर और कन्या की सृष्टि ब्रह्मा स्वयं ही करते हैं। केवल उपयुक्त अवसर और स्थान में उनका संयोग हो जाता है। वे भाग्य लिपि के अनुसार प्रेम-सूत्र में बँध जाते हैं। कन्या पराया धन कहलाता है। वह पिता के पास धरोहर रूप में रहती है। अधिकारी व्यक्ति को सौंप देने में ही उसे संतोष मिलता है। आज मेरी भी चिन्ता छूट गयी।

गृह-प्रवेश

अयोध्या पहुँचने पर माताओं ने वर-वधुओं का स्वागत किया। सोने की थाली में मणि-दीप रख कर आरती उतारी। मांगलिक गीत गाये। परछन करके गृह-प्रवेश कराया। उन्होने वर-वधुओं पर असंख्य ताम्र-रजत मुद्रायें एवं मणि-मोती निछावर किये। फिर माता कौसल्या गोद में बिठा कर पूछने लगीं—

सुना है कि मार्ग में तुम्हें भयंकर कष्टों का सामना करना पड़ा। तुमने सुबाहु और मारीच को कैसे मारा! ताटका तो भयंकर राक्षसी थी, उससे कैसे बच पाये! जिस धनुष को बड़े-बड़े योद्धा न उठा सके उसे कैसे तोड़ डाला? मेरा सौभाग्य कि मैं तुम्हें आज कुशलपूर्वक अपनी आँखों के सामने देख रही हूँ। पूर्वजों की बड़ी दया थी कि साथ में बधुएँ भी आ गईं। मेरे मनोरथ पूरे हो गये। मेरा जन्म सुफल हो गया।

माता के स्नेह पूर्ण वचनों को सुनकर राम ने कहा—यह सब आप के आशीर्वाद और गुरु की कृपा से संभव हुआ। यदि आपने शक्ति और विश्वामित्र ने बाण-विद्या न दी होती तो मैं न ताटका को मार पाता और न उसके पुत्रों को। धनुष की डोरी तो अनायास ही खिंच गयी और वह टूट गया। मेरी समझ में यही आता है कि यह केवल आप का आशीर्वाद था। आप बहुओं को देखना चाहती थीं वही हुआ। आप यों तो कोई कामना नहीं करतीं पर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जो प्रबल अभिलाषा होती है, वह पूरी हो जाती है। इसे हम भगवान की कृपा ही कह सकते हैं।

अयोध्या में नित्य नवीन उत्सव एवं आमोद-प्रमोद होने लगे। सुख के दिन बीतते देर नहीं लगती। एक महीना बीत गया और लोगों को पता न चला। विश्वामित्र अपने तपोवन को जाना चाहते थे, पर महाराज उन्हें छोड़ते ही न थे। मुनि ने कहा--आप ने राम-लक्ष्मण को भेज कर हमारे यज्ञ की रक्षा की। हमारा कार्य हो गया। हम आप को आशीर्वाद के अतिरिक्त और क्या दे सकते हैं! आप गृहस्थ हैं। हम वानप्रस्थी संन्यासी हैं। आपको राज-भोग उचित है, हमें वन भोग। हमें अपने आश्रम को जाने दीजिए।

चक्रवर्ती जी ने हाथ जोड़ कर कहा—'भगवन! हम आप के बड़े कृतज्ञ हैं। आपने हम पर दया ही नहीं की वरन् महान उपकार किया। आपने कुमारों को वीरोचित शिक्षा दी। वे परीक्षा में उत्तीर्ण हुए। आपने आशीर्वाद दिया। उसी के फल स्वरूप राम ने धनुष तोड़ा और उनका विवाह हो गया। मैं तो यही कहूँगा कि आपने गुरु का ही कार्य नहीं किया वरन् पिता का भी कार्य किया। आपने कुमारों को गृहस्थ आश्रम में डाल दिया। अब आशीर्वाद दीजिए कि वे जीवन की परीक्षा में भी सफल हों। हमारी यही प्रार्थना है कि आप अपनी कृपा इसी तरह बनाये रखें और समय-समय पर आकर हमें अनुग्रहीत करते रहें। हम आपके ऋण से कभी उऋण नहीं हो सकते।

विश्वामित्र ने कहा--'राजन! आप बड़े पुण्य श्लोक हैं। सुयोग्य पुत्रों का पाना बड़े भाग्य की बात है। हमें बड़ी प्रसन्नता है कि राम ऐसे शिष्य मिले। सुपुत्र अपने पिता की और सुयोग्य शिष्य अपने गुरु की कीर्ति अक्षुण्य रखते हैं। हम तो कहेंगे कि राम के संबंध से हमें और आपको अक्षय कीर्ति मिलेगी। चलते समय चारों राजकुमारों ने महामुनि को प्रणाम किया और अभीप्सित वरदान पाया। मुनि ने आशीष दी—'यश लाभ करो। तुम्हारा नाम अमर हो।'

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

द्वितीय खण्ड

राज्याभिषेक की तैयारी

राजकुमारों का विवाह हो गया। अतिथि और सम्बन्धी चले गये। तो भी राजभवन में नित्य नवीन उत्सव होते रहते। आनन्द बधावे बजते। मनौतियाँ पूरी की जातीं। नारियाँ टोली बना कर बहुओं को देखने आतीं। बहुएँ क्या थीं! मनोविनोद की सामग्री थीं। रनिवास में नित्य उल्लास की तरंगें उठतीं। जो देखता वही बहुओं की प्रशंसा करता। उसे सुनकर माताएँ फूली न समातीं। बड़ी-बूढ़ी शुभ कामनाएँ करतीं—'भगवान करें सबको ऐसी ही पुत्र और पुत्र बधुएँ मिलें।' कैकेयी के हर्ष का ठिकाना न था। उसने सीता को मुँह दिखायी कनक भवन दे दिया। उर्मिला, माण्डवी और श्रुतिकीर्ति के लिए नये भवनों की व्यवस्था की गयी।

एक दिन भरत के मामा युधाजित आये। उन्होंने अश्वपति का पत्र दशरथ को दिया। उसमें राजकुमारों के विवाह पर महाराज को बधाइयाँ दी गयी थीं। विवाह में सम्मिलित न होने पर खेद प्रकट किया था। साथ में भरत को ननिहाल भेजने को लिखा था। महाराज ने सहर्ष स्वीकृति दे दी। भरत और शत्रुघ्न केकय देश चले गये।

महाराज के चारों पुत्र गुणवान और शीलवान थे। पर राम सर्वश्रेष्ठ थे। वह सब से मीठा बोलते। हर एक से हँस कर मिलते। यदि कोई अप्रिय बात करता तो हँस कर टाल जाते। वह सबका ध्यान रखते। दूसरों की सहायता करते। यदि कोई अकार्य करता तो उसपर दृष्टि ही न डालते। बड़े-बूढ़ों के आगे वह कभी बढ़-चढ़ कर बातें न करते। उनसे सम्मान एवं विनम्रता का व्यवहार करते। वह सदा सत्य बोलते। अप्रिय सत्य कहने में संकोच होता। वह शान्त स्वभाव के थे। उन्हें न कभी क्रोध आता और न कभी उद्विग्न होते। दीन-दुर्बलों पर विशेष दया करते। वे सबको अपना समझते। लोग भी उन्हें अपना जानते थे। अपने उत्तम गुणों के कारण वे सबको प्रिय हो गये। प्रजा चाहती थी कि यदि चक्रवर्ती जी राम को युवराज बना दें तो अच्छा हो।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

एक दिन दरबार जाते समय राजा ने मुँह देखने के लिए दर्पण उठाया। मुकुट को ठीक किया। देखा कि कान के पास के बाल श्वेत हो गये हैं। उनके मन में विचार उठा कि बुढ़ापा आ गया। जीवन पानी का बुलबुला है। इसका कोई ठिकाना नहीं। यदि राम का राजतिलक हो जाय तो अच्छा हो। वह तुरन्त वशिष्ठ जी के पास गये और हाथ जोड़ कर बोले:—

'भगवन्! आप के आशीर्वाद से मेरी सारी कामनाय पूरी हो गयीं। केवल एक कामना शेष है। मैं चाहता हूँ कि राम को राजतिलक कर जीवन के शेष दिन किसी अरण्य में व्यतीत करूँ। इससे मेरे मन को शान्ति मिल जायगी। संसार में तो नित्य झंझटें लगी रहती हैं। यदि राम को युवराज बनाने के पूर्व मैं चल बसा तो मुझे शान्ति न मिलेगी।'

महाराज की बातें सुनकर वशिष्ठ जी ने कहा—'राजन! आप बड़े भाग्यवान हैं कि सर्वगुण सम्पन्न पुत्र पाये। फिर राम तो पुरुष रत्न हैं! नर पुंगव हैं। वे सब तरह से इस पद के योग्य है। अपने गुणों से उन्होंने सब के हृदयों में स्थान बना लिया हैं। वे पुरजनों और परिजनों को वैसे ही प्रिय हैं, जैसे आप को। शुभ काम में अनेक विघ्न खड़े हो जाते हैं। अतः जितनी जल्दी तिलक हो जाय उतना ही अच्छा है। पुष्य नक्षत्र इसके लिए उपयुक्त है।

महाराज ने राज्य परिषद को बुलाया। राम के राज्यभिषेक का प्रस्ताव सबके सामने रखा। मंत्रियों ने उसका अनुमोदन और परिषद ने समर्थन किया। जिसने सुना, वही प्रसन्न हुआ। लोगों के हर्ष का ठिकाना न था। यह तो सबकी हार्दिक अभिलाषा थी :—

राजा ने सुमंत्र के द्वारा राम को बुलाया। राम ने आकर पिता को प्रणाम किया। राजा ने आशीष दे पास ही बिठा लिया और कहा :—

बेटा! तुम बड़ी रानी की कोख से उत्पन्न मेरे ज्येष्ठ पुत्र हो। हमारे इक्ष्वाकु वंश का नियम है कि बड़ा पुत्र सिंहासन का अधिकारी होता है। तुम आयु में ही बड़े नहीं बल्कि सर्वगुण सम्पन्न भी हो। तुमने अपने गुणों से प्रजा-वर्ग को आकर्षित कर लिया हैं। मैंने तुम्हें युवराज बनाने का निश्चय किया है। राज्य परिषद् तुम्हारे अभिषेक का अभिनन्दन करती है। शुभ काम में प्रायः विघ्न पड़ जाते है। मेरा हृदय धड़क रहा है। इधर कई दिनों से मुझे बुरे-बुरे स्वप्न दिखायी दे रहे हैं। मेरी राशि में सूर्य, मंगल और राहु की कुदृष्टि पड़ रही है। ज्योतिषी ऐसे कुयोग का फल अशुभ बतलाते हैं। मुझे जीवन में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जो कुछ करना था कर लिया। केवल तुम्हें राज्य सिंहासन पर देखने की अन्तिम अभिलाषा है। मुझे विश्वास है कि तुम मेरी बात को अस्वीकार न करोगे। देखो! महर्षि जिन संयम और नियमों को कहें, उनका पालन करना। कुशासन बिछा कर भूमि पर शयन करना। सीता देवी से कह देना कि वह भी असिधारा व्रत लें। महाराज के प्रस्ताव को राम ने शिर झुका कर स्वीकार किया। फिर घर चले गये।

राम के मित्रों और साथियों ने जो यह समाचार सुना तो बड़े प्रसन्न हुए। एक दासी ने कौसल्या को जाकर शुभ संवाद दिया। उससे मुँहमाँगा पुरस्कार पाया। राम के राज्याभिषेक की घोषणा नगर भर में डंके की चोट पर सुनायी गयी। लोग तो इस अवसर की प्रतीक्षा कर ही रहे थे। उनकी आशालता लहलहा उठी। वे उत्सव की तैयारी में लग गये।

वशिष्ठ जी ने राज्याभिषेक के लिए विभिन्न प्रकार की जड़ी-बूटियाँ, औषधियाँ, पत्र-पुष्प-फल, केला, नारियल, सुपारी, अक्षत-यव-तिल, अनेक तीर्थों एवं नदियों का जल, रेशमी-सूती-ऊनी वस्त्र, अनेक प्रकार के हीरे-मोती-मूँगे-मणि-माणिक्य, हाथी-घोड़े-गौ आदि पशु मँगवाये। महर्षि ने जिसको जो आज्ञा दी, उसने वह काम तुरन्त कर डाला। लोगों में अमित उत्साह था। वे इस काम में ऐसे जुटे कि रात-दिन का पता ही न चला।

महाराज की आज्ञा से प्रधान मंत्री ने इष्ट मित्रों, सामन्तों, महाजनों, श्रेष्ठियों, सम्बन्धियों एवं पड़ोसी राजाओं को निमंत्रण भेजे। जनक और अश्वपति को वह संवाद न भेज सके क्योंकि समय का अभाव था।

अवध की गलियों में जनसमूह उमड़ रहा है। उत्साह की तरंगें उठ रही हैं। जहां देखो वहीं दस-पाँच आदमी खड़े तिलक की चर्चा कर रहे हैं। घर-घर तोरण और वन्दनवार लग रहे हैं। वीथियों, गलियों और मार्गों के दोनों ओर झंडियाँ लग रही हैं। भवनों पर पताकाएँ फहरा रही हैं। राजभवन पर सूर्य केतन लहरा रहा है। सिंहद्वार पर शहनाइयाँ बज रही हैं। सभा भवन को विशेष रूप से सजाया जा रहा है। केवड़े, कस्तूरी और केसर की सुगंधि उठ रही है। राजभवन में चहल-पहल मची है। कोई आ रहा है। कोई जा रहा है। कोई ले रहा है। कोई दे रहा है। कहीं खेल कूद हो रहे हैं; कहीं नाच-तमाशे। कहीं संगीत के आयोजन किये जा रहे हैं, कहीं नाटक की तैयारियाँ हो रही हैं। सभी लोग राम का तिलक अपनी आँखों से देखना चाहते हैं। कोई

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उससे चूकना नहीं चाहता। अतः वे एक दूसरे से पूछते हैं कि तिलक की शुभ बेला कब है? राम-लक्ष्मण अपने मित्रों और सम्बन्धियों से प्रेम से मिलते और हँस-हँस कर बातें करते हैं। वे छोटे-बड़े सब का सम्मान करते हैं। लोग शुभ-कामनायें करते हुए अपने घर लौट जाते हैं।

कैकेयी और मंथरा का कुचक्र

मनुष्य सोचता कुछ है पर होता कुछ और है। इधर अवध में राज्याभिषेक की तैयारियाँ हो रही थीं, उधर देवता राम को बन भेजने का उपाय सोच रहे थे। उन्होंने सरस्वती का आह्वान करके कहा—'आज हमारे ऊपर विपत्ति आ पड़ी है। हम रावण के अत्याचारों से अत्यंत पीड़ित हैं। हमारी प्रार्थना स्वीकार करके राम ने अवतार तो ले लिया है पर उनका राजतिलक हो रहा है। यदि राज्याभिषेक हो गया तो उन्हें अयोध्या में रहना पड़ेगा और रावण का अन्त न होगा। हमारी विपत्ति ज्यों की त्यों बनी रहेगी। आप से प्रार्थना है कि इस उत्सव में विघ्न डाल दें। अपने पुत्रों की रक्षा करें।

देवताओं की प्रार्थना सुन कर सरस्वती सोचने लगीं कि लोग कितने स्वार्थी होते हैं; अपने भले के लिए दूसरों का अहित चाहते हैं। स्वयं भले बने रह कर दोष मेरे सिर मढ़ना चाहते हैं। मैं इनकी माँ व्यर्थ बनी। सरस्वती उस रात अयोध्या आईं। वह मंथरा की बुद्धि फेर कर चली गयीं।

मंथरा कैकेयी के मातृकुल की दासी थी। वह उमर में कुछ बड़ी थी। कैकेयी उसे सखी करके मानती थी। दोनों में दांत-काटी दोस्ती थी। एक के बिना दूसरे को चैन न था। वह रानी के साथ ही अयोध्या आई थी। केकयी नरेश ने उसे इसीलिए भेजा था कि बेटी को कोई कष्ट न हो। प्रातःकाल वह किसी काम से रनिवास के बाहर निकली। उसने देखा कि दरवाजों पर बन्दनवार लगे हैं। गलियाँ और सड़कें सजायी जा रही हैं। भवनों पर ध्वजा-पताकाएँ फहरा रही हैं। लोग बड़ी व्यग्रता से अपने-अपने काम में व्यस्त हैं। उसे सजावट देख कर बड़ा आश्चर्य हुआ। इतने में एक दासी कौसल्या के भवन से सजी-बजी हँसती हुई निकली। उसने लपक कर पूछा—'आज किसके भाग्य उदय हुए हैं? यह चीनांशुक और मोतियों की माला किसने दी?' उसने बतलाया कि महारानी के बेटे का तिलक है। उसी खुशी में मुझे निछावर में मिला है।

मंथरा को यह सब देख और सुनकर अच्छा न लगा। वह कैकेयी को संवाद

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सुनाने उल्टे पाँव लौट पड़ी। उसके हृदय में ईर्ष्या की अग्नि धधक रही थी। संसार में ऐसे अनेक ईर्ष्यालु स्वभाव के व्यक्ति होते हैं जो दूसरों के वैभव और सुख को नहीं देख सकते। मंथरा मार्ग में सोचती जाती थी कि यदि यह पद भरत को मिलता तो मुझे गहने और कपड़े मिलते।..... और भरत को तो राजगद्दी मिलनी ही चाहिए। स्वामिनी का विवाह इसी शर्त पर हुआ था। अच्छा! मैं अभी रानी के कान भरती हूँ। मैं तिल का ताड़ बना दूँगी। यदि मैंने इस उत्सव में आग न लगा दी तो मेरा नाम मंथरा नहीं। उसका मस्तिष्क सक्रिय हो गया। भवन में प्रवेश करते-करते उसने कुचक्र की सारी योजना बना डाली। वह कैकेयी के पास पहुँची और मुँह लटका कर बैठ गयी।

कैकेयी ने पूछा--'सखि! अभी तो तू हँसती हुई बाहर गयी थी। जरा सी देर में क्या हो गया? आज-कल बहुत बाचाल हो रही हो। कैकेयी के बार-बार पूछने पर भी वह कुछ न बोली। केवल लम्बी श्वासें भरने लगी। वह जानती थी कि जल्दी में काम बिगड़ जायगा। इससे रानी को अनर्थ की आशंका हुई। उसने दासी का कंधा पकड़ कर हिलाया। 'बोलती क्यों नहीं? राजा कुशल से तो हैं? राम, लक्ष्मण, ठीक हैं? भरत को तो कुछ नहीं हो गया? जल्दी बोल।'

कैकेयी के प्रश्न उसके हृद्रय में तीर से चुभ गये। अपने लाड़ले की कुशल नहीं पूछतीं! राम-लक्ष्मण की कुशल पूछतीं है!! वह बरस ही तो पड़ी। माई! कोई मुझे क्या शिक्षा देगा? मैंने किसी का क्या बिगाड़ा है? फिर मुँहजोरी किसके बल पर करूँगी? अभी तक तुम्हारा सहारा था। वह भी टूटता दिखायी पड़ता है। मैं तो आप को ही महारानी समझती थी। उसी के बल पर भूली फिरती थी। वह सहारा भी गया। कौसल्या राजमाता हो रही हैं। कुशल तो उनकी और उनके बेटे की है। इसीलिए तो फूली-फूली फिर रही हैं। गहने और कपड़े लुटाये जा रहे हैं। भंडार घर और कोषागार खाली हो रहे हैं। उत्सव की तैयारियाँ धूम-धाम से हो रही है। मुझे तो यह फूटी आँखों नहीं सुहाता। यदि विश्वास न हो तो झरोखे से झाँक कर या अट्टालिका पर चढ़कर स्वयं देख लो। तुम्हारी आँखें खुल जायँगी। भला कुछ सोचती-समझती हो या महारानी बनी पलंग पर सोया ही करती हो।

कैकेयी ने कहा कि इसमें बुरा मानने की क्या बात है! राम का राज्या-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भिषेक तो होना ही चाहिए। हमारे सूर्य वंश की यही रीति है। बड़ा भाई राज्य का अधिकारी होता है। छोटे भाइयों को आजीविका मिलती है। राम तो मुझे बड़े प्यारे हैं। उनके तिलक पर तुझे क्षोभ क्यों? मैंने कभी उन्हें दूसरा नहीं समझा। वह भी मुझे कौसल्या से कम नहीं समझते।

मंथरा ने कहा कि तुम्हारी बुद्धि को क्या कहूँ, जो अपने को पराया और पराये को अपना समझती हो। ऐसी ही समझ वाले तो धोखा खाते हैं। राम तुम्हारे थे। राजा तुम्हारे थे। सारी प्रजा तुम्हारी थी। वे दिन लद गये। समय बदल जाने पर अपने पराये हो जाते हैं। मित्र शत्रु बन जाते हैं। सूर्य कमल का उसी समय तक पोषण करता है, जब तक सरोवर में जल रहता है। जल के सूख जाने पर वह कमल को भी सुखा कर क्षार कर देता है। रानी! तुम बड़ी भोली हो। अपना भला-बुरा तो सभी समझते हैं। फिर तुम्हें तो लोग बुद्धिमती कहते हैं। खेद है कि तुम जरा सी बात नहीं समझती। यदि राम का तिलक हो गया तो कौसल्या राजमाता बनेंगी। उनकी तूती बोलेगी। ईश्वर न करे कि वह दिन देखना पड़े।

कुबड़ी की बातों से कैकेयी को रोष आ गया। उसने डपट कर कहा—'तू कैसी बातें करती है? क्या तू घर में फूट डालना चाहती है? सावधान! फिर कभी ऐसी बातें न करना। नहीं तो मैं तेरी जीभ निकलवा लूँगी। लोग सच कहते हैं कि लँगड़े-लूले, काने-कुबड़े बड़े खोटे होते हैं। यदि वह स्त्री हो तो महान दुष्टा और यदि दासी हो तो दुष्टतम।

कहने को तो कैकेयी एक साँस में बहुत कुछ कह गयी। पर ईर्ष्या का जो बीज मंथरा ने बो दिया था वह कपट जल पाकर अंकुरित हो उठा। उसने मंथरा के चेहरे को उतरते देखा। जिस उत्साह से वह कहने चली थी, वह मंद पड़ रहा था। उसने सोचा कि जो रहस्य वह खोल रही थी कहीं गुप्त ही न रह जाय। अतः दासी को फुसलाते हुए बोली अरे बुरा मान गयी। मैंने तो एक साधारण कहावत कही थी। सखी! बताओ कि असली बात क्या हैं?

मंथरा का जाल

रानी की रोष पूर्ण बातें सुनकर दासी चुप हो गयी। उसने समझा कि निशाना चूक गया। पर वह कच्ची गोली खेलने वाली न थी। दुष्ट व्यक्तियों का मस्तिष्क कुचक्र चलाने में बड़ा तीव्र होता है। उसने वह अस्त्र निकाला जो

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चूकने वाला न था। उसने त्रिया चरित्र फैलाया। दोनों हाथों से माथा ठोंक कर बैठ गयी और कहने लगी :—

रानी! कुछ नहीं। मेरे भाग्य का दोष है! मेरे कपाल में अपयश ही लिखा है। मैं लोगों के भले की कहती हूँ, पर उन्हें बुरा लगता है। हाँ! मैं सच कहती हूँ। सच बात कुछ कड़वी होती है। जो चिकनी-चुपड़ी बातें करते हैं, वे आप को प्रिय हैं। अच्छा! मैं भी वही कहूँगी जो आपको प्रिय हो। नहीं तो बोलने का क्या काम? मैं चुप ही रहूँगी। ऐसा कह कर वह रोने लगी—'स्वामिनि! मैं सब तरह से अभागिन हूँ। भगवान ने मुझे कुरूप ही नहीं बनाया वरन् आजीवन दासी बना दिया। मैंने पूर्व जन्म में बड़े पाप किये थे। उन्हीं का फल भुगत रही हूँ। यदि मैं भी सुन्दरी होती तो किसी की रानी बनती। मैं सीधे मुँह बात भी न करती। मुझे क्या लेना-देना! ये तो आपके सोचने की बातें हैं। अफसोस उन्हें मुझे सोचना पड़ता है। क्या करूँ, मेरा स्वभाव ही ऐसा है। मैं आपका अहित नहीं देख सकती। राम को राजा होने में मुझे उसी की आशंका है। इसीलिए बात चलायी थी। वह मेरी भूल थी। देवी! मुझे क्षमा करो। मैं आज ही कहीं चली जाऊँगी।' ऐसा कह कर वह रोने लगी।

भाग्य बड़ा प्रबल होता है। उस पर किसी का वश नहीं चलता। उस समय मनुष्य की बुद्धि मारी जाती है। वह जिधर चाहता है, उधर उसी को ले जाता है। कैकेयी बड़ी बुद्धिमती थी। उसकी बुद्धि पर लोगों को गर्व था। महाराज उससे प्रायः सम्मति लिया करते थे। पर आज वह दासी के कुचक्र में फँस गयी। मंथरा का जादू उस पर चल गया। वह शत्रु को मित्र और मित्र को शत्रु समझने लगी। असत में सत का भ्रम हो गया। रानी ने पहले उसे झिड़का था। उसकी तटस्थता देख वह संदेह में पड़ गयी। वह कुबड़ी को बार-बार आदर देने लगी। उसने बड़े स्नेह से गले लगा कर कहा—'मंथरे! तुम रोती क्यों हो? तुम मेरी दासी नहीं वरन् सखी हो। तुमने मुझे पाला-पोसा है। यदि तू मुझे छोड़ देगी तो मेरी देख-रेख कौन करेगा? सारा राजकाज मैं देखती हूँ, पर तू मेरी देख-रेख करती है। तू तो मेरी बाल-संगिनी है। पिता जी ने क्या इसीलिए मेरे साथ भेजा था? तू चुप क्यों है? अच्छा कह। मैं वही करूँगी जो तू कहेगी। स्पष्ट बतला कि इसमें रहस्य क्या है?

कुबड़ी जरा सम्हल कर बैठी। उसने कहा—'रहस्य! नहीं षडयंत्र!! आप मेरी स्वामिनी हैं। मै आपकी दासी हूँ। आपका जूठा खाती हूँ और उतरन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पहनती हूँ। यदि आप जानना चाहती हैं तो मैं कहती हूँ। सत्य कहने में क्या दोष ! सुनो:—

अभी तक राजमहल में तुम्हारा बोलबाला था। तुम्हारी धाक जमी थी। राजा तुम पर प्रसन्न थे। सब तुम्हारे थे। कौसल्या को ये बातें खटकती रहीं। पर उन्हें मौका न मिला था। वह तुम्हारी जड़ उखाड़ने पर तुली हैं। उधर भरत ननिहाल गये। इधर राजा के कान भर दिये। उन्हें भड़का कर अपनी ओर कर लिया। राम के राज्याभिषेक की गुप-चुप तैयारियाँ होने लगीं। तुम्हें कानोकान खबर न हुई। यह सब कौसल्या की सलाह से हुआ। उन्हें सीधी न समझना। वह देखने में भोली लगती है; पर बड़ी चतुर हैं। वह काली नागिन हैं। उनके काटे का मंत्र नहीं। भोली तो आप हैं, जो कुलरीति में भूली फिरती हैं। 'सूर्यवंश में बड़े लड़के को राज्य मिलता है !' अपने मायके की क्या रीति है ? वीर भोग्या बसुन्धरा !

कैकेयी ने पूछा कि यदि राम को राजतिलक हो गया तो मेरी क्या हानि ? तुझे भरत की कसम है ! सच कहना।

मंथरा ने कहा--यदि झूठ कहूँगी तो भगवान मुझे दण्ड देंगे। यदि राम राजा हुए तो कौसल्मा राजमाता होंगी। उनकी तूती बोलेगी। इस घर में तुम्हारी दशा दूध में पड़ी मक्खी के समान होगी। तुम निकाल कर फेंक दी जाओगी। कोई तुम्हें भूल कर न पूछेगा। कौसल्या तुम्हें वैसे ही कष्ट देंगीं जैसे सुरुचि ने सुनीति को और कद्रू ने विनता को दिये थे। उधर भरत ननिहाल में पड़े रहेंगे या बन्दीगृह में सड़ा करेंगे। यदि तुम बेटे सहित सपत्नी की सेवा करो तो शायद घर में ठहर सको। मुझे तो दूसरा रास्ता दिखायी नहीं देता।

मंथरा की बातें सुन भावी विपत्ति की आशंका से कैकेयी थर-थर काँपने लगी। उसके शरीर से पसीना छूटने लगा। उसकी दशा देख दासी समझ गयी कि तीर निशाने पर ठीक बैठ गया। उसने दाँतों तले उँगली दबायी और साव-धान हो रानी को समझाने लगी—'अरे ! आप इतनी घबड़ा गयीं। अभी बिगड़ा ही क्या है ? जरा धीरज रखिये। इस दुर्बलता से काम न चलेगा। अपनी छाती पत्थर की तरह कड़ी कर लीजिए। विचारवान व्यक्ति संकट पड़ने पर घबड़ाते नहीं वरन् बुद्धि से काम लेते हैं। आखिर ! भगवान ने बुद्धि किस दिन के लिए दी है ?'

कैकेयी ने कहा—'मैं सारा जीवन नैहर में काट दूँगी, पर सपत्नी की सेवा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

न करूँगी। शत्रु के वश में रहने से तो मर जाना अच्छा है। मैं कटार मार कर मर जाऊँगी या विष पीकर सो जाऊँगी।'

रानी को उद्विग्न देख मंथरा ने कोमल और मधुर स्वर में कहा—'रानी! अभी से ऐसा सोचने लगी। अभी बिगड़ा ही क्या है? आप विष पीकर क्यों मरेंगी? मरें वे जिन्होंने आपका अहित सोचा है। उसका फल तो उन्हें ही मिलना चाहिए। मैंने जब से यह समाचार सुना तब से न रात को नींद आती है न दिन में भूख लगती है। मैंने ज्योतिषियों से पूछा तो उन्होंने उँगलियों पर गिनकर बताया कि राजा तो भरत ही होंगे। इस समय ग्रहों का योग ऐसा ही है। यदि आप बुरा न मानें तो एक बात कहूँ?

रानी—'प्रिये! एक नहीं हजार कहो। तुम मेरे भले की कहती हो। भला, मैं उसे क्यों न सुनूँगी? तुम्हारे कहने से मैं कुएँ में गिर सकती हूँ; अग्नि में जल सकती हूँ, पुत्र को छोड़ सकती हूँ और पति को त्याग सकती हूँ। अच्छा! क्या कहती हो? मैं भी तो सुनूँ।

मंथरा—स्वामिनि! तुम्हें याद हो या न हो। पर तुमने एक दिन कहा था कि राजा के पास दो वरदान धरोहर रखे हैं। राजा तुम्हारे बिना पूछे कोई काम कर नहीं सकते। वे आज रात तुम्हारे पास अवश्य आयेंगे। उस समय वरदानों की याद दिलाकर एक से भरत को राजगद्दी और दूसरे से राम को चौदह वर्ष का वनवास माँग लेना। इससे तुम्हारा काम बन जायगा और रास्ते का काँटा भी निकल जायगा। लेकिन एक बात गाँठ बाँध लो। राजा जब राम की कसम खा लें तभी वरदान माँगना। ऐसा न हो कि जल्दी में तुम्हारे मुँह से कुछ का कुछ निकल जाय और राजा उसे टाल जायँ। तुम्हारे पास केवल आज रात का समय है। यदि चूक गयीं तो काम बिगड़ जायगा। चिड़ियाँ खेत चुग गयीं तो फिर पछताने से क्या लाभ?

कैकेयी ने कहा कि तुम बड़ी चतुर हो। इसीलिए तो मैं तुम्हें विचक्षणा कहती हूँ। वरदान की बात तो मैं भूल ही गयी थी। तुमने अच्छी याद दिलायी। मैंने तुम्हारी बात गाँठ बाँध ली। अच्छा! मैं कोप भवन जाती हूँ। तुम यहीं बैठी रहना। यदि राजा आवें तो कह देना कि मेरे सिर में दर्द है।

कोप भवन

दिन भर के थके महाराज रात को कैकेयी के महल में आये। रानी नित्य

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उनका द्वार पर स्वागत करती थीं। आज कुछ बात ही और थी। राजा आगे बढ़े तो कक्ष के द्वार पर मंथरा मुँह फुलाए दिखायी पड़ी। उन्होंने पूछा कि रानी कहाँ हैं ? उसने कोप भवन की ओर संकेत करते हुए बतलाया कि महारानी के सिर में दर्द है। रानी का सिर दर्द सुनकर राजा का माथा ठनका। उनके मन में अनिष्ट की आशंका हुई। स्त्रियों का सिर दर्द साधारण नहीं हुआ करता। उन्हें कमरे में पैर रखते डर लगने लगा। बड़े धैर्य के साथ आगे बढ़े। प्रकोष्ठ में एक दीपक टिमटिमा रहा था। पलँग उल्टा पड़ा था। बिस्तरों का पता नहीं। रानी मैली-कुचैली साड़ी पहने फर्श पर पड़ी थीं। बाल खुले थे। वस्त्र अस्तव्यस्त थे। आभूषणों का पता नहीं। सिंदूर बिंदु भी पोछ डाला था। रानी की यह दशा देख उनका हृदय धड़कने लगा। पैर काँपने लगे। उन्होंने बड़े स्नेह से बाहु स्पर्श कर के पूछा—'प्रिये ! क्या बात है ?'

रानी ने तुरन्त हाथ झटक दिया, मानो बिच्छू ने डंक मार दिया हो। वह नागिन की तरह फन-फना कर उठ बैठी। राजा की ओर क्रुद्ध दृष्टि से देखा। उसकी आँखों से अग्नि की चिनगारियाँ निकल रही थीं। श्वास जोर-जोर चल रही थी। मन में ईर्ष्या की अग्नि धधक रही थी। राजा को जान पड़ा कि उन्होंने सोती हुई बाघिन को छेड़ दिया है।

राजा ने बड़े प्रेम से कहा—'सुन्दरी ! तुम्हें क्या हो गया है ? क्या तुम मुझ से रुष्ट हो ? मैं तो सदा तुम्हारा ही मुख देखा करता हूँ। यदि किसी ने अपराध किया हो तो मैं उसे दंड दूँगा। क्या किसी ने तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध कुछ कर डाला ? यदि वह देवता हो तो भी मैं उसे मारूँगा। फिर दो हाथ वाले मनुष्य की बात ही क्या ? यदि किसी ने अपमान किया हो तो मैं उसे देश से निकाल दूँ। यदि किसी रंक पर रीझी हो तो मैं उसे राजा बना दूँ ?

इतना सुनकर भी कैकेयी कुछ न बोली। मारे क्रोध के उसकी श्वासें जोर-जोर से चलने लगीं। उसने घृणा से मुँह घुमा लिया और राजा की ओर पीठ करके बैठ गयी।

राजा ने कहा—'मानिनी ! बोलती क्यों नहीं ? क्या मुझ से कोई भूल हुई ? क्या बड़ी रानी ने कुछ कह दिया ? वह तो बड़ी सीधी हैं। यदि अनजाने कुछ कह दिया हो तो उन्हें क्षमा करो। वह तुमसे बड़ी हैं। तुम तो अवसर-कुअवसर नहीं देखती। जब देखो तब रुष्ट हो जाती हो। देखो, मैं कल राम को

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
युवराज बना रहा हूँ। कैसा शुभ अवसर है। यदि कुछ माँगना हो तो माँग लो। मैं उसे देने में संकोच न करूँगा।

कैकेयी को राम का राज्याभिषेक सुन कर मर्मांतक पीड़ा हुई। पर उसने मन में ही छिपा डाली। और क्यों न छिपा डालती, उसे तो कुटिला मंथरा ने सिखा रखा था। वह राजा से मुँह बिचका कर बोली—'आप बड़े दानी हैं! जब देखो तब ढपोरशंख की तरह कहते रहते हैं कि जो चाहो सो माँग लो पर कभी कुछ देते-लेते नहीं।' दो वरदान दिये थे। उन्हीं के मिलने में संदेह है! और आप क्या देंगे?

राजा ने हँसकर कहा—बस, इतनी सी बात के लिए बिगड़ गयीं। तुम्हारा कोपन स्वभाव है। तुमने थाती तो रख दी, पर माँगी कब? मेरा भी भुलक्कड़ स्वभाव भूल गया। झूठ दोष क्यों लगाती हो? अरे! दो क्या चार वर माँग लो। क्या मैंने कभी किसी वस्तु के लिए तुम्हें ना की है? रघुकुल की परम्परा है कि चाहे प्राण चले जायँ पर वचन नहीं जा सकते। राज-पाट, धन-धान्य की तो बात ही क्या? यदि तुम कहो तो मैं अपना कलेजा निकाल कर दे दूँ! पर कपड़े पहन लो। देखो शरीर कैसा लग रहा हैं! कोई देखेगा तो क्या कहेगा?'

रानी ने कहा—'बस! बस!! बहुत सुन चुकी। मैं कपड़े तो तभी पहनूँगी जब हमारे शिर पर हाथ रख कर आप मेरी बात मानने की प्रतिज्ञा करेंगे।'

राजा ने वैसा ही किया। उन्होंने राम की कसम खाकर कहा कि तुम जो कहोगी मैं वही करूँगा। कैकेयी जानती थी कि राम राजा को बहुत प्यारे हैं। वह प्रतिश्रुत हो चुके हैं। उसे विश्वास हो गया कि मेरा काम बन गया। वह वस्त्राभूषण पहनने लगी। भोले राजा को फँसाने के लिए जाल बिछाने लगी। महाराज को विश्वास था कि कैकेयी कभी उनके विरुद्ध न जायगी। दोनों हँस रहे थे। पर भाग्य उन पर हँस रहा था। होनहार होकर रहती है। वह बड़ी प्रबल है।

कैकेयी ने कहा—'आप को याद होगा कि विवाह के पूर्व आपने क्या प्रतिज्ञा की थी? मैं पिता के घर से तभी चली थी जब आपने मुझे राज,माता का पद देना स्वीकार किया था। आप को शम्बरासुर युद्ध का भी स्मरण होगा। आप युद्ध भूमि से घायल होकर लौटे थे और मेरी सेवा-सुश्रुषा से उठने-बैठने लगे थे। स्वस्थ होने पर आपने कहा था कि तुम्हारी जो इच्छा हो, माँग लो। मैंने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

यही कहा था कि मुझे आवश्यकता किस बात की ? जब चाहूँगी तब मांग लूँगी । आज वह समय आ गया है ।'

राजा—मुझे दोनों बातें अच्छी तरह याद हैं । माँगों, क्या माँगती हो ?

रानी—'पहली प्रतिज्ञा के अनुसार भरत को राजगद्दी दीजिए । दूसरी प्रतिज्ञा के अनुसार राम को चौदह वर्ष का वनवास ।'

रानी की बातें सुनकर राजा सन्नाटे ने आ गये । काटो तो खून नहीं । मुख सूख गया । शरीर भर में बिजली सी दौड़ गयी । वह कटे हुए शाल वृक्ष के समान धड़ाम से भूमि पर गिर पड़े । उन्होंने कहा—'रानी ! तुमने मुझे मार डाला ।'

रानी—राजन ! कहने और करने में बड़ा अन्तर होता हैं । यही कहते थे कि 'जो चाहो सो माँग लो ।' मुझे जो अच्छा लगा, मैंने माँग लिया । क्या आपने मुझे भिखारिन समझा था कि दो मुट्ठी अन्न माँग लूँगी ! भरत को तिलक करने में आनाकानी क्यों ? क्या वह आपकें पुत्र नहीं हैं ? क्या मैं क्रीतदासी हूँ ? मेरा भी कुछ अधिकार है । मैं उसे लेकर मानूँगी ।

राजा—रानी ! कुछ समझबूझ कर बातें करो । भरत को युवराज बनाने में मुझे आपत्ति नहीं पर राम को वन भेजने का क्या काम ? राम ने ऐसा कौन सा अपराध किया है, जिससे तुम देश निकाला दे रही हो । तुम तो सदा उनके गुण गाती थीं । आज क्या हो गया ?

रानी—ओह ! हो ! राम सीधे ! तुम सीधे ! कौशल्या महा सीधी !! मैं आप लोगों की चालें खूब समझती हूँ । सबने गुटबंदी कर रखी है । मेरे लड़के को ननिहाल भेज दिया । इधर राम के तिलक की तैयारी करदी । मुझसे कहा तक नहीं । यदि मंथरा न बतलाती तो मुझे पता भी न चलता । कैकेयी इतनी मूर्खा नहीं । मैं अब आपकी चालों में नहीं आ सकती ।

राजा—मैं राम और भरत में कोई भेदभाव नहीं रखता । यदि एक आँख राम हैं तो दूसरी भरत । मैं कल ही दूत भेज कर दोनों बेटों को बुलवा लूँगा । फिर शुभ मुहूर्त में भरत को राज्यसिंहासन पर बिठा दूँगा । राम को राज्य का लोभ नहीं है । वह भरत से बड़ा स्नेह करते हैं । इस समाचार से वह प्रसन्न ही होंगे । मैं तो केवल वंश मर्यादा का पालन कर रहा था । मुझसे भूल हुई कि तुमसे पहले पूछ न लिया । देवी ! मैं हाथ जोड़ता हूँ कि राम के वन जाने की बात मुझसे न कहो । मैं उनके बिना जीवित न रहूँगा ।' ऐसा कह कर वह अचेत हो गये ।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रानी—'मुझे प्रपञ्च अच्छे नहीं लगते। राजन ! दोनों बातें एक साथ नहीं हो सकतीं। आप दानी भी बनते हैं; और देने में कृपणता भी करते हैं। गाल फुलाना और ठट्ठा मार कर हँसना दोनों एक साथ नहीं हो सकते। प्रतिज्ञा करने वाले कभी उसे तोड़ते नहीं और झूठ बोलने वाले प्रतिज्ञा करते नहीं। यदि करते हैं तो उनका कोई विश्वास नहीं करता। आप तो रघु-वंशी हैं। रघुवंशी प्रण के सामने प्राणों का मोह नहीं करते। यदि वचन देने पर पछतावा हो रहा हो तो वचनों को तोड़ दीजिए। कदाचित भय है कि लोग आप को धार्मिक न कहेंगे। जब लोग आप से पूछें तो कह देना कि जिस कैकेयी की कृपा से मैं जीवित हूँ, जिसने मेरी रक्षा की, उसके साथ प्रतिज्ञा का पालन मैंने नहीं किया।'

रानी की व्यंग भरी बातें सुनकर राजा तिलमिला कर उठ बैठे। बड़े धैर्य से नेत्र खोले। सामने क्रोध मूर्ति कैकेयी दिखायी पड़ी। उन्होंने कहा—प्रिये ! तुम ऐसी बातें क्यों कर रही हो ? मैं प्रतिज्ञा भंग नहीं करता। केवल राम की भिक्षा माँगता हूँ। मैंने तुमसे प्रेम किया। तुमने मेरे साथ विश्वासघात ! क्या प्रेम करने का यही प्रतिफल है ? तुमने न प्रेम की मर्यादा निबाही और न कुल की। मैं तो यही कहूँगा कि कोई प्रेम में अंधा न हो जाय। रानी ! क्या तुम समझती हो कि राम वनवास के योग्य हैं ? लोग सुनेंगे तो क्या कहेंगे ? मैं सारी प्रजा को क्या मुँह दिखलाऊँगा ? कौसल्या सुनेंगी तो क्या कहेंगी ?

रानी—मैं समझ गयी कि पुरुष बड़े झूठे होते हैं। वे मीठी-मीठी बातें करके युव-तियों को बहका लेते हैं। बेचारी उनके भुलावे में आ जाती हैं। फिर जन्म भर पछताती रहती हैं। मैं तो यही कहूँगी कि कोई पुरुषों का विश्वास न करे। आपने झूठी प्रतिज्ञा करके मुझे ठगना चाहा। स्मरण रहे कि यदि आपने प्रतिज्ञा तोड़ कर राम को गद्दी पर बिठा दिया तो मैं विष पीकर आत्म हत्या कर लूँगी। और इस हत्या का पाप आप के शिर पर होगा।

राजा— 'नागिन ! मेरे सामने से हट जा। अब कभी मुँह न दिखाना। तू देखने में सुन्दर है, पर तेरा हृदय असुन्दर है ! लोग कहते हैं तेरे मुख में अमृत है। आज मुझे विदित हो गया कि तू विषमुखी है। यदि मैं ऐसा जानता तो तेरे साथ कभी विवाह न करता। तू इस वंश की बधू होने के योग्य नहीं। तू आर्य संतान नहीं। तेरे विचार नीच हैं, कुत्सित हैं ! उनमें स्वार्थ की दुर्गन्ध आ रही है। खबरदार ! मुझसे अब जीवन भर बात

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

न करना। पर याद रख, ये दिन न रहेंगे। दुनिया बदल जायगी। पर तेरा कलंक और मेरा पश्चाताप अमर रहेगा।

महाराज मनस्ताप की अग्नि में सुलग उठे। वह सोच रहे थे कि कल राम से क्या कहूँगा ? राम को समाचार मिलने के पूर्व यदि मेरा हृदय फट जाता तो अच्छा था। वह मृत्यु का आह्वान कर रहे थे। पर वह बुलाने से कहाँ आती है ? उसका भी एक निश्चित समय होता है। वह सूर्य देव से मना रहे थे कि आप उदय न हों। वंश की यह दशा देख आप को दुःख होगा। पर समय की गति कब रुकती है ? रात बीत गयी। सबेरा हो ही गया।

वन-गमन की तैयारी

पौ फटते ही राजद्वार पर शहनाइयाँ बजने लगीं। दास-दासी अपने काम में लग गये। लोग दरबार में एकत्र होने लगे। परिषद् के सदस्य, मंत्री, सचिव, पुरोहित, गुरु वशिष्ठ एक-एक करके आ गये। किन्तु राजा न आये। वशिष्ठजी ने कहा कि महाराज तो नित्य ब्राह्म मुहूर्त में उठते थे। आज तो विशेष जल्दी उठना था। कदाचित् रात में देर तक जागते रहे। इसीलिए उठने में देर हुई। उन्होंने सुमंत्र से रनिवास में जाने को कहा। मंत्री ने जाकर देखा कि राजा आहत हाथी की भाँति भूमि पर पड़े तड़प रहे हैं। रानी सिंहनी की भाँति शिकार की ताक में बैठी हैं। उनकी यह दशा देख मंत्री घबड़ा उठे। उन्होंने कैकेयी से पूछा कि राजा को क्या हो गया !

रानी ने कहा कि राजा रात भर सोये नहीं। पलँग पर पड़े करवटें बदलते रहे। केवल बीच-बीच में 'राम-राम' कह कर कराह उठते थे। कारण भगवान जानें। आप राम को जल्दी बुला लाइये।

सुमंत उल्टे पाँव राम के पास पहुँचे। सारा हाल कह सुनाया। राम जैसे बैठे थे, वैसे ही चल दिये। लोगों ने राम को मंत्री के साथ जाते देखा तो उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ। उनके मन में तरह-तरह की शंकायें उठने लगीं। वे परस्पर संकेत से बातें करने लगे। चहल-पहल कम हो गयी। बाजे बन्द हो गये। राज-भवन में सन्नाटा छा गया। एक गम्भीर वातावरण उत्पन्न हो गया।

राम ने कैकेयी माँ के प्रकोष्ठ में देखा कि राजा भूमि पर अचेत पड़े हैं। उनके वस्त्र-आभूषण अस्त-व्यस्त हैं। मुकुट खिसक गया है। मुख की कान्ति मलिन है। छाती धड़क रही है। राम समझ गये कोई अघटित बात है। उन्होंने चरण

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

छूकर पिता को जगाना चाहा, पर वह टस से मस न हुए। राम ने माँ से पूछा कि पिताजी बोलते क्यों नहीं ? क्या मुझ से कुछ भूल हुई ? क्या उन्होंने आप से कुछ कहा था ? क्या उन्हें कोई शारीरिक पीड़ा या मानसिक कष्ट है ?

कैकेयी ने कहा—'बेटा ! तुम इस वंश के रत्न हो। तुमसे कोई भूल कैसे हो सकती है ! तुम तो पिता की जीवन-ज्योति हो। सच यह है कि विवाह के पूर्व राजा मुझ से प्रतिश्रुत हो चुके थे कि मैं राजमाता हूँगी। मैने उसी प्रतिज्ञा का स्मरण दिलाया। यह सुनकर उन्हें महान वेदना हुई। वह तुम्हारे स्नेह को छोड़ नहीं सकते। एक राज्य में दो राजा रह नहीं सकते। यदि भरत को राजगद्दी पर बैठना है तो तुम्हें वन जाना है। राजा दुविधा में पड़े हैं। उनकी दशा साँप-छछूँदर की सी है। न 'हाँ' करते बनता है और न 'ना'। तुम उनके सुयोग्य पुत्र हो। मुझे विश्वास है कि तुम उनकी आज्ञा का उल्लंघन न करोगे।'

राजा ने करवट बदली। राम को पुकारा। मंत्री ने उन्हें सम्हाल कर गोद में बिठाया। कान में धीरे से कहा कि भैया आ गये। भनक पड़ते ही राजा उठ बैठे और पूछा कि कहाँ हैं ? इतने में राम सामने आये। राजा ने उन्हें हृदय से लगा लिया। शिर पर हाथ फेरा और उनको देखते ही रह गये। वह कुछ कहना चाहते थे पर कह न पाये। गला भर आया। आँखों से आँसू बहने लगे।

पिता की मनोव्यथा समझ राम ने कहा—'आप रोते क्यों हैं ? आप ने अपना सर्वस्व दिया। मैने सब कुछ पाया। मुझे राज-भोग की वासना नहीं। मेरे भाग्य में जो लिखा है, उसे कौन टाल सकता है ? ईश्वर की इच्छा बलवती है। उसके अनुकूल चलने में ही हमारा हित है। मेरे लिए यह अलभ्य अवसर है कि मैं आप की आज्ञा का पालन करूँ। आप मोह में पड़ कर दुखी न हों। मेरी चिंता से व्यग्र न हों। अच्छा ! मैं माता से आज्ञा ले लूँ फिर आप के दर्शन करूँगा। ऐसा कह कर कौसल्या के पास चले गये।

कौसल्या से विदायी

कौसल्या नित्य कर्म करके सूर्य की आरती कर रही थीं। राम ने उन्हें हाथ जोड़ कर प्रणाम किया। माँ ने आशीर्वाद दिया। फिर प्रसाद देकर कहने लगीं—'इसे पा लो। आज तुम्हारा तिलक है। कार्यभार अधिक है। पता नहीं,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दिन में भोजन करने का अवसर मिले या न मिले। मैं राजसिंहासन पर तुम्हें बैठे देख मैं अपना जीवन सफल समझूँगी।'

राम ने माँ की स्नेह भरी बातें सुनीं। उन्होंने मधुर स्वर में कहा—'माँ! पिता ने मुझे वन का राज्य दिया है। वहाँ मुझे अनेक कार्य करने हैं। मैं वहीं जाने की आज्ञा लेने आया हूँ। आशीर्वाद दीजिए कि मेरा मार्ग मंगलमय हो।'

राम की बातें सुनकर कौसल्या अवाक रह गयीं। पहले तो उन्हें विश्वास ही न हुआ। फिर सोचने लगीं कि राम तो कभी हँसी करते नहीं। बात कुछ अवश्य है। वह उनके मुँह की ओर देखने लगीं। उनका मुख सूख गया। प्रसाद देने के लिए उठे हाथ उठे ही रह गये। राम के मुख पर निश्चय की दृढ़ रेखाएँ देखीं। वह समझ गयीं कि परिस्थिति गम्भीर है। उनसे कुछ कहते न बना। केवल रोने लगीं।

राम ने कहा—'आप रोती क्यों हैं? आपने स्नेह और मोह को कर्त्तव्य के आगे सदा दूर रखा है। मुझे धर्म और कर्म का पाठ पढ़ाया है। मैं केवल चौदह वर्ष के लिए दण्डकारण्य जा रहा हूँ। जीवन भर वहाँ रहना नहीं। पिता के वचनों का पालन कर मैं लौट आऊँगा। आप दुखी न हों।'

कौसल्या ने मस्तक पर दोनों हाथ रख कर कहा—'हे भगवन्! मैं क्या सुनना चाहती थी, पर क्या सुन रही हूँ? क्या देखना चाहती थी, पर क्या देख रही हूँ? हाय! मेरा सोने का संसार मिट्टी हो गया। मेरा बना बनाया घर उजड़ गया? मेरी अभिलाषाएँ मिट गयी

राम ने कहा—'माँ! भाग्य की लिपि विचित्र है! वह अमिट है। संसार में जो कुछ होता है, भगवान की इच्छा से होता है। मनुष्य का उस पर कोई वश नहीं। फिर सुख-दुख और संयोग-वियोग तो क्षणिक हैं। वे दिन-रात की तरह बारी-बारी से आते रहते हैं। हमें दैवेच्छा में ही सुख मानना चाहिए।'

कौसल्या को किसी तरह धीरज न होता था। वह मनको लाख समझाने की चेष्टा करतीं पर वह मानता न था। माता का स्नेह संसार में अद्भुत होता है। उसे माता ही जानती है। कौसल्या बड़ी भोली-भाली नारी थीं। वह कभी किसी से कड़ी बात तक न कहतीं। राम के कल्याण के लिए वह देवी-देवता मनातीं, ब्राह्मणों और साधुओं का सम्मान करतीं, भूखे को अन्न और प्यासे को पानी पिलातीं, तथा किसी को कष्ट न देती थीं। वह जीवमात्र से स्नेह करती थीं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पर आज जो उन पर अचानक बज्र टूट पड़ा तो उसे सह न सकीं। उनकी मर्यादा का बाँध टूट गया। उन्होंने रोष में कहा—

'तुम्हें वन भेजने वाले राजा कौन होते हैं? राज्य उनका है। उसे वह चाहे जिसे दें! पर वनवास देने का क्या काम? मेरा अधिकार उनसे अधिक है। मैं कहती हूँ कि तुम मेरे भवन में रहो। मेरी आज्ञा का पालन करो। इसमें तुम दोषी न होगे।'

राम ने हाथ जोड़ कर कहा—'माँ! आप क्या कह रही हैं? पिताजी के स्वर में विमाता का स्वर मिला है। फिर हमें तो अपने धर्म का निर्वाह करना है। यदि कोई बुरा करता है तो हमें उसके साथ भला करना है। सूर्य तपता है। पर चन्द्रमा शीतल है। अग्नि उष्ण है। हिम शीतल है। कैकेयी ने अपना काम किया। आप अपना काम करें। मेरे चले जाने पर आप महाराज की देख-रेख करें।'

राम की मधुर और शीतल वाणी सुनकर कौसल्या वैसी ही शान्त हो गयीं जैसे उबाल आने पर दूध जल के छीटों से शान्त हो जाता हैं। यदि वह चाहतीं तो राम को रोक देती। राजा उनकी ओर होते। प्रजा उनका साथ देती। संभव है जनक को भी सम्मिलित होना पड़ता। पर उन्होंने गृह-विद्रोह और राज्य-विद्रोह करना ठीक न समझा। उन्होंने सुबुद्धि से काम लिया और राम से कहा—'तुम ठीक कहते हो। वह पुत्र धन्य है, जो अपने पिता की आज्ञा पालन करता है। तुम्हें पाकर मेरा नारी जीवन सफल है।

राम और सीता का प्रत्यालाप

सीता ने राम के वनगमन का समाचार सुना। वह व्याकुल हो माता कौसल्या के पास पहुँची। सास के चरण छुए और मुँह लटका कर बैठ गयीं। उनकी दशा उस हरिणी के समान थी जिसके संगी को बधिक जाल में फँसा कर ले जाने की तैयारी में हो। वह मन ही मन सोच रही थीं कि प्राणनाथ संग ले चलेंगे या नहीं। उनकी मनोदशा कौसल्या ने समझी। उन्होंने राम से कहा:—

'वत्स! तुम वन जाने को तैयार हो पर जनक दुलारी कहाँ रहेंगी? यह तो स्वभावतः सुकुमारी हैं। इनका लालन-पालन बड़े स्नेह से हुआ है। यह या तो पलँग पर पड़ी रहती हैं या झूले पर झूलती रहती हैं। इन्होंने कठिन भूमि

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पर पैर ही नहीं दिया। यह भी तुम्हारे साथ बन जाने को तैयार हैं। उन्होंने वन के कष्टों का चित्र खींचा—वहाँ सिंह, व्याघ्र, भेड़िये, भालू आदि भयंकर जन्तु एवं मांसाहारी राक्षस घूमा करते हैं। उनके बीच में सीता कैसे रहेंगी? वन में तो कोल-भिल्लों की छोकरियाँ रहती हैं, जो विषय-सुखों से अनभिज्ञ हैं। उनका स्वभाव पाषाण के कीड़ों की भाँति कठोर होता है। उन्हें कष्टों का अनुभव ही नहीं होता। यदि राजा जनक सुनेंगे तो क्या कहेंगे? बेटे! इन्हें समझा दो कि वन जाना ठीक नहीं।

राम बड़े शीलवान और संकोची थे। माता के सामने सीता से बातें करने में उन्हें संकोच हुआ। किन्तु 'आपत्काले मर्यादानास्ति' का सहारा लेकर कहने लगे :—

राजकुमारी! तुम्हारा भला इसी में है कि घर में रह कर सास-ससुर की सेवा करो। तुम कोमलाङ्गी हो। रनिवास छोड़ कर कभी बाहर निकली नहीं। शीत और धूप सहन नहीं की। वर्षा और झंझा झेली नहीं। सुख छोड़ दुख देखा नहीं। तुम वहाँ रह न सकोगी। वन बड़ा दुगर्म और भयंकर है। वहाँ एक नहीं अनेक कष्ट हैं। न खाने को भोजन, न पहनने को वस्त्र। कंद-मूल-फल खाने होंगे और सोतों का पानी पीना होगा। पहाड़ों का पानी भी हजम नहीं होता। उसमें बजरी और बालू के कण मिले रहते हैं। मार्ग ऊँचे-नीचे और दुगर्म हैं। जगह-जगह नदी-नाले और खोह पड़ते हैं। कहीं कंकड़, कहीं पत्थर, कहीं कांटे और कहीं झाड़ियाँ। वन में तो वे ही व्यक्ति रह सकते हैं, जिन्होंने सांसारिक सुखों को तिलांजलि दे दी हो अथवा संसार से विरक्त हो गये हों। संसार में सब वस्तुएँ सबके लिए नहीं। कोकिल रसाल वन में ही तान छेड़ती है। भ्रमरी कमल-पुष्प पर ही मँडराती है। हंसिनी मानसरोवर में ही विहार करती है। राजहँस मोती चुगते हैं। बगले मछली और घोंघे खा कर रहते हैं। वन्य जीवन तुम्हारे योग्य नहीं।'

सीता क्षणिक बुद्धि वाली नारी न थीं। उनका निश्चय पत्थर की लकीर था। स्वामी की स्नेहमयी बातें सुनकर उनका मन विचलित न हुआ। उन्होंने लज्जावश सास की ओर से मुँह घुमा लिया और बोलीं :—

स्वामी! आप ठीक कहते हैं। हम दोनों का कर्त्तव्य माता-पिता की सेवा करना हैं। पर नारी का धर्म पति की सेवा है। वही उसकी गति है। वह तो पुरुष की छाया है। उसे छोड़ कर वह कहाँ रह सकती है? क्या प्रभा सूर्य से

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अलग हो सकती है ? क्या चन्द्रिका सुधाकर को छोड़ सकती है ? जल के विछोह में मछली तड़प कर मर जाती है। जीवात्मा के चले जाने पर शरीर शवमात्र रह जाता है। पति और पत्नी का अभिन्न सम्बन्ध है।

हे नाथ ! आपने मुझे वन के अयोग्य ठहराया, पर क्या आप वन के योग्य हैं ? यदि मैं राजकुमारी हूँ तो आप राजकुमार हैं। यदि मैंने कष्ट नहीं झेले तो आप ने भी दुख नहीं देखे। यदि वन दुर्गम, भयावह और कण्टकाकीर्ण हैं तो दोनों के लिए। जो आप को होगा वही मुझ को। यदि मैंने आपके साथ राज-भोग किये हैं तो वनवास के दुखों को भी झेलूँगी। आपके वियोग से बढ़ कर दूसरा कष्ट मेरी दृष्टि में नहीं आता। यह शरीर रख कर मैं क्या करूँगी ? घर किस काम का ? धन किस अर्थ का ? राज्य किस मतलब का ? प्रिय-वियोग में ये सब कष्टदायी ही होंगे। पति के बिना भोग रोग है, भूषण भार है, संसार यमयातना है और स्वर्ग भी नरक है। आप जानते हैं कि पुरुष माया-रूपी देह का प्राण है, नारी-सरिता का जल है। वह पति के बिना कैसे रह सकती है ? मैंने तो सदा यही शिक्षा पायी है।

सीता के प्रत्युत्तर को सुनकर राम ने कहा—'सुभगे ! तुम्हारा कहना यथार्थ है। पर वन में महान कष्ट हैं। उनकी याद आते ही वीर पुरुषों के रोंगटे खड़े हो जाते हैं। पुरुष कठोर होता है। उसमें नारी से अधिक सहनशक्ति होती है। वह स्वयं कष्ट झेल लेता है पर अपनी संगिनी को बचाता है। लोग सुनेंगे तो क्या कहेंगे ? तुम्हें ले चलने में मुझे शंका होती हैं। मेरा दिल धक-धक करता है। यदि कुछ हो गया तो हम मुँह दिखाने योग्य न रहेंगे ! वन चलने का हठ न करो। नहीं तो जीवन भर पछताना पड़ेगा।

सीता का मन राम के साथ था। उनके सामने प्रिय-वियोग का वारिधि लहरा रहा था। उसके पार जाने में सीता असमर्थ थीं। उन्होंने हाथ जोड़कर कहा—

'आप स्वामी हैं। आप की आज्ञा मानना मेरा धर्म हैं। किन्तु समझ लीजिए कि लौटकर मुझे जीवित न पायेंगे। मैं हीरे की कनी चाट कर मर जाऊँगी। यदि आप छोड़ देंगे तो मेरा क्या वश !

राम समझ गये कि सीता मेरे पीछे आत्मघात कर लेंगीं। इस हत्या का पाप मेरे सिर चढ़ेगा। उनके सामने भावी विपत्तियों के मेघ मँडरा रहे थे। चिन्ताओं का ज्वार उठ रहा था। शंकाओं की विद्युत चमक रही थी। पर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वह विवश थे। उन्होंने सोचा कि जब विपत्ति आई है तो उससे हम बच कहाँ सकते हैं ? जो होना है सो होगा। ऐसा सोच कर सीता से कहा कि तुम उदास न हो। चलने की तैयारी करो। देर करने का समय नहीं।

लक्ष्मण की तैयारी

सीता अन्दर जाकर वस्त्राभूषण बदलने लगीं। लक्ष्मण समाचार पाते ही व्याकुल होकर दौड़े। राम के चरणों से लिपट कर रोने लगे। राम ने उन्हें गले लगाया और कहा—'भैया ! आज तुम्हें क्या हो गया है ? तुम बच्चों की तरह कैसे रो रहे हो ? परिस्थिति भयानक हैं। पिताजी वृद्ध हैं। उनकी अन्तिम अवस्था है। मैं वन जा रहा हूँ। भरत ननिहाल में हैं। माताएँ विलख रही हैं। सारा परिवार दुखी है। परिजन शोक संतप्त है। प्रजा वर्ग भी उद्वेलित है। बड़ी कठिन समस्या आ पड़ी है। तुम्हारे सामने कर्त्तव्य का सागर लहरा रहा है। तुम्हें उसके पार जाना है। राजा का धर्म प्रजा की रक्षा करना है। मेरे पीछे तुम्हीं को यह भार सम्हालना है। मुझे तुमसे बड़ी आशा है।'

भाई की बातें सुनकर लक्ष्मण ने कहा—'भैया ! मैं तो सदा आप के साथ रहा हूँ। मैं तो आप ही को माता-पिता-भाई समझता हूँ। मैं राजनीति जानता नहीं। धर्म में मेरी गति नहीं। स्वर्ग और मोक्ष की मुझे अभिलाषा नहीं। न मुझे वैभव चाहिए और न कीर्ति। मैं तो केवल आप की सेवा करना चाहता हूँ। परदेश में एक से दो अच्छे होते हैं। फिर आप तो परदेश नहीं वरन् वन जा रहे हैं। वहाँ कोई अपना नहीं, कोई संगी-साथी नहीं। यदि जनकपुरी की यात्रा में आप के साथ रहा तो वन की यात्रा में साथ कैसे छोड़ सकता हूँ ? आप बड़े हैं। मैं छोटा हूँ। आप स्वामी हैं। मैं सेवक हूँ। यदि आप छोड़ देंगे तो मेरा क्या वश ? आपकी आज्ञा शिरोधार्य हैं।

राम ने देखा कि लक्ष्मण घर-बार छोड़ उनके साथ जाने को तैयार है। उनसे मना करते न बना। उन्हें कहना पड़ा—'तुम्हारा जैसा भाई मुझे कहाँ मिलेगा ? पर तुम्हें आज्ञा देने का काम मेरा नहीं, माँ का है। तुम उनसे आज्ञा ले लो।

लक्ष्मण तुरन्त सुमित्रा माँ के पास पहुँचे। वह स्नान-पूजन करके तुलसी पर जल चढ़ा रही थीं। लक्ष्मण ने बड़े आदर से चरण स्पर्श किये और हाथ जोड़-कर खड़े हो गये। माँ ने पूछा—बेटा ! आज अनमने कैसे ? उन्होंने सारी कथा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
कह सुनायी और भाई के साथ वन जाने की आज्ञा माँगी। माँ ने लक्ष्मण के शिर हर हाथ रख कर कहा:—

'बेटा ! चिरंजीवी हो। मुझे गर्व है कि तुम मेरी कोख से उत्पन्न हुए। मैंने कौसल्या को सदा बड़ी बहन समझा है। राम को कभी दूसरा नहीं जाना। तुम मेरे रक्त और मांस हो। तुमने जो राम और सीता के साथ वन जाने का निश्चय किया वह ठीक ही है। संपत्ति में तो सभी साथी हो जाते हैं। विपत्ति में साथ देने वाला सच्चा भाई होता है। तुम धन्य हो ! तुम्हारा विचार श्लाध्य है। मैं आशीष देती हूँ कि तुम अपने व्रत में सफल हो। अपने लिए तो दुनिया जीती है, पर जो दूसरे के लिए जीता है, वही पुरुष कहलाने का अधिकारी है।'

सुमित्रा से विदा लेकर वह ज्यों ही बढ़े, त्योंही उनकी दृष्टि उर्मिला पर पड़ी। उन्होंने समझा कि इसने अब विघ्न डाला। इन्हें कैसे समझाऊँ ? उर्मिला ने माँ से बातें करते स्वामी की सारी मनोभावना जान ली थी। उन्होंने एक नैराश्य पूर्ण दृष्टि उन पर डाली लक्ष्मण ने करुण भरी आर्द्र दृष्टि से उर्मिला को देखा। दोनों एक दूसरे के भावों को समझ गये। एक ओर विषाद था। दूसरी ओर विवशता। इधर लक्ष्मण ने मुँह फेरा उधर उर्मिला ने उनकी मुख मुद्रा का ध्यान करके समाधि ले ली। वह तभी खुली जब लक्ष्मण वन से लौट कर आये।

राम-लक्ष्मण और सीता ने माता कौसल्या को प्रणाम किया। माँ ने आशीष दी कि बेटा युग-युगान्तर जियो। वह अरण्य धन्य है, जहां तुम जा रहे हो। यह अयोध्या अभागिनी है, जिसे तुम छोड़ रहे हो। तुम्हारा मार्ग निष्कंटक हो। वन के शूल तुम्हें फूल बन जायँ और पराये अपने हो जायँ। संसार में जहाँ रहो सुखी रहो। वे पुरुष धन्य हैं जो त्यागमय जीवन बिताते हैं। जिस राज्य के लिए लोग झगड़ा करते हैं, भाई-भाई कट मरते हैं ! सहस्त्रों का का संहार होता है, उसे तुमने तृण के समान त्याग दिया। तुम शतवार धन्य हो ! फिर वह सीता से बोलीं—'बेटी ! तुम्हारा कल्याण हो। तुम्हारा सौभाग्य अचल रहे। तुम पति-प्राणा हो। तुम नारी-रत्न हो ! तुम्हारी कीर्ति अमर हो। तुम कुशलपूर्वक लौटो।' अन्त में लक्ष्मण से कहा—बेटा ! तुम धन्य हो ! तुम्हारी माता शतवार धन्य है !! तुमने फूलों का रास्ता छोड़ कर काँटों का मार्ग अपनाया है। सेवाव्रत लिया है। मैं आशीष देती हूँ कि तुम उसमें सफल हो। तुम्हें संसार में कोई वस्तु दुर्लभ न हो।'

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कैकेयी के कुचक्र की चर्चा नगर भर में फैल गयी। जिसने सुना अपना सिर पीट लिया। सब कैकेयी को बुरा-भला कहने लगे—'इस पापिनी को क्या सूझ पड़ा ? इसने बैठे-बैठाये घर में आग लगा दी। यह तो अपनी आँखें निकाल कर देखना चाहती है। विष को पीकर उसका स्वाद जानना चाहती है। इसकी बुद्धि भ्रष्ट हो गयी है। यह तो राम को सदा भरत से अधिक मानती थी। आज इसे क्या हो गया ? इतनी क्रूर प्रतिज्ञा कैसे कर बैठी ?' कोई कहता कि राजा ने भूल की। किसी ने कहा कि बुढ़ापे में विवाह करने का यही फल है। किसी ने कहा कि यह एक षड़यंत्र है। कदाचित भरत इसमें शामिल हैं। इस पर दूसरों ने कहा कि भरत के सम्बन्ध में ऐसा न कहो। वह तो परमसाधु हैं। उनकी ऐसी सम्मति कभी नहीं हो सकती। यह उसी दुष्टा कैकेयी की दुर्मति है। वही महत्त्वाकांक्षिणी है। उसे महारानी बनने का गर्व है। वह अपने सौंदर्य में फूली नहीं समाती। संसार में सुन्दरता भी एक विष है। वह जिस पर चढ़ जाता है, कभी उतरता नहीं। भगवान न करे कि ऐसी विषैली नागिन से किसी का सामना पड़े।

परिवार की बड़ी-बूढ़ी स्त्रियाँ कैकेयी के पास जाकर समझाने लगीं—रानी ! तुम क्या कर रही हो ? तुम तो बुद्धिमती हो ! लोग तुम्हारी सदा प्रशंसा करते-रहते हैं। क्या तुमने ईर्ष्या वश ऐसा किया है ? कौसल्या ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा था, जो उनके पुत्र के साथ घोर अन्याय कर रही हो। तुम्हारी बुद्धि पर सबको विश्वास था। तुम्हारी प्रीति अनुकरणीय थी। आज तुमने क्या कर डाला ? क्या तुमने इसका परिणाम सोचा है ? राम ही वन नहीं जा रहे, सीता भी जा रही हैं। उनके साथ लक्ष्मण भी जा रहे हैं। क्या भरत राज-गद्दी लेंगे ? क्या राम के वियोग में राजा जीवित रहेंगे ? क्यों रघुवंश को मिटाने पर तुली हो ? अपने माथे पर नाहक कलंक का टीका लगा रही हो। भरत को युवराज बनाना तो ठीक, पर राम को वन भेजने का क्या काम ? अभी समय है। राजा से कह दो कि राम गुरु के घर में बने रहें। तुम्हारी भी बात बन जाय और काम भी न बिगड़े। नहीं तो जीवन भर पश्चाताप में ही जलती रहोगी।'

कैकेयी को उनकी बातें रुचिकर न लगीं। उस पर तो भूत सवार था। उसकी मति मारी गयी थी। उसे अपने हठ के आगे कुछ सुझाई न पड़ता था। वह टस से मस न हुई। वह मौन थी। मानों स्मशान जगा रही हो। इस पर

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

एक वृद्धा ने कहा—'बहन ! किसे समझाती हो ? समझाना उसे चाहिए जो समझने की चेष्टा करे। जगाना उसे चाहिए जो सोता हो। जो जागते हुए सोने का बहाना करता है, और जानते हुए भी अनजान बनता है उसे जगाना और समझाना व्यर्थ है। ऐसा कह कर वे अपना सा मुँह लेकर लौट गयीं।

वन-प्रस्थान

कौसल्या से बिदा होकर राम-लक्ष्सण सीता के साथ महाराज के पास गये। राजा बिस्तर पर पड़े तड़प रहे थे। वह उस सर्प की भाँति शिर पटक रहे थे जिसकी मणि छीन ली गयी हो। सुमन्त ने महाराज से कहा कि कुमार जाने की आज्ञा माँग रहे हैं। राजा ने शिर उठाया मानों खोई हुई मणि मिल गयी हो। राम को देखते ही उनकी आँखों में आँसू भर आये। उन्होंने कुछ कहना चाहा, पर बोल न सके। वह उन्हें देखते ही रहे। यह दशा देख कैकेयी ने राम से कहा कि राजा तुम्हें वन जाने की आज्ञा कभी नहीं दे सकते, चाहे उनकी अपकीर्ति ही क्यों न हो। वह झनक कर प्रकोष्ठ में गयी। भगवाँ वस्त्र, मृगचर्म, कमण्डल और पादुकाएँ उठा लायी और सामने रख दीं। राम ने जोगिया वस्त्र पहने। बगल में मृग चर्म, कमर में पीताम्बर, पीठ पर तरकस, कंधे में धनुष और हाथ में कमण्डल ले चलने को प्रस्तुत हो गये। उन्होंने पिता और माता के चरण छुए और कहा कि आशीर्वाद दीजिए जिससे मार्ग कल्याण प्रद हो।

राम ड्योढ़ी से निकले। उनके पीछे सीता। उनके पीछे लक्ष्मण। उनके पीछे दास-दासी। वह ज्यों-ज्यों बढ़ते चले त्यों-त्यों लोग उनके साथ होते गये। जिसे देखो वही उदास था। स्त्रियाँ और बच्चे रोने लगे। उनका आर्तनाद सुन कर छाती फटी जाती थी। राजभवन में कोहराम मच गया। सिंहद्वार लाँघते-लाँघते उनके साथ भीड़ लग गयी। नगर के स्त्री-पुरुष सब साथ हो लिए। सब लोग चुपचाप चले जा रहे थे। मारे शोक के सब मौन थे। नगर के बाहर निकल कर राम ने लोगों से कहा कि आप चलने का कष्ट न करें। बड़े-बूढ़ों ने उनकी बात मान ली। पर नवयुवक तो किसी तरह मानते ही न थे। राम ने गुरु वशिष्ट से कहा कि अब सारा भार आप पर है। फिर जनता को सम्बोधन करते हुए कहा—'मेरा वही हितू है जो परिवार की देख-भाल करे। मेरा वही परिजन है, जो माता-पिता की सेवा करे। मेरा वही सेवक है, जो मेरी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आज्ञा का पालन करे।' उनके विनम्र वचन सुनकर कुछ तो लौट पड़े किन्तु अधिकांश साथ छोड़ने को तैयार न थे।

उसी समय सुमन्त रथ दौड़ाते हुए आये और कहा कि राजा की आज्ञा है कि आप रथ पर बैठ कर जायँ। सुमन्त के कहने से सीता राम और लक्ष्मण रथ पर बैठ गये। उन्होंने गुरु को प्रणाम किया। अवध के हाथ जोड़े। फिर गणेश जी का स्मरण कर सुमन्त से रथ बढ़ाने को कहा। दोपहर चढ़ रही थी। धूप तेज थी। बदन से पसीना निकल रहा था। मुख सूख रहे थे। आगे रथ जा रहा था। पीछे-पीछे लोग दौड़ते चले जा रहे थे। राम ने बहुत समझाया पर वे किसी की सुनते ही न थे। उनका कहना था कि जहाँ राम वहीं अयोध्या। धन्य राजा राम! और धन्य उनकी प्रजा! संसार में ऐसे राजा और प्रजा कहाँ मिलेंगे?

सन्ध्या समय तमसा नदी के किनारे सुमन्त ने रथ रोक दिया। सबने वहीं विश्राम किया। उस दिन किसी ने न अन्न ग्रहण किया और न जल। यहाँ तक कि घोड़ों ने भी चारा-पानी नहीं किया। दिन भर के थके-माँदे सब लोग पड़ते ही सो गये। आधी रात होने पर राम ने सुमन्त से कहा कि रथ तैयार करो। हमलोग इसी समय चल देंगे। रथ ऐसा चलाओ कि पहियों के निशान दिखायी न पड़ें। मंत्री ने कुछ दूर तो अयोध्या की ओर रथ चलाया, फिर एक नये मार्ग से आगे बढ़ गये। प्रातः होने पर जब लोग सोकर उठे तो उन्हें न कहीं रथ दिखायी पड़ा और न राम-लक्ष्मण। वे 'राम-राम' कह कर चारों ओर दौड़ने लगे। पहियों के निशान देखते ।ए कुछ दूर चले पर मार्ग न पाकर लौट पड़े। वे बड़ी देर तक इधर-उधर चक्कर काटते रहे। अंत में निश्चय कर लिया कि राम हमें छोड़ कर चले गये। विवश होकर वे भी रोते-कलपते अयोध्या लौट गये।

राम-केवट संवाद

प्रातः होते-होते रथ सई और मध्याह्न होते गंगा तट पर पहुँच गया। सब लोग रथ से उतरे। गंगा जी को हाथ जोड़ कर प्रणाम किया। और आचमन कर बड़े प्रसन्न हुए। सुमन्त ने घोड़ों को जल पिलाया और बाँध दिया। राम ने केवट से नाव लाने को कहा। केवट ने बढ़कर दूर ही से दंडाकार प्रणाम किया और कहा—'मेरे अहो भाग्य! आज आप हमारे घाट आये। दोपहर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हो गयी है। धूप तेज है। हवा भी उल्टी बह रही है। दोपहर भर विश्राम कीजिए। हमारी सेवा स्वीकार कीजिए। धूप कम हो जाने पर मैं पार उतार दूँगा।'

राम—हमें बहुत दूर जाना है। यात्रा चलने वाले शीत और धूप का विचार नहीं करते। हम गंगा-पार विश्राम करेंगे। जल्दी करो। नहीं तो लोग आते होंगे और हमें कष्ट होगा।

केवट—ऐसी भी क्या जल्दी! कम से कम अपने चरण तो धो लेने दीजिए। उसने अपनी स्त्री को जल और पात्र लाने का संकेत किया। उसके बच्चे भी दौड़ कर आ गये।

राम—भैया! शिष्टाचार का समय नहीं। विलम्ब न करो। नाव लाओ और हमें उतार दो।

केवट—यदि आप को इतनी जल्दी है, तो मैं वह स्थान दिखा दूँगा, जहाँ पानी कमर तक है। डूबने से न डरिये। मैं आगे-आगे थाह लेता चलूँगा। आप पीछे-पीछे चले आवें।

राम—हमें डूबने का डर नहीं, पर मर्यादा भंग का भय है। तुम्हारा काम है कि लोगों को पार उतारो। जिसका जो काम है, उसे वही करना चाहिए। इसी में दोनों की शोभा है।

केवट—यदि आप को नाव से पार उतरना है तो पैर भी धुलाना है। आपके चरणों में धूल लगी है। मैंने सुना है कि आप की चरण-रज छूकर शिला गौतमनारी अहल्या हो गयी। मेरी नाव तो काठ की बनी है। पत्थर से कहीं अधिक कोमल है! यदि वह भी सुन्दरी नारी बन गयी तो मैं कहीं का न रहूँगा। घर वाली मुझे घुसने न देगी। वह यही समझेगी कि मैं इसके लिए सौत ले आया। उसे मेरी बात का विश्वास न होगा। मेरे घर में वह कलह मचेगी कि जीवन भार हो जायगा। महाराज! आप तो भुक्त भोगी हैं। मुझ पर और मेरे परिवार पर दया कीजिए। मैं इसी नाव से मछली मारता और लोगों को पार उतारता हूँ। इसी से बच्चों का पालन-पोषण होता है। यदि आप कहें कि दूसरी बनवा लेना तो मैं कहाँ से बनवाऊँगा? मैं निर्धन हूँ। मेरे पास पैसा नहीं।'

ऊपर से तो वह उल्टी-सीधी बातें कर रहा था, पर उसका ध्यान राम के चरणों की ओर था। वह भाव-विभोर था। उसके मानस में आनन्द की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तरंगें उठ रही थीं। इस आनन्द को वह दूर करना न चाहता था। उसे ध्यान ही न रहा कि समय बीत रहा है। प्रभु को देर हो रही है। उसकी तर्क-पूर्ण बातों में देरी होते देखे, लक्ष्मण को क्रोध आ गया। वह उसे डाँटने ही जा रहे थे कि राम ने मना करते हुए कहा—'भैया ! क्रोध न करो। शान्ति से काम लो। यात्रा लम्बी है। मार्ग में न जाने इस प्रकार की कितनी कठिनाइयाँ पड़ेंगी। इनमें धैर्य अपेक्षित है।' फिर उन्होंने केवट से कहा—'तुम्हें जो रुचे वही करो। मैं किसी का दिल दुखाना नहीं चाहता। फिर तुम तो सेवा कार्य करने वाले हो। मुझे तुमसे बड़ा स्नेह है।'

प्रभु की आज्ञा पाकर वह कठौती में गंगाजल भर लाया। केवटिन जल डालने लगी। वह पैर धोने लगा। कोमल चरणों के स्पर्श से उसे गुद्गुदी लगी। चरणों की पीठि नीली, तलवे लाल। उँगलियाँ पतलीं। उनमें नख मोती के समान। वह सोचने लगा कि क्या इन्हीं चरणों से गंगा जी निकली हैं ? क्या इन्हीं का लालन लक्ष्मी जी सदा किया करती हैं ? क्या यही चरण शंकर के मानस में विराजते हैं ? मेरे अहोभाग्य ! उसने चरणामृत लिया, स्त्री और बच्चों को पिलाया। अपने घर में छिड़का। फिर डाँड़ लेकर नाव पर जा बैठा।

राम ने हाथ का सहारा देकर सीता को चढ़ाया। लक्ष्मण खड़े हो गये। केवट ने बल्ली लगायी। नाव डोली। राम को जाते देख घोड़े हिनहिनाये। उनके आँसू गिरने लगे। यदि उनका वश चलता तो जाने न देते। पर विवश थे। बंधन में थे। बंधन बड़ा दुखदायी होता है। सुमन्त ने अवसर देख महाराज का संदेश सुनाया। उन्होंने कहा है कि रथ पर चढ़ाकर बन दिखला देना। गंगा-स्नान करा के वापस ले आना। मैंने उनकी आज्ञा का पालन किया। अब आप की क्या आज्ञा है ? ऐसा कहकर वह रोने लगे।

राम ने मंत्री से कहा—आप पिता तुल्य हैं। महामंत्री हैं ! नीतिज्ञ हैं ! धर्मात्मा हैं। आप जानते हैं कि सत्य के समान दूसरा धर्म नहीं। राजा ने उस सत्य का पालन किया। मैं भी उनका अनुसरण करूँगा। पुत्र का धर्म पिता की आज्ञा मानना है। क्या मैं उस धर्म को तिलांजलि दे दूँ ? पिताजी से हाथ जोड़ कर कहियेगा कि मेरी चिंता न करें। आपके आशीर्वाद से जंगल में भी मंगल रहेगा। हाँ, एक बात और है। जब भरत आवें तो कह देना कि प्रजा का पालन करें। पिताजी की देख-रेख करें। माताओं में किसी तरह का भेद-भाव न रखें।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राम का उत्तर सुनकर मंत्री ने सीता से कहा—बेटी ! तुम लौट चलो। वन में महान कष्ट हैं। तुम्हारे लौटने से महाराज को संतोष हो जायगा। उन्होंने कहा है कि तुम्हारी जहाँ इच्छा हो वहाँ रहना। कुछ दिन पिता के घर और कुछ दिन मेरे यहाँ।

मंत्री की प्रार्थना सुन सीता ने कहा—'आप हमारे श्वसुर के समान हैं। आपको उत्तर देने में हमे संकोच होता है। इस समय हम विपत्ति में हैं। इससे कुछ कहना पड़ता है। मैं जानती हूँ, कि मेरे श्वसुर चक्रवर्ती सम्राट हैं। वह पद में इन्द्र और वैभव में कुबेर हैं। मुझे मालूम हैं कि विदेह राज के चरणों में न जाने कितने विद्वान और धनवान शिर झुकाया करते हैं। मैं अवध और जनकपुरी के सुखों को भूली नहीं हूँ। पर मेरे सामने कर्त्तव्य का भार है। जो मार्ग मेरे स्वामी ने अपनाया है, वही मेरे लिए अनुकरणीय है। महाराज से कह दीजिएगा कि मुझे उसी में सुख है जिसमें आर्यपुत्र को।

सीता के उत्तर को सुनकर सुमंत मौन रह गये। उन्होंने लक्ष्मण की ओर दृष्टि दौड़ायी। लक्ष्मण ने कहा कि कैकेयी से कह देना कि तुम्हारी अभिलाषा पूरी हो गयी। काँटा निकल गया। अब तुम सुख के साथ राजभोग करो। वह कुछ और कहने जा रहे थे कि राम ने आँखों के संकेत से रोक दिया। उन्होंने मंत्री से कहा—'आप बुद्धिमान हैं। लक्ष्मण की बातें राजा से न कहियेगा, नहीं तो उन्हें वेदना होगी।' फिर उन्होंने केवट से नाव बढ़ाने को कहा। केवट ने डाँड़ लगाये और नाव धार चीरती हुई उस पार जा लगी। सुमंत नाव को तब तक खड़े देखते रहे, जब तक वह उस पार न पहुँच गयी।

नाव से उतर कर राम सोचने लगे कि केवट को कुछ देना चाहिए। उन्होंने सीता की ओर देखा। सीता स्वामी का भाव समझ गयीं। उनके पास केवल एक मुद्रिका थी। उन्होंने कनिष्ठका उँगली से मुँदरी उतारी, और राम को दे दी। राम ने उसे मध्यमा और अंगुष्ठ से दबाकर केवट से कहा—'यह अपनी उतराई लो।'

केवट ने हाथ जोड़ कर कहा—'मैं तो सरकार का ही दिया खाता हूँ। जन्म जन्मान्तर से यही धंधा कर रहा हूँ। आज मेरे अहो भाग्य कि आप हमारे घाट से उतरे। आपकी चरण रज मिली। मुझे सब कुछ मिल गया। मेरा जीवन सफल हो गया।।'

राम ने कहा—तुमने हमें पार उतारा है। यह तुम्हारा पारिश्रमिक है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
हम न तो किसी का हक मारते हैं और न किसी से बेगार लेते हैं। केवट ने कहा कि बेगार कैसी ? आप महाराज के पुत्र हैं। विषम परिस्थिति में वन जा रहे हैं। फिर आपकी सेवा करना हमारा धर्म है। लौटती बार आप जो देंगे मैं उसे सहर्ष स्वीकार करूँगा। राम ने कहा कि जैसी तुम्हारी इच्छा। मैं तुम्हारा ऋणी हो गया।

श्रृंगवेरपुर और निषादराज

गंगा के कगार पर श्रृंगवेरपुर बसा था। वहाँ केवटों का सरदार निषाद राज रहता था। उसने सुना कि महाराज दशरथ कुमार सीता के साथ जा रहे हैं तो वह भेंट लेकर सपरिवार मिलने आया। उसने कहा—'महाराज! संध्या हो रही है। आप रात में कहाँ भटकेंगे ? चलिये हमारे घर विश्राम कीजिए।' यह राज-पाट, धन-धान्य, कोष और नौकर-चाकर सब आपके है। मैं सपरिवार आपकी सेवा करूँगा।

निषाद की प्रार्थना सुन राम ने उसे गले लगाया और कहा—'मित्र! तुम ठीक कहते हो। जो तुम्हारा है उसे लेने में हमें संकोच नहीं। मित्रता में अपना और पराया क्या ? पर हम राजभोग करने नहीं आये। पिता ने हमें नगर में रहने की आज्ञा नहीं दी। मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि तुम मेरे लिए सब कुछ छोड़ने की तैयार हो। ऐसे व्यक्ति संसार में कम हैं। तुम धन्य हो!

राम की बातें सुनकर केवट उदास हो गया। उसने अपने सेवकों को आज्ञा दी कि रात में ठहरने के लिए सुन्दर स्थान तलाश करो। नदी से हटकर क्षीरणी का एक वृक्ष था। उसकी छाया सघन थी। उसी के नीचे भूमि साफ की गयी। निषाद ने स्वयं पत्तों का बिछौना बनाया। दूध पीकर राम और सीता ने वहीं विश्राम किया। उसने अपने विश्वासपात्र सेवकों को पहरा देने के लिए नियुक्त कर दिया। स्वयं लक्ष्मण के पास धनुष-बाण-तरकस लेकर जा बैठा। राम और सीता को भूमि पर सोते देख उसे महान दुख हुआ। उसने कहा—दैव की गति बड़ी विचित्र है! जो सदा मखमली गद्दों पर सोते रहें हों, जिन्होंने कभी दुख का नाम न सुना हो, उन्हें कँकरीली भूमि पर सोना पड़ रहा है। यह सारा दोष कैकेयी का है। रानी बड़ी मूर्खा है। उसी के कारण सारे राजपरिवार को महान कष्ट हो गया। उसे सीता का भी ध्यान न आया ? नारी की ईर्ष्या क्या नहीं कर सकती ? उसके मत में राजा कैसे आ गये ?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

निषाद की विषाद पूर्ण बातों को सुन कर लक्ष्मण ने कहा—'मित्र ! तुम भूल रहे हो। कोई किसी को न सुख देता है और न दुख। सब अपने-अपने कर्मों का फल भोगते हैं। विधाता ने संसार में कर्म का चक्र चला दिया है। जो जैसा करता है, वैसा फल पाता है। प्रत्येक व्यक्ति कर्म के बन्धन से बँधा हुआ है। कर्म तीन प्रकार के होते हैं (१) संचित (२) प्रारब्ध (३) क्रियमाण।

मनुष्य अपने जीवन में जो कर्म करता है, उन्हें क्रियमाण कहते हैं। उनमें से कुछ का फल वह इसी जीवन में भोग लेता है। जो बच जाते हैं, वे सञ्चित कर्मों में जुड़ जाते हैं। इन्हीं सञ्चित कर्मों में से ही कुछ को लेकर ब्रह्मा प्राणी के जन्म के पूर्व उसके भाग्य में लिख देते हैं। इसी को प्रारब्ध कहा जाता है। इन्हीं कर्मों को पाथेय स्वरूप लेकर जीव जीवन यात्रा आरम्भ करता है। प्रारब्ध के अनुसार ही वह सुख-दुख भोग करता है। क्रियमाण कर्म तीन प्रकार के होते हैं। कायिक, मानसिक और वाचिक। जो व्यक्ति मन से किसी की बुराई सोचता है, उसे मानसिक कष्ट मिलता है। उसका हृदय ईर्ष्या और द्वेष से सदा जला करता है। उसके चित्त को कभी शान्ति नहीं मिलती। जो मनुष्य किसी को दुर्वचन कहता या झूठ बोलता है, उसकी वाणी कलुषित हो जाती है। उसमें प्रभाव नहीं रहता। जो लोग सदा सत्य बोलते हैं, उनके वचन कभी असत्य नहीं होते। महर्षियों के वरदान और शाप इसीलिए सत्य होते हैं। ऐसा ही कायिक कर्मों का विधान है।

मानव शरीर में पाँच कर्मेन्द्रियाँ हैं और पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ जिस इन्द्रिय से शुभ कर्म किये जाते हैं, वह शुद्ध हो जाती है। जिससे अशुभ कर्म किये जाते हैं, वह मलिन हो जाती है। कर्म भी दो दृष्टियों से किये जाते हैं (१)लौकिक (२)पारलौकिक। शरीर की रक्षा, परिवार का पालन, पड़ोसियों और दीन-दुखियों की सेवा आदि लौकिक कर्म हैं। इनमें स्वार्थ और सुयश की भावना प्रधान रहती है। इनसे इस लोक के सुख मिलते हैं। आत्मचिंतन, ईश्वर उपासना, यज्ञ, दानादि पारमार्थिक कर्म हैं। ये मनुष्य को पवित्र बनाते हैं। इनसे मन शान्त होता और आत्मिक सुख मिलता है। संसार के द्वन्द्व को भुलाकर आत्मा को परमात्मा में लय कर देना परमानंद है। इसकी प्राप्ति सरल नहीं है। बात यह है कि लोग सांसारिक सुखों में ही लगे रहते हैं। उनकी दृष्टि सीमित रहती है।

मित्र ! तुम इसीलिए दुखी हो न कि हम लोगों को शारीरिक कष्ट है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हम लोग राजभवन के सुख छोड़ वन को जा रहे हैं। तुम्हारे देखने में हमें अवश्य कष्ट जान पड़ता है। पर हमें उनका अनुभव नहीं होता। सुख और दुख तो सापेक्षिक हैं। वे काल्पनिक और मनगढ़न्त हैं। देखो, भैया और भाभी कैसे सुख के साथ सो रहे हैं! हम लोग कल कहाँ थे? आज कहाँ हैं? कल कहाँ होंगे? इसकी उन्हें चिन्ता नहीं। उदार चरित वालों के लिए सब अपने हैं। कोई पराया नहीं। आकाश ही ओढ़ना और भूमि ही बिछौना है। हमें भी उसी में सुख है, जिसमें इनको है। हमारे चित्त को जो शान्ति और संतोष है, उसे कौन समझ सकता है? शान्त व्यक्ति ही सुखी है, अशान्त दुखी है। शान्ति ही जीवन का चरम लक्ष्य है।

इस प्रकार कर्म के सिद्धान्तों पर चर्चा करते हुए रात बीत गयी। ब्राह्म मुहूर्त में रामचन्द्र उठे। सीता को जगाया। नित्य नियम करके चलने की तैयारी करने लगे। राम ने केवट से बरगद का दूध मँगाया। दोनों भाइयों ने जटायें बनायीं। फिर प्रयाग राज की ओर चल दिये। उनके पीछे निषाद और उसके पीछे सेवक गण। राम ने कहा कि भाई लौट जाओ। तुम्हारा अकाज होगा। हमें तो ये दिन काटने ही हैं। निषाद ने आँखों में आँसू भरकर कहा कि मुझे भी तो मित्र धर्म का निर्वाह करने दीजिए। मैं आप को उस स्थान तक पहुँचा दूँगा, जहाँ आप कुटी बना कर विश्राम करेंगे। आपके साथ दो चार दिन रह कर लौट आऊँगा।

राम ने कहा कि तुम स्नेह में पड़कर भूल रहे हो। यदि इस तरह मैं अपने शुभचिंतकों को साथ लेता चलूँगा तो एक समाज बन जायगा। यदि समाज लेकर चलना होता तो पुरजनों और परिजनों को ही क्यों छोड़ देता? वनवासी जीवन एकान्त ही होना चाहिए। यह कह कर राम ने निषाद को लौटने के लिए बाध्य कर दिया। मार्ग में एक वट वृक्ष के नीचे विश्राम करके अगले दिन तीनों प्रयाग राज पहुँच गये।

तीर्थराज प्रयाग

प्रयाग राज में अनेक देवालय और आश्रम थे। कहीं घंटे घड़ियाल बज रहे थे और कहीं कथा वार्ताएँ हो रही थीं। कहीं महात्मा धूनी रमाये बैठे थे। कहीं ब्रह्मचारी वेदध्वनि कर रहे थे। कोई संध्योपासन कर रहा था और कोई प्राणायाम। कोई कौपीन पहने और हाथ में कमण्डल लिए त्रिवेणी स्नान करने जा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
रहा था। कोई 'हर-हर महादेव' करता हुआ लौट रहा था। कोई गंगा मैया की जय बोलता था और कोई यमुना मैया की।

राम ने लक्ष्मण से कहा—'भैया ! यह स्थान कैसा रमणीक है ! यहाँ का वायुमण्डल कितना दिव्य है ! ऐसे वातावरण में लौकिक चिंताएँ दूर हो जाती है। स्थान के प्रभाव से मन में वैराग्य उत्पन्न होता है। महर्षियों के सत्संग और उनके उपदेशों से ज्ञान उत्पन्न हो जाता है। लोग अपनी-अपनी रुचि के अनुसार भजन, पूजन, उपासना आदि साधनायें करते और समय पाकर सिद्धावस्था को प्राप्त हो जाते हैं। इसीलिए इसे तीर्थराज कहते हैं। इस प्रकार वार्तालाप करते हुए तीनों जन संगम पर पहुँचे। एक घाटिये ने कहा—महाराज ! हमारे घाट पर स्नान कीजिए। आप हमारे यजमान हैं। आप के पिता जी जब आते तो यहीं ठहरते हैं।

राम ने लक्ष्मण से कहा कि संगम का दृश्य कैसा मनोरम है ! गंगा की धारा दूध के समान श्वेत और यमुना की धारा मरकत मणि के समान श्यामल है। एक ब्रह्मा की मानस पुत्री हैं दूसरी सूर्य की तनया। कैलास वासी शंकर की जटाओं से निकल उत्तराखण्ड में बहती हुई हर्ष गदगद हो दोनों यहाँ गले मिल जाती हैं। दोनों के मिल जाने पर कालिंदी के रंग का पता नहीं रहता। इसी प्रकार मानव अपने कुत्सित विचारों और कर्मों की गठरी लेकर आते और त्रिवेणी में स्नान कर शुद्ध तथा पवित्र होकर लौट जाते हैं। उनके मन में ज्ञान की सरस्वती अदृश्य रूप से वहने लगती है। ज्ञान ही मुक्ति का मूल साधन है। इसीसे तीर्थराज प्रयाग में लोगों की विशेष श्रद्धा है। श्रद्धा ही विश्वास का मूल और विश्वास ही सर्व फलदायक है। योगीजन बतलाते हैं कि मानव शरीर में सूर्यनाड़ी (यमुना) और चन्द्रनाड़ी (गंगा) चलती रहती हैं। मनुष्य इन्हीं के द्वारा श्वास लेता और छोड़ता है। जब प्राणायाम के द्वारा श्वास की गति अवरुद्ध हो जाती है तो सुषुम्ना (सरस्वती) जागृत हो जाती है। सुषुम्ना के जागृत होने पर प्राणवायु षटचक्रों का भेदन करती हुई ब्रह्मरन्ध्र में पहुँच जाती है। इससे साधक की समाधि लग जाती हैं। समाधिस्थ व्यक्ति को ही ज्योति-स्वरूप ब्रह्म का दर्शन होता है। यही मोक्ष प्राप्ति का साधन और यही त्रिवेणी के महत्त्व का गूढ़ रहस्य है।

राम-लक्ष्मण-सीता ने संकल्प मंत्र पढ़ कर त्रिवेणीमें स्नान किया। दूध, पुष्प, तुलसीपत्र और माला चढ़ायी। राम ने कहा कि स्नान करने से शरीर की शुद्धि होती

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

है पर त्रिवेणी में स्नान करने से मन की भी शुद्धि हो जाती है। यदि पात्र मलिन है तो उसमें रखी वस्तु भी मलिन हो जाती है। अतः मन को शुद्ध करने के पूर्व शरीर की शुद्धि आवश्यक है। हाँ ! जिनके चित्त स्वतः शुद्ध हैं अथवा सत्संग के प्रभाव से विशुद्ध हो गये हैं, उन्हें स्नान-ध्यान की कोई आवश्यकता नहीं। उन्होंने सूर्योपासना की और अर्घ्य दिया। फिर गंगा को प्रणाम कर चल दिये। सीता ने हाथ जोड़ कर प्रार्थना की। "यदि मैं पति और देवर के साथ कुशल पूर्वक लौट आयी तो आपकी विधिवत पूजा करूँगी। अभी मेरा मन अव्यवस्थित है। अव्यवस्थित चित्त की साधना निष्फल होती है।"

स्नान करके तीनों जन अक्षय बट और विंदुमाधव के दर्शन करने गये। राम ने कहा कि यह बट अक्षय है। इसका प्रलय काल में भी नाश नहीं होता। यह अश्वत्थ वृक्ष सृष्टि का प्रतीक है। इसके नन्हें से बीज में बट का सम्पूर्ण रूप निहित रहता है। बट में असंख्य बीज होते हैं जिनसे वृक्ष की उत्पत्ति और विकास होता रहता है। इसकी जटायें भी कालान्तर में मूल बन जाती हैं। फिर इसका विनाश कैसे हो सकता है ? इसका न आदि है और न अन्त। पहले बीज था या वृक्ष ? इसका कोई निर्णय नहीं कर सकता। सृष्टि का क्रम भी अनादि काल से चल रहा है और अनन्त काल तक चलता रहेगा। विन्दु माधव लक्ष्मी के पति विष्णु के प्रतीक हैं। इन्हीं की नाभि कमल से ब्रह्मा जी उत्पन्न हुए उन्हीं से सृष्टि का क्रम चला। इसी कारण बिन्दुमाधव सर्वपूज्य हैं।

भरद्वाज आश्रम

अक्षयबट और विन्दुमाधव के दर्शन कर वे भरद्वाज मुनि के आश्रम में पहुँचे। महर्षि शिष्यमण्डली के बीच बैठे कुछ उपदेश कर रहे थे। उनका वर्ण गौर था। डाढ़ी और शिर के बाल श्वेत हो गए थे। मुख पर तेज की आभा विराज रही थी। रूप भव्य और आकर्षक था। उन्हें देख मन आपसे आप चरणों में झुक जाता। राम ने उन्हें दण्ड प्रणाम किया और कहा कि हम महाराज दशरथ के पुत्र हैं। साथ में भाई लक्ष्मण और कल्याणी जानकी मेरी धर्मपत्नी हैं। पिता की आज्ञा से हम अरण्य जा रहे हैं। हमें रहने के लिए समुचित स्थान बतलाइये।

राम के वचन सुन ऋषि ने आशीर्वाद दिया। बड़े प्रेम से निकट बुलाया। एक आसन बैठने को दिया। शिष्यों से कह कर फल मँगवाये। प्रसाद पा लेने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
पर मुनिवर ने कहा—'राम ! तुम धन्य हो । जिस आश्रम में लोग चतुर्थ अवस्था में प्रवेश करते हैं, उसे तुमने युवावस्था में ही ग्रहण किया । ईश्वर करे तुम सफल हो । पर तुम्हरा वैराग्य अकारण नहीं। कैकेयी ने वनवास दिलाकर अच्छा नहीं किया । अभी तुम लोगों की अवस्था ही क्या है ? मेरे आश्रम में अनेक ब्रह्मचारी और वानप्रस्थी रहते हैं। तुम भी किसी कुटी में रह सकते हो। यहां सब सुविधाएँ हैं । स्नान और जलपान के लिए गंगा जी हैं । फल-फूलों की कमी नहीं । वन्य जन्तुओं का कोई भय नहीं । साधना के लिए जलाशय के निकट एकान्त स्थान ही उपयुक्त रहता है ।

भरद्वाज के वचन सुनकर राम ने कहा—आप के आश्रम में सब प्रकार की सुविधाएँ हैं । यहाँ किसी प्रकार का भय नहीं । पर यहाँ अनेक तीर्थ यात्री आते रहते हैं । हम राजकुमार हैं । हमें रहते देख कुतूहलवश लोग आते रहेंगे । इससे आश्रम की शान्ति भंग होगी, आप को कष्ट होगा। त्रिवेणी में स्नान करने वाले यात्री यह समाचार अयोध्या पहुँचा देंगे । हमसे मिलने के लिए पुरजन दौड़ पड़ेंगे । आप कोई ऐसा स्थान बतलाइये जो एकान्त हो । हम क्षत्रिय हैं । वन्य पशुओं का आखेट करेंगे और फल-फूल खाकर समय बिता देंगे ।

राम के युक्ति पूर्ण वचन सुनकर भरद्वाज मुनि ने कहा--'मैं तो चाहता था कि आप मेरे हृदय में ही निवास करें । आप तो राम हैं । विश्व में सर्वत्र रमे हैं । आप कहाँ नहीं है ? मुझे संसार में कोई स्थान दिखायी नहीं पड़ता जहाँ आप न हों । फिर भी अवसर के अनुकूल चित्रकूट पर्वत हमें उपयुक्त जान पड़ता है । वहाँ मंदाकिनी नदी है । पर्वत की कन्दराओं में अनेक साधक तपस्या करते हैं । वहीं अत्रि और अनुसूया का आश्रम है । स्थान रमणीक और एकान्त है । आखेट करने का सुपास है । फल-फूलों की कमी नहीं । उधर यात्री भी कम जाते हैं। वहीं आप को सुविधा रहेगी ।

राम ने कहा कि आप त्रिकाल दर्शी हैं । आपको भूत, भविष्य और वर्तमान का पता है । आप जानते हैं कि संसार में कहाँ क्या हो रहा है ? आपकी आज्ञा हमें शिरोधार्य है । उस रात सबने उसी आश्रम में विश्राम किया ।

चित्रकूट को प्रस्थान

प्रातः काल मुनि को प्रणाम कर वे चित्रकूट की ओर चले । मुनि ने साथ में दो-चार शिष्य कर दिये। वे मार्ग से परिचित थे । अतः घाट तक पहुँचने में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

देर न लगी। यमुना के ऊँचे-नीचे कगारों और खोहों में चढ़ने-उतरते वे कई बार गिरते-गिरते बचे। राम ने कहा कि गंगा के कछार समतल हैं किन्तु यमुना के तट बड़े बीहड़ हैं। यहाँ तो अपरिचितों के भटक जाने का बड़ा भय है। घाट पर पहुँच राम ने ब्रह्मचारियों को विदा किया और कृतज्ञता प्रगट की। उन्होंने कहा कि हमने तो केवल गुरु की आज्ञा का पालन किया है। आप कहें तो हम चित्रकूट तक चलें। आपकी बड़ी कृपा होगी। पर राम ने उन्हें यह कह कर लौटा दिया कि तुम्हारे पठन-पाठन में अकाज होगा।

यमुना पार कर राम लक्ष्मण और सीता चित्रकूट की ओर बढ़े। प्रदेश बीहड़ था। राज मार्गों का अभाव था। इधर-उधर अनेक पगदंडियाँ जाती थीं। उनमें भटक जाने का डर था। अतः लक्ष्मण पथिकों से मार्ग पूछते जाते थे। मार्ग पथरीला था। कहीं कुश थे। कहीं काँटे। वृक्ष दूर-दूर थे। जहाँ-तहाँ कँटीली झाड़ियाँ थी। सीता कभी पैदल चली न थीं। उन्हें चलने में कष्ट हो रहा था। पर कहती कुछ न थीं। राम उनका मन बहलाने के लिए पेड़ों गुल्मों और लताओं के नाम बतलाते जाते। चलते-चलते सूर्य चढ़ आया। धूप तेज हो गयी। पसीना निकलने लगा। मुख सूख गया। राम ने लक्ष्मण से कहा कि प्यास लगी है। कहीं पानी ढूँढ़ो। तबतक हम नीम की छाया में विश्राम करते है।

लक्ष्मण ने इधर-उधर दृष्टि दौड़ायी। उन्हें एक कुआँ दिखायी पड़ा। उसमें न अरघट लगा था और न रस्सी ही थी। उन्होंने कुएँ में झाँक कर देखा कि पानी दूर है। यह सरयूतट का प्रदेश न था जहाँ ढेकली से जल निकाल लिया जाता है। यह बुन्देल खण्ड था। यहाँ साठ हाथ गहरे कुएँ होते हैं। लक्ष्मण ने देखा कि पड़ोस के वृक्षों में मकोय की बेलें लटक रही हैं। उन्होंने पलाश के पत्तों का दोना बनाया। बेलों की रस्सी जोड़ी। पानी भर कर भैया और भाभी को पिलाया। स्वयं पिया। फिर मकोय और बनफल खाने को दिये। सीता ने कहा कि लक्ष्मण थक गये होंगे। थोड़ी देर विश्राम कर लें। राम ने देखा कि सीता भी थकी हैं। अतः बैठकर बड़ी देर तक कहानी कहते रहे।

गाँव की बकरी चराने वाली एक लड़की ने उनको देखा तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने घर जाकर बताया कि दो राजकुमार और एक राजकुमारी पेड़ के नीचे बैठे कहीं जाने की तैयारी में हैं। जान पड़ता है कि वे देवलोक से आये हैं। उसकी बातें सुन लोगों को कौतूहल हुआ। धीरे-धीरे यह चर्चा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गाँव भर में फैल गयी। लोग उन्हें देखने के लिये आये। राम-लक्ष्मण को मुनि वेश में, धनुषबाण लिये देख उनके आश्चर्य की सीमा न रही। उनके रूप-लावण्य को देख कर उन्हें समझते देर न लगी कि वे किसी देश के राजकुमार हैं। एक ने कहा कि हमारी समझ में ज्योतिष झूठ है, नहीं तो राज-लक्षणों वाले वन-वन न भटकते। दूसरे ने कहा कि आर्ष ग्रन्थ अनुभव और श्रुत ज्ञान के आधार पर बने हैं। ज्योतिष कभी झूठ नहीं हो सकती।

ग्रामीणों ने कहा कि हमारे यहाँ चलकर ठहरिये। हम आपकी सेवा करेंगे। आप को कोई कष्ट न होगा। राम ने कहा कि हम किसी नगर या गाँव में ठहरते नहीं। रात में किसी पेड़ के नीचे सो रहते हैं। अगले दिन उठकर चल देते हैं। तब तक कोई शीतल जल ले आया। कोई दूध और कोई फल-फूल। राम उनके आग्रह को अस्वीकार न कर सके। रात में वहीं ठहरे। उनका आतिथ्य स्वीकार किया। गाँव की स्त्रियों को राजकुमार और राजकुमारी के पारस्परिक प्रेमभाव को देख कर बड़ी प्रसन्नता हुई। वे सीता के पास घिर कर बैठ गयीं और स्नेहवश तरह-तरह के प्रश्न पूछने लगीं। 'राजकुमारी! हमने आपको कभी देखा नहीं। पर आप हमें परिचित जान पड़ती हैं। हम देहात की रहने वाली हैं। हम बे पढ़ी-लिखी और मूर्खा हैं। हमारी वाणी कर्कश है। व्यवहार भी कठोर है। हम मीठा बोलना जानती नहीं, पर हमारे हृदय निष्कपट हैं। हमारी धृष्टता को क्षमा करके बतलाइये कि दोनों राजकुमार आप के कौन लगते हैं? क्या आप के माता-पिता हैं? क्या वे जीवित हैं? उन्होंने आप को वन कैसे आने दिया? क्या ये अपनी इच्छा से राज छोड़ आये हैं? क्या आप स्वेच्छा से आई हैं अथवा बिवश होकर आना पड़ा। आप कहाँ जायँगी और कहाँ बसेंगी?

सीता को ग्राम बधुओं की बातें बड़ी अच्छी लगीं। वह उनके भोले स्वभाव और निष्कपट व्यवहार पर रीझ गयीं। उन्होंने मन में विचार किया कि वे बड़ी चतुर हैं। ये हमारे सम्बन्धों को समझती हैं। इनकी बात का उत्तर न देना धृष्टता होगी। कदाचित ये हमें अभिमानिनी समझें। रानियों को लोग प्रायः ऐसा ही समझा करते। अतः उन्होंने कहा कि गौर वर्ण वाले कुमार, जिनकी आँखें काली और बड़ी-बड़ी, और प्रिय दर्शन हैं, हमारे छोटे देवर लक्ष्मण हैं। फिर बंकिम दृष्टि से घूँघट पट की ओर से राम की ओर देखा। किंचित मुस्करायीं। लज्जा से शिर झुका लिया और कहा कि नील कमल के समान रंग

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वाले कमल-नयन इनके बड़े भाई हैं। चतुर नारियों ने उनकी भावभंगी से समझ लिया कि वह सीता के जीवन संगी हैं। दोनों की जोड़ी तथा पारस्परिक स्नेह देख उन्हें बड़ा आनन्द मिला। वे मनुष्य धन्य हैं, जो दूसरों के सुख को अपना सुख जानते हैं। सीता ने बताया कि हमारी सास हैं। दो विमाताएँ हैं। बड़ी के भरत हैं। छोटी के लक्ष्मण और शत्रुघ्न हैं। बड़ी ने अपने लड़के भरत के लिए राजा से सिंहासन और स्वामी के लिए वनवास माँगा। स्वामी और देवर उनकी आज्ञा से चल दिये। मैं भी अकेली कहाँ रहती ? इनके साथ चली आई। नारियों ने उनसे सहानुभूति प्रकट की और कहा कि आपका त्याग धन्य है। आप परम साध्वी हैं।

राम-लक्ष्मण और सीता की कथा सारे गाँवों में फैल गयी। जो सुनता वह उनकी प्रशंसा करता। कोई राजा को दोष देता और कोई कैकेयी को बुरा-भला कहता। कोई कहता कि इसमें राजा का क्या दोष ! यह तो केवल दुष्टा कैकेयी की करतूत है। इसे सुनकर दूसरे कहते कि राजा को समझ-बूझ कर वचन देना चाहिए था। दुनिया में किसी का विश्वास नहीं। वह माता नहीं कुमाता है, जिसने ऐसे राजकुमारों को देश निकाल दिया। हमारा वश चले तो हम इन्हें अपनी आँखों में बिठा लें।

राजकुमार जिस गाँव से होकर निकलते वहाँ के लोग दौड़कर उन्हें देखने आते। फल-फूल और जल से उनका स्वागत करते। प्रेम भरी बातें करते उनके साथ दूर तक चले जाते। वे तभी लौटते जब अगले गाँव की सीमा आ जाती। उन्हें लौटते हुए कष्ट होता था। वे आपस में अपने भाग्य की सराहना करते कि हमें इनके दर्शन हुए। वह अयोध्या अभागिनी है जिसे ये छोड़ आये हैं। यह बुन्देल खण्ड धन्य है जहाँ ये बिचर रहे हैं। जिस गाँव में सन्ध्या हो जाती, वहाँ के लोग उन्हें वहीं रोक लेते और आगे बढ़ने न देते थे। चलते समय बिनती करते कि यदि हमसे अज्ञान-वश भूल हुई हो तो क्षमा करना। हम आपकी यथोचित सेवा न कर सके। यदि इस मार्ग से फिर लौटियेगा तो दर्शन दीजिएगा। राम-लक्ष्मण उनकी स्नेह पूर्ण बातें सुन कर बड़े प्रसन्न होते। वे कहते कि आपने हमारी बड़ी सेवा की। हम आपके बड़े उपकृत हैं।

राम चले गये पर उनकी स्मृति शेष है। वहाँ की भूमि उनकी पद-रज से पवित्र है। लोग उन महापुरुषों के भाग्य की प्रशंसा करते हैं जिन्होंने राम सीता के दर्शन किये थे। वे जीवन भर उनके गुणों को गाते और मन में त्रिमूर्ति का

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ध्यान करते रहे। मरण काल में भी उन्हें स्मृति बनी रही। वे परम पद को प्राप्त हुए। उनका विश्वास है कि आज भी जो व्यक्ति पथिक वेशधारी सीता-राम का ध्यान करेगा उसे मुक्ति मिलेगी। वह भव-बन्धन से मुक्त हो जायगा।

कामदगिरि और पर्णकुटी

चित्रकूट के शिखर दूर से धुएँ के समान जान पड़ते थे। उसके आस-पास घने वन थे। इनमें सिंह, बाघ, भेड़िये, जंगली भैंसे, सुअर आदि वन्य पशु रहते थे। उनके गरजने का शब्द दूर से ही सुनायी देता था। कहीं हरिणों के झुंड छलाँग मारते भाग रहे थे। कहीं शशक एक झाड़ी से निकल कर दूसरी झाड़ी में छिप जाते थे। कहीं सर्प सर्र से निकल जाते थे। पलाश के वृक्ष फूले हुए ऐसे लगते थे, मानों दावाग्नि जल रही हो। नीम के फूल झड़ रहे थे। कहीं महुवे टपक रहे थे। कहीं करौंदे फूल रहे थे। वायुमण्डल फूलों की महक से गमक रहा था। आम के वृक्ष बौर के भार से झुक रहे थे। कोयल बोल रही थी। मोर नाच रहे थे। राम पेड़, पौधों और पक्षियों के नाम सीता को बता रहे थे। लक्ष्मण फूल तोड़ कर भाभी को सूँघने के लिए देते। इस प्रकार वन की प्राकृतिक शोभा देखते हुए सब लोग मंदाकिनी के तट पर पहुँचे। नदी में स्नान और जलपान किया।

राम ने लक्ष्मण से कहा कि महर्षि भरद्वाज ने यहीं रहने के लिए कहा है। किसी ऊँचे स्थान को देखो। वहीं ठहरने का प्रबन्ध किया जाय। लक्ष्मण ने पयस्विनी उतर कर पर्वत के ढालों पर कन्दरायें देखीं। इनमें अनेक महात्मा और साधक रहते थे। रात में वे कंदराओं के मुख पर पत्थर रख देते और अन्दर सो जाते थे। लक्ष्मण ने कामदगिरि के शिखर पर चढ़कर वृक्षों का झुर-मुट देखा। इसमें पीपल, बरगद और नीम के वृक्ष एक साथ लगे थे। स्थान समतल और सुरक्षित था। वहीं रहने के लिए ठीक समझा गया। लक्ष्मण ने वहाँ के लोगों की सहायता से पत्तों और कुशों की दो कुटियाँ बनायीं। इनमें से एक बड़ी थी, दूसरी छोटी। एक राम और सीता के विश्राम करने के लिए। दूसरी सन्ध्योपासना और यज्ञादि करने के लिए। राम ने एक मृग को मार कर उसके मांस से देवताओं की पूजा की, और हवन करके पर्णशाला में प्रवेश किया। धीरे-धीरे लक्ष्मण ने वहाँ तुलसी, कर्णिकार बिल्व आदि के उपयोगी पौधे लगा लिए। आश्रम रमणीक बन गया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चित्रकूट के समीप रहने वाले मूल निवासी जो यह समाचार सुनते तो मीठे और सुस्वादु कंद-मूल-फल, मधु, घृत, दूध, दही आदि लेकर मिलने आते और बड़े प्रेम के साथ उनके आगे रख देते। संयोगवश उनकी बोली भिन्न थी। अतः वे भावों को व्यक्त करने में संकेतों से काम लेते। यदि राम उन वस्तुओं को लौटाते तो उनके चित्त उदास हो जाते। वे लक्ष्मण की प्रत्येक कार्य में सहायता करते। यदि लक्ष्मण धनुष-त्राण चढ़ाकर आखेट करने जाते तो वे उनके साथ हो जाते। वे उन स्थानों में ले जाते जहाँ हिंसक पशु होते। वे उन्हें हुसकाते, घेरते, और आहत होने पर आश्रम उठा लाते थे। यदि लक्ष्मण घट या कमण्डल लेकर जल भरने जाते तो वे मीठे सोतों के पास ले जाते। यदि लक्ष्मण भूल से विषैले एवं कटुफलों पर हाथ लगाते तो वे उन्हें संकेत से मना कर देते थे। अच्छे फलों को चखकर कड़ुए फलों को थूक कर उनका परिचय देते। धीरे-धीरे वे राजकुमारों की आवश्यकताओं से परिचित हो गये।

जबसे राम चित्रकूट में आकर बसे तबसे वहाँ की काया ही पलट गयी। नये-नये उपयोगी पेड़-पौधे उग आये। बेलें लहलहाने लगीं। पुष्प खिलने लगे। वृक्ष फल देने लगे। अनेक प्रकार के कंद-मूल होने लगे। कामदगिरि सचमुच कामना की पूर्ति करने वाला हो गया। राम के साथ रह कर वहाँ के लोगों का स्वभाव बदल गया। क्रूर वृत्ति वाले दस्यु और हिंसक प्राणी साधु और अहिंसक बन गये। पशुओं में भी हिंसा का भाव न रहा। वे स्वाभाविक वैर को छोड़कर वन में सुखपूर्वक विचरने लगे। यदि कोई हिंस्र या क्रूर पशु पर्णकुटी की ओर आता दिखायी देता तो आश्रम के पक्षी चीखने लगते। लक्ष्मण धनुष-वाण से उनको भगा देते। इस प्रकार राम को सभी सुविधाएँ हो गयीं। चित्रकूट उनके लिए अयोध्या और मंदाकिनी सरयू बन गयी। ऋषिमुनि प्रियजन और कोल-भील सेवक हो गये। उन्हें अवध छोड़ने का कष्ट ही न जान पड़ा। सीता भी सबके साथ ऐसी हिल-मिल गयीं कि उन्हें परिवार का सा सुख मिलने लगा।

राम लक्ष्मण ने चित्रकूट के जीवन को ऐसा अपना लिया, मानों वहीं के रहने वाले हों। वे प्रातः उठते। नित्यकर्म करते। ऋषियों मुनियों से शास्त्रचर्चा करते, सीता के साथ वन प्रदेश का भ्रमण करते, एवं जो कुछ मिल जाता उसी में संतोष कर लेते थे। वे हर प्रकार से सीता का मनोविनोद करते। लक्ष्मण भाई की हर तरह सेवा करते। वह दोनों की सदा रुचि देखते रहते थे। उन्होंने अपनी सेवा से भाभी और भाई को प्रसन्न कर लिया था। वह वनान्तर में जाते, कंद-

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मूल-फल लाते एवं आश्रम की देख-भाल करते थे। राम को लक्ष्मण का बड़ा ध्यान रहता। वह उन्हें वन में अकेले न जाने देते। उनके साथ कोई न कोई अवश्य रहता। राम के स्नेह और देवर की सेवा से सीता अपने को धन्य समझने लगीं। वह चित्रकूट की रमणीक स्थली के आगे अयोध्या के सुखों को भूल गयीं। उन्हें जो सौहार्द्र एवं सहानुभूति-मिली वह नगर में कहाँ मिलती? साथ रहने से एक दूसरे को समझने का अवसर मिलता है तथा पारस्परिक प्रेम-पल्लवित होता है।

राम को प्रायः माता-पिता की याद आ जाती। उनकी चिंता से वह व्यथित हो जाते। उनकी आँखों से आँसू बहने लगते। प्रियजनों और परिजनों की स्मृति से उन्हें दुखी देख सीता और लक्ष्मण भी उदास हो जाते। वे तो राम की छाया मात्र थे। उन्हें व्यथित देख राम कोई कथा-प्रसंग छेड़ देते और उनका मन बहला देते थे।

सुमंत्र का अयोध्या लौटना

राम-लक्ष्मण और सीता को विदा कर निषाद लौट पड़ा। उसने देखा कि सुमंत्र का बुरा हाल है। उनका शरीर शिथिल हो रहा है। आँखों से अविरल अश्रु-धारा बह रही है। उनका मन वश में नहीं है। उसने समझाया कि इस तरह रोने से काम न चलेगा। उसने बड़ी कठिनाई से घोड़ों को रथ में जोता। वे हिनहिना रहे थे। बार-बार मुड़कर पीछे देखते और आगे बढ़ने का नाम न लेते थे। केवटराज को घोड़ों की दशा देख बड़ी व्यथा हुई। जिनके वियोग में पशुओं का यह हाल हो, उनके प्रियजनों की क्या दशा होगी? माता-पिता कैसे जीवित रहेंगे? उसने अपने दो सेवक मंत्री के साथ कर दिये। वे सुमंत्र को अवधपुरी पहुँचा आये।

मंत्री को अकेले लौटने का बड़ा खेद था। वह राम के बिना अयोध्या जाना ही न चाहते थे। उनका हृदय पश्चाताप की अग्नि से जल रहा था। मानो कोई महान पाप कर डाला हो। उनकी समझ में न आता था कि राजा से क्या कहेंगे? माताओं को कैसे समझायेंगे? लोग जब दौड़-दौड़कर पूछेंगे कि राम कहाँ हैं तो मुझे कहना पड़ेगा कि गंगापार भेज आया। मेरा भी कैसा कठोर कर्म है? मुझ अभागे को यह सब करना पड़ा। यदि मैं मंत्री न होता तो अच्छा था। यदि मेरी मृत्यु हो जाती तो बहुत अच्छा होता! किन्तु इससे क्या? अभी तो बहुत देखना और सुनना शेष है। जीवन का ठिकाना नहीं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अयोध्या पहुँचते-पहुँचते संध्या हो गयी। सुमंत्र मारे ग्लानि के किसी को मुँह दिखाना न चाहते थे। जब अँधेरा हो गया, दीपक बुझ गये तो चोरों की तरह चुपके से नगर में घुसे। रथ को राज-भवन के बाहर खड़ा कर दिया। घोड़ों को अस्तबल में बाँध दिया। चुपके से सातों ड्योढ़ी पारकर कौसल्या के भवन में गये। राजा को 'जय जीव' कहकर अभिवादन किया।

महाराज ने पूछा—'भैया राम कहाँ हैं ? मुझे उन्हीं के पास ले चलो। मेरे प्राण निकलना चाहते हैं।' मंत्री चुप थे। केवल अविरल अश्रु विवशता का परिचय दे रहे थे। कौसल्या ने पूछा—'लालन को कहाँ तक भेज आये ? लौटने के लिए क्या कहा ? क्या सीता बहू भी नहीं लौटीं ? उन्होंने क्या कहा ? सुमंत्र ने बड़े धैर्य से आँसू पोंछते हुए कहा—'मैंने चलते समय महराज का संदेश सुनाया। उन्होंने कहा कि आपलोग हमारी चिंता न करें। आपके आशीर्वाद से हम जहाँ हैं, प्रसन्न हैं। मैंने सीतादेवी को भी समझाया। उन्होंने कहा कि मुझे उसीमें सुख है, जिसमें मेरे स्वामी को। मैं क्या उत्तर देता ? विवश होकर मुझे जीवित लौटना पड़ा। मैंने उन्हें गंगा पार करते देखा। रात में वे शृंगवेरपुर ठहरे। प्रातः काल सब लोग प्रयागराज की ओर चले गये। निषाद साथ जाना चाहता था पर उन्होंने लौटा दिया।

श्रवण शाप और दशरथ का स्वर्गारोहण

मंत्री के चले जाने पर महाराज ने कौसल्या से कहा—'रानी ! मैंने तुम्हारे साथ बड़ा अन्याय किया। मैंने कैकेयी से विवाह करके भूल की। उसीका फल भुगत रहा हूँ। मनुष्य जो कुछ भले-बुरे कर्म करता है, अपने जीवन में ही उनका फल भोग लेता है। आज मेरे पाप नग्न रूप में मेरे सामने उपस्थित हैं। मुझे अंधे तपस्वियों की याद आ रही है। रानी, मेरा अन्तिम समय है। मुझसे जो भूल-चूक हुई हो सो क्षमा करना।'

कौसल्या ने राजा का सिर गोद में लेकर कहा—'स्वामिन ! आप क्या कह रहे हैं ? मुझे स्पष्ट समझाइये। आप की क्या वेदना है ?

महाराज ने ऊर्ध्वश्वास लेकर कहा—'युवावस्था में मुझे आखेट का बड़ा चाव था। मैं शब्दवेधी बाण चलाने में अभ्यस्त था। बिना देखे शब्दमात्र से ही मैं अचूक निशाना लगा सकता था। सावन की रात थी। आकाश में मेघ छाये थे। मैं शिकार की तलाश में मचान पर बैठा था। सरयू में प्रायः जंगली हाथी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पानी पीने आया करते थे। चौथे पहर एक तापस कुमार सरयू में जल भरने आया। घड़े में पानी भरने के शब्द को मैने समझा कि कोई वन्य पशु जल-क्रीड़ा कर रहा है। शब्द को लक्ष्य करके बाण-चलाया। वह घड़े को फोड़ता हुआ उसकी छाती में लगा। आघात लगने से वह चिल्ला पड़ा—'हाय! मार डाला!' उसका विलाप सुन मैं पास गया। देखा कि कुमार बाण से विद्ध पड़ा है। उसने मुझे क्रोध से देखा और कहा—

'राजन! मैंने आपका क्या बिगाड़ा था? आपने मेरा ही वध नहीं किया वरन् दो की और हत्या कर डाली। मेरे माता-पिता रात के प्यासे हैं। वे तड़प-तड़प कर प्यासे मर जायँगे। मैं ही उनका एक मात्र अवलम्ब था। वह भी चला। उन्हें जल पिलाकर मेरा हाल बतला देना। पर जाने के पहले बाण निकाल लीजिए। मुझे बड़ी पीड़ा हो रही है।'

रानी! मैं विवश था। यदि बाण निकालता तो वह मर जाता। मुझे ब्रह्म हत्या लगती। यदि न निकालता तो वह तड़प-तड़प कर मरता जो मुझसे देखा न जाता। मुझे असमंजस में देख उसने कहा—'राजन्! आप चिंता न करें। आप को ब्रह्म हत्या का दोष न लगेगा। मैं ब्राह्मण कुमार नहीं, वरन् श्रवण कुमार हूँ। मेरी माता शूद्रा और पिता वैश्य हैं।' मैंने ज्योंही बाण निकाला त्योंही उसके प्राण-पखेरू उड़ गये।

जब मैं जल लेकर पहुँचा तो पैरों की आहट से अंधे तपस्वी ने कहा—'बेटा बड़ी देर लगायी। बोलते क्यों नहीं? मैंने डरते-डरते धीमे स्वर में कहा—'मैं आपका पुत्र नहीं। अवध का राजा दशरथ हूँ। मेरी भूल से तुम्हारा पुत्र मारा गया। मुझे क्षमा करो। जल पी लो। मैं तुम्हें अपनी राजधानी ले चलूँगा और जीवन-यापन का सारा प्रबन्ध कर दूँगा।'

अंधे तपस्वियों ने कहा—'राजन! जब पुत्र ही न रहा तो हम जीकर क्या करेंगे? तुमने भूल से यह पाप किया है। यदि राजा न होते तो मैं अभी शाप देकर भस्म कर डालता। मुझे वहीं ले चलो, जहाँ हमारा श्रवण है। उसका अन्तिम संस्कार तो कर लें। मैं दोनों को टिकाकर वहाँ ले गया। पुत्र के शव से लिपटकर वे बड़ी देर तक विलाप करते रहे। फिर शव को सरयू में प्रवाहित कर तिलांजलि दी। अंत में मुझसे कहा—'आपने हमारे पुत्र की हत्या की है। हम इसके वियोग में अन्न-जल ग्रहण न करेंगे और मर जायँगे। पर याद रहे कि जिस तरह हम पुत्र शोक में मर रहे हैं, उसी तरह तुम भी पुत्रशोक में मरोगे।'

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'रानी ! मेरा अन्तकाल आ गया।' ऐसा कह उन्होंने आँखें मूँद लीं। कौसल्या को निश्चय हो गया कि सूर्य कुल के सूर्य अस्त हो रहे हैं। उन्होंने हा राम ! हा राम ! कह कर प्राण त्याग दिये। रनिवास में कोहराम मच गया। अयोध्या अनाथ हो गयी। चारों ओर सन्नाटा था। अंधकार का साम्राज्य था। केवल उल्लू और शृगाल बीच-बीच में चीख पड़ते थे।

प्रातःकाल नगर भर में बिजली की तरह खबर फैल गयी कि महाराज दिवंगत हो गये। राज्य परिषद्, मंत्रिगण, सचिव, वशिष्ठ, पुरजन, परिजन सभी एकत्र हो गये। मुख्यमंत्री ने कहा—'राजसिंहासन कभी सूने नहीं रहते। इस समय महाराज का कोई पुत्र यहाँ नहीं है। अतः किसी रघुवंशी को राजगद्दी पर बिठा दीजिए। फिर महाराज का अन्तिम संस्कार किया जाय।' गुरु वशिष्ठ ने कहा कि महाराज भरत को युवराज बना गये हैं। उन्हें दूत भेज कर ननिहाल से बुलाना चाहिए। तब तक अयोध्या में शोक मनाया जाय। उनकी सम्मति से राजा का शव एक नाव में तेल भर कर रख दिया गया।

भरत का ननिहाल से लौटना

वशिष्ठजी ने विजय और जयन्त नामक दूतों को बुलाकर कहा—'रथ लेकर कैकय देश जाओ। वहाँ राजा की मृत्यु तथा राम के वनगमन की चर्चा न करना। केवल भरत से कहना कि गुरु ने तुम्हें बुलाया है।' आज्ञा पाकर दूत चल दिये। वे रात-दिन चलते। केवल थोड़ी देर विश्राम करते तथा घोड़ों को बदल देते थे। दूत हस्तिनापुर, पांचाल, कुरुजांगल, वाल्हीक होते हुए कैकय प्रदेश की राजधानी गिरिब्रज पहुँचे। वे केवल भरत से मिले, वशिष्ठजी का संदेश कहा। दोनों भाई गुरु का आदेश पाकर तुरन्त चल पड़े।

भरत कई दिनों से बुरे-बुरे स्वप्न देख रहे थे। उनके मन में शंकायें उठ रही थीं, पर वे अपने मनोभाव किसी से व्यक्त न करते, केवल उदास रहते थे। चलते समय मार्ग में अनेक अपशकुन हुए। कहीं गीदड़ फेकर रहे थे। कहीं कौवे रो रहे थे। उन्हें सुन उनकी मानसिक पीड़ा बढ़ गयी। मार्ग काटे न कटता था। एक-एक पल भार हो रहा था। यदि पंख होते तो उड़कर आ जाते।

अयोध्या के निकट आने पर उन्होंने देखा कि उपवनों में फूल मुरझा रहे हैं। बेलें कुम्हला रही हैं। वृक्षों से सायँ-सायँ करती वायु चल रही है। सरोवर खाली पड़े हैं। घाटों की ओर कोई आता-जाता नहीं। नगरी में प्रवेश करते-करते

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अँधेरा हो गया। चारों ओर स्तब्धता छायी थी। न कहीं आग जल रही थी, न कहीं धुआँ उठ रहा था। न कोई दीपक जल रहा था और न कहीं आरती हो रही थी। देवालय शून्य पड़े थे। कुत्ते भोंक रहे थे। बिल्लियाँ रो रही थीं। गधे रेंक रहे थे। इससे भरत के हृदय की धड़कन बढ़ गयी। ज्यों-त्यों करके रथ राजभवन पहुँचा।

दोनों भाई उतरकर सीधे कैकेयी के भवन में गये। माँ आरती उतारने चलीं, दरवाजे पर मिली और भीतर ले गयीं। भरत ने चरणस्पर्श किये। माँ ने आशीष दी। भरत ने इधर-उधर दृष्टि दौड़ायी पर पिता दिखायी न पड़े। राजा प्रायः कैकेयी के भवन में ही सोते थे। उन्हें घर में न पाकर भाइयों का सन्देह बढ़ा। भरत को उदास देख कैकेयी ने पूछा—'नैहर में सबलोग कुशल से तो हैं ?' भरत ने कहा कि वहाँ सब कुशल हैं। यहाँ का क्या हाल है ? राजभवन में सन्नाटा क्यों है ? पिताश्री कहाँ हैं ?

कैकेयी ने कहा—'बेटे ! मैंने सारी बात बना ली। केवल एक दुखद घटना हो गयी।' भरत ने पूछा कि वह क्या ? माँ ने कहा कि जो एक दिन सबकी होती है। महाराज स्वर्गवासी हो गये। यह सुनकर भरत सूख गये मानों कमलदल पर पाला पड़ गया हो। वह हाय पिता ! हाय पिता ! कहकर गिर पड़े। फिर बड़े धैर्य से पूछा कि पिताश्री की मृत्यु कैसे हुई ? क्या कोई बीमारी हो गयी ? मुझे सूचना क्यों नहीं दी ?

कैकेयी ने आदि से अन्त तक सारी कथा कह सुनायी। वह मन ही मन प्रसन्न थीं कि भरत राजा होंगे। पर भरत का हृदय बैठ गया। उनके ऊपर बज्र सा आ गिरा। वह अचेत हो गये। छोटे भाई ने बार-बार शीतल जल के छींटे दिये, पंखा झला। तब कहीं होश आया।

चेतना आने पर भरत ने कहा—'माँ ! तुमने सोने का घर राख कर दिया। ऐसा विचार आते ही तुम्हारा मस्तिष्क फट क्यों न गया ? हृदय के टुकड़े-टुकड़े क्यों न हो गये ? वर माँगते समय तुम्हारे मन में पीड़ा क्यों न हुई ? जिह्वा जल क्यों न गयी ? मुँह में कीड़े क्यों न पड़ गये ? पता नहीं राजा ने तुम्हारा विश्वास कैसे कर लिया ? कदाचित मरते समय उनकी बुद्धि मारी गयी। माँ ! तुमने पैदा होते ही मुझे मार क्यों न डाला ? क्या तुम समझती हो कि इससे तुम्हें सुख मिलेगा ? धिक्कार तुम्हारी बुद्धि को ! राज्य माँगने के पहले मुझसे पूछ तो लिया होता ! क्षत्रिय भिक्षा नहीं माँगते। सिंह स्वयं शिकार करते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
वे किसी मृत पशु पर दृष्टि नहीं डालते। यदि मुझे राजभोग की इच्छा होती तो मैं अपने बाहुबल से उपार्जित करता। तुमने सिंह के लिए गाय की हत्या की। तुम पापिनी हो। तुमने सूर्यवंश की मर्यादा मिटा डाली। कुल में कलंक लगाया। यदि तुम माँ न होती तो अच्छा था। मैं कौसल्या माता को क्या मुँह दिखाऊँगा ? नगर निवासियों से क्या कहूँगा ? राम न जाने क्या सोचते होंगे ! अस्तु ! मैं तो किसी तरह सबको समझा लूँगा, पर तुम्हारे मस्तक पर कलंक का टीका लग गया। वह जन्म-जन्मान्तर में भी न मिटेगा।

उसी समय बन-ठन कर मंथरा आ पहुँची। उसने कहा—'काम तो मैंने बनाया। महारानी में इतना साहस कहाँ जो तुम्हें राजगद्दी दिला सकतीं ! मुझे इसका पुरस्कार मिलना चाहिए।'

मंथरा की बातें सुनते ही शत्रुघ्न को क्रोध आ गया। वह उबल पड़े। उन्होंने एक जोर की लात उसके कूबड़ पर जमायी। वह मुँह के बल गिरी, उसके दाँत टूट गये। मुख से रुधिर बहने लगा। उसने कहा—'हाय ! मुझे मार डाला। कैसा जमाना लगा है ! हवन करते हाथ जलते हैं। क्या भलाई करने का यही फल है ?' यह सुनकर शत्रुघ्न की क्रोधाग्नि और भड़क उठी। वह उसकी चोटी पकड़ कर झटकने लगे। वह जोर से उसका सिर पटकने ही वाले थे कि भरत ने छुड़ा दिया। उन्होंने कहा—'भैया ! इसे क्यों मारते हो ? इसका क्या दोष ? दोष तो अपना है। अपनी माँ का है। यदि अपना माल खोटा है तो परखने वाले का क्या दोष ? हमारे भाग्य में यही लिखा था। जो होना था सो हो गया। भगवान की यही इच्छा थी।'

दोनों भाई कौसल्या अम्बा के भवन में गये। दोनों रानियाँ वहीं शोक की प्रतिमा बनी बैठी थीं। उनके मुख मलिन थे। वस्त्र मैले-कुचैले थे। शरीर क्षीण हो रहे थे। ऐसा जान पड़ा कि दो माधवी लताएँ वृक्ष से छिन्न होकर कुम्हला गयी हैं। वे माँ की गोद में गिर पड़े और फूट-फूट कर रोने लगे। भरत ने कहा—'यह सब अनर्थ कैसे हो गया ? मैं अन्तिम समय पिता के दर्शन न कर पाया। मरते समय उन्होंने मेरे लिए क्या कहा ? चलते समय भैया क्या कह गये ? माँ आपकी यह दशा मेरे कारण हुई। यदि मैं न होता तो ऐसी असंभावित घटना कभी न घटती। मैं आपसे क्या कहूँ ? राम को वन भेजने में मेरा कोई हाथ नहीं। यदि मेरी किंचित सम्मति हो तो जन्म-जन्मान्तर नरकाग्नि में जलता रहूँ। मुझे उन नरकों में जाना पड़े जहाँ गोहत्या करने वाले, अबला

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

और बालकों का वध करने वाले जाते हैं। मुझे वे सब पाप लगें जो मित्र और राजा को विष देने पर लगते हैं। मुझे यम-यातनाएँ भोगनी पड़ें और कभी शान्ति न मिले।'

कौसल्या ने कहा—'बेटा! ऐसा न कहो। मैं तुम्हें लड़कपन से जानती हूँ। तुम्हारा कोई दोष नहीं। माँ के कृत्यों से जो तुम्हारे ऊपर संदेह करेगा वह रौरव नरक जायगा। मुझे संतोष है कि तुम इस लोभ से विचलित न हुए। महाराज प्रायः यही कहा करते थे कि तुम इस कुल के रत्न हो। उन्होंने मरते समय कुछ नहीं कहा। केवल हा राम! हा जानकी! कह कर प्राण त्याग दिये। चलते समय राम ने यही कहा था कि मेरा वही भाई है, जो माता-पिता की सेवा और प्रजा का पालन करे।'

भरत और शत्रुघ्न को सारी रात विलाप करते बीती। कैकेयी का पारा भी उतर गया। वह हाथ मल कर पछताने लगी। पर अब पछताने से क्या होता था? साँप निकल गया फिर उसकी घिसलन पीटने से क्या लाभ?

दशरथ की महायात्रा

गुरु वशिष्ठ ने भरत को समझाया कि महाराज के लिए शोक करना व्यर्थ है। चक्रवर्ती जी बड़े पुण्यात्मा थे। वह नीतिवान और शीलवान थे। जब तक जिये मानवोचित सुखों का उपभोग किया। मरने पर वह स्वर्गलोक के सुख भोगने गये हैं। उन्होंने प्राण त्याग दिये पर वचनों का पालन किया। उनका ऐसा पुरुष संसार में कहाँ है? फिर मानव जीवन का यही अंत है। संसार में सब कुछ अनिश्चित है। केवल मृत्यु निश्चित है। अतः किसी की मृत्यु पर आश्चर्य और शोक कैसा! वह राजा शोचनीय है, जो प्रजा का पालन न करे। वह धनी शोचनीय है, जो कृपण हो और दान न देता हो। वह ब्रह्मचारी शोचनीय है, जो ब्रह्मचर्य का पालन न करे। वह तपस्वी सोचने योग्य है, जो तप छोड़कर भोग की इच्छा करे। वह ब्राह्मण शोचनीय है, जो अकारण क्रोध करे। वह शूद्र शोचनीय है, जो द्विजाति की सेवा न करता हो। सोचने योग्य वे व्यक्ति हैं, जो कपटी हैं, दुराचारी हैं, कृतघ्न हैं, अकर्मण्य हैं, और नास्तिक हैं। महाराज सत्यवादी थे, धर्मात्मा थे, कर्मण्य थे। ऐसे राजा के लिए शोक कैसा? मनुष्य मर जाता है। उसकी कीर्ति अमर रहती है। राजा दशरथ मरे नहीं। अपने कर्मों से अमर हो गये। उठो, शोक को छोड़ अपने कर्त्तव्य का पालन करो।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महाराज का शव नाव से निकाला गया। अर्थी बनायी गयी। लोग शव को सरयू किनारे स्मशान में ले गये। चन्दन की चिता लगायी गयी। अगर, धूप, कपूर, राल, घृत आदि सुगंधित पदार्थों से शव का दाह संस्कार हुआ। भरत ने कपाल क्रिया की। चिता शान्त हो जाने पर अस्थियाँ सरयू में विसर्जित कर राख बहा दी गयी। चिता की भूमि पर 'ओम' शब्द लिख दिया गया।

वशिष्ठ जी ने कहा कि शरीर जड़ है, अनित्य है। आत्मा चेतन है, नित्य है। यदि कोई मर जाता है तो मूढ़ ही छाती पीट कर रोते हैं। ज्ञानी पुरुषों के लिए प्रियजनों का वियोग विराग का कारण बन जाता है। मनुष्य को संसार से राग न करना चाहिए। मृत व्यक्ति के प्रति मोह न करना चाहिए। यदि किसी ने जन्म लिया है तो उसकी मृत्यु भी होगी। जीवात्मा अपने पूर्व कर्मानुसार शरीर धारण करता है और प्रारब्ध भोग कर चला जाता है। मृत्यु उस महायात्रा का विश्राम स्थल है। आत्मा की यात्रा सतत चलती रहती है। मृत्यु एक सरिता है, जिसमें यात्री स्नान कर आगे बढ़ जाता है। वह एक पथिक की पांथशाला है। मनुष्य जैसे पुराने वस्त्र त्याग कर नये वस्त्र धारण करता है, उसी प्रकार आत्मा भी जर्जर शरीर को छोड़कर नवीन कलेवर धारण करता है। आत्मा न कभी जन्म लेता है, न वृद्ध होता है और न कभी मरता है। केवल शरीर बदलता रहता है। इस प्रकार गुरु के उपदेश से समस्त परिवार का शोक कम हो गया।

भरत ने विधिवत दशम, एकादश एवं त्रयोदश संस्कार किये। महाब्राह्मण को दान दिया। परिवार वालों को भोजन कराया। ब्राह्मणों को दान और सेवकों को वस्त्रादि दिये। यह कार्य तेरह दिन तक चलता रहा। महर्षि वामदेव ने परिवार वालों को गरुड़ पुराण सुनाया। इससे भरत तथा अन्य लोगों का रहा-सहा खेद भी दूर हो गया।

चित्रकूट चलने की तैयारी

पिता की अन्त्येष्ठि से निवृत्त होने पर महामंत्री ने राज्यपरिषद, अमात्य, सचिव, नगर प्रमुख, श्रेष्ठियों, महाजनों, वशिष्ठ, जावालि, वामदेव आदि ऋषियों एवं पण्डितों को आमंत्रित किया। जब सब लोग राजदरबार में आ गये तो सुमन्त ने कहा—इस समय देश में कोई राजा नहीं है। राजा के न होने पर अव्यवस्था हो जाती है। व्यवस्था ठीक न होने से अराजकता फैलती है। वाह्य

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आक्रमणों एवं आन्तरिक विद्रोह का भय बढ़ जाता है। स्वर्गीय महाराज कैकेयी को वचन दे गये हैं कि उनके पुत्र भरत राज्य के उत्तराधिकारी हों। राज्याभिषेक की सामग्री प्रस्तुत है। आप लोगों की सम्मति हो तो उनका तिलक कर दिया जाय। महामंत्री के प्रस्ताव का मंत्रिपरिषद ने अनुमोदन तथा उपस्थित जनता ने करतल ध्वनि से समर्थन किया। फिर सब लोग भरत की ओर देखने लगे।

भरत ने खड़े होकर कहा—मंत्रिवर! आप अपने मतानुसार ठीक कहते हैं। किन्तु मैं अपने को इस पद के अयोग्य पाता हूँ। मुझमें राज्य भार सम्हालने की क्षमता नहीं। जो कार्य अनिच्छा से किया जाता है, वह कभी पूरा नहीं पड़ता। गद्दी के वास्तविक अधिकारी भैया रामचन्द्र हैं। माँ ने मेरे लिए पिताजी से राज्य माँगा। राजा बचन बद्ध थे। उन्हें स्वीकृति देनी पड़ी। वस्तुतः उनकी इच्छा राम को ही राजा बनाने की थी। इक्ष्वाकु वंश का नियम है कि ज्येष्ठ पुत्र ही राजगद्दी का अधिकारी होता है। मैं अपने वंश की परम्परा नहीं तोड़ सकता। संभव है कि लोग मुझे लकीर का फकीर कह कर मेरा उपहास करें। पर मैं मर्यादा का उल्लंघन नहीं कर सकता।

भरत की तर्क पूर्ण बातों को सुनकर लोग गुरु की ओर देखने जगे। धर्माचार्य होने के नाते उनका आदेश आवश्यक था। वशिष्ठ जी ने भरत से कहा :— वंश का चाहे जो नियम हो पिता की आज्ञा सर्वोपरि है। शास्त्र कहता है कि राज्य उसी को मिलता है, जिसे पिता देता है। राजा ने तुम्हें राज्य दिया। राम उनके बचनों को मानकर दण्डकारण्य गये। महाराज ने उनके वियोग में प्राण त्याग दिये। परशुराम ने पिता की आज्ञा से माता को मार डाला। उन्हें किसी ने दोषी नहीं ठहराया। वरन वह पितृऋण से मुक्त हो गये। तुम भी राजाज्ञा का पालन करो। इससे उनकी आत्मा को शान्ति मिलेगी। राम को भी यह सुनकर संतोष होगा। प्रजा संतुष्ट होगी। माताओं को भी सुख मिलेगा।

माता कौसल्या ने भी आचार्य और मंत्री के कथन का अनुमोदन किया। उन्होंने कहा—पुत्र! सबकी इच्छा है कि तुम राजगद्दी पर बैठकर राज-काज करो। प्रजा का पालन करो। पिता और गुरु की आज्ञा मानो। इससे तुम्हारा कल्याण होगा। हम सबकी चिन्ता मिट जायगी।

राज्य परिषद, मंत्री, गुरु एवं माताओं को एक मत देख भरत हाथ जोड़कर खड़े हो गये और बड़ी विनम्रता से कहा :—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गुरु ने उचित ही कहा। मंत्रियों, सचिवों एवं उपस्थित सभासदों की यही सम्मति जान पड़ती है। बड़ी माँ ने भी अनुमति दे दी है। पर मेरे मन को संतोष नहीं होता। मेरे मानस में द्वन्द्व छिड़ा हुआ है। आप लोगों ने जिन राज-नियमों का वर्णन किया है, उनसे मेरी परिस्थितियाँ भिन्न हैं। पिताश्री स्वर्ग में हैं। बड़े भाई वन में हैं। पिताजी के न रहने पर मेरा काम बड़े भाई की आज्ञा मानना तथा उनकी सेवा करना है। पर मेरी माता ने मुझे उससे वंचित कर दिया। मैं सब प्रकार से अपंग हो गया। मेरे लिए राजभोग रोग हो गया। राजमुकुट तो मुझे भार जान पड़ता है। राम के बिना मुझे कुछ अच्छा नहीं लगता।

राम के वियोग में राजा की मृत्यु हो गयी। यह सुन कर मेरा हृदय फट जाना चाहिए था। पर वह वज्र के समान कठोर हो गया और उसे कठोर होना ही चाहिए। पाषाण से खोदा जाने वाला लोहा और अस्थि से बनने वाला वज्र सदा कठोर ही होता है। माँ ने राम को वनवास दिया। राजा को सुरलोक भेज दिया। मुझे राजसिंहासन दे दिया। प्रजा वर्ग को कष्ट दिया और स्वयं अपयश कमाया। उन्होंने सबका काम बना दिया। आप लोग उसी में मेरी सहायता कर रहे हैं। इससे बढ़कर मेरे लिए और क्या हो सकता है? आप जानते हैं कि राजा को धर्मशील होना चाहिए। अन्याय से सिंहासन प्राप्त करने वाला और अधर्म से न्याय दण्ड धारण करने वाला राजा कभी धर्म नहीं कर सकता। उससे प्रजा का कल्याण नहीं हो सकता। यदि मैं राजगद्दी पर बैठूँगा तो यह पृथ्वी रसातल चली जायगी। पृथ्वी की धुरी धर्म है। वह उसी पर आश्रित है। मैं अपने धर्म को जानता हूँ। भाई का अधिकार छीनना अधर्म और अन्याय है। वह मैं कभी नहीं कर सकता। मैंने तो निश्चय किया है कि कल ही राम के पास जाऊँगा और उन्हें मना कर वापस लाऊँगा।

भरत की दृढ़ता देख सारी सभा ने साधुवाद! साधुवाद! का गम्भीर घोष किया। वशिष्ठजी ने कहा कि भरत का निर्णय तो ठीक है पर राम शायद ही लौटें। हाँ! एक प्रयत्न कर लेने में कोई हानि नहीं। मंत्रिगण भी चलने को तैयार हो गये। जिसने सुना वही चलने को तैथार हो गया। कोई घर पर ठहरना ही न चाहता था। भरत ने कुछ कर्तव्यपरायण सेवकों को अयोध्या की देख-रेख के लिए रख दिया। वृद्धों और बालकों से न चलने का आग्रह किया। शेष अवधवासी चित्रकूट के लिए चल दिए। भरत ने सुमंत से

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कहा कि साथ में तिलक का सामान ले लेना चाहिए। यदि राम न लौटे तो वहीं राज्यभिषेक कर दिया जायगा।

मंत्री ने कुछ सैनिकों को मार्ग परिष्कृत कराने का कार्य सौंपकर आगे भेज दिया। उन्होंने बात की बात में प्रबन्ध कर डाला। जब सब ठीक हो गया तो लोग अपनी-अपनी सवारियों पर बैठकर चले। सबसे आगे वशिष्ठ, वामदेव और जाबालि रथ पर बैठे। उनके पीछे रानियाँ पालकियों पर चलीं। उनके आस-पास अश्वारोही सैनिक अस्त्र-शस्त्र लेकर चले। मंत्री, महाजन, परिजन, पुरजन भी रथों और गाड़ियों पर बैठे। भरतजी सेवकों के साथ पैदल चले। यह देख कर अन्य लोग भी वाहनों से उतर पड़े। कौसल्या ने आकर भरत से कहा—सब लोग पैदल कैसे चल सकेंगे ? तुम भी रथ पर बैठ जाओ नहीं तो सबको कष्ट होगा। माँ की आज्ञा से भरत सुमंत के साथ रथ पर बैठे। गणेशजी का स्मरण कर सब लोगों ने चित्रकूट की ओर प्रस्थान किया।

पहले दिन सब लोग तमसा के किनारे, दूसरे दिन सई के किनारे, और तीसरे दिन गंगा के किनारे श्रृंगवेरपुर में ठहरे। वे जहाँ ठहरते, वहाँ एक मेला सा लग जाता। जो लोग सुनते कि अयोध्यावासी राम को मनाने जा रहे हैं, तो उनके हर्ष की सीमा न रहती। वे भरत के त्याग और भ्रातृप्रेम की प्रशंसा करते।

भरत और निषाद मिलन

निषाद ने सुना कि भरत गंगा तट पर सेना सहित पड़े हैं। उसने समझा कि वे राम-लक्ष्मण को मारकर निष्कण्टक राज्य करना चाहते हैं। तभी तो हाथी, घोड़े, रथ और सेना लेकर जा रहे हैं। यदि माता राम को वन भेज सकती हैं, तो पुत्र भी भाई को मार सकता है। बेर और बबूल में काँटे होते ही हैं। विष की बेल में अमृत फल नहीं लग सकते। स्वार्थ में मनुष्य अंधा हो जाता है। पर संसार में सब लोग एक से नहीं होते। हम यह अन्याय न होने देंगे। राम ने हमें मित्र कहा है। हम मित्र का धर्म निबाहेंगे। उसने अपने सेवकों और भाइयों को बुलाया और कहा :—

भाइयों ! आज हमारी परीक्षा का अवसर है। यद्यपि अवध की सैन्य शक्ति के सामने हमारी शक्ति निर्बल है। पर हम इससे भयभीत नहीं। वीरों के मरने का एक ही समय और एक ही स्थान होता है। वह स्थान युद्ध भूमि है। सब लोग जाकर नाकाबन्दी कर लो। घाट को रोक लो। नावों की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रस्सियाँ काट दो। पतवार डुबा दो। पाल खोल दो। जब तक जान में जान है तब तक सैनिकों को पार न उतरने दो। यदि विजयी होगे तो अमर कीर्ति मिलेगी। यदि मृत्यु होगी तो सीधे स्वर्ग जाओगे। ऐसी मृत्यु बड़े भाग्य से मिलती है। एक दिन तो मरना ही है।'

निषाद के उत्साह पूर्ण वचनों को सुनकर वे कहने लगे—'आप चिंता न करें। हम जीते जी पैर पीछे न रखेंगे। हम रण-भूमि को वीरों की लोथों से पाट देंगे। आज गंगा में स्वच्छ जल के बदले रुधिर की धार बहेगी। हम प्रलाप नहीं करते। वरन युद्ध करके प्रमाणित कर देंगे।' उन्होंने कवच पहने, शिरस्त्राण बाँधे, कमर कसी और अस्त्र-शस्त्र भाँजने लगे। निषाद ने अपने सैनिकों का उत्साह देख कूच का डंका बजवा दिया। इतने में बायीं ओर से छींक हुई। उसने समझा कि अपशकुन हुआ। आज युद्ध में कुशल नहीं है। पर उसने वीरों से कहा—'वीर लोग शकुन का विचार नहीं करते। यह तो ब्राह्मणों और वैश्यों का काम है। वे मौर बाँध कर विवाह करने जाते या व्यापार में हानि-लाभ का लेखा-जोखा करते हैं। हमारा मण्डप युद्ध भूमि है, जहाँ हम मृत्यु का वरण करते हैं तथा कीर्ति और अपकीर्ति का हिसाब लगाते हैं।'

निषाद की बातें सुनकर एक वृद्ध ने कहा—'आप मानें या न मानें, पर शकुन-अपशकुन का फल अवश्य होता है। इस समय छींक कहती है कि युद्ध न होगा। भरत राम से युद्ध करने नहीं वरन मनाने जा रहे हैं। यदि ऐसा न होता तो उनके साथ रानियों की पालकियाँ न होतीं, बड़े बूढ़े पण्डित न होते। प्रत्येक काम समझ कर करना चाहिए। लोग यही कहेंगे कि आखिर धीमर ही तो ठहरे! उनके बुद्धि कहाँ? केवल लड़ना-मारना जानते हैं। बूढ़े के तर्क को सुनकर निषाद चुप हो गया। उसने गुप्तचरों को भेद लाने के लिए भेजा।

गुप्त भेदियों ने लौटकर सूचना दी कि भरत राम को मनाने चित्रकूट जा रहें हैं। उनके साथ अवधवासी भी हैं। यह सुनते ही वह स्वागत की तैयारियाँ करने लगा। वह फल-फूल, मछली, दूध-दही आदि लेकर मिलने गया। उसने दूर ही से दण्ड प्रणाम किया। भरत ने दौड़ कर उसे गले लगा लिया। फिर वह गुरु वशिष्ठ एवं अन्य परिजनों और पुरजनों से मिला। सब लोग उससे मिलकर बड़े प्रसन्न हुए।

रात में ही केवटराज ने दूर-दूर के घाटों से अनेक नावें मँगा लीं। प्रातः काल सब लोग एक ही खेवे में पार हो गये। लोग निषाद को लेकर उस पेड़

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

के नीचे गये, जहाँ रात में सीता और राम ने विश्राम किया था। भरत ने वहाँ की धूल उठाकर मस्तक में लगायी और फूट-फूट कर रोने लगे। हाय मेरे ही कारण राम और सीता को वन-वन भटकना पड़ा। जनकनंदिनी जो कभी घर से न निकली थीं, पैदल मारी-मारी फिर रही हैं। मेरे हृदय ! तुम फट क्यों नहीं जाते ? क्या मरने का कोई शुभ अवसर मिलेगा ? केवट ने भरत को समझाया कि आप सोच न करें। राम का तुम पर अपार स्नेह है। वह तुम्हें लक्ष्मण से कम नहीं मानते। यह सुनकर भरत को कुछ शांति मिली।

शृंगवेरपुर से सबने प्रयागराज की ओर प्रस्थान किया। सबके आगे भरत और निषाद राज हाथ में हाथ जोड़े चले। अन्य लोग अपनी-अपनी सवारियों पर चले। निषाद ने भरत से भी रथ पर बैठने को कहा। पर भरत ने कहा—'राम तो यहाँ से पैदल गये हैं। वे स्वामी हैं। मैं सेवक हूँ। सेवक का धर्म बड़ा कठोर होता है। मुझे तो शिर के बल जाना चाहिए। सेवा कार्य दुधारी तलवार है। यह पर्वत का वह सानु है जिसके एक ओर शिखर और दूसरी ओर गहरी कंदरा हैं। यदि चढ़ पाये तो सफल । यदि चूक गये तो फिर से वही पाठ पढ़ना होगा।

चलते-चलते दोपहर हो गयी। भरत के पैरों में छाले पड़ गये। तेज धूप से मुँह झुलस गया। मस्तक से पसीने की धाराएँ बहने लगीं। उनकी यह दशा देख साधकों और मुनियों को भी तरस आ गया। सब लोग भरत की प्रशंसा करने लगे। तीर्थराज पहुँच कर सब लोग ठहर गये। वाहन छोड़ दिये गये। डेरे लगा दिये गये। पशुओं के चारे पानी का प्रबन्ध कर दिया गया। हाथी चिग्घाड़ने लगे। घोड़े हिनहिनाने लगे। नौकर चाकर खाने-पीने का प्रबन्ध करने लगे। सबकी यथोचित व्यवस्था हो जाने पर भरत और शत्रुघ्न दोनों भाई निषाद के साथ त्रिवेणी स्नान करने गये। स्नान करके भरत ने हाथ जोड़कर कहा:—

'तीर्थराज ! आप सम्पूर्ण कामनाओं के देने वाले हैं। आप के यहाँ से कोई याचक खाली नहीं लौटता। आप महादानी भी हैं। ऐसा समझ कर मैं भिक्षा माँगता हूँ। यद्यपि यह क्षत्रिय का धर्म नहीं। पर मैं आर्त हूँ। दुखी मनुष्य क्या दुष्कर्म नहीं करता ? आशा है आप मेरी मनोकामना पूरी करेंगे। मैं धन नहीं चाहता। मुझे धर्म भी न चाहिए। मेरी कोई सांसारिक कामना नहीं। मैं मुक्ति भी नहीं चाहता। केवल यही प्रार्थना है कि 'राम के चरणों में जन्म-जन्मान्तर मेरी अटल भक्ति बनी रहे।'

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उसी समय त्रिवेणी की लहरों से घोष हुआ—'एवमस्तु'। भरत ने शिर झुका कर भरद्वाज आश्रम का मार्ग लिया।

भरद्वाज और भरत की भेंट

भरद्वाज के आश्रम में लोगों की भीड़ लगी थी। सभी लोग भरत को देखना चाहते थे। उनके मन में अनेक प्रकार के विचार उठ रहे थे। इतने में भरत-शत्रुघ्न केवट के साथ आ पहुँचे। उन्होंने ऋषि को दण्ड प्रणाम किया। महर्षि ने बड़े स्नेह से एक आसन पर बिठाया। भरत शिर झुकाये बैठे थे मानों कोई महान अपराध कर डाला हो। उन्हें लज्जा हो रही थी कि यदि मुनि कुछ पूछेंगे तो मैं क्या उत्तर दूँगा। भरत का शील और सौजन्य देख महर्षि ने कहा:—

भरत तुम इतना संकोच क्यों करते हो ? हमें सब समाचार मिल चुके हैं। इसमें तुम्हारा क्या दोष ? कदाचित तुम माँ का अपराध अपने ऊपर ले रहे हो। पर इसमें कैकेयी का भी दोष नहीं। यह होनी थी सो हो गयी। विधि ने उसकी मति पलट दी। महाराज रानी से पहले ही प्रतिश्रुत थे। रानी ने अपना स्वत्व माँगा। पिता ने उसे दिया। अब तुम राज्य करते तो कोई तुम्हें दोष न देता। यदि राम सुनते तो उन्हें भी संतोष होता। पर तुमने अच्छा किया जो राम को लेने जा रहे हो।

राम के सम्बन्ध में तुम संदेह न करना। वह तुमसे बड़ा स्नेह करते हैं। मुझे इस बात का पता उस समय लगा जब त्रिवेणी में स्नान करने के पूर्व संकल्प पढ़ते समय 'भरत खण्डे' शब्द के उच्चारण मात्र से उनका हृदय गद्गद् हो उठा। उनके शरीर में पुलकावलियाँ उठने लगीं। मुख पर स्मिति झलकने लगी। यह तुम्हारे प्रति उनका अनुराग ही था। वह रात उन्हें हमारे आश्रम में तुम्हारी प्रशंसा करते ही बीती।

भरत तुम वस्तुतः साधु हो। भगवाँ वस्त्र पहनने, जटा रखाने और भस्म रमाने से कोई साधु नहीं हो जाता। साधुता तो मन से होती है। जिसके मन से विकार नष्ट हो जाते हैं, उसका चित्त शुद्ध हो जाता है। उसमें विनम्रता आ जाती है। विनम्रता ही साधुता का सबसे बड़ा लक्षण है। हम सन्यासियों और विरक्तों को ऐसे गृहस्थों पर गर्व होता है। अपने इस स्वभाव से तुमने राम को जीत लिया है। राम तुम्हारे वश में हैं। तुम्हारी सरलता सबके लिए अनुकरणीय है। तुम धन्य हो ! तुम्हारा प्रेम धन्य है !!

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भरद्वाज के वचनों को सुनकर भरत की हृदयकलिका खिल गयी। उन्होंने हाथ जोड़कर कहा—'यह तीर्थराज प्रयाग है। मुनियों का समाज एकत्र है। आप महर्षि हैं। त्रिकालज्ञ हैं। मैं सत्य कहता हूँ। मुझे माँ के कृत्यों पर क्षोभ नहीं। लोकापवाद की चिंता नहीं। स्वर्ग और मोक्ष की अभिलाषा नहीं। मुझे ग्लानि इस बात से है कि राम-सीता और लक्ष्मण को मेरे कारण कष्ट हो रहा है। वे वन-वन भटकते फिरते हैं। वल्कल वस्त्र पहनते, मृगचर्म बिछाते, कंद मूल-फल खाते और भूमि पर सो रहते हैं। इसी वेदना से मेरा चित्त व्यथित रहता है। न दिन में भूख लगती है और न रात में नींद आती है। मनस्ताप की कोई औषधि नहीं। इसका एक मात्र उपाय मुझे यही सूझ पड़ा कि राम के समक्ष आत्म निवेदन करूँ। इससे मेरे चित्त को शांति मिल जायगी।'

भरत की विनम्रता और प्रेम को देखकर सब लोग उन्हें साधुवाद देने लगे। किसी ने कहा कि राम का त्याग प्रशंसनीय है; दूसरे ने कहा कि भरत का त्याग उनसे बढ़कर है। तीसरे ने कहा कि दोनों एक दूसरे से बढ़कर हैं। भरद्वाज मुनि ने उनसे विश्राम करने को कहा। उनके तपोबल के प्रभाव से अवध-वासियों का वह आतिथ्य हुआ जैसा राजभवनों में भी दुर्लभ है। सब को सब प्रकार के सुख-साधन उपस्थित थे। किसी को किसी वस्तु का अभाव न था। भरत ने जो यह सब देखा तो उन्हें महर्षि के तपोबल का प्रभाव विदित हो गया। अगले दिन भरत मुनि को प्रणाम कर चित्रकूट की ओर चल दिये। महर्षि ने आशीर्वाद दिया कि तुम दृढ़ निश्चयी हो, तुम्हारी यात्रा सफल हो।

भरत और कामदगिरि

प्रयागराज से यमुना पारकर भरत चित्रकूट की ओर उसी मार्ग से चले जिससे राघवेंद्र गये थे। मार्ग में जो मिलता उसी से पूछते कि क्या तुमने राम-लक्ष्मण और सीता को देखा है? क्या तुम्हारी उनकी बात-चीत हुई थी? जो कोई थोड़ी बहुत भी चर्चा करता उसे वह हृदय से लगा लेते। राम जहाँ-जहाँ ठहरे थे, वहाँ वे अवश्य जाते, वहाँ की धूल मस्तक पर लगाते और उस स्थान को प्रणाम करते। इस प्रकार नदी, नालों, खोहों और बंजर स्थानों को पार करते चले।

गाँव की स्त्रियाँ उन्हें देखने के लिए द्वार पर खड़ी हो जातीं। वे एक दूसरे से कानाफूसी करतीं कि क्या ये वही राजकुमार हैं? इनके रंग-रूप और आयु

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तो वैसी ही है; पर इनका भेष बदला हुआ है। उनके मुख प्रसन्न थे। इनके मुख खिन्न हैं। उनके साथ अकेली सीता थीं। इनके साथ अनेक पालकियाँ है, फौज-फाटा है। उनके तर्क को सुनकर सयानी नारियाँ कहतीं—'ये उनके भाई भरत और शत्रुघ्न हैं। सुना है कि राम के वियोग में राजा ने प्राण छोड़ दिये। भरत यह समाचार पाकर ननिहाल से आये। उन्होंने माँ को बुरा-भला कहा। लोगों के लाख कहने पर भी राजगद्दी नहीं ली। अब दोनों भाई राम को बुलाने चित्रकूट जा रहे हैं। मँझली माँ की बुद्धि भी अब ठिकाने आ गयी है। वे भी जा रही हैं। साथ में अन्य रानियाँ भी हैं। पुरजन, परिजन, मंत्री और पुरोहित भी साथ में हैं। इनका भ्रातृ प्रेम धन्य है! ये अवधवासी धन्य हैं!!

भरत निषाद के सहारे चले जा रहे हैं। शरीर क्षीण हो गया है। वस्त्र मैले हो गये हैं। बाल बढ़ गये हैं। पर उनको चिंता नहीं। नंगे पैर चल रहे हैं। पैरों के छाले फूट गये हैं। तलवों में काँटे बिंधे हैं। कंकड़ियाँ गड़ रही हैं। उँगलियाँ सूज गयीं हैं। पर उन्हें इन बातों का कष्ट नहीं। वह केवल राम से मिलना चाहते हैं। उनके मन में अनेक तर्क-वितर्क उठ रहे हैं। कभी सोचते हैं कि राम कहीं और न चले जायँ। माँ की करणी का स्मरण करके गति मंद हो जाती है, पर राम के स्वभाव का ध्यान आते ही पैर जल्दी-जल्दी उठने लगते हैं। चलते-चलते उन्हें आत्म विस्मृति हो जाती है। वह राम प्रेम में ओत-प्रोत हैं। भरत के प्रेम को देखकर निषाद की आँखें खुल गयीं। उसे अपने प्रेम का बड़ा अभिमान था। संसार में एक से एक बढ़कर प्रेमी पड़े हैं। भरत जैसा भातृ स्नेह कौन कर सकता है? वह तो प्रेम और सौहार्द्र की साक्षात मूर्ति हैं।

चलते-चलते मंदाकिनी आ गयी। सब लोग वाहनों से उतरे और डेरे लगा दिये। नदी में स्नान किया। रात में ठहरने की व्यवस्था की। मंदाकिनी के किनारे अनेक देवालय थे। कामदगिरि के ढालों पर अनेक साधक और सिद्ध मिले। भरत उन सबसे राम का पता पूछते थे। एक तपस्वी ने बतलाया कि दो राजकुमार एक राजकुमारी के साथ शिखर पर वट वृक्ष के नीचे कुटी में रहते हैं। भरत अपने भाई और निषाद को लेकर पगडंडी के मार्ग से ऊपर चढ़े। उन्हें दूर से आम, जामुन, पाकर, वट और पीपल के वृक्षों का झुरमुट दिखायी पड़ा। उन आश्रम के वृक्षों पर ध्वजा पताकाएँ फहरा रही थीं। भरत ने अनुमान किया कि उसी के नीचे पर्णकुटी होगी। वह वहीं से दंड-प्रणाम करते हुए चले। कुटी के बाहर केले, कर्णिकार और तुलसी के पौधे लगे थे। उन्हें

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

निश्चय हो गया कि हम लोग आश्रम में आ गये। कुटी की बाहरी दीवालों पर ढालें-तलवारें, लटक रही थीं और बाण चमचमा रहे थे। भरत ने पहचान लिया कि वे लक्ष्मण के ही अस्त्र-शस्त्र हैं। उनका चित्त प्रसन्नता से भर गया।

राम और भरत की भेंट

उस रात सीता ने स्वप्न देखा कि भरत माताओं के साथ आये हैं। वह बड़े दुबले हो गये हैं। शिर के बाल घुटे हुए हैं। माताएँ भी मलिन और दुर्बल दिखायी पड़ती हैं। उनके बाल खुले हैं। अंगों में न आभूषण है, न सौभाग्य सूचक सिंदूर। केवल श्वेत साड़ी पहने हैं। हाथ में चूड़ियाँ भी नहीं। सीता ने अपना स्वप्न राम और लक्ष्मण को सुनाया। राम ने कहा कि स्वप्न के लक्षण अच्छे नहीं। कोई अप्रिय संवाद मिलने वाला है। इतने में भीलों ने आकर बताया कि भरत मंदाकिनी तट पर डेरा डाले पड़े हैं। साथ में रथ और पालकियाँ भी हैं।

भरत का समाचार पा राम सोचने लगे। भरत अयोध्या को कैसे छोड़ आये ? क्या उन्होंने पिता का तिरस्कार किया ? कदाचित वह मुझे बुलाने आ रहे हैं। यदि वह लौटने का आग्रह करेंगे तो मैं क्या करूँगा ? बड़ी कठिन समस्या है। किन्तु भरत दुराग्रही नहीं। हमारी बात मानते हैं। वे न कभी अनुचित कहेंगे और न करेंगे। यह सोच कर उन्हें कुछ संतोष हुआ।

लक्ष्मण ने राम को चिंतित देखा तो हाथ जोड़कर कहने लगे:—'मैं बिना पूछे कुछ कहना चाहता हूँ। इसके लिए मुझे क्षमा करें। भरत का दलबल के साथ आना संदेह से खाली नहीं। शायद उनके मन में पाप आ गया ! वह हम लोगों को मारकर निष्कण्टक राज्य करना चाहते हैं। वह समझते होंगे कि हम अकेले हैं। हमारा कोई सहायक नहीं। उनका यह सोचना असंभव नहीं। जैसी माँ है, वैसा ही बेटा ! पोखरों में घोंघे ही होते हैं। उनमें मोती नहीं हो सकते। भरत ने अच्छा नहीं किया। आज मैं पिछले वैर का बदला ले लूँगा। भरत ने मेरा क्रोध अभी देखा नहीं। यदि एक नहीं सौ भरत सेना लेकर आ जायँ तो भी बिना मारे न छोड़ूँगा'। ऐसा कहते-कहते उनका मुँह लाल हो गया। भौंहें चढ़ गयीं। होठ काँपने लगे। वह अपने धनुष-बाण संभालने लगे।

लक्ष्मण को उत्तेजित देख राम ने कहा—'भाई ! ठीक कहते हो। दुनिया ऐसी ही है। लोगों को भले-बुरे का ज्ञान नहीं, उचित-अनुचित का विवेक नहीं। अपने स्वार्थ के लिए लोग क्या नहीं कर डालते ? परन्तु भरत को उन व्यक्तियों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में न समझो। अग्नि शीतल हो सकती है। सूर्य प्रभाहीन हो सकता है, चन्द्र अमृत छोड़ कर विष बरसा सकता है, किन्तु भरत मेरे विरुद्ध कभी नहीं हो सकते। तुम मेरा बड़ा ध्यान रखते हो। सदा मेरे ही हित की सोचा करते हो। मुझसे बड़ा स्नेह करते हो। मेरे अहित की आशंका मात्र से उद्विग्न हो जाते हो। तुम्हारा इस तरह का सोचना स्वाभाविक है। परन्तु मेरे लिए तुम दोनों एक हो। भरत को अपने से विलग न समझो।

लक्ष्मण भाई की बातें सुन कर कुछ लज्जित हो गये। उन्होंने धनुष रख दिया। भाई के चरणों की सेवा करने लगे। इससे मन शांत हो गया। राम ने स्नेह से लक्ष्मण की पीठ पर हाथ फेरा और कहा—"भैया! बिना सोचे समझे किसी के विषय में कुछ नहीं कहना चाहिए।"

राम लक्ष्मण में बातें हो ही रही थीं कि भरत आ पहुँचे। उन्होंने दूर ही से दण्ड प्रणाम किया। लक्ष्मण ने उनका स्वर पहचान कर कहा कि भैया आ गये। यह सुनते ही राम उठ कर दौड़े। उनका धनुष कहीं गिरा और बाण कहीं। उत्तरीय खिसक गया। वह मारे प्रेम के विह्वल हो गये। भरत राम के चरणों में गिर पड़े और रोने लगे। वह उठते ही न थे। राम ने बलपूर्वक उठा कर उन्हें छाती से लगा लिया। कुछ देर तक दोनों के अविरल अश्रु बहते रहे। फिर वे मूक हो गये। राम ने भरत का हाथ पकड़ कर पास बिठा लिया। भरत ने सीता के चरण छुये फिर लक्ष्मण से गले मिले। इधर शत्रुघ्न और निषाद ने सबको प्रणाम किया। भाइयों के शिर मुण्डित देख कर राम की चिंता बढ़ गयी। उनके मन में जो डर था वह सामने आ गया। भरत ने बतलाया कि महाराज दिवंगत हो गये। निषाद ने बतलाया कि साथ में गुरुजन, परिजन और पुरजन भी आये हैं। वे सब शोक संतप्त हैं।

राम गुरुजनों से मिलने चल पड़े। सबसे पहले वह कैकेयी से मिले। कैकेयी उस समय अत्यन्त दुखी थीं। मारे लज्जा के वह भूमि में गड़ी जा रही थीं। सब लोग उसी की ओर देख रहे थे, पर कैकेयी किसी को न देख रही थी। वह अन्तर्मुखी हो गयी। राम ने माँ के हृदय की वेदना समझी। उन्होंने कहा—'माँ आप दुखी न हों। हमारे भाग्य में यही लिखा था। उसे कौन टाल सकता है? महाराज की इस बहाने मृत्यु निश्चित थी। जैसी होनी होती है, वैसी ही बुद्धि भी हो जाती है! उसमें किसी का क्या दोष! मनुष्य क्या, आकाश के ग्रह, पिण्ड और नक्षत्र भी काल के चक्कर में पड़ जाते हैं। सूर्य और चन्द्र को राहु

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ग्रस लेता है। ग्रह-उपग्रह भी स्थान भ्रष्ट हो जाते हैं तथा उल्कापात हो जाता है। विधि की गति पर किसी का वश नहीं। आप किसी तरह का सोच न करें।

राम के शील और स्नेह को देखकर कैकेयी की ग्लानि और बढ़ गयी। वह मन ही मन कहती कि यदि पृथ्वी फट जाती तो मैं उसमें समा जाती। वह बार-बार मृत्यु का आह्वान कर रही थी। पर मृत्यु बुलाने से कहाँ आती है? उसके आने का एक निश्चित समय होता है। वह मनुष्य के हाथ में नहीं है।

राम-लक्ष्मण ने पिता की मृत्यु पर तीन दिन का शोक मनाया। मंदाकिनी में स्नान कर प्रेतात्मा को तिलांजलि और पिंडदान दिया। शुद्ध हो जाने पर महामंत्री ने राम से कहा कि अयोध्या छोड़े हमें कई दिन हो गये हैं। न जाने वहाँ का क्या हाल होगा? यद्यपि लोगों को लौटने की इच्छा नहीं होती; पर माताएँ दुखी हैं, परिजन पीड़ित हैं, प्रिय जन संतप्त हैं और गुरुजन चिंतित हैं। आप जानते हैं कि हम लोग क्यों आये हैं? सबकी इच्छा है कि आप लौट चलें। आपके चलने से लोग महाराज के दुख को भूल जायेंगे। सबको सुख और शान्ति मिलेगी। भरत का चित्त हलका हो जायगा। यदि आप भरत की बात सुनकर उस पर विचार कर लें तो अच्छा है।

चित्रकूट की सभा

अगले दिन अयोध्यावासी एवं चित्रकूट निवासी कामदगिरि पर पर्णशाला के प्राङ्गण में एकत्र हुए। माताएँ आगे बैठीं। गुरुजन और परिजन दाहिनी ओर मंत्री तथा सभासद बाईं ओर पुरजन तथा अन्य उपस्थित लोग सामने बैठे। सभा को देखने वहाँ के वनवासी भी आये। वे भी ऊँचे-ऊँचे शिखरों पर बैठे। बंदर और पक्षी गण वृक्षों पर बैठ कर सभा की कार्यवाही देख रहे थे।

जब सब लोग यथास्थान बैठ गये तो भरत ने खड़े हो हाथ जोड़ कर कहा—'महाराज दशरथ हमारे देवतुल्य पिता थे। वह परलोक वासी हो गये। उनके सम्बन्ध में कुछ कहना शोभा नहीं देता। मरते समय उनकी बुद्धि भ्रष्ट हो गयी। उन्होंने मोह में पड़ केवल माता को प्रसन्न करने के लिए वरदान दिये। इससे राज्य एवं परिवार में अशान्ति हो गयी। एक बनी बनायी व्यवस्था बिगड़ गयी। अब इस बिगड़ी बात को आप ही बना सकते हैं। आप ही इस धर्मसंकट से हमें उबार सकते हैं।

भरत की प्रार्थना सुनकर राम ने कहा:—'हे भाई! तुम कैसी बच्चों की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सी बातें करते हो ? पिता जी ने जो कुछ किया ठीक किया। माता जी ने जो कुछ कहा ठीक कहा। हम लोगों का काम उस पर टीका-टिप्पणी करना नहीं है। महाराज विवाह के पूर्व केकय नरेश से वचन-बद्ध थे कि उनका नाती ही अवध के सिंहासन का अधिकारी होगा। मँझली माँ ने यदि तिलक के अवसर पर उसकी याद दिलायी तो क्या बुरा किया ? पिता का अधिकार है कि वह जिसे चाहे उसे राज्य दे। गुरु को अधिकार कि वह अपने किसी शिष्य को गद्दी दे जाय। अपनी पूर्व प्रतिज्ञा के अनुसार राजा को रानी की बात माननी थी। यदि तुम्हें राज्य मिलना था तो मुझे वन आना था। एक राज्य में दो प्रतिद्वन्दी नहीं रह सकते। मैं पिता के ऋण से मुक्त होने यहाँ आया हूँ। तुम भी राजगद्दी पर बैठ कर महाराज के वचनों का पालन करो। यही हमारा और तुम्हारा धर्म है। संभव है इसी में हमारा महान हित हो। भविष्य की कौन जानता है ?

भरत और राम की त्यागपूर्ण बातों को सुनकर वृद्ध जाबालि ने कहा:— आप क्षत्रिय हैं। आपका कर्म राज्य-संचालन और सुख भोग है। त्याग और तपस्या ब्राह्मणों का कर्म है। फिर अभी आप युवा हैं। आपकी बाल्यावस्था राजा ने और कौमारावस्था विश्वामित्र ने बनायी। इससे युवावस्था बन गमी। अब यदि युवावस्था में ही वानप्रस्थ ग्रहण करेंगे तो संन्यास कैसे बनेगा ?

इस संसार में कोई किसी का नहीं। सब अपने अपने कर्मों का फल भोगते हैं। प्रत्येक प्राणी अकेला ही संसार में आता और अकेला ही जाता है। जो व्यक्ति माँ-बाप, भाई-बहन, स्त्री-पुरुष आदि में आसक्ति रखता है, उसे मूर्ख ही समझना चाहिए। बुद्धिमान लोग किसीके मोह में नहीं पड़ते। इसलिए हे पुरुषोत्तम ! तुम्हें बाप-दादों का राज्य छोड़ना ठीक नहीं। यह वन की राह जो आपने ग्रहण की है, बड़ी दुखदायक है। आप अयोध्या के सिंहासन पर बैठकर राज भोग करें।

संसार में अर्थ, धर्म और काम तीन पुरुषार्थ माने गये हैं। जो लोग अर्थोपार्जन और धर्म-कर्म में जीवन गवाँ देते हैं, किन्तु सुख भोग नहीं करते, उनका जीवन व्यर्थ है। वे इस लोक में कष्ट उठाते और मर कर नष्ट हो जाते हैं। जो कुछ है यह लोक है। परलोक केवल कपोल कल्पना है। श्राद्ध आदि करना मूर्खता है। यज्ञादि करना अन्न को नष्ट करना है। जो मर गया वह क्या खा सकेगा ? उसे तर्पण करने से क्या लाभ ? लोग कहते हैं कि यज्ञ, दान, तप आदि करने से स्वर्ग मिलता है, पर स्वर्ग किसने देखा हैं ? वह कहाँ है ? क्या जाने किसी को मोक्ष मिलता है या नहीं ? यह तो मन गढन्त है। स्वार्थी लोगों ने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अपने लाभ के लिए ग्रन्थों की रचना कर दी है तथा स्वर्ग और नरक का झमेला खड़ा कर दिया है। हे राघव ! आप इस झमेले में न पड़े। आप भरत का कहना मान कर राज्य ग्रहण करें।

जाबालि के वचनों को सुन कर राम का मन किंचित विचलित न हुआ। उन्होंने बड़े धैर्य के साथ कहा—'आप ने जो कुछ कहा, वह आपके विचार से ठीक होगा; पर मुझे उसमें कोई तत्व दिखायी नहीं पड़ता। आपकी बातें सुनने में मीठी हैं, पर यथार्थ में अहितकर है। किसी सिद्धान्त को मानने के पूर्व उस पर तर्क-वितर्क कर लेना चाहिए। संसार की अनेक वस्तुएँ ऊपर से अच्छी दिखायी पड़ती हैं पर भीतर से वे अच्छी नहीं होतीं। इन्द्रायण के फल देखने में सुन्दर लगते हैं पर उनका स्वाद कटु होता है। सेमल के फूल गुलाब के समान लाल दिखायी पड़ते हैं, पर उनमें सुगंधि नहीं होती। बेर ऊपर से कोमल जान पड़ता है, पर भीतर से कठोर होता है। अतः हमें किसी वस्तु का वाह्य न देखकर अन्तस देखना चाहिए।

आपने अर्थ और धर्म की जो बात कहीं, वह भी ऐसी ही है। अर्थ और काम की तो सभी कामना करते हैं, किन्तु इससे धर्म का साधन नहीं होता। अर्थ उतना ही चाहिए जिससे अपना और अपने परिवार का निर्वाह हो जाय। उसकी अधिकता अनर्थ का कारण बन जाती है। धन से मद आता है। मद से मनुष्य धर्म की ओर न चल कर अधर्म की ओर भागता है। अर्थ और काम का वही सम्बन्ध है जो समिधा और अग्नि का है। दोनों एक दूसरे के सहायक हैं। अर्थ पाने से लोभ बढ़ता जाता है। काम की तृप्ति न होने से क्रोध आता है। इस प्रकार काम, क्रोध, लोभ, मद, मत्सर आदि विकार घर कर लेते हैं। इनके रहते प्राणी को सुख कहाँ ? आपने जो कुछ कहा वह आर्यों का धर्म नहीं। आप इस लोक में तो विश्वास करते हैं। पर परलोक को नहीं मानते। अतः शास्त्र-विरुद्ध सम्मति देते हैं। आप नास्तिक हैं। धर्म शास्त्र कहता है कि नास्तिक की बात कभी नहीं मानना चाहिए।

राम के उत्तर को सुन कर सब लोग अवाक रह गये और उनकी ओर देखने लगे। उन्हें कुछ उदास देख कर वशिष्ठ जी ने कहा :—

रामभद्र ! महर्षि जाबालि धर्म और अधर्म को समझते हैं। वह मीमांसक और न्याय के पण्डित हैं। वह समयानुकूल आस्तिक एवं नास्तिक बन जाते हैं। उन्होंने जो कुछ कहा उसका एक मात्र उद्देश्य आपको अयोध्या ले चलना है। रही सिद्धान्त की बात ! वह विवाद ग्रस्त हो सकती है। इनके मत के मानने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वाले बढ़ते जाते हैं और संभव है कि भविष्य में इन्हीं का बहुमत हो जाय। हमें यहाँ उस पर विवाद नहीं करना है। केवल अयोध्या वासियों का ध्यान रखना हैं। राज परिवार आपके बिना बड़ा दुखी है। माताएँ कुछ आशा लेकर आयी हैं। भरत तुम्हें मनाने आये हैं। हम लोग उनके साथ हैं। परिवार एवं प्रजा का पालन तुम्हारा मुख्य धर्म है।

गुरु के शीतल वचनों को सुनकर राम का मन शान्त हो गया। उन्होंने कहा—'भगवन् ! धर्म की व्याख्या और विश्लेषण करने का मुझे अधिकार नहीं। यह तो आप जैसे विद्वानों और पण्डितों का काम है। धर्म का विषय गम्भीर है। वह वाद-विवाद और तर्क-वितर्क से भरा है। न मैं तार्किक हूँ और न नैयायिक। मैं तो वही मानता हूँ, जैसी आपने मुझे शिक्षा दी है।

मेरा मत है कि मनुष्य का चरित्र सर्वोपरि है। वह चाहे आस्तिक हो अथवा नास्तिक। प्रत्येक व्यक्ति को मन, वचन और कर्म से एक होना चाहिए। लोग सोचते कुछ हैं, कहते कुछ हैं और करते कुछ और ही हैं। धर्म के सिद्धान्त अटल हैं। उनमें नित्य परिवर्तन नहीं होते। हमारे धर्म शास्त्रों ने राजा और प्रजा के पिता और पुत्र के तथा स्त्री और पुरुष के कर्त्तव्यों का स्पष्ट विवेचन किया है। यदि कोई राजा शास्त्र की आज्ञा न मानकर मनमानी करता है, तो उसकी प्रजा भी मनमानी करती है। इससे समाज में क्रान्ति होती और व्यवस्था भंग हो जाती है। 'यथा राजा तथा प्रजा' की कहावत ठीक है। राज्य का आधार सत्य है। वेद और शास्त्र सत्य को ही परम धर्म मानते हैं। सत्य ही धर्म की मूल है। सत्य ही ईश्वर है। यज्ञ, दान, उपासना, तप आदि करना सत्य की खोज करना है। अतः आडम्बर मात्र कहकर इनकी उपेक्षा नहीं हो सकती। पिताजी ने सत्य का पालन किया। माँ से की गयी प्रतिज्ञा की अवहेलना भी नहीं की। उन्होंने मुझे छोड़ दिया। प्राण त्याग दिये। पर वचन नहीं छोड़े। उनके वचनों को सत्य करने मैं यहाँ आया हूँ। मैं अपने आचरण से पिताजी को मिथ्यावादी न बनाऊँगा।

भरत ने कहा कि आप ठीक कहते हैं। मैं न पिताजी को झूठा बनाना चाहता हूँ। न माता को और न आपको। किन्तु मैं राजगद्दी पर नहीं बैठ सकता। मेरी आत्मा उसे स्वीकार नहीं कर सकती। यदि प्रतिज्ञा के अनुसार वन जाना ही है तो आपकेबदले मैं वन में रहूँगा। मेरा अयोध्या में क्या काम ?

भरत के प्रस्ताव को सुनकर राम ने कहा—पिताजी ने अपने जीवन में जो कुछ किया अथवा किसी को कुछ दे डाला, उसे हम अन्यथा नहीं कर सकते।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हम उनके दान को वापस नहीं ले सकते। सुयोग्य संतान माता-पिता की सम्पत्ति को बेचते नहीं। उनका ऐश्वर्य कम नहीं करते वरन् बढ़ाते हैं। वे कोई ऐसा काम नहीं करते जिससे उनके सुयश पर धब्बा लगे। भरत ! मैं अपने स्थान में तुम्हें बन कैसे भेज सकता हूँ ? मैं तुम्हें अच्छी तरह जानता हूँ। तुम्हारा चित्त निर्मल है। उसमें किसी प्रकार का विकार नहीं। तुम्हें राज्य का मोह नहीं। सुख की अभिलाषा नहीं। फिर चिन्ता किस बात की ? तुम मुझे भी अच्छी तरह जानते हो। मैं तुम्हें कभी दूसरा नहीं समझता। यदि हम दोनों एक हैं, तो लोकापवाद की चिंता क्या ? दुनिया तो सब में दोष देखा करती है। अपना चित्त देखो। मैं केवल पिता की आज्ञा मानना चाहता हूँ। तुम भी उनकी आज्ञा का पालन करो। इसी में हमारा और तुम्हारा कल्याण है। इसी में सबका भला है।

बड़े भाई को सानुकुल देख भरत की रही-सही ग्लानि भी दूर हो गयी। उनकी चिंता मिट गयी। उनकी कर्त्तव्य बुद्धि जागृत हो गयी। उन्हें भाई का का स्नेह मिला मानों सब कुछ मिल गया। उनकी राम पर अमित श्रद्धा थी। राम पर उनका अटल विश्वास था। फिर उन्होंने हाथ जोड़कर कहा—

'मैं उसी में प्रसन्न हूँ, जिसमें आप सुखी है। आप बड़े हैं। आपकी आज्ञा हमें शिरोधार्य है। राज्य आपका है। माता ने उसे माँगकर भूल की। कदाचित उन्होंने अपनी भूल स्वीकार कर ली। पिताजी राज्य आप ही को देना चाहते थे। केवल वचन बद्ध होने के नाते कुछ बोल न सके। उनकी इच्छा भी न थी कि आप बन आते, पर विवश थे। क्या करते ? इसीलिए प्राण त्याग दिये। हमें वचनों पर विशेष ध्यान न देना चाहिए वरन् मन को समझना चाहिए। मैं दुराग्रह नहीं करता कि आप लौट चलें। मेरी केवल एक प्रार्थना है। चौदह वर्ष बीत जाने पर आप अवश्य लौट कर अपना राज्य ग्रहण करें। तब तक मैं उसकी देख भाल करता रहूँगा। तब तक के लिए अपनी चरण पादुकाएँ दे दीजिए। मैं उन्हें राजसिंहासन पर बिठा दूँगा।'

राम ने भरत को छाती से लगा लिया और कहा—'मैं तुम्हारी बात टाल नहीं सकता। मैं अवधि बीत जाने पर अवश्य लौट आऊँगा। तब तक के लिए तुम्हें यह कष्ट करना ही होगा। ऐसा कह उन्होंने रत्न जटित सुवर्ण पादुकायें भरत को दे दीं। भरत ने उनको माथे से लगा लिया। वह ऐसे प्रसन्न हुए मानों राम लौट पड़े हों।

गुरु वशिष्ठ ने भरत की पीठ पर हाथ रखकर कहा कि तुमने सब की मर्यादा रख ली। तुमने स्नेह का भी निर्वाह किया और कर्तव्य का भी। तुमने वही

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

किया जो करना चाहिए था। सभा में उपस्थित सभी लोगों ने भरत की प्रशंसा की। मंत्रियों ने साधुवाद दिया। प्रजावर्ग ने करतलध्वनि से और वन वासियों ने हर्ष ध्वनि से उसका अनुमोदन किया। सभा में राम और भरत की जय-ध्वनि गूँज उठी। बन्दरों और चिड़ियों की भी चीख उसी में सम्मिलित हो गयी।

भरत ने पूछा कि अभिषेक जल का क्या किया जाय ? राम ने कहा कि इस वन के अधिष्ठाता अत्रि मुनि हैं। इस विषय में उन्हीं की सम्मति माननीय है। अत्रि ऋषि के कहने से चित्रकूट पर्वत के चरणों के निकट एक कुएँ में तीर्थों का जल छोड़ दिया गया। उस दिन से उसका नाम भरत कूप पड़ गया। मुनि ने कहा कि यह अनादि स्थल है। समय के प्रभाव से लुप्त हो गया था। जो लोग इस कूप जल से स्नान करेंगे, उन्हें समस्त तीर्थों के नहाने का फल मिलेगा। राम की आज्ञा से दो चार दिन सब लोग और ठहरे। वे प्राकृतिक दृश्यों को घूम फिर कर देखते रहे तथा ऋषियों के दर्शन करते रहे। फिर अयोध्या लौट आये।

नंदिग्राम में भरत

भरत ने ज्योतिषियों से पूछकर शुभ दिन और शुभ मुहूर्त में रामचन्द्र की चरण पादुकाएँ सिंहासन पर रख दीं। उन्होंने माताओं की देख-भाल शत्रुघ्न को, प्रजा की देख-भाल मंत्रियों को सौंप दी। स्वयं गुरु की आज्ञा लेकर नंदिग्राम में वैखानस की तरह भूमि के अंदर रहने लगे। वे मुनियों की तरह मौन साधना करते, साधुओं की तरह सरल जीवन व्यतीत करते, साधकों की तरह नाम जपते और योगियों की तरह यम-नियम का पालन करते थे। वह कंद-मूल-फल खाते, वल्कल वस्त्र पहनते, मृगचर्म बिछाते और कुशासन पर सोते थे। वह उठते-बैठते, चलते-फिरते, सोते-जागते अहर्निशि राम का नाम लेते रहते थे। अजपा जाप के प्रभाव से उनके मन-मन्दिर में सीता-राम की मूर्ति सदा बनी रहती। राम प्रेम में उनकी आँखें प्रायः सजल रहती थीं। उनके बाल बढ़ गये। जटायें पड़ गयीं। बदन सूख कर काँटा हो गया, पर मुख की कांति बढ़ती ही गयी। भरत को कोई कमी न थी। पर भाई वन में कष्ट उठा रहे हैं, अतः वह घर में सुख कैसे भोग सकते हैं ? भरत की भ्रातृ-भक्ति अनुकरणीय है। संसार में भरत ऐसा भाई मिलना दुर्लभ है। वह व्यक्ति धन्य है, जिसके आचरण अनुकरणीय हों। वह मनुष्य नहीं देवता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तृतीय खण्ड

स्फटिक शिला

अवधवासियों के घर लौट जाने पर चित्रकूट की चहल-पहल कम हो गयी। राम को विश्वास हो गया कि भरत अवध की देख-रेख कर लेंगे। वह प्रायः लक्ष्मण से भरत के गुणों की चर्चा करते। उनकी जिह्वा भरत की प्रशंसा करते थकती न थी। लक्ष्मण भी उनके स्वर में स्वर मिलाकर कहते कि भाई ने वही किया, जो उन्हें करना चाहिए था। अन्ततः हम लोगों की नसों में रघुवंश का ही रुधिर तो वह रहा है। विमाता के रक्त में वे तत्व नही। उन्होंने भेद डालना चाहा, पर लाठी मारने से पानी अलग नहीं होता। रक्त का सम्बन्ध गहरा होता है। हम एक थे, एक हैं और एक रहेंगे।

राम ने कहा कि इसमें कैकेयी माँ का भी दोष नहीं। मैं उनके वात्सल्य को अच्छी तरह जानता हूँ। उन्होंने मुझे भरत से कभी कम नहीं जाना। पर विमाता के अन्दर ईर्ष्या का होना नारी सुलभ दुर्बलता है। सापत्न्य ज्वाला की अग्नि माँ वसुन्धरा के अन्तस्तल में सदा सुलगती रहती है। वह अवसर पाकर भड़क उठती है और तब तक शान्त नहीं होती, जब तक सब स्वाहा नहीं कर देती। कैकेयी को अपनी भूल का बड़ा पछतावा है। वह पश्चाताप की अग्नि में जलकर शुद्ध हो गयी है। जो होना था, वही हुआ और जो कुछ होता है ठीक होता है। विधि का विधान अटल है। हमें प्रत्येक दशा में उसे स्वीकार करना चाहिए। चित्त तभी शान्त रह सकता है। अन्यथा हमें किसी न किसी से सदा शिकायत बनी रहेगी।

एक दिन लक्ष्मण पास के वन में आखेट करने गये। राम ने सीता का पुष्प श्रृंगार किया। फिर स्फटिक शिला पर बैठ कर मंदाकिनी का प्रवाह देखने लगे। जल धारा शिलाओं से टकराती, कल-कल करती, फेनिल हो आगे बढ़ शिला खण्ड से नीचे कुण्ड में झर-झर करती हुई गिर रही थी। प्रपात का का दृश्य बड़ा मनोहर था। सूक्ष्म जल सीकरों की फुहारें उठ रहीं थीं। उनके साथ छोटी-छोटी मछलियाँ उछल-उछल कर गिर रही थीं। उनकी घात में पक्षी मँडरा रहे थे। वे बार-बार पानी में चोंच मारकर उड़ जाते थे। बगले

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शिकार की ताक में मौन बैठे थे। कुण्ड में जल-कुक्कुट और कलहंस तैर रहे थे। सीता यह दृश्य देखने में बेसुध थीं। राम सीता की ओर बड़े ध्यान से देख रहे थे। सीता ने राम के भाव को पहचाना और हँस पड़ीं।

राम ने कहा—प्रिये ! वल्कल वस्त्र और पुष्प धारण किये तुम उतनी ही सुन्दर लगती हो, जितनी कौषेप वस्त्र और रत्न जटित सुवर्ण आभूषण पहन कर राजभवन में सुन्दर लगती थीं। सीता ने कहा कि सौन्दर्य वस्तु में नहीं वरन देखने वालों की आँखों में होता है। वह चक्षु ज्ञान का नहीं वरन मन का विषय है। आँखों को वही वस्तु अच्छी लगती है, जो मन को प्रिय होती है। मन के लिए सुन्दर और असुन्दर का कोई मानदण्ड नहीं। वह जिसे मान ले वही सुन्दर है। उसके लिए रूप, रंग, वस्त्र-आभूषण, बनाव-शृंगार का कोई महत्व नहीं। आप मुझसे अनुराग रखते हैं। इससे मेरी प्रत्येक वस्तु आपको प्रिय लगती है।

राम और सीता में इस प्रकार प्रेमालाप हो ही रहा था कि एक कौवे ने सीता के वक्षस्थल पर झपट्टा मारा और पुष्पहार नोच कर उड़ गया। चोंच और पंजे के लगने से सीता कराह उठीं। राम ने देखा कि पंजा जोर का लगा है और रक्त बह रहा है। उसे देखते ही राम का खून खौल उठा। उन्होंने कौवे की ओर भ्रूभंग से देखा। उसकी मनोवृत्ति जान ली। वह साधारण कौवा न था वरन् इन्द्र का पुत्र जयन्त था। वह राम के बल की परीक्षा लेने आया था। राम ने पास में पड़े हुए सरकंडे को धनुष पर चढ़ा कर छोड़ दिया। जयन्त ने बाण को आता देख कर गति और तीव्र कर दी। बाण भी तेजी से चलने लगा। वह ज्यों-ज्यों भागता त्यो-त्यों बाण पीछा करता जाता था। फिर वह छल से टेढ़ा-मेढ़ा उड़ने लगा। अंत में भयभीत होकर पिता के चरणों में जा गिरा। इन्द्र ने डपटकर कहा "मैंने तुझे पहले ही मना किया था पर तूने मेरी बात न मानी। दुष्ट तूने बड़ा नीच काम किया है। मेरे घर में तेरे लिए कोई स्थान नहीं।"

पिता की फटकार पाकर जयन्त कैलास पहुँचा और 'त्राहिमाम् त्राहिमाम्' कह कर शिव के चरणों से लिपट गया। शिवजी ने उसे आड़े हाथों लिया। 'यदि ऐसे पापियों को मैं शरण देने लगूँ तो मर्यादा ही मिट जाय'। जयन्त निराश होकर ब्रह्म लोक पहुँचा। ब्रह्मा ने भी उसे भगा दिया। जब उसे किसी प्रकार बचने की आशा न रही तो थक कर बैठ गया। मनुष्य जब चारों ओर से निराश हो जाता है तो उसकी आत्मा चीत्कार करने लगती है। वह अपने कर्मों पर पाश्चात्ताप करता है। पाश्चात्ताप की अग्नि में जल कर चित्त शुद्ध हो जाता है। तब

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सर्वान्तर्यामी परमात्मा उसे सुबुद्धि देता है। भगवान जिस पर कृपा करते हैं, उसके पास कोई न कोई संत भेज देते हैं। संत जीवों का उद्धार करने में समर्थ होते हैं।

संयोग वश देवर्षि नारद उधर से 'नारायण-नारायण' करते आ निकले। जयन्त उनके पैरों में गिर कर कहने लगा—'आप महात्मा हैं। आपके लिए भले-बुरे सब एक से हैं। आप की दया सब पर है। कृपया मेरा भी कल्याण कीजिए।' नारदजी ने कहा कि तूने राम का अपराध किया है। उन्ही के पास जा। वही तुझे क्षमा कर सकते हैं या दण्ड दे सकते हैं। मैं इस विषय में कुछ नहीं कर सकता।"

नारद की बात मान कर जयन्त उल्टे पाँव चित्रकूट को भागा। वह हाथ जोड़ गिड़गिड़ा कर बोला—'प्रभु ! मैंने आपको समझने में भूल की। आप अमित शक्ति शाली और पराक्रमी हैं। मैं अहंकार में चूर था और दर्प से अन्धा हो रहा था। मैं अब ऐसा काम कभी न करूँगा। मुझे क्षमा कीजिए।'

राम ने कहा कि यदि तू मेरा अपराध करता तो मैं क्षमा कर देता। तू ने नारी पर अबला समझ कर हाथ उठाया। यदि मैं तुझे छोड़ता हूँ तो लोग इसी प्रकार अत्याचार करते रहेंगे। अपराधी को दण्ड न देना अप्रत्यक्ष रूप से अन्याय को प्रोत्साहन देना है। मैं धर्म शास्त्र का मानने वाला हूँ। मर्यादा भंग मेरे नियम के प्रतिकूल है। मैं निरपराध व्यक्ति पर अस्त्र उठाता नहीं। अस्त्र उठा कर बिना मारे छोड़ता नहीं। पर तू मेरी शरण आया है। शरणागत की रक्षा करना मेरा नियम है। मैं प्राण दान तो देता हूँ पर दण्ड स्वरूप तुझे एक नेत्र विहीन कर दूँगा। इससे तुझे सदा स्मरण रहेगा, और किसी की ओर कुदृष्टि से न देखेगा। ऐसा कहने पर बाण उसकी आँख में लगा। वह काना हो गया। उसने हाथ जोड़कर प्रार्थना की—"हे करुणा वरुणालय मैंने आप को जैसा सुना था, वैसा ही पाया। आप दीनों पर दया करते हैं। आप ने मुझ पर भी दया की।आप ने कुबुद्धि दूर कर सुबुद्धि दी और कुदृष्टि हटा कर सुदृष्टि दी। मैं आप का बड़ा अभारी हूँ। आप धन्य हैं।"

अत्रि के आश्रम में राम और सीता

राम को चित्रकूट में रहते अनेक दिन बीत गये। उन्होंने सोचा कि परिव्राजक को एक स्थान पर रहना ठीक नहीं। अति परिचय से मोह बढ़ता है। मोह अनेक व्याधियों की जड़ है। उससे अनेक कष्ट होते हैं। अवधवासी हमें यहाँ देख गये हैं। माताएँ हमारी खोज-खबर लेने किसी न किसी को अवश्य भेजती

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रहेंगी । इससे ऋषियों-मुनियों की साधना में विघ्न पड़ेगा । अतः अन्यत्र चलना चाहिए । महर्षि भरद्वाज ने अत्रिमुनि से मिलने को कहा था । अब वहीं चलना ठीक है । वह जैसा कहेंगे, वैसा ही किया जायगा । ऐसा निश्चय कर उन्होंने चित्रकूट के महात्माओं से विदा ली । सीता और लक्ष्मण के साथ अत्रि मुनि के आश्रम की ओर चल दिये ।

आश्रम का मार्ग मंदाकिनी के किनारे-किनारे हो कर जाता था । कुछ दूर चलने पर आश्रम के चिह्न दिखायी पड़ने लगे । मुनि के शिष्यों ने राजकुमारों को आते देखा तो उन्हें बड़ा कौतूहल हुआ । उन्होंने मुनि से कहा कि दो युवक एक देवी के साथ आ रहे हैं । अत्रि को पहले ही पता चल गया था कि राम और लक्ष्मण सीता के साथ कामद गिरि पर निवास कर रहे हैं । उन्हें विश्वास था कि राम एक दिन अवश्य आयेंगे । वह उनका आगमन सुन बड़े प्रसन्न हुए । उन्होंने अभ्यागतों का स्वागत किया । कुशल प्रश्न पूछ करके अतिथिशाला में ठहराया । राम ने रात में विश्राम किया ।

अगले दिन राम ने मुनि से कहा—'आप मेरे आने का कारण जानते हैं । कृपया रहने के लिए समुचित स्थान बतलाइये । हमारे योग्य जो कार्य हो, उसे कहने में संकोच न करें ।' अत्रि ने कहा—'आप के विषय में मैं नित्य कुछ न कुछ सुना करता था । पर मन को विश्वास न होता था । आज आपसे मिलकर वह आनंद मिला, जिसकी झलक समाधिस्थ होने पर कभी-कभी मिल जाती थी । आपका रूप अद्‌भुत है । नील मणि के समान कान्ति युक्त वर्ण आपकी गरिमा का द्योतक है । आपके प्रस्फुटित कमल नयन अलौकिक प्रतिभा का परिचय देते हैं । आपकी मंद स्मिति हृदय की कोमलता व्यक्त करती है । आप के आजानु वाहु और विशाल वक्षस्थल से अमित पराक्रम झलकता है । आपने ताटका को मार कर पथिकों को भय से मुक्त कर दिया । सुबाहु और मारीच को मारकर विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा की । उत्तराखंड से अनार्यों का प्रभुत्व दूर कर दिया । गौतम नारी चरण रज से तर गयी । आपने शंकर का धनुष तोड़ कर अहंकारी राजाओं का मद मर्दन कर दिया । अपनी विनम्रता से परशुधर को भी जीत लिया । आपके कार्य मानवीय नहीं, दैवी हैं । लोग आपको पहचानने में भूल कर बैठते हैं । आप सब जानते हैं किन्तु आदर देने के लिए मुझसे पूछते हैं । मुझे कहने में लंकोच होता है कि आप कहाँ नहीं हैं ? जहाँ आप न हों वही स्थान मैं रहने के लिए बता दूँ । मेरी तो अभिलाषा है कि आप मेरे मन में सदा बसे

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रहें। पर यह मेरा निरा स्वार्थ होगा। प्रत्येक व्यक्ति का कार्य विशेष होता है। आपका जन्म धर्म की रक्षा और अधर्म के विनाश के लिए हुआ है। अतः वही करें। आप पंचवटी में कुछ दिन निवास करें दण्डकारण्य के कुलपतियों से मिलें, उनकी कष्ट कहानियाँ सुनें तथा उनके दूर करने का उपाय करें।'

अत्रि मुनि के वचनों को सुन कर राम ने हाथ जोड़ कर कहा—'आपने तप करके शरीर और मन को शुद्ध कर लिया है। आपकी वाणी पवित्र हो गयी है। आप अनुराग-विराग तथा शुभाशुभ कर्मों के बन्धनों से मुक्त हो गये हैं। आपकी चित्त वृत्ति निर्मल हो गयी है। आप में समत्व बुद्धि आ गयी है। आप ब्रह्म में लीन रहते हैं। अतः सर्वत्र उसे ही देखते हैं। आपको दिव्य दृष्टि प्राप्त है। आप ब्रह्मर्षि हैं। आप भूत के ज्ञाता, वर्तमान के दृष्टा और भविष्य के वक्ता हैं। आप जिसे जो न बना दें, वह थोड़ा है। मुझमें इतनी शक्ति कहाँ जो मैं कुछ कर सकूँ! मैंने जो कुछ किया महात्माओं के आशीर्वाद से किया। महर्षि विश्वामित्र ने वाण विद्या सिखायी। इससे मैं उनके यज्ञ की रक्षा कर सका। अहल्या अपने पति के शाप से शिला हो गयी थी, उन्हीं के वरदान से मुक्त हो गयी। मैं निमित्त मात्र बना। शिवजी के धनुष की आयु पूरी हो चुकी थी। उसका कार्य-पूर्ण हो चुका। वह केवल पूर्वजों की धरोहर थी। वह कब तक चलती? वस्तु का विनाश होना स्वाभाविक है। केवल समय की सापेक्षता वाञ्छनीय है। यही बात मुनि परशुराम की थी। उनका कार्य अहंकारी राजाओं का मान मर्दन था। यदि उनके कार्य आगे चलते रहते तो वीरों का स्वाहा हो जाता। संसार में जितनी बाहुबल की आवश्यकता है, उतनी ही बुद्धि बल की। मनु ने समाज में इसीलिए वर्ण व्यवस्था चलायी है। क्षत्रियों का धर्म बाहुबल उपार्जित करना और ब्राह्मणों का तपोबल है। विश्वामित्र में दोनों गुण थे। उन्होंने ब्रह्मत्व स्वयं लिया; क्षत्रियत्व का पाठ मुझे पढ़ाया। मैंने जो कुछ किया उनकी आज्ञा से किया। अब आप जो आज्ञा दे रहे हैं, मैं उसका यथाशक्ति पालन करूँगा। आशीर्वाद दीजिए कि मैं उसमें सफलता प्राप्त करूँ।

अनुसूया द्वारा सीता को पतिव्रत का उपदेश

राम और अत्रि में जब वार्ता चल रही थी, तो सीता अनुसूया की कुटी में गयीं। उन्होंने देखा कि अनुसूया के शरीर पर झुर्रियाँ पड़ गयी हैं। बाल पक गये हैं। अंग-प्रत्यंग जर्जर हो रहे हैं। शिर हिलने लगा है। वह लकुटी के बल

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चलत हैं। चलने में हाथ-पैर काँपने लगते हैं। सीता ने बड़ी श्रद्धा से उनके चरण छुए। ऋषि पत्नी ने आशीर्वाद दिया और बड़े स्नेह से हाथ पकड़ कर अपने पास बिठा लिया। दोनों एक दूसरे से मिलकर बड़ी प्रसन्न हुईं। सीता को मानों कौसल्या मिल गयीं और अनुसूया को बहू। सीता ने कहा--'मेरा परम सौभाग्य, कि आपके दर्शन हो गये। मैंने चित्रकूट में आप की प्रशंसा सुनी थी। आप साक्षात् त्याग और तप की मूर्ति हैं। आपने अपने धर्म का बड़ा सुन्दर निर्वाह किया है। इसका परिचय आपका शरीर ही दे रहा है। आपका जैसा नाम है। वैसे ही गुण भी हैं। आप दूसरों के गुण तो कहती हैं पर उनके अवगुणों का उपहास नहीं करतीं। यह मंदाकिनी आपकी कीर्ति रूप ही आश्रम के निकट से बह रही है। इसके आने से स्नानादि की सुविधा हो गयी। आपकी तपस्या सफल हो गयी। आप धन्य हैं! कृपया मुझे भी उपदेश दीजिये, जिससे मैं अपने धर्म का निर्वाह कर सकूँ।

अनुसूया ने सीता की पीठ पर हाथ फेर कर कहा—'बेटी! तुम अपने कर्तव्य को अच्छी तरह जानती हो। राजभवनों के सुखों को तिलांजलि देकर पति के साथ वन में कष्ट उठा रही हो। तुमने विपत्ति में स्वामी का साथ दिया। यही तुम्हारी सबसे बड़ी धर्म-निष्ठा है। धीरज, धर्म, मित्र और नारी की परीक्षा आपत्काल में ही होती है। तुम उस परीक्षा में खरी उतरीं। आर्य नारी का यही धर्म है। तुम उसी का पालन कर रही हो। फिर मैं तुम्हें क्या शिक्षा दूँ ?हाँ! मैं तुम्हारे मन को तोड़ना नहीं चाहती। इससे संक्षेप में नारी-धर्म बतलाती हूँ।

नारी का केवल एक धर्म हैं। वह पातिव्रत है। जिसने पातिव्रत का निर्वाह किया, उसने सब धर्मों का पालन कर लिया। धर्म-शास्त्र में स्त्री का पुरुष से स्वतंत्र अस्तित्व नहीं। दोनों एक हैं। यदि एक शरीर है तो दूसरा प्राण। पुरुष यज्ञ, जप, तप, आदि शुभ कर्म करके परमात्मा में लीन होजाता है। नारी मन-वच-कर्म से पति में लीन रहती है। इस प्रकार स्त्री भी पुरुष के साथ परमपद पा जाती है। उसे पति से भिन्न प्रयास नहीं करना पड़ता। स्त्री और पुरुष का सम्बन्ध अभिन्न है। सृष्टि का क्रम दोनों को लेकर चलता है। पुरुष ब्रह्म है। स्त्री प्रकृति है। दोनों में परस्पर आकर्षण है। नारी की कोमलता पुरुष को खींचती है और पुरुष का पौरुष नारी को। दोनों एक दूसरे के परिपूरक हैं। आकर्षण के दो कारण हैं। एक सौंदर्य है और दूसरा गुण। एक वाह्य है, शारीरिक है; दूसरा आन्तरिक है, आचारिक है। लोग प्रायः वाह्य सौंदर्य पर मुग्ध

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

होते हैं। पर वाह्य सौंदर्य स्थायी नहीं होता। आन्तरिक सौदर्य स्थायी होता है। अतः जो आकर्षण रूप पर न होकर गुणों के प्रति होता है, वही वरेण्य है।

आर्य संस्कृति में पतिव्रताओं का विभाजन चार श्रेणियों में किया गया है (१) उत्तम (२) मध्यम (३) निकृष्ट (४) अधम। उत्तम नारियाँ अपने पति को ही एक मात्र पुरुष मानती हैं। अन्य व्यक्तियों में वे पौरुष देखती ही नहीं। उनका मन स्वप्न में भी किसी पुरुष की ओर नहीं जाता। उनकी कामना तृप्त रहती है। वासना कभी उद्दीप्त नहीं होती। सांसारिक जीवन में अनेक ऐसे अवसर आते हैं, जब नारी को पर पुरुष के सामने होना पड़ता है। उस समय वृद्धजनों को वह पिता के समान, वयस्कों को भाई के समान और अल्प वयस्कों को पुत्रवत् देखती है। ऐसी नारी की गणना मध्यम वर्ग में की जाती है। जो नारी धर्म-भीरुता अथवा कुल मर्यादा के विचार से अपने धर्म की रक्षा करती है, वह निकृष्ट कोटि की पतिव्रता मानी जाती है। अनेक नारियों में परपुरुष के प्रति आकर्षण तो होता है, किन्तु उपयुक्त अवसर अथवा एकान्त न मिलने से लज्जा एवं भय वश आत्म संयम कर लेती है। उनकी गणना अधम पतिव्रताओं की कोटि में होती है।

अनार्य संस्कृति नारी के अस्तित्व को स्वतंत्र मानती है। वह स्वच्छंदता का समर्थन करती है। वह स्त्री और पुरुष के शारीरिक मिलन में दोष नहीं समझती। आर्य संस्कृति भौतिक मिलन को गौण और आत्मिक मिलन को मुख्य समझती है। शारीरिक सुख क्षणिक है; सीमित है, और वासनामय है। आत्मिक सुख स्थायी है, असीमित है और वासना रहित है। आत्मिक सम्बन्ध जन्म-जन्मान्तर का होता है। पूर्व जन्म के बिछुड़े इस जन्म में फिर मिल जाते हैं। क्षणिक शारीरिक सुख के लिए लोक-परलोक को बिगाड़ देना बुद्धिमानी नहीं। यदि अनार्य संस्कृति बढ़ती गयी और भौतिकवाद की जड़ें जम गयीं तो गार्हस्थ्य जीवन नष्ट हो जायगा। पुरुष नित्य नारियों को ढूँढ़ते फिरेंगे और नारियाँ पुरुषों को छला करेंगीं। वात्सल्य और दाम्पत्य सुख विलीन हो जायेंगे। असंस्कृत और असभ्य जातियों में भी दाम्पत्य सूत्र में बँधकर सुखमय जीवन विताने की भावना रहती है। संभव है कि कुछ लोग दोनों संस्कृतियों के समन्वय के पक्षपाती हों। इससे संस्कृतियों का संघर्ष होगा और अन्त में कुछ न रहेगा। मानव का अस्तित्व संस्कृति के अस्तित्व पर ही अवलम्बित है। अस्तित्व का समर्थन मानवता और विरोध दानवता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आर्य धर्म व्यापक धर्म है। वह अधिकारों का बटवारा नहीं करता। वह दोनों को मिलकर रहने का प्रोत्साहन देता है। धर्म जीवन-यापन करने का ढंग है। स्त्री और पुरुष इस जीवन रथ के दो चक्र हैं। यदि दोनों एक रूप हैं और समगति से चलते हैं, तो जीवन सुखमय हो जाता है। सुखमय जीवन स्वर्ग है। दुखमय जीवन नरक है। स्वामी अपने पुण्य बल से स्त्री की रक्षा करता है। स्त्री अपने पुण्य प्रताप से पति की रक्षा करती है। सावित्री ने अपने पातिव्रत के प्रभाव से मृत सत्यवान को दीर्घायु कर लिया। वृन्दा के पातिव्रत के प्रभाव से ही उसके पति जलन्धर को कोई मार न सकता था। अपने धर्म पर अटल रहने से ही वह विष्णु की प्रिया बन गयी। उसके शाप से विष्णु को शालिग्राम होना पड़ा। वृन्दा आज भी तुलसी के रूप में शालिग्राम के शिर की शोभा बढ़ाती है। सीते! तुम्हें तो राम प्राण के समान प्रिय हैं। तुम्हारे संबंध सनातन हैं। मैंने ये बातें केवल संसार के नर-नारियों के लिए कही हैं। मैं तुम्हें आशीष देती हूँ कि तुम अपने धर्म में अटल रहो। पतिव्रता नारियों में शिरमौर बनो। तुम्हारा नाम पति के साथ वैसे ही जुड़ जाय जैसा लक्ष्मी का विष्णु के साथ और पार्वती का शंकर के साथ जुड़ा है। तुम्हारा सौभाग्य अचल हो।

सीता ऋषि पत्नी का आशीर्वाद पाकर फूली न समायीं। उनके रोम-रोम पुलकित हो उठे। वह अनुसूया के चरणों में गिर पड़ीं और कहा कि आपकी वाणी सत्य हो। चलते समय अनुसूया ने सीता को दिव्य वस्त्रों से विभूषित किया। वे न कभी जीर्ण होते थे और न मैले। राम-लक्ष्मण-सीता अत्रि और अनुसूया को प्रणाम कर आगे चल दिये।

विन्ध्य और दण्डकारण्य

अत्रि मुनि से विदा लेकर राम-सीता और लक्ष्मण ने विन्ध्याटवी में प्रवेश किया। मार्ग विषम था। कहीं ऊँचे पहाड़ थे। कहीं गहरी घाटियाँ थीं। छोटी-बड़ी अनेक धाराएँ पार करते हुए नर्बदा के किनारे पहुँचे। नदी दूर से छोटी जान पड़ती थी। गहरी तो न थी, पर धार वेगवती थी। तल पाषाणी था। अनेक गोल-मटोल शिलाखण्ड पड़े थे। कुछ देर वे उसकी प्राकृतिक शोभा देखते रहे। फिर मार्जन और जल आचमन कर उतरने की सोचने लगे। लक्ष्मण ने इधर-उधर दृष्टि दौड़ायी। एक धीमर मछली मार रहा था। उसकी नाव लकड़ी के कुन्दे को कोलकर बनायी गयी थी। बैठने में डर लगता था। पर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
उतरने का और साधन न देख उसी का सहारा लिया। पार करने पर ककड़ी और खरबूजों के खेत दिखायी पड़े। वे सरस और मधुर थे। उनसे प्यास भी मिटी और भूख भी

विन्ध्यवन सघन वृक्षों से आकीर्ण था। साल, सागौन, तून, हल्दू आदि वृक्षों की प्रधानता थी। विन्ध्य और दण्डकारण्य में नदियों और सरोवरों के तट पर अनेक आश्रम थे। इनमें विभिन्न प्रकार के तपस्वी, साधक, सिद्ध एवं ज्ञानी महात्मा रहते थे। कोई पर्वत शिखरों पर कुटी बना कर रहते, कोई भूमि खोद कर कंदराओं में रहते, कोई वृक्षों पर जीवन व्यतीत करते और कोई खुले आकाश के नीचे किसी चबूतरे पर सो जाते थे। कोई गले तक पानी में डूबे रहते, कोई भीगे वस्त्र धारण करते और कोई पंचाग्नि तापते रहते थे। कोई फलाहार करते, कोई क्षीर पीते, कोई नीर, कोई सूर्य और चन्द्र की किरणें पीते और कोई केवल वायु-सेवन करते थे। कोई खड़े-खड़े सोते, कोई बैठे-बैठे सो जाते और कोई सोते ही न थे। कोई वाल्य स्वभाव वाले मनोविनोदी थे, कोई मितभाषी और कोई मौनव्रती थे। कोई ऊर्ध्व बाहु रखते, कोई एक पैर के वल खड़े रहते और कोई झूले में झूलते रहते थे। कर्म-काण्डी ऋषि यज्ञादि करते, योगी अष्टांग योग की साधना करते और भक्त अपने आराध्य देव की अर्चना में लगे रहते थे।

प्रत्येक आश्रम अपने ढंग का निराला था। उनमें वेद, वेदांग, स्मृति, शास्त्र एवं उपनिषदों का अध्ययन और अध्यापन होता था। आश्रम में एक कुलपति रहता। वह अपने विषय का अधिकारी होता। अनेक ब्रह्मचारी और शिष्य आचार्यों के संरक्षण में विद्याध्ययन, शास्त्रचिंतन और मनन करते थे। उनमें यज्ञ के पात्र, स्रुवा, कुश, मृगचर्म, जलघट और हवन सामग्री रहती थी। यज्ञ कुण्डों में अग्नि सदा प्रदीप्त रहती। उसके भयसे हिंस्र पशु उधर न जाते। आश्रम में अनेक पर्ण और तृण शालाएँ होतीं थीं। इनमें साधक रहते तथा अभ्यागत ठहरते थे। आश्रम के प्राङ्गण में फल-फूल वाले पौधे लगे थे। आसपास पीपल, पाकर, आम, जामुन, केला, अमरूद, सीताफल, बेर, विल्व, मधूक आदि के उपयोगी वृक्ष रहते। इनसे आवश्यक प्रचुर सामग्री मिल जाती थी। वृक्षों के नीचे पालतू पशु रहते। वन्य पशु भी रात में आकर विश्राम करते थे। गौओं की प्रचुरता थी। उन्हें कोई बाँधता न था। वे प्रातः चरने चली जातीं और सायंकाल अपने थान को लौट आती थीं। उनके बछड़े छुट्टा दूध पिया करते थे। आवश्यकता पड़ने पर उन्हें दुह लिया जाता था। पुष्करों और नदियों के तटों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पर शालि स्वयं उगते थे। धूम्र, यव तथा मुनि अन्न उगा लिया जाता था।

राम लक्ष्मण आश्रम में जाते, उनके अधिनायकों से मिलते, कुशल क्षेम पूछते, उनसे परिचय प्राप्त करते, एक दो दिन ठहरते, फिर आगे बढ़ जाते थे। राजकुमारों के दृढ़ांग शरीर, तापस वेश, नव वय तथा सीता की सुकुमारता देख आश्रमवासी विस्मित होते एवं उनकी प्रशंसा करते थे। किसी-किसी आश्रम में वे कई दिन तक विश्राम कर लेते थे। राम टेक पर्वत पर वे लगभग एक मास तक ठहरे। स्थान एकान्त था। आस-पास कई प्राकृतिक जलाशय थे। वहाँ की मिट्टी रक्त वर्ण की थी। लक्ष्मण ने पूछा कि अवध की मिट्टी तो ऐसी नहीं है। राम ने बताया कि इसमें लौह अंश अधिक है।

सीता का संदेह

एक दिन प्रातः राम-लक्ष्मण धनुष-वाण-तरकस बाँध कर चलने को प्रस्तुत हुए सीता ने उनकी ओर बड़े ध्यान से देखा और मुस्कुरायीं। उनकी स्मिति से राम ने उनकी उत्कण्ठा जान ली। उन्होंने कहा—'प्रिये! तुम क्या कहना चाहती हो ? निःसंकोच कहो। आज तुम्हारी आँखों में विराग क्यों झलक रहा है ?'

राम की रुचि देख सीता ने कहा—'आर्यपुत्र ! आपने अयोध्या का राज-भवन छोड़ा, राज्यसिंहासन त्याग दिया, राजसीवस्त्र और आभूषण उतार डाले, भोग-विलास को तिलांजलि दे दी। अब वल्कल धारण करते, मृगचर्म बिछाते, भूमि पर सोते, कंद-मूल-फल खाते, एवं सात्विक जीवन व्यतीत करते हैं। राज्य लक्ष्मी आपको मोह न सकी, अर्थ को अनर्थ का मूल समझ परित्याग कर दिया कामना के कोई लक्षण दिखायी नहीं पड़ते। न तो आप क्रोध करते हैं, न झूठ बोलते हैं और न परनारी पर दृष्टि डालते हैं। आपने काम पर विजय पा ली है। आप धर्मात्मा हैं। फिर यह बतलाइये कि आप धनुष-वाण क्यों धारण करते हैं। प्रजा की रक्षा एवं अपराधियों को दंड देने के लिए राजदण्ड की व्यवस्था की गयी है। जब आपने राज्य छोड़ दिया, मुनि व्रत धारण कर लिया तो फिर अहेरियों की वेश-भूषा कैसी ? मुझे आपका वीरवेश प्रिय है परन्तु हिंसक रूप अच्छा नहीं लगता। सहधर्मिणी के नाते आपके कृत्यों पर अंकुश रखने का मुझे अधिकार है। शस्त्र लेने से मनमें विकार आते तथा हिंसा के भाव जागृत होते हैं। आप हिंसक पशुओं का आखेट करते हैं। अनेक निरीह पशु मारे जाते हैं। क्या शिकार करना हिंसा नहीं है ? मेरे पिताजी तो कभी अस्त्र-शस्त्र ग्रहण ही न करते थे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सीता की तर्क-पूर्ण बातें सुन राम ने कहा—सुभगे ! तुमने अपने स्वभाव के अनुकूल ठीक ही कहा । नारी स्वभावतः भीरु होती है । उसका हृदय कोमल होता है । उसमें मातृ भावना विशेष रहती है । वही तुम्हें भी ऐसा सोचने को बाध्य करती है । तुम मेरे ही हित की नहीं वरन् प्राणिमात्र के हित की सोचती हो । तुम्हारा प्रश्न श्लाध्य है ।

महाराज जनक आत्मज्ञानी हैं । वह कर्मबन्धन से मुक्त हो चुके हैं । वह विदेह हैं । मैंने मुनिव्रत लिया है, पर क्षत्री धर्म का परित्याग नहीं किया । मैंने अयोध्या का राज्य भी नहीं छोड़ा । चौदह वर्ष की अवधि बीत जाने पर अयोध्या लौट चलने के लिये मैं भरत से प्रतिश्रुत हूँ । मुझे अवधवासियों की याद भी भूली नहीं है । मन में प्रच्छन्न वासना बनी है । मैंने न तो वान-प्रस्थ लिया है और न संन्यास । मुझे जीवन में अनेक कार्य करने हैं । सम्प्रति मैं जो कुछ कर रहा हूँ, वह तुम्हारे लिए । मुझे हर समय तुम्हारी चिंता लगी रहती है । विन्ध्य और दण्डकारण्य दुर्गम और भयावह वन खण्ड हैं । इनमें हिंस्र, पशु एवं निशाचर घूमा करते हैं । उनके विचार कुत्सित हैं । उनकी प्रवृत्ति का ठिकाना नहीं । कब कहाँ और कैसे आक्रमण कर बैठें ? यदि कोई असंभावित घटना हो गयी तो लोग मुझे क्या कहेंगे ? मनुष्य को दूरदर्शी होना चाहिए । उसे प्रत्येक संभाव्य के के लिए प्रस्तुत रहना चाहिए । आत्मरक्षा के लिए शस्त्रों का रखना आवश्यक है । क्षत्रिय का धर्म है कि मरते दम तक अस्त्र-शस्त्र हाथ से न छोड़ें । फिर शस्त्र रखने से ही तो शत्रु नहीं डरते । उनकी संचालन विधि एवं उनका अभ्यास भी आवश्यक है । हमारे गुरु ने हमें यही शिक्षा दी है । आखेट हमारा मनो-विनोद नहीं, वरन धर्म है । शिकारी जीवों में हम नर पशु ही का शिकार करते हैं । हम ऋतु और काल देख कर भी हरिणों का आखेट करते हैं । हरिण युग्म में न रहकर समूह में रहते हैं । हर समूह में दो-चार कृष्णसार होते हैं । उन्हीं से सृष्टि का क्रम चलता रहता है । सृष्टि का संतुलन बनाये रखना प्राणिमात्र का कर्त्तव्य है ।

विराध-वध

राम-सीता और लक्ष्मण वार्तालाप करते हुए भयानक वन में पहुँचे । वहाँ ऊँचे-ऊँचे वृक्ष आकाश से बातें कर रहे थे । बाँस के झुरमुटों से वायु सन-सन करती चल रही थी । कहीं हाथी चिंग्घाड़ रहे थे । कहीं सिंह गरज रहे थे । उनकी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गर्जन सुनकर हृदय दहल जाते थे। तालाबों में जंगली भैंसे क्रीड़ा कर रहे थे। गढ़ों में सुअर लोट रहे थे। पेड़ों पर लंगूरी बन्दर एक शाख से दूसरी शाख पर कूदते थे। उनकी चीख बीच-बीच में सुनायी पड़ जाती थी। आगे चलकर वन सघन हो गया। सन्नाटा बढ़ गया। केवल झिल्ली की झनकार सुनायी देने लगी। कहीं सर्प इधर से उधर सर्र से निकल जाते थे। सीता यह देखकर डरीं। वह राम से सट कर चलने लगीं। यह देख कर राम ने कहा—'प्रिये, डरने की बात नहीं। तुम मेरे पीछे-पीछे चलो। मैं धनुष चढ़ाकर आगे चलता हूँ। लक्ष्मण भी सावधानी से दायें-बायें देखते हुए चलेंगे।

थोड़ी दूर आगे चलने पर सामने वृक्ष के स्कन्ध पर बैठा हुआ भीमकाय राक्षस दिखायी पड़ा। उसका शरीर स्थूल, पेट बाहर को निकला हुआ, मुँह बड़ा और चौड़ा, दाँत नुकीले, नाक उठी हुई, आँखें बड़ी-बड़ी बाहर को निकली हुई और बदन पर बड़े-बड़े बाल थे। उसके हाथ में रुधिर से सना त्रिशूल था। राम-लक्ष्मण को देखते ही वह वृक्ष से कूदकर सामने खड़ा हो गया और गरज कर बोला—'तुम कौन हो ? कहाँ जा रहे हो ? तुम्हारे साथ यह सुन्दरी कौन है ?'

राम ने निर्भयता से कहा—'मैं दशरथ का पुत्र राम हूँ। पीछे छोटा भाई लक्ष्मण है। बीच में मेरी भार्या है। हम शरभंग मुनि के आश्रम जा रहे हैं। तुम कौन हो ? मेरा रास्ता क्यों रोक रहे हो ?'

मेरा नाम विराध है। मैं इस वन प्रदेश का स्वामी हूँ। यहाँ जो आ जाता है, मेरा भोज्य बन जाता है। फिर तुम तो जटाधारी मुनियों के भाई-बन्द जान पड़ते हो। हमारा उनका जन्मजात बैर है। तपस्वियों के साथ स्त्री का क्या काम ? इसे मुझे दे दो। यह हमारी सेवा करेगी। यदि न दोगे तो मैं त्रिशूल भोंक कर तुम्हारा रक्त पी लूँगा और मांस भूनकर खा जाऊँगा। ऐसा कहकर उसने विशाल भुजाओं से राम-लक्ष्मण को उठाकर अपने कन्धों पर बिठा लिया और सीता से पीछे-पीछे चलने का संकेत किया।

राम-लक्ष्मण अस्त्र-शस्त्र लिए ही रह गये। उनके प्रयोग का अवसर ही न मिला। सीता मारे डर के काँपने लगीं। उनका मुख सूख गया। बोल बन्द हो गया। वह मन ही मन कहने लगीं—यह विपत्ति कहाँ से आ गयी ? लोग ठीक कहते थे कि वन में राक्षस घूमा करते हैं। आज कैकेयी की अभिलाषा पूरी हो गयी। उनकी दशा उस कपिला गाय की तरह थी, जिसे बधिक लिए जा रहा हो। राम-लक्ष्मण को अपनी चिन्ता न थी, पर सीता के कारण दुखी थे। वह

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
किंचित न घबड़ाये। राम ने लक्ष्मण से संकेत द्वारा कहा कि इसका एक हाथ तुम तोड़ दो। दूसरा मैं तोड़े देता हूँ। दोनों ने वैसा ही किया। फिर उसे भूमि पर पटक दिया और छाती पर चढ़ बैठे। उन्होंने लातों और घूँसों से मार-मार कर अधमरा कर दिया। अशक्त होने पर उसका गला घोंट दिया। पर उसके प्राण न निकलते थे। वह जमीन पर पड़ा छटपटा रहा था। राम ने कहा कि आओ इसकी अन्त्येष्ठि कर दें। उन्होंने घसीट कर उसे एक गड्ढे में डाल दिया और ऊपर से कंकड़, पत्थर और मिट्टी भर दी।

मरते समय उसे पूर्व जन्म की स्मृति आ गयी। उसने कहा—'मैं पिछले जन्म में तुम्बरु नाम का गन्धर्व था। मेरी जन्मभूमि कश्मीर थी। मैं कुबेर की सेवा में रहता था। एक बार कुबेर की सभा में रम्भा का नृत्य हो रहा था। उसके हाव-भाव और कटाक्ष पर सभी दरबारी मुग्ध थे। मेरी उसपर अनुरक्ति बढ़ गयी, पर वह दूसरों की ओर देख रही थी। मुझे क्रोध आ गया। मैंने उसे अपनी ओर घसीट लिया। तबसे मेरी आसक्ति उस पर बढ़ती ही गयी। उसके प्रमाद में मैं स्वामी की सेवा में समय पर उपस्थित न हो पाता। एक दिन खिन्न होकर कुबेर ने शाप दे दिया 'तू राक्षस हो जा। तेरी कामना कभी तृप्त न हो'। मैंने दुखी होकर उनसे बड़ी प्रार्थना की। मुझे लज्जित देख यक्षराज ने कहा—'शाप तो तुम्हें लगेगा। पर तुम शक्तिशाली राक्षस होगे। तुम किसी शस्त्र से न मरोगे। जब राम के कमल चरणों का स्पर्श होगा तब तुम मुक्त हो जाओगे।' तब से मैं इस घोर वन में रहता हूँ। यहाँ जो कोई आ जाता है, उसे मार कर रुधिर पी लेता और मांस भून कर खा डालता हूँ। पर न रक्त से मेरी प्यास बुझती है और न मांस से क्षुधा। मेरी अतृप्त वासना है। आज मेरा सौभाग्य कि आपके दर्शन हो गये। आपके स्पर्श से मेरी चेतना गुदगुदा उठी। मैं कुबेर के शाप से मुक्त हो गया। हे पुरुष सिंह! मैं आपको मान गया। दानव में शारीरिक बल अवश्य होता है पर वह मानव के बुद्धि-बल के आगे व्यर्थ हो जाता है। मुझे विश्वास है कि आप राक्षसों को मार कर पृथ्वी का भार कम कर देंगे। आप दाहिने हाथ की पगडण्डी से चले जाइये। यहाँ से दो योजन पर सरिता के किनारे शरभंग का आश्रम है।

शरभंग की समाधि

विराध का वध कर राम शरभंग मुनि के आश्रम की ओर चले। सीता ने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कहा कि आज हमलोगों का नया जन्म हुआ। मुझे तो बचने की आशा ही न रही थी। जान पड़ता है कि पूर्व जन्म के कर्म अभी शेष हैं। मेरी शंका निर्मूल हो गयी। मैं समझ गयी कि साथ में शस्त्र रखना बड़ा आवश्यक है। यदि आज देवर न होते तो हमलोगों की न जाने क्या दशा होती ? राम ने कहा—'सुभगे, तुम ठीक कहती हो। अपना भाई दाहिना हाथ होता है। मार्ग में इसीलिए साथी का होना आवश्यक बताया गया है।' लक्ष्मण ने कहा कि आप जो न कहें वह थोड़ा है। वन में इस प्रकार की न जाने कितनी घटनायें होंगी। अभी तो उनका श्रीगणेश मात्र है। आगे भगवान ही मालिक हैं। इस प्रकार बातें करते हुए मुनि के आश्रम पहुँच गये।

शरभंग मुनि पद्मासन लगाये मृगचर्म पर बैठे शिष्यों को कुछ समझा रहे थे। उन्होंने दूर से ही राम-सीता और लक्ष्मण को आते देखा। वह उनसे दौड़ कर मिले। एक आसन पर बिठाया। यथोचित सत्कार किया, फिर पूछा कि आप किस मार्ग से आये ? यह मार्ग तो बड़ा भयंकर है। आपको कोई कष्ट तो नहीं हुआ ? राम ने विराध की सारी कथा कह सुनायी। उसे सुनकर सबको आश्चर्य हुआ। वे राम लक्ष्मण के बाहुबल की सराहना करने लगे।

मुनि ने कहा कि हम इन राक्षसों से तंग आ गये हैं। ये नित्य हमें पीड़ा देते रहते हैं। आपने विराध को मारकर इस आश्रम को निष्कण्टक बना दिया। हम आपकी इस कृपा के बड़े आभारी हैं। हमारी समझ में नहीं आता कि हम आपको क्या दे दें ? मैं तो अकिंचन हूँ। फिर भी आप जैसे अभ्यागतों को कुछ भेंट करना ही चाहिए। मेरी इच्छा है कि मैंने जीवन में जितने सुकर्म किये हों उनका फल आपको मिले।

मुनि की बात सुनकर राम ने कहा कि प्रत्येक व्यक्ति अपने शुभ और अशुभ कर्मों का स्वयं भागी होता है। आप अपने शुभ कर्मों का भोग करें। मैं स्वयं ऐसे कार्य करना चाहता हूँ जिससे मेरा कल्याण हो। फिर भी आपकी वस्तु अस्वीकार करते संकोच होता है। मेरी प्रार्थना है कि यदि आप शुभ कर्म देते हैं तो अशुभ भी दे डालें। राम के ऐसा कहने पर मुनि ने कहा कि यह तो उचित नहीं जान पड़ता। पर आपकी इच्छा सर्वोपरि है। केवल इतनी प्रार्थना है कि आप आश्रम में तब तक रहें जब तक मैं शरीर छोड़ कर आत्मलीन न हो जाऊँ।

मुनि की आज्ञा से शिष्यों ने वेदी के पास चिता लगा दी। उन्होंने यौगिक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

क्रियाओं से शरीर की शुद्धि कर ली। मन से समस्त वासनाओं को दूरकर पद्मासन लगा चिता पर बैठ गये। उन्होंने योगाग्नि द्वारा शरीर को भस्म कर दिया। आत्मस्थ हो जाने से उनकी आत्मा परमात्मा में मिल गयी। वह दिव्य रूप धारण कर उस लोक को चली गयी जहाँ से वह फिर लौटकर नहीं आती। जब मनुष्य के शुभ-अशुभ कर्म समाप्त हो जाते हैं तो उसे मुक्ति मिल जाती है।

रात में सबने वहीं विश्राम किया। लक्ष्सण ने पूछा कि शरभंग ने अग्नि कैसे प्रज्ज्वलित कर ली ? राम ने कहा—'भैया ! शरीर नाड़ियों का जाल है। इसमें छोटी-बड़ी लगभग बहत्तर सहस्त्र नाड़ियाँ हैं। इनमें इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना, गांधारी, हस्तिजिह्वा, पूषा, यशस्विनी, अलम्बुषा, कूहू और शंखिनी दस मुख्य हैं। शरीर में दस द्वार भी हैं। दो चक्षु, दों श्रवण, दो नासिका, मुख, शिश्न और गुदा नव द्वार तो प्रत्यक्ष दिखायी पड़ते हैं। दसवाँ द्वार ब्रह्मरंध्र है। मुख्य नाड़ियाँ इन्हीं द्वारों पर रहकर अपना काम करती हैं। अन्य सूक्ष्म और सूक्ष्मातिसूक्ष्म स्नायु शरीर में व्याप्त रहते हैं। इन्हीं से हम श्वास लेते हैं। श्वास फुसफुस में जाती है। वहीं रक्तवाहिनी नाड़ियाँ बहती हैं। वायु से रुधिर शुद्ध होकर धमनियों द्वारा सारे शरीर में फैल जाता है। अशुद्ध रक्त शिराओं द्वारा फिर लौट आता है। निःश्वास के साथ अशुद्धियाँ बाहर निकल जाती हैं। इसी प्रकार भोजन पचाने, मल-मूत्र निकालने, देखने, सुनने, सोचने, समझने के सूक्ष्म स्नायु होते हैं। योगियों का सम्बन्ध प्राणवायु से विशेष रहता है। बायीं नासिका में इड़ा, दायीं में पिंगला और सुषुम्ना दोनों के मध्य में रहती है। सुषुम्ना प्रधान नाड़ी है। यह मूलाधार चक्र में सुषुप्त पड़ी रहती है। यह मूलाधार चक्र से ब्रह्मरंध्र तक जाती है। योगी इसे ही जगाने का प्रयत्न करते हैं। वे प्राणवायु को अन्य द्वारों से निकलने नहीं देते। वायु के जब सब द्वार अवरुद्ध हो जाते हैं, तो कुण्डलिनी जागृत हो जाती है। इससे प्राणवायु ऊपर को चलती है। इसका अवरोध षटचक्रों पर होता है। संयमी पुरुषों के षटचक्र जल्दी खुल जाते हैं। अन्त में ब्रह्मरंध्र दशम द्वार खुल जाता है। मृत्यु के समय यदि सुषुम्ना द्वारा ब्रह्मरंध्र से प्राण निकलते हैं तो जीवात्मा परमात्मा में मिल जाता है। फिर वह कर्म बन्धन से मुक्त हो जाता है। उत्कट भक्ति एवं प्रेम से भी सुषुम्ना जागृत हो जाती है।

शरभंग मुनि सिद्ध योगी थे। उन्होंने यौगिक क्रियाओं द्वारा कुंडलिनी जागृत कर ली थी। उन्हें अष्ट सिद्धियाँ और नव निधियाँ प्राप्त थी। एक बार

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इन्द्र अपना दिव्य रथ ले उन्हें स्वर्ग चलने के लिए बुलाने आये। उन्होंने स्वर्ग जाना अस्वीकार कर दिया। सत्पुरुष स्वर्ग या अपवर्ग की कामना से सत्कार्य नहीं करते। वे शुभ कर्म इसलिए करते हैं कि उनका करना श्रेय है। उनकी साधनाओं का प्रयोजन चित्त शुद्धि और आत्म-ज्ञान होता है। मृत्यु उनकी वश-वर्तिनी रहती है। उन्होंने समाधि लेने के पूर्व कर्म-फल भी दे डाले। अतः उन्हें मुक्ति मिल गयी।

अस्थियों का ढेर और राम की प्रतिज्ञा

अगले दिन राम-लक्ष्मण सीता को लेकर अगस्त्य ऋषि के आश्रम की ओर चले। उनके साथ शरभंग के कई शिष्य भी हो लिए। उन्होंने बतलाया कि मार्ग में सुतीक्ष्ण मुनि का आश्रम पड़ता है। पहले अगस्त्यजी यहीं रहते थे। हमें पहले वहीं चलना चाहिए। कुछ दूर चलने पर उन्हें यत्र-तत्र अस्थि-पंजर बिखरे हुए दिखाई पड़े। कहीं खोपड़ियाँ पड़ी थीं; कहीं हाथ, पैर, पसली एवं जंघाओं की हड्डियाँ बिखरी थीं। नर-कंकालों को देखकर राम ने पूछा कि ये अस्थियाँ कैसी पड़ी हैं? शिष्यों ने बताया कि दण्डकारण्य राक्षसों से पादाक्रान्त है। उनके उपद्रव अवर्णनीय हैं। वे जिसे पाते हैं, उसे उठा ले जाते हैं और मारकर खा डालते हैं। ये अस्थियाँ ऋषियों और मुनियों की हैं। उनका बैर तपस्वियों से ही नहीं वरन आर्य जाति से है। वे गाँवों में घुस जाते हैं। लोगों को मार डालते हैं। स्त्रियों और बच्चों को उठा ले जाते हैं। पशुओं को हाँक ले जाते हैं। उनके दया नाममात्र को छू तक नहीं गयी। बालकों और बूढ़ों तक को नहीं छोड़ते। हिंसा उनकी वृत्ति है। मांस उनका भोजन और मदिरा उनका पेय है। मैथुन में उनकी रति है। नारी उन्हें बड़ी प्रिय है, वह चाहे जैसी हो। वे उसीके आमोद-प्रमोद में मस्त रहते हैं। उनकी बातें कहने में हमें लज्जा आती है। पर हम आपसे न कहें तो क्या करें? आप देश के राजा हैं। प्रजा-पालन आपका धर्म है। हम भी आपकी निरीह प्रजा हैं। यदि निशाचरों का यही हाल रहा तो आर्य संस्कृति मिट जायगी। धर्म नष्ट हो जायगा। संभव है हमारी बात आपको अतिरंजित लगती हो। यदि आप दण्डकारण्य में कुछ दिन रहें तो स्वयं अपनी आँखों से देख लें।

ऋषियों की कष्ट कथाएँ सुनकर राम की आँखों में आँसू आ गये। उनका मन व्यथित हो उठा। उनकी क्रोधाग्नि भड़क पड़ी। राक्षसों से बदला लेने की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
भावना जाग पड़ी। उनकी भुजाएँ फड़कने लगीं। उन्होंने हाथ उठाकर प्रतिज्ञा की कि यदि मैंने निशाचरों का नाश न किया तो मेरा नाम राम नहीं। आप लोग निश्चित रहें। राक्षसों के पाप का घड़ा भर गया है। वह स्वयं फूटने वाला है। अत्याचार जब एक सीमा तक पहुँच जाता है तो उसका अंत स्वाभाविक है। इस प्रकार उन्हें सान्त्वना देते हुए वे सुतीक्ष्ण मुनि के आश्रम की ओर चले।

सुतीक्ष्ण मुनि से भेंट

सुतीक्षण मुनि अमर कण्टक पर्वत के शिखर पर रहते थे। वह अगस्त्य मुनि के शिष्य थे। महर्षि जब दक्षिणा पथ को चलने लगे तो सुतीक्ष्ण ने पूछा कि फिर कब दर्शन देगे ? महर्षि ने कहा कि राम-लक्ष्मण दण्डकारण्य आयेंगे। उन्हें लेकर मेरे आश्रम में आना। सुतीक्ष्ण सगुण रूप के उपासक थे। वह परम सरल स्वभाव वाले साधु थे। गुरु के वचनों में उन्हें पूर्ण विश्वास था। उन्हें निश्चय था कि राम अवश्य आयेंगे। कहते हैं कि विश्वास ही फलदायक होता है। वह मन ही मन कहते कि प्रभु के दर्शन बड़े पुण्य से होते हैं। मैंने न तो कोई सत्कर्म किये है ; न जप-तप किया है और न योग साधन ही। फिर दर्शन कैसे मिलेंगे ? हाँ ! एक बात अवश्य है। गुरु के वचन कभी असत्य नहीं हो सकते। बस मुझे उसी का भरोसा है। वह नित्य उठते, भगवान का नाम लेते ; वन से फल-फूल लाते, अर्चन-पूजन करते और उन्हीं का ध्यान करते हुए सो जाते थे।

उस रात उन्होंने स्वप्न देखा कि राम अपने भाई लक्ष्मण और भार्या सीता के साथ आ रहे हैं। वह घबड़ा कर उठ बैठे। आश्रम को स्वच्छ किया। गोबर से लीपा। कंद-मूल-फल लाये। फिर उनके आने की राह देखने लगे। वह भावावेश में विभोर हो रहे थे। कभी खड़े हो जाते, कभी आगे बढ़ते, कभी नाचते, कभी गाते और कभी ध्यान लगा कर बैठ जाते थे। उनका शरीर पुलकित था। आँखों से अश्रु बह रहे थे। जिह्वा से 'राम-नाम' जप रहे थे।

राम ने दूर से ही मुनि की उन्मुनि मुद्रा देखी। वह बड़ी देर तक उन्हें देखते रहे। फिर मिलने के लिए आगे बढ़े। मुनि तो ध्यानस्थ थे। उन्हें पता ही न चला कि अतिथि देव सामने खड़े हैं। लक्ष्मण ने उन्हें जगाने का प्रयत्न किया। पर वह समाधि में परम आनन्द पा रहे थे। अकस्मात् उनके हृदय से राम-मूर्ति विलीन हो गयी। उसके स्थान में चतुर्भुजी मूर्ति प्रकट हो गयी। मुनि का ध्यान

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भंग हो गया। उन्होंने घबड़ा कर आँखें खोलीं। सामने त्रिमूर्ति के दर्शन किये। पहले तो उन्हें विश्वास ही न हुआ। उनके मुख से एक शब्द भी न निकला। वह एक टक राम को देखने लगे। यह वही नील वर्ण की कांति वाले राम थे जिन्हें वह अपने मानस में देख रहे थे। तेजस्वी शरीर, शिर पर जटायें, कटि में पीताम्बर, हाथ में धनुष बाण, कमल के समान नेत्र और मुख पर मंद मुस्कान, सब कुछ वैसा ही तो था। वह तुरन्त उनके चरणों में गिर पड़े। अरे! मैंने बड़ी भूल की। मैंने आपको पहचाना नहीं। मैंने स्वागत तक न किया। वह रोने लगे। राम उन्हें उठाना चाहते थे। वह उठते ही न थे। अंत में राम को कहना पड़ा कि आप क्या कर रहे हैं? अपने वेश की रक्षा कीजिए। आप संत हैं। भगवाँ वस्त्र पहने हैं। हम क्षत्रिय हैं, राजकुमार हैं। मर्यादा भंग करना आपको शोभा नहीं देता। दोनों एक दूसरे का बड़ी देर तक प्रगाढ़ आलिंगन किये रहे। उनका मिलन साक्षात भक्त और भगवान का मिलन था।

स्वस्थ होने पर मुनि ने अर्घ्य, पाद्य देकर सम्मानित किया। आसन पर बिठाया, प्रेम से कंद-मूल, फल खिलाये। फिर हाथ जोड़कर कहा :—

आपने मुझ पर बड़ी दया की। मुझे घर आकर दर्शन दिये। मेरे अहो भाग्य! मैं आपकी क्या सेवा करुँ? राम ने कहा कि हम तो अगस्त्य मुनि के आश्रम जा रहे थे। मार्ग में पता चला कि आप यहीं रहते हैं। मैं ऋषि का पता पूछने आया था। आपसे मिलकर मुझे परम सुख मिला। आप सरल स्वभाव के महापुरुष हैं। ऐसे संत बड़े भाग्य से मिलते हैं।

सुतीक्ष्ण ने बताया कि पहले गुरुवर यहीं रहते थे। अब वह दक्षिणापथ चले गये हैं। उनका आश्रम यहाँ से बीस योजन पर है। यदि आप कहें तो मैं भी आपके साथ चलूँ। मुझे गुरु के दर्शन किये हुए बहुत दिन हो गये। मेरे दोनों काम सिद्ध हो जायँगें।

अगस्त्य और विन्ध्याचल

राम-लक्ष्मण और सीता सुतीक्ष्ण के साथ बातें करते हुए चले। लक्ष्मण ने पूछा कि क्या अगस्त्य जी वहीं हैं, जिनका जन्म घट से हुआ था। सुतीक्ष्ण कहने लगे :—

हाँ! अगस्त्य जी वही हैं। पहले वह गंगा तट पर काशी में रहते थे। फिर मगध में रहे। ताटका और उसके पुत्रों से व्यथित हो उन्हें उत्तराखण्ड

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
छोड़ना पड़ा। संयोग वश विन्ध्य पर्वत उस समय ऊँचा उठ रहा था। उसके हृदय में सुमेरु के प्रति ईर्ष्याग्नि धधक रही थी। उसने सोचा कि सूर्य भगवान सुमेरु की परिक्रमा क्यों करते हैं ? कदाचित वह अधिक ऊँचा है। देवता भी उसी के आसपास रहते और उसके गुण गाते हैं। इधर हिमालय की कीर्ति बढ़ रही है। कैलास पर्वत पर शिवजी का निवास होने से वह गिरिराज कहलाता है। वह तो अभी कल का छोकड़ा है। मेरे देखते-देखते इतना ऊँचा हो गया है। मैं वृद्ध हूँ, पर गुणों में किसी से कम नहीं। जान पड़ता है कि लोग रूप और आकार देखते हैं, गुण नहीं। यदि यह बात है तो मैं भी ऊँचा हो जाऊँगा। ऐसा सोचकर वह बढ़ने लगा। उसके ऊँचे हो जाने से उत्तराखण्ड में सूर्य के दर्शन दुर्लभ हो गये। सुमेरु के निवासी देवता, हिमालय के निवासी यक्ष और गन्धर्व तथा सिन्धु और गंगा तट के रहने वाले ऋषियों और मुनियों को कष्ट होने लगे। शुभ कर्म न होने से देव-पूजा लुप्त हो चली। इससे सब घबड़ा उठे। उन्होंने अगस्त्य से प्रार्थना की कि आप इसका कुछ उपाय करें।

अगस्त्य ऋषि विन्ध्य की परीक्षा करने सुवर्ण नदी के किनारे चल कर अमर-कण्टक पहुँचे। वहाँ महानदी, नर्वदा, वेणुगंगा आदि नदियों के स्रोत मिले। उन्होंने पर्वत शिखरों, उपत्यकाओं, अधित्यकाओं और कन्दराओं को देखा। अनेक नदियों के स्रोतों का पता लगाया जो विन्ध्य पर्वत से निकलती हैं। उन्हें सरिताओं की रेती में सुवर्ण, ताम्र, रजत, लौह, मांगल, अभ्रक, एवं अन्य धातुओं के कण तथा हीरे, मोती, नीलम, पुखराज आदि रत्न मिले। उन्होंने वनखण्ड की वन-स्पतियों, औषधियों, एवं फल-फूलों का गम्भीर अध्ययन किया। इस प्रकार उन्होंने विन्ध्य प्रदेश की धरातली एवं भूगर्भिक सम्पत्ति का पता लगाया। उनके अदम्य उत्साह को देख विन्ध्य पर्वत झुक गया। उसने महर्षि के चरणों में गिर कर कहा—'आप किसलिए इतना कष्ट उठा रहे हैं ? आपने मेरा अन्तस एवं वाह्य देख डाला। आपसे मेरा कोई भेद गुप्त न रहा। आप मेरे गुरु हैं। बताइये मैं आपकी क्या सेवा करूँ ?'

महर्षि ने कहा कि मैं देखने आया था कि तुममें और सुमेरु में कौन श्रेष्ठ है ? हिमालय को क्यों महानता दी जाती है ? अब मुझे पता चल गया कि तीनों में क्या अन्तर है। मुख्य तत्व जगत के जीवन का विकास है। सृष्टि का नियम जीवन, विकास और विनाश हैं। करोड़ों वर्ष पूर्व पर्वतों का जन्म सागर के अतल में हुआ था। मिट्टी और बालू के कण समुद्र के गर्तों को भरते रहे। उनके साथ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वनस्पति और जीवजन्तुओं के अवशेष मिलते रहे। भूगर्भिक शक्तियों एवं धरातली गतियों के फल स्वरूप चट्टानें उठती और मुड़ती गयीं। आग्नेय प्रक्रियायें भी साथ-साथ चलती रहीं। उन्हीं के फल स्वरूप अनेक प्रकार की धातुएँ एवं खनिज निर्मित हुए।

एक ओर पर्वत बने दूसरी ओर वर्षा और नदियाँ उन्हें घिसने लगीं। सुमेरु तुमसे आयु में बड़ा है। हिमालय की यौवनावस्था है। उसके शृंग उन्नत हैं। वे हिम की श्वेत चादर से आच्छादित रहते हैं। सूर्य की किरणें पड़ने से उसका मुकुट सुवर्ण के समान चमकता है। इसलिए वह महान है। तुम्हारे शिखर किसी समय उससे भी अधिक ऊँचे थे। काल के प्रभाव से शिखर घिस गये हैं। एक दिन उसके भी घिस जायँगे। बाल, यौवन, प्रौढ़ और वृद्ध जीवन की चार अवस्थायें हैं। हिमालय अपने यौवन पर है, सुमेरु की वृद्धावस्था है, तुम्हारी प्रौढ़ावस्था है। तुम सुमेरु से किसी बात में कम नहीं। हिमालय केवल बाहर से महान दिखायी पड़ता है। तुम्हारा अन्तस महान है। इसमें अनेक रत्न भरे पड़े हैं। तुम किसी से कम नहीं।

ऋषि के मुख से प्रशंसा सुन विन्ध्याचल को अपने ऊपर ग्लानि हुई। वह संकुचित होकर अवनत हो गया। मुनि ने कहा कि विनम्रता ही व्यक्ति का भूषण है। ऐसा कह कर वह दक्षिणापथ चले गये। विन्ध्य का बढ़ना रुक गया। उत्तराखण्ड के सारे कार्य विधिवत चलने लगे।

पंचाप्सर और माण्डकीर्ण

अगस्त ने दक्षिण में आकर अनेक आश्रमों की स्थापना की। वह प्रत्येक आश्रम में बारह वर्ष तक रहते, फिर किसी सुयोग्य शिष्य को कार्य-भार सौंप आगे बढ़ जाते थे। इस प्रकार वार्तालाप करते हुए वे चले जा रहे थे कि मार्ग में एक सरोवर दिखायी पड़ा। उसके पास ही एक भग्न कुटी थी। धूप तेज हो रही थी और प्यास भी लग रही थी। लक्ष्मण ने कहा कि चलिये आश्रम में विश्राम करें। किन्तु यहाँ सन्नाटा क्यों है? यह परित्यक्त कैसा है?

सुतीक्ष्ण ने बताया कि यह माण्डकर्णि मुनि का आश्रम है। इसका नाम पंचाप्सर सरोवर है। गहरा होने से जल नीला और निर्मल है। किसी समय आश्रम मैं बड़ी चहल-पहल रहती थी। आज वह निर्जन पड़ा है। इधर कोई पथिक आने का साहस नहीं करता। लक्ष्मण ने पूछा कि ऐसी क्या बात है?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मुनि ने कहा—'माण्डकर्णि एक महान साधक थे। उन्होंने जीवन भर कठिन तपस्या की। जब सिद्धि का समय आया तो इन्द्र को शंका हुई कि कहीं वह हमारा इन्द्रासन न ले लें। उन्होंने मुनि की तपस्या भंग करने के लिए पाँच अप्सरायें भेजीं। ऋषि सरोवर में स्नान करने गये तो अप्सराओं को जल-क्रीड़ा करते देखा। मुनि को देखते ही वे बाहर निकल आयीं। फिर हाथ जोड़कर बोलीं "हम आपसे विद्या ग्रहण करने आई हैं। कृपया हमें दीक्षा दीजिए।"

महर्षि बड़ी देर तक विस्मित हो उनकी ओर देखते रहे। उनके झीने भीगे वस्त्रों से शरीर की कान्ति झलक रही थी।, कुन्तल पीठ पर लहरा रहे थे। मुखमण्डल से अनुराग झलक रहा था। अंग-प्रत्यंग से यौवन छलक रहा था। उनके कोमल अंग, पीन जंघाओं, उन्नत वक्षों और मधुर वाणी ने मुनि को संभ्रम में डाल दिया। वह उनकी प्रार्थना अस्वीकार न कर सके। धीरे-धीरे उन पर मुनि का अनुराग बढ़ता गया। उनकी काम-वासना जागृत हो उठी।

ऋषि वृद्ध हो गये थे। इन्द्रियाँ शिथिल हो चली थीं। उनसे अप्सराओं की तृप्ति कैसे होती ? मुनि ने मन में कहा कि ब्रह्मचर्य के बाद गृहस्थ धर्म का उल्लंघन कर मैं विरक्त हो गया। इसी लिए मेरा सन्यास असफल रहा। यदि भोग नहीं तो योग कैसा ? यदि ग्रहण नहीं तो त्याग कैसा ? मेरा जीवन व्यर्थ गया। वह अपूर्ण रह गया। यदि मेरे तप के बदले मुझे यौवन मिल जाता तो अभिलाषा पूरी हो जाती। उनके ऐसा सोचते ही सिद्धियाँ आ गयीं। उन्होंने कहा कि आपने जो सोचा, वह आपको मिल गया। मनोवांछित पाकर मुनि अप्सराओं के राग-रंग में ऐसे डूबे कि उन्हें लोक-परलोक का ध्यान ही न रहा। मुक्ति की इच्छा भुक्ति में बदल गयी। गिरना आसान है, पर चढ़ना कठिन है। बात बिगड़ते देर नहीं लगती, बनने में अवश्य देर लगती है। पर हर बात का अन्त होता है।

एक दिन मुनि को अपने कर्मों पर बड़ा पछतावा हुआ। पर अब पछताने से क्या होता था ? तीर निकल जाने पर लौट नहीं सकता। धारा का जल नीचे की ओर बहता है। उसे ऊपर चलाना कठिन है। मुनि अत्यन्त खिन्न हो ग्लानि वश सरोवर में डूब गये। अप्सराओं ने उनका अनुगमन किया। उनकी अतृप्त आत्माएँ आश्रम में भटका करती हैं। रात में सरोवर से जल-क्रीडा करने का शब्द सुनायी देता है। आश्रम में गाने-बजाने की ध्वनि आया करती है। कभी नूपुरों की रुनझुन सुनायी देती है और कभी पायलों की छम-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

छम । कभी गीतों का आलाप सुनायी पड़ता है और कभी मृदंग की गड़गड़ाहट गूँज उठती है । उन्हें सुनकर लोग चौंक पड़ते हैं । लक्ष्मण ने कहा कि इसी का नाम संसार है । संसार की चरम अनुरक्ति ही विरक्ति का कारण बन जाती हैं । साधकों को इसीलिए भगवान के चरणों में रति करने की सलाह दी जाती है । भगवान की कृपा से ही विषय वासनाएँ छूट सकती हैं। जो लोग यह समझते हैं कि मैं मन को वश में रख सकता हूँ, वे भूल करते हैं। मनुष्य स्वयं कुछ नहीं । वह तो परिस्थितियों का दास है ।

अगस्त्य मुनि से भेंट

आश्रम निकट आने पर सुतीक्षण मुनि बढ़ कर गये । गुरु को प्रणाम कर सूचना दी कि महाराज दशरथ कुमार राम अपनी भार्या सीता और छोटे भाई लक्ष्मण के साथ आपसे मिलने आये हैं । महर्षि यह संवाद पाकर बड़े प्रसन्न हुए । प्रेम की अधिकता से उनके नेत्रों में अश्रु उमड़ आये । राम-लक्ष्मण उनके चरणों में गिरे । ऋषि ने उठाकर उन्हें हृदय से लगाया । बैठने को आसन और खाने को फल-मूल दिये । महर्षि ने कहा—'आज मेरे अहो भाग्य की आप दीन की कुटी पर पधारे ।'

मुनि मण्डली में प्रभु आसन पर बैठे थे । सब लोग उनकी ओर देख रहे थे । वे उनके अद्भुत रूप और कार्यों की मन ही मन प्रशंसा कर रहे थे । राम ने कहा—'प्रभो ! आपसे कुछ छिपा नहीं हैं । आप जानते हैं कि मैं यहाँ क्यों आया हूँ ? कृपा कर के वह मन्त्र बतलाइये जिससे राक्षसों का विनाश हो और ऋषि-मुनियों का कष्ट दूर हो ।

अगस्त्य ने मुस्कुरा कर कहा—आप न जाने क्या समझ कर मुझ से पूछ रहे हैं ? आप सब कुछ कर सकते हैं। आप साक्षात् ब्रह्मा के अवतार हैं । आपकी माया ने ही गूलर-वृक्ष के समान सृष्टि की रचना की है । अनेक अंड, पिंड और ब्रह्माण्ड इस तरु के फल हैं। इन फलों का भक्षक कराल काल है । वह काल भी आपसे डरता है। आप निर्गुण, अखण्ड, अनन्त, सच्चिदानद हैं । लोग ध्यानस्थ हो आपके रूप को देखते हैं । मैं भी उस रूप को जानता और मानता हूँ, पर मुझे आपका सगुण रूप अत्यन्त प्रिय है । आपका राम रूप अद्भुत है। सीता आपकी माया हैं और लक्ष्मण शेष के अवतार हैं । आपने पृथ्वी का भार उतारने के लिए ही अवतार लिया है । फिर भी एक साधारण मानव की भाँति

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मुझ से पूछते हैं। अभी अपने वास्तविक रूप को छिपाये हैं। समय आने पर यथार्थ रूप के दर्शन होंगे।

राम ने कहा—'आप महर्षि हैं। दिव्य दृष्टा हैं। आप सारी सृष्टि, एवं उसके कर्ता के स्वरूप से भली भाँति परिचित हैं। आप में कर्म, उपासना और ज्ञान तीनों का समन्वय है। आपकी दृष्टि निर्मल है, बुद्धि सात्विकी है और मन ब्रह्मरत है। परोक्ष ज्ञान वाले केवल कथन करते हैं। उन्हें अनुभव नहीं होता। आप में श्रुतज्ञान भी है और अनुभूत ज्ञान भी। दोनों मिलकर व्यक्ति को पूर्ण बनाते हैं। मैं तो आप ऐसे महात्माओं से ज्ञान की महिमा सुना करता हूँ। मैं तो एक साधक हूँ। मेरी साधना चल रही है। आशा है, आपके आशीर्वाद से सिद्धि मिलेगी।

अगस्त्य ने कहा कि तुम ठीक कहते हो साधना ही मनुष्य को पूर्ण बनाती है। उसे तब तक गुप्त रखना चाहिए जब तक सिद्धि न मिल जाय। आजकल दक्षिणारण्य राक्षसों के अत्याचारों से पीड़ित है। राक्षसों में इस समय सर्व प्रधान रावण है। वह तो भाइयों सहित लंकापुरी में राज्य करता है। उसके भाई-बन्द द्रविड़ और केरल प्रान्तों में छाये हैं। रावण बड़ा प्रतापी है। यदि आप उसे विजय करलें तो अन्य लोग स्वयं दब जायँगें। किन्तु उस पर विजय पाना आसान नहीं। मैंने यहाँ रह कर जो देखा है, उसे तुम्हें स्पष्ट और विस्तार के साथ बतलाऊँगा। शत्रु के बल और वैभव को ठीक समझे बिना उस पर विजय पाना असम्भव है। राम ने कहा अवश्य बतलाइये तभी मैं कृतकार्य हो सकूँगा।

रावण और उसके वंश का परिचय

सतयुग में पुलस्त्य ऋषि गंगातट पर तृणबिंदु के आश्रम में तपस्या कर रहे थे। वहाँ सुर, नर, नाग कन्यायें क्रीड़ा करने आया करती थीं। इससे उनकी तपस्या में विघ्न पड़ता था। उन्होंने क्रुद्ध होकर शाप दिया कि यदि कोई कन्या इस आश्रम में आयेगी तो गर्भवती हो जायगी। तृणबिंदु की कन्या को इस बात का पता न था। वह सखियों को ढूँढ़ने भूल से आश्रम में चली गयी। अपने शरीर में ऋषि के शाप चिह्न देख उसे बड़ा विस्मय हुआ। तृणबिंदु को जब इस बात का पता चला तो वह पुलस्त्य के पास गये और कहा कि आप ही इस कन्या को ग्रहण करें। मुनि को उनकी बात माननी पड़ी। दिन पूरे होनेपर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उसके विश्रवा नाम का लड़का हुआ। वह अपने पिता के समान तेजस्वी था। उसका विवाह भरद्वाज की कन्या देववर्णिनी से हुआ। विश्रवा के उस पत्नी से कुबेर हुए। कुबेर ने बड़ी तपस्या की। उनके तप से ब्रह्मा बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने उसे लोकपाल होने का वरदान दिया। लोकों में घूमने के लिए पुष्पक विमान दिया। उस समय त्रिकूट पर्वत पर विश्वकर्मा द्वारा निर्मित लंकापुरी खाली पड़ी थी। विष्णु के डर से राक्षस उसे छोड़ कर भाग गये थे। पिता की आज्ञा से कुबेर वहीं रहने लगे।

एक दिन सुमाली नाम का दैत्य अपनी कन्या कैकसी के साथ उपयुक्त वर की खोज में आया। वह कुबेर के तेज और वैभव को देख कर बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने सोचा कि यदि मेरी बेटी का विवाह विश्रवा से हो तो उसके भी ऐसा ही तेजस्वी पुत्र हो। उसने अपनी कन्या से कहा—'बेटी! तुम अब सयानी हो चुकी हो। लोग तुम से विवाह का प्रस्ताव करने में हिचकते हैं कि कहीं तुम 'ना' न कर दो। यदि तुम विश्रवा से स्वयं कहो तो अच्छा है।'

पिता की आज्ञा से कैकसी विश्रवा के आश्रम में पहुँची। उस समय ऋषि संध्योपासन कर रहे थे। वह उनके सामने शिर नीचा करके खड़ी हो गयी। संध्या करने के उपरांत ऋषि ने पूछा—'भद्रे! तुम कौन हो? और क्या चाहती हो?' कैकसी ने कहा कि मैं पिता की आज्ञा से आपके पास आई हूँ। आप ऋषि हैं। क्या आपसे भी आने का कारण बतलाना पड़ेगा?' मुनि ने उसकी कामना जान ली और कहा—'सुभगे! यह घोर संध्या बेला है। इस समय रमण करने से तुम्हारे क्रूर-कर्म करने वाला पुत्र होगा।' कैकसी ने कहा कि मैं इन बातों पर विश्वास नहीं करती। आप ऐसे ऋषि का पुत्र राक्षस नहीं हो सकता। ऋषि ने कहा—'मेरी बात असत्य नहीं हो सकती। ज्येष्ठ पुत्र तो ऐसा ही होगा। अन्य पुत्र धर्मात्मा हो सकते हैं।' अस्तु ऋषि ने कैकसी को स्वीकार कर लिया।

कैकसी के गर्भ से दस मास बाद रावण हुआ। उसके जन्म के समय पृथ्वी हिलने लगी। आकाश से उल्काएँ गिरने लगीं। आँधियाँ चलने लगीं। उसका दूसरा पुत्र कुम्भकर्ण हुआ। तीसरी कन्या शूर्पणखा हुई। सबके पीछे धर्मात्मा विभीषण हुए। उसके जन्म के समय आकाश से हल्की वर्षा हुई। लताओं से पुष्प बरसे। देवताओं ने दुंदुभी बजायी। जब लड़के सयाने हुए तो माँ ने कहा कि तुम लोग भी कुबेर के समान तेजस्वी बनो। रावण ने कहा कि हम अमित वैभव और शक्ति प्राप्त करेंगे। हमारे सामने कुबेर क्या ठहरेंगे?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रावण की तपस्या और वरदान

रावण, कुम्भ कर्ण और विभीषण तीनों भाई तप करने चले गये। उन्होंने सौ वर्ष तक घोर तपस्या की। ब्रह्मा ने प्रसन्न हो कर वैभवशाली होने का वरदान दिया। रावण इसी भाँति फिर नौ सौवर्ष तपस्या करता और आहुति देता रहा। ब्रह्मा ने कहा 'पुत्र! मैं तुम्हारी तपस्या से बड़ा प्रसन्न हूँ। वरदान माँगो। तुम क्या चाहते हो? रावण ने हाथ जोड़ कर कहा—, भगवन! मैं अमर होना चाहता हूँ।' ब्रह्मा ने कहा कि सृष्टि का कोई प्राणी अमर नहीं हो सकता। केवल दीर्घायु हो सकते हो। क्या तुमने अपने मस्तक पर लिखे हुए मेरे अक्षरों को नहीं पढ़ा? मैंने तुम्हारी मृत्यु मानव के हाथ लिखी है। रावण ने हँस कर कहा कि नर-वानरों की मैं चिंता नहीं करता। वे तो हमारे भोज्य हैं। पर मैं देव, दानव, यक्ष, गन्धर्व आदि के हाथ से न मरूँ। ब्रह्मा ने कहा—'एवमस्तु'। पर मैं तुम्हें एक और वरदान देता हूँ। तुम इच्छानुसार कोई शरीर धारण कर सकते हो?

ब्रह्मा ने फिर विभीषण से पूछा—'पुत्र! तुम क्या चाहते हो? उसने कहा—'पितामह! मैं भगवान की निर्मल भक्ति चाहता हूँ। मेरी बुद्धि धर्म में स्थिर रहे। मैं किसी का अहित न करूँ।' ब्रह्मा ने कहा कि मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हूँ। धर्म में तुम्हारी श्रद्धा रहे। सुबुद्धि तुम्हारी संगिनी हो। तुम्हारा नाम अमर हो।

इसके उपरान्त ब्रह्मा ने कुम्भकर्ण से पूछा कि तुम क्या चाहते हो? कुंभकर्ण ने कहा—'मैं निश्चित होकर गहरी नींद सोना चाहता हूँ। मैं एक दिन जागूँ और छः महीने सोता रहूँ।' ब्रह्मा ने कहा—'ऐसा ही होगा।'

वरदान पाकर तीनों भाई लंकापुरी लौट आये। कुभंकर्ण ने भाई से कहा कि मुझे एक सुरक्षित भवन बनवा दो जिसमें मैं आराम से सो सकूँ। जब आवश्यकता पड़े तो मुझे जगा लेना। वरदान का समाचार पाकर रावण का नाना सुमाली अपनेपुत्रों और मंत्रियों के साथ आ पहुँचा। उसने रावण से कहा–'बेटा! लंकानगरी हमारी है। कुबेर ने उस पर अधिकार जमा लिया है। तुम उसे लेकर लंकेश्वर बनो।' रावण ने कहा—'कुबेर मेरा बड़ा भाई है। उससे विरोध करना ठीक नहीं।

रावण की बात सुनकर प्रहस्त मंत्री ने कहा—'कुबेर के सम्बन्ध में जो तुम्हारी धारणा है, वह वीरों के अयोग्य है। शूर लोग भाई-बन्धु का विचार नहीं करते। प्रजापति कश्यप की दिति और अदिति दो पत्नियाँ थीं। दिति के पुत्र दैत्य और अदिति के देवता हुए। पहले सारी पृथ्वी पर दैत्यों का अधिकार

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

था। विष्णु ने छीनकर वह देवताओं को दे दी। देवतागण हमारे साथ सदा अन्याय करते रहे हैं। समुद्र मंथन के समय भी उन्होंने हमें मदिरा पिला कर मदमस्त कर दिया और आप अमृत पी गये। विष्णु उनके सहायक हैं। कुबेर देवताओं का समर्थन करते हैं। यदि तुम लड़कर उनसे लंका छीन लो तो अनुचित न होगा।

रावण ने प्रहस्त के द्वारा कुबेर से कहला भेजा कि तुमने बहुत दिन राज किया है। अब लंकापुरी का राज्य मुझे दे दो। कुबेर ने कहा कि मैं पिताजी की आज्ञा से सिंहासन पर बैठा हूँ। यह पुरी जैसी मेरी है, वैसे ही तुम्हारी भी। तुम सुख के साथ रह सकते हो। रावण ने कहा कि मैं साझे का काम पसंद नहीं करता। मैं एक छत्र राज्य करना चाहता हूँ। अन्त में दोनों पिता के पास पहुँचे। रावण का हठ देखकर विश्रवा ने कुबेर से कहा—मैं नहीं चाहता कि भाइयों में परस्पर कलह हो। तुम कैलास पर्वत पर मंदाकिनी के किनारे अलका-पुरी बसा लो। लंकापुरी रावण को दे दो। कुबेर ने पिता की आज्ञा मान ली। राक्षसों ने रावण का राजतिलक कर दिया। सिंहासन पर बैठने के उपरान्त रावण अपनी बहिन शूर्पणखा का विवाह विद्युज्जिह्व के साथ पातालपुरी में कर दिया। इस प्रकार दिन पर दिन उसकी शक्ति बढ़ती गयी।

एक दिन वह कर्नाटक प्रदेश में घूम रहा था। संयोग वश मय दानव और उसकी सुन्दरी कन्या मंदोदरी से उसकी भेंट हो गयी। रावण ने पूछा कि आप कौन हैं और यह सुन्दरी कौन है ? मय ने कहा कि हेमा अप्सरा के गर्भ से उत्पन्न यह मेरी इकलौती बेटी मंदोदरी है। मैं इसके लिए वर की खोज में लंकापुरी जा रहा हूँ। रावण ने कहा—'अरे' ! तुम मुझे नहीं पहचानते। मैं ही विश्रवा का पुत्र रावण हूँ।'

मय को यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई। उसने अपनी कन्या का हाथ रावण के हाथ में दे दिया। फिर दोनों सुख पूर्वक लंकापुरी में रहने लगे। इसके पश्चात रावण ने भाई कुम्भकर्ण का विवाह वज्र ज्वाला नाम की राक्षसी कन्या से और विभीषण का गन्धर्वराज शैलूष की कन्या से करा दिया। मंदोदरी के गर्भ से मेघनाद का जन्म हुआ। बालकपन में जब वह रोता तो उसके रोने का शब्द मेघ की गर्जन के समान जान पड़ता। इसी कारण उसका नाम मेघनाद पड़ गया। उसने एक बार इन्द्र को जीत लिया। इसलिए उसे लोग इन्द्रजीत भी कहने लगे। मेघनाद की विजय से रावण बड़ा प्रसन्न हुआ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रावण शक्तिमान तो था ही, वरदान पाकर वह और अहंकारी हो गया। वह जिस किसी वीर योद्धा का नाम सुनता, उससे ललकार कर लड़ता। उसके सामने कोई ठहरता न था। जब उसने देवलोक पर चढ़ायी की तो देवता अपने घर छोड़ कर भाग गये। वह सुर, गन्धर्व, नाग लोकों पर चढ़ायी करके अनेक सुन्दरियों को हर लाया। वह उनके साथ लंकापुरी में भोग विलास करने लगा। उसने नगर लूटे, और गाँवों को उजाड़ा। जिसने विरोध किया उसका वध कर डाला।

कुबेर ने जब उसके अत्याचारों को सुना तो बहुत दुखी हुआ। उसने अपने दूत को रावण के पास भेजा। दूत ने रावण से कहा—'राजन ! तुमने जो अब तक किया सो किया। अब अधिक अन्याय न करो। तुम ऋषि की सन्तान हो। तुम्हें सच्चरित्र होना चाहिए। तुमने नंदन वन को उजाड़ दिया। मुनियों को मार खाया। ऋषियों के आश्रम छिन्न-भिन्न कर दिये। तुम उनके यज्ञों में विघ्न डालते हो। इससे चारों ओर शत्रु बढ़ रहे हैं। मैं तुम्हारा बड़ा भाई हूँ। समझाना मेरा धर्म है। मानना या न मानना तुम्हारा अधिकार है।'

रावण को भाई के उपदेश पर क्रोध आया। उसने दूत का शिर काट डाला। अलकापुरी पर चढ़ायी कर दी। यक्षों ने सामना किया। पर राक्षसों के आगे उनके पैर उखड़ गये। कुबेर घायल होकर युद्ध में गिरे। उनके साथी उठा कर उन्हें अलकापुरी ले गये। रावण ने विजय का शंख नाद किया। अलकापुरी लूट ली। वहाँ का सोना, चाँदी पुष्पक विमान में भर कर लंकापुरी ले आया।

रावण पुष्पक विमान में सेनापतियों और मंत्रियों के साथ आकाश मार्ग से जा रहा था। विमान कैलास पर्वत के ऊपर हो कर निकला। उसे देख नांदी त्रिशूल लेकर खड़े हो गये और कहा कि हमारे स्वामी शंकर अपनी अर्द्धांगिनी के साथ एकान्त में प्रेमालाप कर रहे हैं। तुम दूसरे मार्ग से जा सकते हो।

रावण ने कहा कि शंकर-वंकर को मैं नहीं मानता। यदि तुम मार्ग रोकोगे तो मैं पर्वत को ही ढहा दूँगा। ऐसा कह कर वह कैलास को ढकेलने लगा। पर्वत के हिलने से पार्वती डरीं। वह शिवजी से लिपट गयीं। शंकर ने पैर के अँगूठे से कैलास को दबाया तो रावण की भुजाएँ दब गयीं। उसने बड़ा प्रयत्न किया पर वे निकल न सकीं। उसके पसीना आ गया। यह देख प्रहस्त मंत्री ने कहा कि शिवजी की स्तुति करो और क्षमा माँगो। रावण ने रुद्राष्टक पढ़ा। बड़ी विनती की। शिवजी को दया आ गयी।। उन्होंने भार हटा लिया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रावण मुक्त हो गया। उस दिन से वह शिवजी का भक्त हो गया। वह नित्य शंकर पर बेलपत्र, धतूरे और अर्क के पुष्प चढ़ाता तथा गंगा जल से स्नान कराता था। एक दिन शिवजी उसकी सेवा से प्रसन्न हो गये। उन्होंने रावण को चन्द्रहास तलवार दी और कहा कि इसके द्वारा तुम सब पर विजय प्राप्त करोगे। जब तक यह तुम्हारे हाथ में रहेगी तब तक कोई तुम्हें मार न सकेगा। तब तो रावण शिवजी का अनन्य भक्त हो गया। वह नित्य उनकी पूजा करता। एक दिन उसने सोचा कि शिवजी पर अपना शिर ही क्यों न काट कर चढ़ा दूँ? शिवजी बड़े प्रसन्न हो गये और उसे नया सिर पाने का बरदान दिया। फिर तो वह दस बार अपने सिर काट कर चढ़ाता रहा। शंकर ने उसे दश शिर दे दिये। इससे उसका अहंकार और बढ़ गया।

रावण की दिग्विजय

रावण ने पुष्पक विमान में चढ़कर विभिन्न लोकों में आक्रमण किये। वह यम, वरुण, अग्नि और इन्द्र को जीत कर नागलोक पहुँचा। वहाँ भोगावती में वासुकी को जीत लिया। पातालपुरी में उसकी भेंट कालकेय राक्षस से हुई। उसी युद्ध में उसका बहनोई विद्युज्जिह्व मारा गया। जब उसे अपनी भूल का पता चला तो दुखी हुआ और बहन शूर्पणखा को घर ले आया।

पाताललोक में उसे एक नगरी मिली। वह पत्थरों की बनी थी। रावण ने मंत्री से कहा कि देखो इसमें कौन रहता है? उसे मेरे आने की सूचना दो। प्रहस्त ने नगरी के अन्दर प्रवेश किया। उसके द्वार पर एक दिव्य पुरुष हाथ में गदा लिए भवन की रक्षा कर रहा था। उसने बताया कि यह राजा बलि का निवास है। मंत्री से समाचार पाकर रावण बलि के पास पहुँचा। बलि ने उसका स्वागत किया और आने का कारण पूछा। रावण ने कहा—'मैंने सुना है कि किसी दिव्य पुरुप ने तुम्हें बन्दी बना रखा है। मैं तुम्हें छुड़ाने आया हूँ'।

राजा बलि ने हँस कर कहा—यह गदाधारी तेजस्वी पुरुष ही विष्णु है। इन्होंने अनेक दैत्यों को मारा है। यदि तुम मुझे छुड़ाना चाहते हो तो सामने पड़े गोल-गोल पत्थर को उठा लाओ। रावण ने उसे उठाने का प्रयत्न किया पर उठा न सका। अंत में हार मान कर लौट आया। बलि ने बताया कि यह मेरे बाबा हिरण्यकश्यप का कुंडल है। उन्हें विष्णु भगवान ने नरसिंह अवतार

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
लेकर मारा था। तुम इनको जीत नहीं सकते। रावण जब उनसे लड़ने चला तो विष्णु अन्तर्धान हो गये।

विजयोन्माद में रावण ने सूर्य और चन्द्रलोक पर भी चढ़ाई की। ब्रह्मा ने कहा कि सूर्य जगत का पालन करता है। इनके तेज से ही फल-फूल तथा अन्नादि होते हैं। चन्द्र अपनी किरणों से अमृत वर्षा कर औषधियों का पोषण करता है। यदि सूर्य-चन्द्र न रहेंगे तो सृष्टि न रहेगी। फिर तुम शासन किस पर करोगे ? रावण ने कहा कि तब इन्हें हमारी लंकापुरी की देख भाल करना चाहिए।

सहस्रार्जुन से मैत्री

रावण ने सुना कि कोंकण प्रदेश का राजा सहस्रबाहु बड़ा बली है। उसने सोचा कि मेरे तो बीस ही भुजाएँ हैं। उसके सहस्र भुजाएँ हैं। जरा उसके बल की भी थाह लेनी चाहिए। वह समुद्री मार्ग से कोंकण तट होता हुआ उसकी राजधानी माहिष्मती पहुँचा। नगरी नर्वदा के तट पर बसी थी। उसने अपने आने का समाचार कहला भेजा। उस समय सहस्रबाहु अपनी रानियों के साथ जल क्रीड़ा कर रहा था। रावण वहाँ पहुँचा। वह नदी की अधोधारा को रोक कर लेट गया। इससे नदी का प्रवाह रुक गया और जल ऊपर चढ़ने लगा। जल गहरा होने से रानियाँ डूबने लगीं। जब सहस्रार्जुन को पता चला तो वह जल के बाहर निकल आया और उसने रावण को ललकारा। दोनों में गदा युद्ध होने लगा। अर्जुन ने रावण की छाती में गदा मारी। वह विह्वल होकर भूमि पर गिर पड़ा। सहस्रार्जुन उसे बाँध कर अपने राजभवन ले गया। धीरे-धीरे यह समाचार पुलस्त्य के पास पहुँचा। वह सहस्रार्जुन के पास गये, रावण को छुड़वा दिया और दोनों में मैत्री करा दी।

बाली से मैत्री

माहिष्मती से लौटते हुए वह किष्किंधा से होकर निकला। उसने सुना कि यहाँ का राजा बड़ा बली है। वह नगरी के तोरण द्वार पर पहुँचा और बाली को युद्ध के लिए ललकारा। उस समय बाली पश्चिमी समुद्र तट पर सन्ध्या करने गया था। रावण को भला धीरज कहाँ ? वह वहीं जा पहुँचा। उसने देखा कि बाली सूर्य की उपस्थापना कर रहा है। रावण ने पीछे से उसे पकड़ने का विचार किया बाली ने कनखियों से उसे देख लिया। रावण ज्यों ही निकट पहुँचा त्यों ही

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उसको बाली ने उठा कर बगल में दबा लिया। सन्ध्या कर के वह पूर्वी समुद्र तट पर पहुँचा और सूर्य को जलांजलि दी। रावण ने इस बीच निकलने की बड़ी कोशिश की पर निकल न पाया। जब वह लौट कर अपनी पुरी आया तो रावण को छोड़ दिया और पूछा—'तुम कैसे आये ?' उसके बल को देख कर रावण विस्मित हो गया। उसने कहा—'तुम धन्य हो।' मेरे अहो भाग्य कि मुझे आज अपनी बराबरी का योद्धा मिला। मैं तो तुम्हारे दर्शन करने आया था। दोनों ने अग्नि को साक्षी देकर मित्रता कर ली।

रावण जब लौट कर आया और सिंहासन पर बैठा तो शूर्पणखा रोती-चिल्लाती हुई आई। उसने कहा कि—'तुम मेरे भाई नहीं, शत्रु हो तुमने मुझे विधवा कर डाला। मैं क्या करूँ ? रावण ने उसे समझाया। बहन ! जो होना था। सो हो गया। मुझ से अनजाने भूल हुई। मुझे क्षमा करो। तुम खर-दूषण के साथ जनस्थान में रहो। वह तुम्हारा मौसेरा भाई है। दण्डकारण्य में तुम्हारा राज्य रहेगा। वहाँ चौदह सहस्र सैनिक तुम्हारी आज्ञा मानेंगे। तब से वह जनस्थान में रहती है। खर-दूषण के अत्याचारों से जनता पीड़ित है। गाँव उजड़ गये है। खेती-बारी नष्ट हो चुकी है। यज्ञादि शुभ कर्म होते नहीं। ऋषि-मुनि सभी त्रस्त हैं। राक्षस रावण के बल पर भूले फिरते हैं। यदि तुम रावण को मार सको तो अन्य सभी राक्षस दब जायँगे। उपाय तुम सोचो। उसके मारने के अस्त्र-शस्त्र मैं देता हूँ। उन्होंने दिव्य धनुष, अमोध बाण और अक्षय्य तूणीर देकर कहा—ये मुझे इन्द्र ने दिये थे। जैसे देवासुर संग्राम में विष्णु ने दानवों को मार कर राजलक्ष्मी प्राप्त की थी। उसी तरह आप राक्षसों को मारकर विजय-लक्ष्मी प्राप्त करें।' आपसे मिल कर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। मुझे विश्वास है कि आप अपने मंतव्य में कृतकार्य होंगे ! अभी आप गोदावरी नदी के किनारे पंचवटी में निवास करें। कुछ दिन तक परिस्थिति का अध्ययन करें। फिर अवसर देख सद प्रयत्न से रावण को मारें। राम ने कहा—'आप की जैसी आज्ञा।'

पंचवटी में निवास

महर्षि अगस्त्य से विदा लेकर राम पंचवटी पहुँचे। सह्याद्रि पर्वत के शिखर पर पीपल' बरगद, आम, अशोक और आँवला पाँच वृक्षों का झुरमुट था। राम ने भाई से कहा कि महर्षि ने यहीं रहने के लिए कहा है। स्थान रमणीक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

है। गोदावरी का उद्गम पास ही है। यहाँ रहने का सुभीता है। वन्य पशुओं का भी भय नहीं। लक्ष्मण ने तृण, पत्तों और बाँसों से सुन्दर पूर्णशाला बनायी। गोदावरी से जल और पुष्प लाकर देवपूजन किया। शान्ति पाठ करके वे सुखपूर्वक रहने लगे।

राम ने देखा कि एक बूढ़ा गिद्ध नित्य आकर पीपल पर बैठता और कुटी को देखा करता है। उसकी आँखों से स्नेह झलकता है। उसकी दृष्टि में कोई दुर्भावना नहीं। एक दिन रामने पूछा कि तुम कौन हो ? तुम्हारा नाम क्या है ? तुम्हारे यहाँ बैठने का कारण क्या है ?

गिद्धने कहा कि ब्रह्मा ने जब सृष्टि का आरम्भ किया तो अनेक प्रजापति उत्पन्न किये। इन्हीं से अनेक योनियों की सृष्टि चली। अन्तिम प्रजापति कश्यप हुए। उन्होंने ने दक्ष प्रजापति की आठ कन्याओं से विवाह किया। इनमें दिति से दैत्य, अदिति से देवता, दनु से दानव, (अश्वग्रीव) मनु से मानव, अनला से फल-फूल वाले पौधे, क्रोध वशा से मृगादि पशु हुए। ताम्री के क्रौंची, भासी, श्येनी, धृतराष्ट्री और शुकी नाम की पाँच कन्यायें हुई। इनमें शुकी की पोती विनता हुई। विनता के दो पुत्र अरुण और गरुड़ हुए। अरुण के फिर दो पुत्र हुए। एक मैं-जटायु और दूसरा भाई सम्पाती। मेरा यही हमारा वंश परिचय हैं। हम और आप समगोत्री हैं। आप कश्यय की संतान हैं। हम भी कश्यप के वंशज है। सृष्टि का मूल एक है। आज की भिन्नता सृष्टि विकास का कोटि क्रम है। महाराज दशरथ मेरे मित्र हैं। तुम्हारी मुखाकृति बहुत कुछ उनसे मिलती है। मैं इसीलिए तुम्हारी ओर देखता और पहचानने का प्रयत्न करता हूँ।

राम ने कहा कि आप यथार्थ कहते है। हम महाराज के पुत्र राम और लक्ष्मण हैं। साथ में आप की बहू सीता हैं। हम पिता की आज्ञा से दण्डकारण्य आये हैं। बारह वर्ष तो बीत गये। दो वर्ष और काटने हैं। अच्छा हुआ आप मिल गये। पर यह तो बताइये कि आपकी और पिताजी की मैत्री कैसे हुई ?

जटायु ने कहा कि तुम्हारे जन्म के कई वर्ष पूर्व अवध में बारह वर्ष का घोर अकाल पड़ा। उससे प्रजा पीड़ित हुई। राजा का दुख देख महाराज ने गुरु से उसका कारण पूछा। उन्होंने बताया कि शनि की क्रूर दृष्टि अवध पर है। महाराज शनि से युद्ध करने रथ पर चढ़ कर गये। निकट पहुँचते ही शनि के तेज से उनकी आखें चौंधिया गयीं। राजा तो तेजस्वी थे। वह बच गये।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पर रथ जल गया। महाराज रथ से अधर में गिरे। संयोग वश मैं आहार की खोज में मँडरा रहा था। मैं उनके पास पहुँचा और अपनी पीठ पर चढ़ा कर उतार लाया। तभी से हमारी उनकी मैत्री है।

राम ने कहा कि मेरे अहो भाग्य जो आप के दर्शन हुए। इस अवस्था में आप ही हमारे परिवार के बड़े बूढ़े हैं। हमें दुख है कि महाराज का स्वर्गवास हो गया। जटायु ने कहा कि आप कोई चिंता न करें। यदि आप शिकार खेलने या कार्यवश कहीं जायँगे तो मैं कुटी की देख भाल करूँगा। मैं वृद्ध हो गया हूँ। कहीं जाने की इच्छा नहीं होती। यहीं बैठा देखता रहूँगा। यदि कोई वन्य पशु या क्रूर व्यक्ति आता दिखायी पड़ेगा तो मैं चीख कर शोर मचा दूँगा।

शूर्पणखा संवाद

राम के आने के पूर्व जनस्थान शून्य पड़ा था। राक्षसों ने गाँव उजाड़ दिये थे। वनों को जला दिया था। वृक्षों के न होने से वर्षा भी कम हो गयी। पेड़ पौधे सूख गये। खेत नष्ट हो गये। सूर्य की किरणों से दिनमें चट्टानें तपतीं और रात में ठण्डी हो जातीं। वे धीरे-धीरे टूट गयीं। चारों ओर धूल उड़ने लगी। राम के पंचवटी में रहने से वहाँ की काया ही पलट गयी। वर्षा होने लगी। पेड़ पौधे हरे हो गये। झरने झरने लगे। सरिताएँ बहने लगीं। वृक्ष फल देने लगे। पक्षी चहकने लगे। लोग अपने गाँवों को लौट आये। खेती होने लगी। सर्वत्र सुख-शान्ति बरसने लगी। यदि किसी को कोई कष्ट होता तो वह राम के पास जाता। राम उसकी यथाशक्ति सहायता करते। ऋषि-मुनि प्रायः वहाँ आते और मंत्रणा करते। उन्हें आशा बँधी कि कोई हमारा संरक्षक आ गया। धीरे-धीरे यह समाचार राक्षसों को मिला। उन्हें राम का आना काँटों की तरह खटकने लगा। खर ने उनकी गति-विधियों का पता लगाने के लिए बहन शूर्प-णखा को भेजा।

पंचवटी का रमणीक स्थान। रात्रि का शांत वातावरण। आकाश में तारे मोती से छिटके हैं। अश्विनी नक्षत्र ऊपर उठ चुका है। कृत्तिका क्षितिज पर है। चारों ओर दुग्ध धवल ज्योत्स्ना छिटक रही है। शीतल-मंद-सुगंध वायु चल रही है। लक्ष्मण के हृदय में पवन के स्पर्श से शुभ भावनाएँ उठ रही हैं। वे प्रकृति के वैभव और सौंदर्य को निरख रहे हैं। उन्हें रह-रहकर उर्मिला की स्मृति आ जाती है। वह उठकर पास की मल्लिका कुंज में पुष्प तोड़ने चले जाते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उसी समय शूर्पणखा पंचवटी में प्रवेश करती है। वह लक्ष्मण को फूल तोड़ते देखती और उनके सौंदर्य पर मुग्ध हो जाती है। वह उनकी ओर पुष्प फेंकती, हाव-भाव दिखलाती, तिर्यक दृष्टि से देखती एवं मुस्कुराती है। लक्ष्मण उसकी ओर ध्यान ही नहीं देते। वह लक्ष्मण के निकट जा कर उनकी ओर बड़े ध्यान से देखने लगती है। लक्ष्मण उस निर्जन में अकेली बाला को देख चकित हो जाते हैं। मारे संकोच के दृष्टि नीची कर लेते हैं। मन में कहते हैं—अरे यह छलना कहाँ से आ गयी। भगवन रक्षा करना। अंत में उन्मादिनी शूर्पणखा कहती है:—

हे वीर ! तुम क्या आश्चर्य से देख रहे हो ? क्या तुम्हारे हृदय में कोमल भावनाओं का कभी संस्पर्श नहीं हुआ ? तुम नारी की ओर से विरक्त क्यों हो ? तुम कैसे पुरुष हो ?बोलना तो दूर मेरी ओर देखा तक नहीं। अंत में हार कर मुझे ही बोलना पड़ा।

लक्ष्मण ने कहा कि परस्त्री से संभाषण करना मेरे धर्म के विरुद्ध है। शूर्पणखा ने कहा कि पर स्त्री कैसी ? मैं तो तुम्हें आत्म समर्पण करने आयी हूँ। मेरी कुछ इच्छायें हैं। क्या तुम उन्हें पूरी न करोगे ? लक्ष्मण ने कुछ उत्तर न दिया। शूर्पणखा ने फिर कहा-कुमार! तुम कितने भोले हो। मैं तुम्हारे भोले-पन पर ही मुग्ध हूँ। मैं देखती हूँ कि तुम अकेले हो। मैं भी अकेली हूँ। जीवन में एक से दो अच्छे होते हैं। यदि मुझे अपनी संगिनी बना लो तो जीवन सुख मय हो जाय।

शूर्पणखा की बातें सुनकर लक्ष्मण ने कहा—'सुन्दरी ? तुम भूल करती हो। तुम्हें मेरे साथ सुख न मिलेगा। तुम स्वतंत्र हो। मैं परतंत्र हूँ। स्वाधीनता वरदान है। परतंत्रता अभिशाप है। मैं सेवक हूँ। तुम्हें मेरे साथ दासी बन कर रहना पड़ेगा। यदि तुम सुख चाहती हो तो भाई के पास जाओ। वह राजा हैं। वह चाहें तो तुम्हें रख सकते हैं।

लक्ष्मण से निराश होकर शूर्पणखा राम के पास पहुँची। उनके नील वर्ण को देख कर वह आश्चर्य चकित हो गयी। एकान्त पाकर उसने राम से कहा—

'मैंने सारी दुनिया खोज डाली पर उपयुक्त वर न मिला। अब तक मैं कुमारी ही रही। पर तुम्हें देख कर मेरा मन चल गया है। तुम युवक हो। मैं युवती हूँ। तुम सुन्दर हो मैं भी सुन्दरी हूँ। तुम श्यामल हो। मैं भी श्यामली हूँ। हमारी तुम्हारी जोड़ी बड़ी ठीक है। बोलो क्या कहते हो ?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राम ने कहा—'प्रमदे! तुम ठीक कहती हो। पर मैं अविवाहित नहीं। मैंने जीवन संगिनी चुन ली है। सीता हमारे साथ हैं। तुम्हें मेरा सम्बन्ध पसन्द न होगा। कदाचित सीता को भी रुचिकर न लगेगा। दोनों में द्वन्द्व होगा। जीवन भार हो जायगा। जिस सुख की तुम कामना करती हो, वह न मिलेगा। अच्छा हो तुम किसी ऐसे व्यक्ति को ढूँढ़ो, जो अकेला हो।

शूर्पणखा जानती थी कि लक्ष्मण क्रोधी और कठोर स्वभाव वाले हैं। उनसे कुछ काम बनने की आशा न थी। अतः उसने राम से ही कहा—'आप सहृदय हैं। आपका स्वभाव कोमल है। आप शक्तिमान हैं। क्या मुझ पर कृपा न करेंगे? मैं तुम्हें प्यार करती हूँ। क्या तुम मुझे प्यार नहीं करते?

राम ने कहा—'प्रमदे' तुम्हें ऐसा कहते लज्जा नहीं आती। तुम कौन हो, जो एक बार कहने से नहीं समझती। मैं कह चुका कि मैं विवाहित हूँ। मैं एक पुरुष और एक नारी के सिद्धान्त में विश्वास करता हूँ। संसार में तुझे एक नहीं अनेक पुरुष मिल जावेंगे। हट मेरे पास से दूर हो।

राम की फटकार सुन कर उसके दिल में ठेस लगी। उसने कहा कि 'तुम मुझे निरी अबला न समझना। मैं जगत्प्रसिद्ध रावण की बहन हूँ। खर-दूषण मेरे मौसेरे भाई हैं। वे पास ही रहते हैं। सारा दक्षिणापथ हमारा है। हमारे भाइयों का वैभव और पराक्रम अतुल है। यदि तुम मेरी बात मान लोगे तो उनकी सारी शक्ति तुम्हारे पक्ष में होगी। उत्तराखण्ड और दक्षिणापथ का भेद भाव मिट जायगा। सांस्कृतिक सम्बन्ध होने से राजनीतिक मतभेद दूर हो जायँगे। तुम जम्बू द्वीप के सम्राट बनोगे। मैं उसकी साम्राज्ञी। कहो, तुम्हें यह सम्बन्ध पंसद है या नहीं? यदि तुम मेरी बात न मानोगे तो मैं तुमसे आत्मा-पमान का बदला लूँगी। प्रणय हैं वंचिता नारियाँ आग से भी अधिक भयंकर होती है। नारियों को थोड़ा न समझो। नारियाँ राजनीति का संचालन करती हैं। वे राज्यों को उलट-पुलट डालती हैं। वे लोगों का भाग्य बना सकती हैं और बिगाड़ सकतीं हैं। मैं तिल का ताड़ बना दूँगी। तुम्हें मुसीबत में डाल दूँगी। जीवन भर रोते रहोगे।'

राम ने कहा कि मुझे इसकी चिंता नहीं। तुझे जिन भाइयों पर घमंड है, उन्हें बुला ला। मैं भी देख लूँ कि वे कितते पराक्रमी हैं।

राम की चुनौती सुनकर शूर्पणखा ने अपना आवरण उतार फेंका। उसकी जिह्वा कुत्ते की तरह लपलपाने लगी। नथुने फूले उठे। वह नागिन सी फुस-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कारने लगी। उसकी आँखे लाल हो गयीं। वह तीव्र नाखूनों वाले पंजे निकाल कर सीता की ओर झपटी। उसने समझा कि जब तक सीता रहेंगी, मेरी मनोवांछा पूरी न होगी। सीता उसे देखते ही भयभीत हो गयीं। राम ने उन्हें पीछे कर लिया। सीता की चीख सुन कर लक्ष्मण भी आ पहुँचे। उन्होंने राम की ओर देखा। राम के संकेत पर लक्ष्मण ने उसके नाक-कान काट लिए। उसका रूप विकराल हो गया। वह रोती-चिल्लाती भागी—'अरे ! मार डाला। इज्जत लूट ली। कोई बचाओ।'

शूर्पणखा मुँह ढक कर खर के सामने खड़ी हो गयी और धाड़ मार कर रोने लगी। उसका शरीर लोहू-लुहान हो रहा था। खर ने उसका हाल देखा तो आश्चर्य में पड़ गया। उसने पूछा कि क्या बात है ? तुम्हारी यह दशा किसने की ? अरे ! बोलती क्यों नहीं ? मैं उसे बिना मारे न छोड़ूँगा। वह देवता, गंधर्व, मानव चाहे जो हो। उसकी यह मजाल कि मेरी बहन को छेड़े और नाक-कान काट ले।

शूर्पणखा ने सिसकी भरते हुए कहा कि तुम्हें पता नहीं। राज्य में कुचक्र चल रहा है। तुम मदमस्त पड़े सो रहे हो। शत्रु सिर पर आ गया है। मैं जो आज घूमती हुई जनस्थान की सीमा पर पहुँची तो देखा कि पंचवटी में एक आश्रम बन गया है। दो राजकुमार हैं। एक राजकुमारी है। उन्होंने अपना बड़ा आतंक जमा रखा है। वहाँ डाढ़ी वाले बाबा आते-जाते रहते हैं। उनकी गतिविधियों से मुझे शंका हुई। मैंने जो उनसे पूछ-ताछ की तो उन्होंने मेरी हँसी उड़ायी। मैंने मना किया तो मेरा अपमान किया। मैंने जब तुम्हारा नाम बताया तो मेरे नाक-कान काट लिए और कहा कि बुला ला जिनके बल पर भूली फिरती है। हाय ! मैं कहीं की न रही। तुम्हें धिक्कार है ! तुम्हारे बल को धिक्कार है ! यदि तुमने बदला न लिया तो मैं आग में जल कर मर जाऊँगी। जब तक तुम दोनों को बाँधकर मेरे चरणों में न डालोगे तब तक मैं अन्न-जल ग्रहण न करूँगी। उस सुँदरी का मैं खून पी लूँगी तभी मेरी जलन शांत होगी। यदि तुम्हें पसंद आ जाय तो उससे विवाह कर लेना।

खर-दूषण तथा राक्षसों का बध

शूर्पणखा का खून देख कर खर का खून खौल उठा। उसने सेनापति त्रिशिरा को बुलाया और कहा कि सेना तैयार करो। दोनों भाइयों को पकड़ लो।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

देखो, भागने न पावें। सीता को छीन लाओ। उनकी यह मजाल कि मेरी बहन का अपमान करें।

सारी सेना पल भर में तैयार हो गयी। खर-दूषण और त्रिशिरा रथ पर बैठ कर चले। उनके चलते ही प्रचण्ड आँधी आ गयी। आकाश लाल हो गया। रक्त की बूँदें गिरने लगीं। सूर्य बादलों से घिर गया। अँधेरा छा गया। दिन में तारे दिखाई पड़ने लगे। भूकम्प होने लगा। सियार बोलने लगे। उधर खर की बाईं भुजा फड़की। उसने अपशकुनों पर ध्यान ही न दिया। उसने अपने साथियों से कहा—'वीरो! शकुन-अपशकुन का विचार पण्डित करते हैं। मैं इस पोंगापंथी में विश्वास नही करता। आज तक सर्वत्र युद्ध में मैंने विजय पायी है। आज भी जीतकर लौटूँगा। दूषण! तुम सैन्य का संचालन करो। वह तुरंत झंडा लेकर आगे बढ़ा। उसके पीछे चौदह सहस्र राक्षस। उसके पीछे त्रिशिरा और सब के पीछे खर चला। खर ने बहन से कहा कि तुम दूषण को मार्ग दिखाओ कि वे लोग कहाँ रहते हैं।

राम ने देखा कि वायु मण्डल स्तब्ध है। पशु-पक्षी आश्रम की ओर भागे चले आ रहे हैं। आकाश में आँधी आने के लक्षण दिखायी पड़ते हैं। उनकी दाहिनी भुजा फड़की। उन्होंने अनुमान कर लिया कि राक्षस आ रहे हैं। वह लक्ष्मण से बोले—'भैया! राक्षस दल काली घटा के समान उमड़ रहा है। भयानक युद्ध होगा। सीता को लेकर पर्वत की कंदरा में चले जाओ। मैं इन सब को देखता हूँ। देखो, देर न करो।

राम ने शिर पर जटायें कस ली। धनुष-वाण सम्हाला। कमर में कटिबन्ध कसा। धनुष पर प्रत्यञ्चा चढ़ायी। उसे उँगली से झंकृत किया। इतने में राक्षस आ पहुँचे। शूर्पणखा ने कहा कि यही हैं वह राम जिन्होंने मेरा अपमान किया है।

दूषण ने बढ़कर राम से पूछा कि तुमने मेरी बहन की नाक क्यों काटी? या तो शस्त्र समर्पण करो या लड़ने को तैयार हो। राम ने कहा कि आत्म समर्पण तो मैंने सीखा ही नहीं। एक बार हम काल से भी युद्ध करने को प्रस्तुत हैं। प्रबल शत्रु से हम डरने वाले नहीं, लड़ने वाले हैं। यह सुनते ही दूषण ने अपने साथियों को हाथ से इशारा किया कि हमला करो। संकेत मिलते ही वे एक साथ राम पर अस्त्र-शस्त्र फेंकने लगे। राम ने बड़े लाघव से उन्हें काट डाला। इतने में और राक्षस आ गये। उन्होंने चारों ओर से राम को घेर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लिया। राम मण्डलाकार धनुष से तीर बरसाने लगे। इससे उनके हाथ, पैर, सिर, कान आदि कटने लगे। पर वे मरते न थे। वे उठकर फिर खड़े हो जाते और युद्ध करने लगते। चारों ओर 'मारो, काटो, पकड़ो, जाने न दो' आदि शब्द सुनायी पड़ते थे। शत्रु इतने निकट आ गये कि राम को धनुष खींचना और बाण चलाना कठिन हो गया। उन्हें गुरु विश्वामित्र के दिव्यास्त्रों का स्मरण हो आया। उनकी स्मृति आते ही चारों ओर अंधकार छा गया। दिव्यास्त्र विद्युत की भाँति चमकने लगे। राक्षसोंके सिरों पर बाणोंकी वर्षा होने लगी। वे उन्मत्त हो उठे। उन्हें कुछ दिखायी न पड़ा। वे एक-एक करके धराशायी हो गये। सारी सेना क्षण भर में नष्ट हो गयी। सैनिकों को गिरते देख दूषण आगे आया। वह राम पर बाण वर्षा करने लगा। राम ने उसके बाणों को काट दिया। फिर वह बाण मारा जो अत्रि ने दिया था। उसके लगते ही वह धराशायी हो गया।

दूषण को गिरते देख त्रिशिरा आगे आया। वह तीन शिखर वाले पहाड़ के समान था। वह गरज कर बोला—'दूषण को मार कर तुमने मेरी क्रोधाग्नि भड़का दी है। मैं तुम्हारा काल हूँ। तुम मुझ से बच नहीं सकते। ऐसा कह उसने लगातार तीन बाण फेंके। राम ने उन्हें काट दिया और अपने पाँच बाण चलाये। चार से रथ के चारों घोड़े मार डाले और पाँचवें से सारथी को घायल कर दिया। त्रिशिरा रथ से कूद पड़ा। वह सम्हलने भी न पाया था कि राम ने एक साथ सात बाण छोड़ें। तीन से उसके तीनों शिर उड़ गये। दो से उसकी भुजाएँ कट गयीं। एक छाती में लगा और एक नाभि में। अन्तिम शर लगते ही वह धराशायी हो गया।

दूषण और त्रिशिरा के मारे जाने पर खर को निश्चय हो गया कि मेरी भी मृत्यु आ गयी। उसने राम को ललकारा—'सावधान! यदि मैंने भाइयों का बदला न लिया तो मेरा नाम खर नहीं। मैं आज तुम्हारे रुधिर का पान करूँगा और बहन शूर्पणखा सीता का रक्त पियेगी। तभी हमारी प्यास बुझेगी।

राम ने कहा कि तेरा अन्तकाल समीप है। इसीलिए तू अनर्गल बातें कर रहा है। तू ने दण्डकारण्य के ऋषि-मुनियों की हत्या की है। उसका पाप तेरे शिर पर सवार है। अपने पापों के फल भोगने के लिए तैयार हो जा। मैं तुझे जीवित न छोड़ूँगा। पर तू पहले अस्त्र चला ले जिससे तेरी इच्छा अपूर्ण न रहे।

राम की बातें सुन खर तिलमिला उठा। उसने राम पर गदा फेंक कर मारी, पर राम बच गये वह भूमि में धँस गयी। फिर वह साल वृक्ष की डाल

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लेकर मारने दौड़ा। राम ने उसे बाणों से काट डाला। पर उसकी डालों से राम के शरीर पर जहाँ-तहाँ खरौंचे लग गये। उनके खून छलछला आया। क्रुद्ध हो उन्होंने अगस्त्य का दिया हुआ बाण उसकी छाती में मारा। उसके लगते ही वह भैंसे की तरह गिरा और छटपटाने लगा। सन्ध्या होते-होते युद्ध समाप्त हो गया। केवल अकम्पन और शूर्पणखा बचे। वे दोनों भाग कर रावण के पास पहुँचे।

राक्षसों को मार कर राम कंदरा के द्वार पर पहुँचे और लक्ष्मण को पुकारा। लक्ष्मण सीता को लेकर बाहर आये। उन्होंने राम के क्षतों को जल से धोया और मरहम पट्टी की। लक्ष्मण ने देखा कि मैदान में लोथों के ढेर के ढेर लगे हैं। सिर, भुजा, पैर आदि कटे पड़े हैं। उन पर चील कौवे मँडरा रहे हैं। गिद्ध आँखें निकाल रहे हैं। सियार आँतें खींच रहे हैं। कुत्ते लाशें घसीट रहे हैं। रुधिर की नालियाँ बह रही है। जहाँ तक दृष्टि जाती है, मुर्दे ही मुर्दे दिखायी पड़ते हैं। कोई उनका उठाने वाला नहीं। यह देख उन्होंने राम से कहा कि आज एक बहुत बड़ी अल्प टल गयी। आप धन्य हैं, जो अकेले इतने राक्षसों को मार डाला।

राम ने कहा कि मैंने तो खर, दूषण और त्रिशिरा को ही मारा। सैनिकों से मेरा क्या बैर ? वे तो आपस में ही कट मरे। राक्षस पापी थे। उनके पाप का घड़ा भर चुका था। उन्होंने ऋषियों और मुनियों पर बड़े अत्याचार किये थे। वे उन्हें मार सकते थे। पर उन्होंने मुझे बाण दिये। मैंने उनका प्रयोग किया। बाणों के लगते ही वे फूल की तरह भूमि पर गिर पड़े। जिस प्रकार ओले पृथ्वी पर गिर कर गल जाते हैं, ओलों के गिरने से ब्राह्मणी कीड़ा स्वतः मर जाता है, वायु के धक्के से खोखले वृक्ष उखड़ जाते हैं, उसी प्रकार आयु पूर्ण होने पर सभी विनाश को प्राप्त होते हैं। ब्रह्मा ने इन तीनों की मृत्यु मेरे हाथों लिखी थी। ऋषियों के दिये हुए बाण सहायक हो गये। उन्हें मुझे यश देना था। इस कारण विजय मिल गयी।

शूर्पणखा और रावण

शूर्पणखा ने देखा कि उसके भाई-बन्धु मारे गये। वह अकम्पन को लेकर लंका पहुँची। उस समय रावण सो रहा था। वह सीधे रंग-भवन पहुँची। उसने भाई को जगाया और छाती पीट कर रोने लगी। 'हाय ! मेरा सर्वस्व

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
लुट गया। मैं कहीं की न रही। 'हाय! मैं अब क्या करूँ! मेरी कोई रक्षा करने वाला नहीं। मैं जहर खाकर मर जाऊँगी।'

रावण ने पूछा कि रोती ही रहोगी या कुछ बात भी बताओगी। तुम्हारी दुर्दशा कैसी ? तुम अकेले कैसे आई ? भाई खर कहाँ हैं ? दूषण और त्रिशिरा कहाँ हैं ? मेरी शंका बढ़ती जा रही है। शीघ्र बताओ कि मामला क्या है ? तुम्हारी बोली कैसी हो गयी है ?

शूर्पणखा ने कहा—'तुम मदिरा पीते और सोते रहते हो। तुम्हें पता नहीं कि राज्य में क्या हो रहा है ? विपत्ति के बादल मँडरा रहे हैं। जनस्थान का शासन तुम्हारे हाथ से निकल चुका। खर-दूषण-त्रिशिरा आदि मारे गये। सेना का संहार हो गया। अब तुम मुझसे पूछते हो कि क्या हुआ ? तुम्हारे पास भूमि है, कोष है, सिंहासन है, सेनापति हैं, मंत्री हैं, पर गुप्तचर नही। गुप्त-चर ही राजा की आँखें होती हैं। वह उन्हीं के द्वारा राज्य का हाल जानता है। मंत्री भी अयोग्य और चाटुकार हैं। वे मुँह देखी बातें करते हैं। कोई सत्य बात कहने वाला नहीं। कोई कहे भी क्या ? तुम अपने अहंकार में चूर रहते हो। किसी की सुनते ही नहीं। तुमने सबसे तो वैर कर रखा है। चारों ओर शत्रु बढ़ रहे हैं। ऋषियों-मुनियों के षड़यंत्र चल रहे हैं। गुप्त मंत्रणाएँ हो रही हैं। मैं तुम्हें सावधान करने आई हूँ। शूर्पणखा की नीति भरी बातें सुनकर रावण ने कहा—'मुझे उपदेश देने आई हो या कोई काम की बात कहोगी ?मुझे तुमसे राजनीति नहीं सीखनी है। वह मैंने लड़कपन में शुक्राचार्य से पढ़ ली थी। पर आज तुम्हारी धर्मबुद्धि कैसे जाग्रत हो गयी ? अरे! तुम्हारे नाक-कान किसने काट लिए ? तुम्हारा अपमान मेरा अपमान है। जल्दी बताओ वह कौन है ? मैं उसे बिना मारे न छोड़ूँगा।

शूर्पणखा ने कहा कि जनस्थान की सीमा पर एक आश्रम है। वहीं ऋषि, मुनि और साधक जमा होते हैं। वहीं आपके विरुद्ध षड़यंत्र चलते हैं। आश्रम क्या अड्डा है। वहीं दो राजकुमार रहते हैं। दोनों देखने में सुन्दर हैं। उनमें परस्पर प्रीति है। वे एक प्राण और दो शरीर हैं। तुम्हारे भाइयों में इतनी प्रीति नहीं। उनमें सम्मति है, सुमति है और सुबुद्धि है। जब कि तुम्हारे यहाँ उसका अभाव है। तुम्हारे भाई सब मनमानी करते हैं। एक बात और है। उनके साथ एक नव वयस्का सुन्दरी है। वह रूप में रंभा, गुणों में लक्ष्मी और सौंदर्य में रति है। संसार की कोई नारी उसके रूप और गुणों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

को नहीं पहुँच सकती। यदि वह तुम्हें मिल जाय तो अहोभाग्य! वह रनिवास की शोभा होगी। मंदोदरी तो उसके पैर का धोवन भी नहीं है। मैं यही सोच-कर उसके पास गयी थी। पर उन दोनों ने मुझे पास नही फटकने दिया। मैं चाहती थी कि उसे फुसला कर तुम्हारे पास ले आती। मैंने तुम्हारी प्रशंसा भी की। उन्होंने मेरी हँसी उड़ायी। मैंने जब तुम्हारा नाम बताया तो मेरा अपमान किया। जब मैं प्राण बचा कर भागी तो मेरे नाक-कान काट लिए। मैंने भाई खर से शिकायत की। वे तीनों सेना सहित पूछने गये तो उन्होंने सब को मार डाला। इसमें मैं किंचित झूठ नहीं बोलती। यदि विश्वास न हो तो अकम्पन से पूछ लो।

अकम्पन ने हाथ जोड़ कर कहा कि बहन ठीक कहती हैं। वे देखने में तो नवयुवक हैं, पर कुशल योद्धा हैं। उनके बाणों के लगते ही हमारे योद्धा ऐसे गिरे जैसे तिल-प्रसून गिरते हैं। युद्ध में वह साक्षात काल जान पड़ते हैं। मैंने ऐसे युद्ध वीर देखे ही नहीं। जान पड़ता है कि वह पृथ्वी पर राक्षसों का वंश मिटा देंगे। मैं तो किसी तरह भाग कर बच पाया, नहीं तो मुझे भी मार डालते। हाँ एक बात है। वह धर्म युद्ध करते हैं। वह निःशस्त्र पर हाथ नहीं उठाते। पहले आक्रमण नहीं करते और निर्बलों पर बल नहीं दिखाते।

रावण ने कहा—'बस बहुत हो चुका। शत्रु की प्रशंसा न कर। मैं उन्हें अच्छी तरह जानता हूँ। वे अयोध्या के राजा दशरथ के पुत्र हैं। मेरी उनकी भेंट जनकपुरी में हुई थी। उस समय दोनों किशोर थे। मसें भींग रही थीं। सीता तो बिल्कुल छोकरी थी, अबोध बालिका थी। उसका स्वयंवर था। पता नहीं लोग इतनी छोटी उम्र में क्यों ब्याह कर देते हैं? मैं इसीलिए वहाँ से चला आया। अब वह सयानी हो गयी होगी। सुनते हैं कि राम को पिता ने विमाता के कहने से घर से निकाल दिया। वे दण्डकारण्य में लुके-छिपे घूमते हैं। अभी रावण से पाला नहीं पड़ा। नहीं तो छठी का दूध याद आ जाता। रावण किसी पर दया करना नहीं जानता। उन्होंने भले घर बाँयन दिया है। मैंने जो उन्हें आठ-आठ आँसूँ न रुलाये तो मेरा नाम रावण नहीं। बहन! तुम विश्राम करो। मैं इसका बदला लूँगा।

सीताहरण और मारीच

उस रात रावण को नींद न आयी। वह सोचता रहा कि खर-दूषण का

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मारने वाला कौन पैदा हो गया ? वे तो मेरे समान ही बलवान थे । त्रिशिरा के सैन्य सञ्चालन पर मुझे गर्व था । उन्हें कोई साधारण व्यक्ति नहीं मार सकता । फिर चौदह सहस्र सैनिकों को एक व्यक्ति कैसे मार सकता है ? यह असम्भव है । जान पड़ता है कि सीता के लिए वे आपस में ही कट मरे । बहन कहती है कि वह रूप में रम्भा और सौंदर्य में रति है । यदि यह सत्य है तो मैं उसे रानी बनाऊँगा । वह रंग महल की शोभा होगी । उसने निश्चय कर लिया कि बदला लेने का यही एक उपाय है । उन्होंने बहन की नाक काटी है । मैं उनकी पत्नी का अपहरण करूँगा । यदि मैं स्वयं वहाँ जाता हूँ तो वे उसे छिपा देंगे । वे मेरे बल और पराक्रम को जानते हैं । वे मेरे सामने नहीं आ सकते । अतः मैं भेष बदल कर जाऊँगा । उसे चुपके से देखूँगा । फिर हरण करूँगा । पर यह काम अकेले नहीं हो सकता । मैं मामा मारीच से सहायता लूँगा । वह इस प्रकार सोच ही रहा था कि तीसरा पहर बीत गया । आसमान में तारे डूबने लगे । रावण अस्तबल में गया । स्वयं रथ में घोड़े जोते और अकेला ही मारीच के पास जा पहुँचा । उसे सोते से जगाया और कहा—

रावण –'मामा, पालागन ।' उसके स्वर में कोमलता थी । मारीच ने समझा कि भयंकर बात है ? दुष्ट का मधुर बचन सन्देह से परे नहीं हो सकता ।

मारीच–'सुखी रहो बेटा । आज सुबह-सुबह और फिर अकेले कैसे ?'

रावण –मैं तुमसे कुछ सहायता लेने आया हूँ ।

मारीच–रावण और मेरी सहायता ! क्या मुझ से परिहास करते हो ?

रावण –नहीं, सचमुच मेरा काम तुम्हारे बिना न चलेगा ।

मारीच–क्या काम है ? मुझे तुम्हारी बातों से भय लगता है ।

रावण –मैं राम की भार्या सीता को भगा लाना चाहता हूँ ।

मारीच–लंकाधिपति रावण के मुख से यह बात शोभा नहीं देती । यह अधर्म है ।

रावण–मुझे धर्म-अधर्म, पाप-पुण्य का पाठ न पढ़ाओ । मैं राजधर्म को अच्छी तरह जानता हूँ । मेरे साथ जो जैसा करता है, मैं उसके साथ उसका ड्योढ़ा करूँगा । मुझे प्रतिशोध लेना है ।

मारीच–प्रतिशोध कैसा ?

रावण–राम ने मेरी बहन शूर्पणखा के नाक-कान काट लिए । महाबली खर-दूषण ने जब कारण पूछा तो उन्हें मार डाला । मैंने जब से यह सुना

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

है, मेरा मन मथ रहा है। प्रतिहिंसा की अग्नि धधक रही है। वह तब तक शान्त न होगी, जब तक प्रतिशोध न ले लूँ।

मारीच–तो तुम मुझसे क्या चाहते हो ?

रावण–मैं जानता हूँ कि तुम क्या कर सकते हो ? माया मृग बन कर तुम पंचवटी के समीप चलो। राम शिकारी हैं। उन्हें आखेट का व्यसन है। वह जब तुम्हें देखेंगे तो अवश्य मारने दौड़ेंगे। तुम छलावा देकर उन्हें दूर घने वन में ले जाना। लक्ष्मण उनका साथ देंगे। सीता अकेली रह जायँगी। मैं अवसर पाकर उनका हरण करूँगा।

मारीच–उनके सामने जाते मुझे भय लगता है। विश्वामित्र के यज्ञ में उन्होंने मेरी माँ और भाई को मार डाला। जब मैं पहुँचा तो वह बाण मारा कि मुझे भागते ही बना। तब से मैं यहीं रहता हूँ। उधर जाने का नाम ही नहीं लेता। राम तो प्रियदर्शन है। पर जब क्रोध करते हैं तो साक्षात काल बन जाते हैं। रावण ! अभी समय है। सचेत हो जाओ। खर-दूषण के संहार से तुम्हें समझ जाना चाहिए कि वे मनुष्य नहीं देवता हैं। मैं तुम्हारे भले की कहता हूँ। सीतापहरण की मंत्रणा किसने दी ? वह तुम्हारा शत्रु है।

रावण–मुझे मंत्रणा कौन देगा ? क्या मैं मूर्ख हूँ ? मैंने सोच समझ कर यह निर्णय लिया है। मैं अपमान का बदला लूँगा। शत्रु से बदला न लेना हार मानना है। रावण ने हार कभी मानी नहीं। यदि तुम मेरा कहना न मानोगे तो मैं चन्द्रहास से तुम्हारा शिर उड़ा दूँगा।

मारीच ने देखा कि बचने का कोई उपाय नहीं। इस दुष्ट के हाथों मरने से तो राम के हाथों मरना अच्छा है। उसने रावण से कहा—अच्छा ! यदि तुम्हारा यही हठ है, तो चलो। मैं वही करूँगा जैसा तुमने कहा है।

मारीच-बध

मारीच बड़ा मायावी था। उसके हाथ-पैर दुबले-पतले हरिण के समान थे। उसने चीतल मृग की खाल ओढ़ ली। जब वह कुलाँचें भरता तो असली हरिण जान पड़ता था। वह पंचवटी के पास जाकर धीरे-धीरे घास टूँगने लगा। सीता ने उसे देखा तो राम से कहा—'आर्यपुत्र ! मृग कितना सुन्दर है ! इसका रंग सुनहला है। उस पर रूपहली बुंदियाँ ऐसी लगती हैं, मानो स्वर्ण-पत्र पर

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हीरे जड़े हों। इसके सींग कैसे सुन्दर हैं ! इस तरह के मृग तो मैंने कभी देखे ही नहीं। कृपा करके इसे मार लाइये।

राम ने कहा कि जो वस्तु बाहर से सुन्दर लगती है, वह भीतर से उतनी सुन्दर नहीं होती। आकर्षण प्रायः धोखे का कारण बनता है। हरिण प्रायः झुंड में रहते हैं। यह अकेला हैं। मुझे संदेह होता है। आज आखेट करने की मेरी उ[illegible]छा नहीं।

कि

सीता ने कहा कि आप कैसी विरक्तों की सी बातें करते हैं ? इसके चर्म की मैं कंचुकी बनाऊँगी। सींग कुटी की दीवाल पर लगाऊँगी। आज मृग का मांस खाने की बड़ी इच्छा है। यदि आप इसे मार लावें तो बहुत अच्छा हो।

राम ने कहा कि कुटी में न जाने कितने मृगचर्म रखे हैं। बहुत लोभ अच्छा नहीं होता। आज मेरा मन उदास है। बाईं आँख रह-रह कर फड़क रही है। यह अपशकुन किसी असंभावित घटना की सूचना दे रहा है।

सीता ने कहा कि मैं आपसे कभी कुछ नहीं कहती। आप जो कहते हैं, मैं वही करती हूँ। आज आपको मेरी बात माननी पड़ेगी। नहीं तो मैं रूठ जाऊँगी।

सीता और राम की बातचीत सुन हिरण चौकन्ना हो गया। मानों उसने बात सुन ली हो। उसने एक छलाँग मारी और नाले के उस पार हो गया। सीता ने कहा—'स्वामिन ! जल्दी कीजिए। नहीं तो वह भाग जायगा।' मैं धनुष बाण लिए आती हूँ। राम ने कहा कि वह भाग कर कहाँ जायगा ? सीता ने कहा कि वह किसी झाड़ी या कंदरा में घुस जायगा। फिर आप क्या करेंगे। आप सत्य प्रतिज्ञ हैं। देखिये खाली हाथ न लौटियेगा। उसे जीवित या मृत कैसा ही लाना है।

अंत में नारी हठ के सामने राम को झुकना पड़ा। उन्होंने कमर कसी और धनुष बाण ले उसके पीछे दौड़े। मारीच ने देखा कि राम मेरे पीछे आ रहे हैं। उसने गति तीव्र कर दी और चौकड़ी भरता हुआ वन में घुस गया। राम भी उसके पीछे दौड़ते चले गये। उसे बहुत ढूँढ़ा पर दिखायी न दिया। वह लौटने ही वाले थे कि वह फिर झलक गया। राम ने कदम बढ़ाये। इस प्रकार लुकता-छिपता वह राम को दूर घने वन में ले गया। इतने में राम को क्रोध आया। उन्होंने भागते हुए ही हरिण पर वाण चला दिया। तीर उसके मर्मस्थल में लगा। उसने 'लक्ष्मण-लक्ष्मण' बड़ी जोर से पुकारा। फिर दूर जाकर गिर पड़ा। राम के पास पहुँचते ही उसने अपना आवरण उतार फेंका और कहा—'आपने मुझे मारा जरूर, पर मैंने अपना काम कर लिया। मेरे अहोभाग्य कि

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दुरात्मा के हाथ से न मर कर पुण्यात्मा के हाथों मरा।' अन्तिम समय आपके दर्शन हुए। मेरी सुगति हो गयी। आप धन्य हैं!

राम समझ गये कि धोखा हुआ। वह उल्टे पाँव पंचवटी की ओर भागे। उनके मन में अनेक शंकायें उठने लगीं। उन्होंने जल्दी-जल्दी पैर बढ़ाये। पर पैर उठते ही न थे। मानो पंचवटी दूर होती जा रही हो।

सीता हरण और जटायु

सीता ने 'हा लक्ष्मण! हा लक्ष्मण! की पुकार सुनी। उन्होंने लक्ष्मण से कहा कि आर्य पुत्र संकट में हैं। जल्दी दौड़ो और उन्हें बचाओ। लक्ष्मण ने कहा कि यह भैया की पुकार नहीं है। मैं उनके स्वर को पहचानता हूँ। जिनकी भ्रकुटि टेढ़ी करने से सृष्टि में प्रलय हो सकता है, उन पर भला कहीं विपत्ति आ सकती है? सीता ने कहा कि स्वामी आपत्ति में है। तुम बातें बना रहे हो। तुम चाहते हो कि आर्य पुत्र मर जायँ और मैं तुम्हारी होकर रहूँ। पर ये इरादे दूर रखना।

सीता के कटु वचन सुनकर लक्ष्मण तिलमिला उठे। वह 'हरि इच्छा बलीय सी' कह कर उठ खड़े हुए। उन्होंने धनुष की कोटि से कुटी के बाहर एक कुण्डलाकार रेखा खींची और कहा—'माता! मैं तो जाता हूँ पर तुम इसके बाहर न निकलना।' फिर वह उधर को अनमने होकर चल दिये, जिधर से पुकार आई थी।

राम ने लक्ष्मण को आते देखा तो व्यग्र हो उठे। उन्होंने पूछा—'भाई! सीता को अकेले कैसे छोड़ आये? लक्ष्मण ने कहा कि क्या आपने मुझे पुकारा था? राम ने कहा—'धोखा! महा धोखा!! हम दोनों उस मायावी मारीच के शिकार हो गये। जल्दी चलो। मेरा हृदय धक-धक कर रहा है। जान पड़ता हैं कि सीता पंचवटी में नहीं हैं।' उन्हें व्यग्र देख लक्ष्मण ने कहा—'मैंने भाभी को बहुत समझाया कि यह भैया का स्वर नहीं है। पर वह मानी नहीं। मुझे विवश होकर आना पड़ा।'

रावण ने पंचवटी के बाहर विमान खड़ा कर दिया। भिक्षुक का वेष बनाकर पंचवटी के आस-पास मँडराता रहा। उधर लक्ष्मण गये। इधर वह चोर की तरह आश्रम में घुसा। सीता तो कुटी के द्वार पर खड़ी ही थीं। उसने कहा—'माता भिक्षा चाहिए।' सीता कुटी के भीतर गयीं। कुछ अन्न एक अंजलि में ले आयीं और उसकी झोली में डालने लगीं। रावण ने झोली का

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
मुँह फैलाने के बजाय सीता को पकड़ने के लिए भुजाएँ बढ़ायी। सहसा उसे बिजली का सा धक्का लगा। वह पीछे हट गया। उसने देखा कि गोल रेखा खिंची है। उससे अग्नि की लपटें सी उठ रही हैं। रावण ने कहा—'यह अभिमंत्रित रेखा कैसी ? मैं बँधी भिक्षा नहीं लेता। यदि भीख देना हो तो बाहर आओ, नहीं तो मैं जाता हूँ।

सीता ने विचार किया कि यदि भीख देनी है, तो भीतर क्या और बाहर क्या ? यदि नहीं देती तो अतिथि विमुख लौटता है। यदि बाहर निकलती हूँ तो देवर के वचनों का उल्लंघन होता है। यदि नहीं निकलती तो गृहस्थ धर्म जाता है। अतः वह बाहर आकर भिक्षा देने लगीं। रावण ने तुरन्त सीता को उठा लिया। एक हाथ कंधे के नीचे लगाया दूसरा पैरों के नीचे। सीता बहुत फटफटायीं पर रावण से उनका वश न चला। उन्होंने पूछा कि तुम कौन ? उसने कहा कि शूर्पणखा का भाई रावण। मैं उसीके पास तुम्हें ले चलूँगा। सीता उसका नाम सुनते ही भय से चीख पड़ीं। उनकी पुकार जटायु ने सुनी। उसने पेड़ पर से ही हाँक लगायी—'बेटी घबड़ाना नहीं, मैं आया।'

जटायु ने रावण को ललकारा—'अरे दुष्ट ! खड़ा हो। तू राम की वधू को ले जाने वाला कौन ? मैं तेरी आँखें निकाल लूँगा। रावण कुछ बोला ही नहीं। वरन सीता को विमान में बिठाकर भागने लगा। जटायु ने चोंचों और पंजों से उसे क्षत-विक्षत कर दिया। इस पर रावण को क्रोध आया। उसने चन्द्रहास तलवार से उसके पंख काट डाले। जटायु अवश हो कर गिर पड़ा। रावण विमान द्वारा आकाश मार्ग से उड़ गया।

सीता रोती, चिल्लाती और विलाप करती हुई जा रही थीं। वह मछली की तरह तड़प रही थीं। उनकी दशा उस कपिला गाय के समान थी, जिसे बधिक लिये जा रहा हो। उन्होंने अपने आपको छुड़ाने का बड़ा प्रयत्न किया पर उनकी एक न चली। उनका रुदन यथार्थ में अरण्य रुदन था। मार्ग में सीता ने विमान से एक पर्वत शिखर पर बैठे हुए कुछ बन्दरों को देखा। उन्होंने राम का नाम लेकर दो एक आभूषण साड़ी के खूँट में बाँध कर फेंक दिये। सीता के विलाप को सुनकर पशु-पक्षी चीख पड़े। वृक्ष हिल उठे। पर्वत पिघल गये। सरिताएँ रोने लगीं और वायु हहर-हहर चलने लगी। सीता मन ही मन पछता रही थीं कि मैंने बड़ा बुरा किया। मैंने देवर को दुर्वचन कहे। उसीका फल भुगतना पड़ा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अशोक बाटिका में सीता

रावण विमान द्वारा सीता को लंकापुरी ले गया। पहले अपना रंग-भवन दिखाया। फिर राज्य कोष, आभूषण, रत्न भाण्डार, हयशाला, गज शाला आदि दिखलाये। अपने बल-वैभव का बखान किया। फिर कहा—'उन जटाधारी राम को भूल जाओ। उनकी आशा छोड़ दो। उनके साथ तुम्हें वन में बड़े कष्ट थे। मैंने तुम्हें उनसे मुक्त कर दिया। तुम अब स्वतंत्र हो। बुद्धिमत्ता इसी में है कि मेरी पटरानी बनो। मेरे अनेक रानियाँ हैं। वे तुम्हारी चेरी हो जायँगी। मेरे अगणित सेवक तुम्हारी सेवा करेंगे। लंका का वैभव और सिंहासन तुम्हारा होगा। तुम लंका की सर्वेश्वरी होगी। पर सीता चुप थीं।

सीते! 'मैं तुम्हारी कृपा चाहता हूँ। यदि मेरा कहना मान लोगी तो सुख से रहोगी। यदि न मानोगी तो रो-रो कर मर जाओगी। राम वन में भटकते फिरेंगे। उन्हें तुम्हारा पता भी न चलेगा। यह लंकापुरी है। इसमें कोई घुस नहीं सकता। उन्हें भूल जाने में ही तुम्हें सुख है।' ऐसा कह कर वह उत्तर की प्रतीक्षा करने लगा।

सीता उसकी बातों का उत्तर देना ही न चाहती थीं पर दुर्भाग्यवश कहना पड़ा—"मैं वीर शिरोमणि राम की पत्नी हूँ। सिंहनी एक ही साथी चुनती है। मैं नारी के पातिव्रत और पुरुष के एक पत्नी व्रत में विश्वास करती हूँ। तुम्हारी रानियाँ कैसी हैं? और तुम कैसे हो, जो कुत्तों की तरह मारे-मारे फिरते हो? क्या तुम्हारे घर में कोई बड़ा-बूढ़ा नहीं है, जो तुम्हें सन्मार्ग दिखलाये। क्या तुम बिल्कुल निरंकुश हो? क्या तुम धर्म-अधर्म और पाप-पुण्य में विश्वास नहीं करते। तुम्हारी बात मानना तो दूर मैं तुम्हारी छाया भी देखना नहीं चाहती।"

रावण ने कहा कि पहले सभी नारियाँ ऐसे ही कहा करती हैं। फिर कुछ दिन में उनकी बुद्धि ठिकाने आ जाती है। अच्छा मैं तुम्हें सोचने के लिए एक वर्ष का समय देता हूँ। यदि तुम्हारी इच्छा रनिवास में रहने की नहीं तो मैं अशोक वाटिका में तुम्हारे रहने का प्रबन्ध कर दूँगा। तुम्हें कोई कष्ट न होगा। दास-दासियाँ तुम्हारी देख-रेख करेंगी।

अशोक वाटिका रावण के अन्तःपुर का उद्यान था। उसमें देश-विदेश से तरह-तरह के फल-फूल वाले पौधे लाकर लगाये गये थे। मध्य में एक सरोवर था। उसमें अनेक रंग के कमल खिलते तथा भाँति-भाँति के पक्षी जल-बिहार करते

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

थे। उसके जल से यंत्र घटिकाओं द्वारा बाटिका सींची जाती थी। नहरों का जाल शरीर की नसों सा फैला था। कहीं झरने झर रहे थे। कहीं फव्वारे छूट रहे थे। उनके समीप प्रस्तर की मूर्तियाँ निर्मित थीं। वृक्षों के नीचे बैठने के लिए स्फटिक शिलायें पड़ी थीं। उसमें अनेक भवन बने थे, जिनमें बसन्त, वर्षा शरद ऋतुओं के दृश्य दिखायी देते थे। उसकी शोभा नंदन वन से कम न थी। उसे देख सीता को जनकपुरी की वाटिका का स्मरण हो आया। उनका मन भारी हो गया। उनको वहाँ कुछ अच्छा न लगता था। वह न खातीं, न पीतीं न सोतीं और न किसी से बातें करती थीं। बस रात-दिन रोया करती थीं। उनकी दशा उस हरिणी के समान थी, जो दावाग्नि से घिर गयी हो। वह रात-दिन राम के ध्यान में डूबी रहतीं।

रावण की दूतियाँ उन्हें तरह-तरह से समझातीं, उनका मन बहलातीं और अनेक तरह की कहानियाँ कहती थीं। सीता की व्यथा देख वे भी व्यथित होतीं। उनके भी हृदय था। उनमें भी प्रेम की पीड़ा थी। नारी की बात पुरुष न समझे पर नारी तो समझती ही हैं। उसका हृदय कोमल होता है। वह पराये दुख से पिघल जाता है। सीता की सेविकाओं के भी दो वर्ग थे। एक दानवी, दूसरी देवियाँ। दानवी स्वभाव वाली एक जटा, द्विजटा, विकटा, हस्तिनी, शूकरी, मातंगी आदि थीं। उनका नेतृत्व शूर्पणखा करती थी। वे सीता को तरह-तरह के प्रलोभन देतीं और बहकाने का प्रयत्न करतीं। उनके रूप भयानक थे और वाणी भी कठोर थी। उनकी ओर सीता देखती ही न थीं। देव स्वभाव वाली पद्मा, इन्दिरा, किशोरी, रूपवती और शान्ता थीं। उनका नेतृत्व त्रिजटा करती थी। वे सीता को ढाढस बँधाती और सान्त्वना देती थीं। उनका स्वभाव मृदु और वाणी मधुर थी। वे सीता के पास बैठतीं, पीठ पर हाथ फेरतीं और कहतीं–'बहन ! रोती क्यों हो ? देखो ! इस तरह रोने से काम न चलेगा। तुम्हारा बदन सूख कर काँटा हो गया है। रंग पीला पड़ गया है। शक्ति क्षीण हो गयी है। बोली मंद पड़ गयी है। आत्मघात करने से क्या मिलेगा ? यदि जीती रही तो मिलने की आशा है। राम तुम्हारे बिना जीवित न रहेंगे। तुम अपने लिए नहीं वरन् राम के लिए जीती रहो। कुछ फल-फूल ले लो। आम, केला, नारियल, कमल का मधु और दूध जो तुम्हें अच्छा लगे। सीता उनकी सहृदयता देख द्रवित हो जातीं। कुछ उनकी सुनतीं और कुछ अपनी कहती थीं। वे समझातीं बहन ! धीरज धरो। धीरज का फल

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मीठा होता है। यदि सुख के दिन न रहे, तो दुख के भी न रहेंगे। यह तो भाग्य चक्र है ! जीवन में उलट-फेर तो होते ही रहते हैं। तुम तो पढ़ी-लिखी हो। समझदार हो ! हम तुम्हें क्या समझावें ?

जटायु का अन्तिम संस्कार

राम-लक्ष्मण लौट कर पंचवटी आये तो कुटी सूनी पड़ी थी। उनकी शंका सामने आ गयी। वह पागल की तरह इधर-उधर दौड़ने और सीते ! सीते ! कह कर पुकारने लगे। पर सीता हों तो सुनें। उन्होंने लक्ष्मण से कहा कि घाट पर देखो। शायद स्नान करने गयी हों। उन्होंने कुटी का कोना-कोना छान डाला। वस्त्र ज्यों के त्यों टँगे थे। वेदी की अग्नि लुंठित हो रही थी। चावल के कण बिखरे पड़े थे। उन्होंने सोचा—कि कदाचित कमल पुष्प या तुलसीदल लेने गई हैं। बाहर निकलते ही उन्हें बड़े-बड़े पैरों के चिह्न दिखायी पड़े। आगे रथ के पहियों की लीक दीख पड़ी। उसे देखते हुए वे आगे बढ़े तो देखा कि जटायु घायल पड़े हैं। वे अन्तिम श्वासें गिन रहे हैं और उनकी ओर निहार रहे हैं। सीता की बात तो पीछे पड़ गयी। राम ने जटायु को गोद में उठा लिया। उसका रुधिर पोंछा और पूछा कि आपकी यह हालत कैसे हुई ? जटायु ने कहा कि दुष्ट रावण जनक सुता को ले गया। मैंने उसे रोकने का प्रयत्न किया। उसने मेरे पंख काट डाले। मैं इससे विवश हो गया।

गिद्धराज की दशा देख राम के आँसू आ गये। उन्होंने कहा—'इस विपत्ति के आप ही एक साथी थे। आप भी हमें छोड़ कर जा रहे हैं। मैं आपका बड़ा आभारी हूँ। यदि आप जीवित रहना चाहें, तो मैं आप को स्वस्थ कर दूँ।

जटायु ने कहा कि मुझे जीने की किंचित अभिलाषा नहीं। मैं तो केवल आपको यह समाचार देना चाहता था। आप मिल गये। मुझे संतोष मिला। मैं अब सुख से मर सकूँगा। मेरा जीवन क्या है ? सड़ा गला मांस खाकर किसी तरह दिन काटता हूँ। बहुत दिन जीवित रहा। अब शरीर रखकर क्या करूँगा ? आप अपनी कृपा बनाये रहें। राम ने कहा कि आप पुण्य श्लोक हैं। आपने मेरे लिए प्राण दिये। परोपकार के समान कोई धर्म नहीं। आपको जो चाहिए वह प्राप्त हैं। जटायु ने कहा कि आप धन्य हैं, जो थोड़ी सी सेवा को बहुत करके मानते हैं। उसने रामकी ओर देखकर अपनी आँखें मूंद लीं। राम-लक्ष्मण उसे

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उठाकर गोदावरी के किनारे ले गये। उसका दाह संस्कार किया। स्नान करके तिलांजलि दी। वे जटायु की मृत्यु पर वैसे ही शोक संतप्त हुए जैसे पिता की मृत्यु पर हुए थे। उपकारी के प्रति कृतज्ञता ही पुण्य और कृतघ्नता पाप है।

सीता-वियोग और नारद से भेंट

राम-लक्ष्मण सीता की खोज में जनस्थान की ओर चले। उन्होंने वन का कोना-कोना छान डाला पर सीता का पता न चला। उन्होंने वन देखे, पर्वत देखे, शिखर देखे, कंदरायें देखीं, खोहें देखी, झाड़ियाँ देखीं और कुंज देखे पर सीता को कहीं न देखा। वह वृक्षों, लताओं, पशु-पक्षियों एवं पथिकों से पूछते कि क्या तुमने सीता को देखा है ? वृक्ष सिर हिलाते, लताएँ झुक जातीं, मृगी-मृग दक्षिण की ओर मुँह उठाते, और पक्षी उधर की ओर उड़ जाते जिधर को सीता रोती हुई गईं थीं। दोनों भाई उनके दिखाये हुए मार्ग पर मन मलीन चले जा रहे थे।

राम कभी सरिता की गति देख रुक जाते। कभी धारा में भँवरें पड़ती देख कराह उठते। कभी नागिन को देख सीता की चोटी का स्मरण करते, कभी कदली का गाभा देख कर सचिक्कन जंघाओं का ध्यान करते और कभी लताओं को देख उनसे लिपट जाते थे। पुष्करों में खिले कमलों को वह घंटों देखते रहते। उसकी पंखड़ियों में उन्हें सीता के नेत्रों की झलक मिलती, उसकी सुगंधि में सीता के अंगों की सुगंधि मिलती, कोकिल और मयूर की वाणी में उन्हें सीता की बोली का भ्रम होता। वे चलते-चलते रुक जाते और सुनने लगते थे। उनकी आँखों में सीता की मूर्ति समायी थी। कानों में उनकी मधुर वाणी गूँज रही थीं। उन्हें सर्वत्र सीता का प्रतिविम्ब झलकता पर निकट जाते तो भ्रम दूर हो जाता। उनकी दशा अकथनीय थी।

लक्ष्मण उन्हें ऐसा करते देख कहते—'भैया ! आपको क्या हो गया है ? आप इस तरह व्यथित क्यों हैं ? धीरज धरिये। मैं सीता का पता लगाऊँगा। रावण को दण्ड दूँगा और उन्हें ले आऊँगा। आपको रोते देख मेरा साहस छूट जाता है। आप बड़े हैं। मैं आपको क्या समझाऊँ।

राम ने कहा—'भैया ! मेरी समझ इस समय काम नहीं करती। अयोध्या का राज्य छूटा। प्रियजन छूटे। परिजन छूटे। पिताजी की मृत्यु हो गयी। माताएँ विधवा हो गयीं। रही-सही सीता भी छूट गयीं। तुम कहते हो कि धीरज

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

धरो, पर मन को धीरज होता ही नहीं। कहना सरल है, पर जिसके सिर पर बीतती है, वही जानता है। मुझे अपना दुख नहीं है। भगवती सीता की वेदना मुझे व्यथित कर रही है। उन्होंने मेरा साथ दिया, पर मैंने उनका साथ न दिया। मुझे जब उनकी याद आती है तो रोंगटे खड़े हो जाते हैं। वह कैसे रहती होंगी ? कहाँ होंगी ? खाती-पीती होंगी या नहीं। पता नहीं जीवित हैं या मर चुकी हैं। हाय ! मैं कहाँ जाऊँ और क्या करूँ ? मैं उनके बिना अयोध्यावासियों को क्या मुँह दिखलाऊँगा। माताएँ सुनेंगी तो क्या कहेंगी ? परिजन और प्रियजन तो शोक-समुद्र में डूब जायँगे। भरत को उन्माद हो जायगा। लोग मेरा परिहास करेंगे। हाय ! मैं कैसा अभागा हूँ ? इस कलंकित जीवन से तो मर जाना अच्छा है।

राम-लक्ष्मण शोक-संतप्त चले जा रहे थे कि सामने से देवर्षि आते दिखायी पड़े। उनके शरीर पर पीताम्बर, शिर पर जटायें, हाथ में वीणा और पैर में घुँघरू थे। वह 'श्रीमन्नारायण, नारायण, नारायण' कह कर प्रभु का कीर्तन कर रहे थे। राम-लक्ष्मण ने नमोनारायण कह कर उनका अभिवादन किया। फिर सब लोग एक शिला-खण्ड पर बैठ गये। राम ने पूछा कि आप कहाँ से आ रहे हैं और कहाँ जा रहे हैं ?

नारद ने कहा कि मैं लंकापुरी से आ रहा हूँ और कैलासपुरी जा रहा हूँ। रावण अपनी पुरी में निर्भय राज्य कर रहा है। उसके वैभव का ठिकाना नहीं। उसके सोने के महल हैं। उनमें रत्न जटित चंदन के कपाट हैं। वह वैभव में कुबेर और विक्रम में इन्द्र से बढ़ कर है। उसके महाबली भाई कुम्भकर्ण और विभीषण हैं। उसका ज्येष्ठ पुत्र मेघनाद है। उसका अमित परिवार है। उसकी सेना में बत्तीस करोड़ राक्षस हैं। एक-एक राक्षस में सहस्र मनुष्यों का बल है। वह अपने पराक्रम से देव, गन्धर्व, यक्ष आदि को विजय कर उनकी सुन्दरियों को हर लाया है। उन्हीं के साथ वह भोग-विलास में मस्त रहता और मदिरा पीता है। वह जब जानकी को हर ले गया तो मैं विभीषण के पास था। विभीषण उसके कार्य से अप्रसन्न है। वह उसका साथ छोड़ने ही वाला है। रावण ने सीता को अशोक वन में छिपा रखा है। उसने सीता को अपनी रानी बनने के लिए विवश किया पर सीता ने किसी भी दशा में उसकी बात नहीं मानी। उसने सीता को सोचने-समझने के लिए एक वर्ष का समय दिया है। यदि आप समय पर न जायँगे तो उन्हें जीवित न पायेंगे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राम ने कहा कि सीता का समाचार देकर आपने बड़ी कृपा की। पर यह तो बताइये कि लंकापुरी का मार्ग किधर से होकर है ? उसके जीतने का उपाय क्या है ? नारद ने कहा कि वह ब्रह्मा और शंकर का वरदानी है। उसकी मृत्यु आपके हाथों लिखी है। केवल नर-बानरों की सहायता अपेक्षित है। उनके हाथों ही राक्षसों का विनाश होगा। यहाँ से पन्द्रह योजन दक्षिण में ऋष्यमूक पर्वत है। वहाँ बानरों का राजा सुग्रीव रहता है। आप उससे मैत्री कर लें। वह आपकी सहायता करेगा। उसका बड़ा प्रभाव है। सारे रीछ और वानर उसके पक्ष में है। उन सबकी सहायता से आप लंका पर विजय पा सकते हैं।

आप दाहिने हाथ की कंदरा से होकर चले जाइये। एक योजन चलने पर क्रौंच वन मिलेगा। वहीं कबंध नामक दैत्य रहता है। उसकी भुजाएँ लम्बी हैं। उन्हीं से वह सबको पकड़ कर खा लेता है। आप उससे सावधान रहें। आगे चलने पर पम्पा सरोवर मिलेगा। वहाँ मतंग मुनि के आश्रम में शबरी भीलनी रहती है। वह आपको ऋष्यमूक पर्वत का मार्ग बतला देगी। ऐसा कह कर वह वीणा पर भगवद्गुण गाते चल दिये।'

कबन्ध का बध

नारद के चले जाने पर दोनों भाई कंदरा में होकर आगे चले। उसके दोनों ओर ऊँचे-ऊँचे खड़े ढाल थे। ढालों पर विशाल पेड़ उगे थे। उन पर बेलें चढ़ी थीं। उनके नीचे अँधेरा था। कंदरा में होकर एक नदी बहती थी। नदी की धारा से कट कर ही कंदरा बन गयी थी। झरने झर रहे थे। उनका शब्द घाटी में गूँज रहा था। राम ने कहा कि यहाँ सावधान होकर चलने की आवश्यकता है। वे कंदरा के द्वार पर पहुँचे ही थे कि एक राक्षस पहाड़ के समान सामने आकर खड़ा हो गया। उसका सिर गर्दन के नीचे धँसा हुआ था। केवल काला भयंकर धड़ दिखायी देता था। बदन पर काँटोंकी तरह रोयें खड़े थे। उसकी जंघायें टूटी थीं। वह दौड़ नहीं सकता था। पर भुजाएँ बड़ी लम्बी थीं। उन्हीं से वह जीवों को पकड़ कर खा लेता था। उससे बच कर जाना असंभव था। उसने राम-लक्ष्मण को पकड़ने के लिए अजगर सी भुजाएँ बढ़ायीं। राम-लक्ष्मण ने बड़ी शीघ्रता से उन्हें काट दिया और कोख में बाण भोंक दिया। उसका कलेजा फट गया। वह गिर पड़ा। मरते समय उसने पूछा कि आप कौन हैं ?

लक्ष्मण ने कहा कि हम दशरथ के पुत्र हैं। मेरा नाम लक्ष्मण है। साथ में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मेरे भाई राम हैं। हम पंचवटी में रहते थे। वहीं से एक दिन रावण इनकी भार्या को चुरा ले गया। हम उन्हीं को खोजते फिर रहे हैं। तुम दानव हो। कदाचित तुम्हारा उसका परिचय हो। यदि कुछ जानते हो तो उसका पता ठिकाना बताओ।

कबन्ध ने कहा कि मैं इन्द्र से दंडित और स्थूलशिरा से अभिशप्त हूँ। मुझे मतिभ्रम हो गया है। न मैं किसी को पहचानता हूँ और न मुझे कुछ याद ही है। यदि मेरा दाह संस्कार कर दो तो मैं मुक्त हो जाऊँ। अपना वास्तविक स्वरूप पाने पर ही मैं कुछ बता सकूँगा।

राम के संकेत से लक्ष्मण ने लकड़ियाँ बीन कर चिता लगा दी। दोनों ने उसे घसीट कर चिता पर रख दिया। उसका शरीर पंचत्व में मिल गया। आत्मा ने दिव्य रूप धारण करके कहा—'मैं दनु का पुत्र कबन्ध हूँ। मैं अमित बलशाली और रूपवान था। पर मेरा स्वभाव क्रूर था। मैं ऋषियों, मुनियों और महात्माओं को भयानक भेष धारण करके डराया करता था। एक दिन स्थूलशिरा मुनि ने क्रुद्ध होकर मुझे शाप दिया कि तू विरूप हो जा, तेरे अंग विकृत हो जायँ। तब से मैं ऐसा हो गया। बड़ी प्रार्थना करने पर ऋषि को कुछ दया आयी। उन्होंने कहा कि जब राघवेंद्र तुम्हारी भुजाएँ काटेंगे तो तुम शाप से मुक्त हो जाओगे। मेरा अहंकार फिर भी दूर न हुआ। मैंने सोचा कि इन्द्र मेरा क्या बिगाड़ सकते हैं? मुझ में उनसे कम पराक्रम नहीं। मैंने उन पर आक्रमण कर दिया। उन्होंने बज्र से मुझ पर प्रहार किया। मेरी जंघायें टूट गयीं और शिर गर्दन के नीचे पेट में घुस गया। मुझे कुछ दिखायी न देने लगा। मैं भूखों मरने लगा। मैंने इन्द्र से क्षमा माँगी। उन्होंने मेरा मुख बगल में कर दिया। तब से मैं इस कंदरा में रहता हूँ। जो आ जाता है, मेरा अहार बन जाता है। आज आपने मुझे मार कर मेरा कल्याण कर दिया। आप दिव्य पुरुष हैं। आप सुग्रीव की सहायता से रावण को मारेंगे। आप इस कंदरा से दक्षिण की ओर नदी के किनारे होकर चले जाइये। वहीं ऋष्यमूक पर्वत के शिखर पर सुग्रीव रहता है। ऐसा कह कर वह दिव्यलोक को चला गया।

शबरी से भेंट

शबरी जाति की भीलनी थी। वह बड़े सीधे स्वभाव की थी। वह मतंग ऋषि के आश्रम में रहती और उनकी सेवा किया करती थी। वह मुनि के लिए

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वन से समिधा, पत्र, पुष्प, फल आदि लाती, आश्रम को स्वच्छ रखती और जल भर देती थी। गुरु उसकी सेवा से बड़े प्रसन्न थे। शूद्रा से सेवा लेने के कारण अन्य ऋषि-मुनि उनसे नाक-भौं सिकोड़ते थे। जब ऋषि का अन्तकाल आया तो शबरी ने पूछा कि अब मैं किसके सहारे रहूँगी ? ऋषि ने कहा कि तुम यहीं रहो। एक दिन राघवेंद्र सरकार कुटी में आयेंगे। तुम उनकी सेवा करना। जब वे चलें तो तुम भी दिव्य लोक को आना।

शबरी राम की नित्य प्रतीक्षा करती रहती। वह प्रातः उठती, आश्रम को स्वच्छ करती, गोबर से लीपती, वन से पत्र-पुष्प-फल लाती, जलघट भरती, स्नान-ध्यान करती, सन्ध्या तक प्रतीक्षा करती, फिर भोग लगा कर प्रसाद ग्रहण करती थी। सन्ध्या को आरती, कीर्तन और भजन करती, फिर प्रभु के ध्यान में सो जाती थी। जिस दिन राम-लक्ष्मण उसकी कुटी में पहुँचे, उस दिन उसे प्रातःकाल से ही आभासित होने लगा कि प्रभु आने वाले हैं। उसने स्वागत का सारा प्रबन्ध कर लिया। वन में जाकर मीठे-मीठे बेर तोड़ लायी। वह चुन-चुन कर स्वादिष्ट बेर तोड़ती। वह उन्हें चख कर देखती भी जाती कि खट्टा या कसैला तो नहीं है। वह आश्रम के द्वार पर खड़ी हो गयी। भौंहों पर दोनों हाथ रखकर सरकार की प्रतीक्षा करने लगी। राम-लक्ष्मण धनुष-बाण-तरकस लिए उसकी कुटी में आ गये। गुरु ने उनका जैसा रूप बताया था, वही सामने देखा। वह चरणों में गिर पड़ी और आनंद के आँसुवों से भींग गयी। राम ने उसे बार-बार उठाया। वह उठती ही न थी। वह प्रेम में विह्वल थी। उसकी समझ में ही न आया कि अतिथि देव का सत्कार कैसे करें ?

राम ने कहा—'श्रमणे ! मुझे भूख लगी है। शबरी को अपना यह नाम बड़ा प्रिय था। गुरु उसे इसी नाम से पुकारा करते थे। राम की प्रिय वाणी सुन कर वह भाव विह्वल हो गयी। वह घड़े से कमण्डल में जल ले आयी। राम लक्ष्मण के पैर धोये। बैठने को आसन दिया। फिर जो बेर चुनकर लायी थी, उन्हें बड़े प्रेम से खिलाने लगी। राम बड़ी रुचि से बेर खाते और प्रशंसा करते जाते थे। उन्होंने लक्ष्मण से कहा कि ऐसे बेर तो मैंने कभी खाये ही नहीं।' प्रभु शबरी के बेर कभी भूले नहीं।

शबरी ने हाथ जोड़ कर कहा—आपने मुझ पर बड़ी कृपा की जो आकर दर्शन दिये। मैं जाति की भीलिन हूँ। लोग मुझे छूने में हिचकते हैं। मेरे हाथ का पानी नहीं पीते। मुझ से घृणा करते हैं। न तो मैं पढ़ी-लिखी हूँ, न पूजा-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पाठ जानती हूँ, न मुझे में बुद्धि है कि कुछ समझ सकूँ। ज्ञान, ध्यान और तप के भी अयोग्य हूँ। फिर भी गुरु ने दया करके अपनाया। आपकी भक्ति दी। मुझे कृतार्थ किया। उनके आशीर्वाद से आपके दर्शन हुए। मैं धन्य हो गयी। मेरा जीवन सफल हो गया।

शबरी की निष्कपट वाणी सुनकर राम ने कहा:—'श्रमणे ! तुम अपने को तुच्छ क्यों समझती हो ? जाति-पाँति, कुल-मर्यादा, धर्म, गुण, बल आदि का विचार भक्ति में नहीं होता। उसके लिए केवल शुद्ध प्रेम चाहिए। तुम में किसी बात की कमी नहीं। तुमने जीवन में महान संत का संग किया। उनके मुखारविंद से श्रद्धा के साथ भगवान की कथा सुनी। उनके गुण गाती रही। कीर्तन-भजन करती रही। गुरु की निष्कपट सेवा की। पतिभक्ति, गुरु-भक्ति और भगवद्भक्ति तीनों एक हैं। इनमें कोई अन्तर नहीं। केवल श्रद्धा की बात है। मार्ग भिन्न-भिन्न हैं, पर गंतव्य एक है। गुरु में तुम्हारा अटल विश्वास रहा। उनके दिये हुए मंत्र को तुम जपती रहीं। तुमने संयम-नियमपूर्वक चलकर, इन्द्रियों का दमन और मन का शमन किया। तुम्हारा चित्त शुद्ध हो गया। शुद्ध चित्त व्यक्ति ही परमात्मा में लीन हो सकते हैं। तुम में भगवान के प्रति शुद्ध रति है। तुम सारे संसार को भगवान का रूप मानती हो। सबमें तुम उसीको देखती हो। तुम आत्म तुष्ट हो। तुम्हें किसी बात की अभिलाषा नहीं। सबसे बड़ी बात यह है कि तुम अत्यन्त सरल हो। तुम्हारी दीनता ही तुम्हारी पात्रता है। तुम्हारा प्रेम शुद्ध है, वरेण्य है। तुममें भक्त के सब लक्षण हैं। तुम्हें पराभक्ति प्राप्त है।

शबरी की कुटी में राम के आने का समाचार जब अन्य ऋषियों को मिला तो वे भी राम से मिलने आये। राम उन सबसे बड़े आदर के साथ मिले और उनकी कुशल पूछी। उन्होंने कहा कि मतंग ऋषि के स्वर्ग चले जाने के बाद इस पुष्करिणी का जल दूषित हो गया। उसमें कीड़े पड़ गये। उससे बदबू आती है। जल अपेय हो गया है। इससे हम सबको बड़ा कष्ट है। यदि आप अपनी चरण-रज डाल दें तो यह भी पवित्र हो जाय। हमने सुना है कि गौतम-नारी अहल्या उसीसे तर गयी।

राम ने कहा कि अहल्या पति के शाप से शिला हुई थी। उन्हीं के वरदान से मुक्त भी हो गयी। यदि आप लोग पाद-प्रक्षालन और स्नान करें तो जल शुद्ध हो सकता है। राम के कहने से डरते-डरते उन्होंने सरोवर में प्रवेश

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

किया। कोई किनारे खड़ा रहा, कोई पिंडली तक और कोई घुटनों तक गया। डुबकी लगाने का उनमें साहस ही न हुआ। अन्त में नाक सिकोड़ते हुए वे बाहर आ गये। राम ने शबरी से कहा कि पुष्करिणी में कमल पुष्प लगे हैं। मैं अपने आराध्य देव शंकर की उन्हीं से पूजा करना चाहता हूँ। यदि तुम पुष्प ला दो तो बड़ा अच्छा हो। प्रभु की आज्ञा से शबरी तालाब में कूद पड़ी और पुष्प ले आयी। उसके प्रवेश करते ही पुष्करिणी का जल शुद्ध हो गया। उसमें से कमलों की सुगन्धि आने लगी। कीड़े मर गये। जल पेय हो गया। यह देख सब को बड़ा आश्चर्य हुआ।

राम ने कहा कि जिसका चित्त निर्मल है, वही दूसरों को शुद्ध कर सकता है। जिसमें सन्देह है, वह दूसरों को सन्देह मुक्त कैसे कर सकता है ? जिसमें विश्वास नहीं है, जिसमें श्रद्धा नहीं है, उसे फल प्राप्ति कैसे हो सकती है ?

सन्ध्या समय राम ने शबरी से पूछा कि यदि तुम जनक नन्दिनी का कुछ पता जानती हो तो बतलाओ। मैं उन्हीं की खोज में यहाँ आया था। शबरी ने कहा कि आप सब जानते हैं पर मुझ से अजान बन कर पूछ रहे हैं। यह सामने जो पर्वत दिखायी पड़ता है। वह ऋष्यमूक ही है। सुग्रीव और हनुमान उसी पर रहते हैं। आप उनसे मैत्री कीजिए। हनुमान सीता का पता लगाने में आप की सहायता करेंगे। अच्छा ! आप चलने को हैं। मैं भी उस लोक को जाती हूँ। ऐसा कह उसने प्राण छोड़ दिये। उसकी आत्मा दिव्यलोक को चली गयी।

हनुमान से परिचय और सुग्रीव से मैत्री

राम-लक्ष्मण शबरी के आश्रम से पंपासरोवर तट की पगदंडी से ऋष्यमूक पर्वत की ओर चले। सरोवर में नीला जल भरा था। कमल खिले थे। हंस जल-विहार कर रहे थे। तट पर सारस खड़े पंख खुजला रहे थे। मछलियाँ उछल रही थीं। बगले उनकी नाक में बैठे थे। सामने पर्वत दिखायी पड़ता था। उस पर साल, सागोन, ताल, तमाल और चंदन के पेड़ थे। राम ने कहा कि यहीं कहीं ऋष्यमूक पर्वत होगा। यदि कोई मिले तो उससे पूछो। वे बातें करते हुए चले जा रहे थे। उनकी आवाज से सुग्रीव ने समझा कि कोई हमारी ओर आ रहा है। उन्होंने हनुमान से कहा कि आगे बढ़ कर पता लगाओ। कहीं बाली के गुप्तचर तो नहीं है ? यदि ऐसी बात हो तो हमें संकेत कर देना। हम कहीं छिप जायँगे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हनुमान ब्राह्मण का भेष बना कर उनके पास आये। लक्ष्मण ने पूछा—'विप्रवर ! क्या आप ऋष्यमूक पर्वत जानते हैं ? क्या यहाँ वानरराज सुग्रीव रहते हैं।' हनुमान ने कहा—आप भेष से क्षत्रिय जान पड़ते हैं। आप तेजस्वी हैं, पराक्रमी हैं और शीलवान हैं। आप में चक्रवर्ती के लक्षण दिखायी पड़ते हैं। फिर नंगे पाँव और नंगे सिर वन में कैसे घूम रहे हैं ? आप कौन हैं ? कहाँ रहते हैं ? और सुग्रीव को क्यों पूछते हैं ?

उनके प्रश्न सुनकर लक्ष्मण ने कहा—'मेरा नाम लक्ष्मण है। साथ में मेरे बड़े भाई राम हैं। हम दोनों दशरथ के पुत्र हैं। हम पंचवटी में रहते थे। हमारे साथ इनकी धर्मपत्नी सीता थीं। एक दिन हम आखेट करने गये थे। कुटी को सूनी पाकर रावण सीता को हर ले गया। हम उन्हीं आर्या की खोज में जा रहे हैं। हमारा यही परिचय है। पर यह तो बताइये कि आप कौन है?

हनुमान राम के चरणों में गिर पड़े। उन्हें अपनी माता के शब्दों का स्मरण हो आया। वह प्रेम में विह्वल हो गये और गद्गद् वाणी से बोले—'आप मुझे क्षमा करें। मैंने आपसे छल किया। मैं ब्राह्मण नहीं, केसरी पुत्र हनुमान हूँ। मेरी माता का नाम अंजना है। वह मेरे जन्म के कुछ ही देर बाद स्वर्ग चली गयीं। चलते समय मैंने पूछा कि मैं तुम्हारे बिना कैसे रहूँगा ? माँ ने कहा कि यहीं पेड़ों पर रहना और फल खाना। एक दिन अयोध्यानाथ यहाँ आयेंगे। तब तुम उनके साथ हो जाना। आज मेरे अहोभाग्य कि आपके दर्शन हो गये। मैंने आपको पहचाना नहीं। मेरा अपराध क्षमा हो। आप तो अपने सेवकों को कभी भूलते नहीं। फिर मुझे कैसे भूल गये ? राम ने कहा कि सीता के वियोग में मैं सब कुछ भूल गया हूँ। तुम्हारे मिलने से मुझे शान्ति मिली।

हनुमान ने कहा कि चलिये, मैं आप दोनों को सुग्रीव से मिला दूँ। शिखर ऊँचा है। चढ़ाई कठिन है। मेरे कंधों पर बैठ जाइये। मैं बात की बात में पहुँचा दूँगा। मार्ग में लक्ष्मण ने पूछा कि आप अमित बलशाली जान पड़ते हैं। यह तो बताइये कि आपकी ठोढ़ी क्यों धँसी हुई है ? हनुमान ने कहा:—

माँ के न रहने पर मुझे बड़ी भूख लगी। रात तो किसी तरह काटी। प्रातः होते ही सूर्य को लाल फल समझ पकड़ने दौड़ा। उसी समय राहु भी उसे ग्रसने जा रहा था। मुझे देख वह भागा। उसने इन्द्र से पूछा कि दूसरा राहु कौन पैदा हो गया ? इन्द्र ऐरावत पर सवार हो राहु के साथ मेरे पास आये। मैं राहु की ओर झपटा। इन्द्र ने मेरे मुँह पर बज्र मारा। मैं सुमेरु पर्वत पर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गिरा। मेरी ठोढ़ी टेढ़ी हो गयी। उसी दिन से मेरा नाम हनुमान पड़ गया। मेरे पिता पवन ने मुझे घायल देखा तो स्तब्ध रह गये। उन्होंने अपनी गति रोक ली। मुझे लेकर कंदरा में चले गये।

वायु की गति रुक जाने से उमस बढ़ी। लोगों का साँस लेना कठिन हो गया। चारों ओर त्राहि-त्राहि मच गयी।

देवतागण ब्रह्मा के पास पहुँचे। उन्होंने अपनी दुख कथा सुनायी। ब्रह्मा ने कहा—"इन्द्र ने वायुपुत्र को मारा है। इससे वायुदेव कुपित हैं। वायु ही प्राणियों का जीवन है। वायु के बिना कोई काम नहीं चल सकता। चलो उन्हीं के पास चलें। पिताजी ने उन्हें आते देख उठ कर प्रणाम किया और मुझे उनकी गोद में डाल दिया। ब्रह्मा ने मेरे शरीर पर हाथ फेरा। मुझे होश आ गया। मैं खेलने लगा। देवताओं ने पिताजी के संतोष के लिए मुझे वरदान दिये। इन्द्र ने कहा—'मेरा बज्र लगने से इसका शरीर बज्र के समान कठोर हो गया है। अब इसे कभी किसी प्रकार की चोट न जान पड़ेगी'। सूर्य ने कहा—'मैं इसे अपना तेज देता हूँ। इसे सारी विद्यायें अल्पकाल में ही आजायेंगी।' वरुण ने कहा कि जल इसे कभी डुबा न सकेगा। यमराज ने कहा—'इसे कालदण्ड का भय न रहेगा।' शंकर ने कहा—'यह जगत वंदनीय होगा। ब्रह्मा ने कहा—'ब्रह्म शाप से भी इसकी मृत्यु न होगी। यह अजर-अमर होगा।' ऐसा कह कर वे चले गये।

वरदान पाकर मैं धृष्ट हो गया। चंचल तो स्वभाव से ही हूँ। मैं ऋषियों और मुनियों के आश्रम में जाकर उपद्रव करने लगा। मैं उनके बल्कल फाड़ डालता, यज्ञभाण्ड फोड़ देता और फल-फूल खा जाता था। एक ऋषि ने क्रुद्ध होकर शाप दिया—जो वरदान तुम्हें देवताओं ने दिये हैं, उनकी तुम्हें याद न रहे। जब कोई स्मरण दिलावे तभी याद आवे। उस दिन से मैं सीधा हो गया। मैं सब कुछ भूल गया। आज आपके दर्शन हुए। मेरे अहोभाग्य! मुझे लड़कपन की बातें याद हो आईं। तब तक शिखर आ गया। राम-लक्ष्मण को कंधे से उतार कर एक शिला पर बैठाया। आगे बढ़कर सुग्रीव को उनका परिचय दिया। उनके शील-स्वभाव की प्रशंसा की और कहा कि इनसे मैत्री कर लीजिए।

सुग्रीव ने आगे बढ़कर राम-लक्ष्मण का स्वागत किया। और कहा—'मेरे अहोभाग्य! आज आपके दर्शन हुए। हनुमान से आपका परिचय पाकर बड़ी प्रसन्नता हुई। ऐसा जान पड़ता है कि मैंने कभी आपको देखा है। यह कहकर अपना

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हाथ बढ़ाया। राम ने उसे बड़े स्नेह से पकड़ लिया। फिर दोनों प्रेम-पूर्वक गले मिले। तब तक हनुमान ने अग्नि प्रज्वलित की। दोनों ने अग्नि की प्रदक्षिणा की और अग्नि को साक्षी देकर प्रतिज्ञा की कि हम लोग आजीवन मित्र रहेंगे। सदा सुख-दुख में एक दूसरे का साथ देंगे।

राम ने कहा कि सच्चा मित्र बड़े भाग्य से मिलता है। मैत्री में अपने और पराये का भेद नहीं होता। मित्र का सुख-दुख अपना सुख-दुख है। सच्चे मित्र का धर्म है कि अपने विशाल दुख को रज के समान और मित्र के रज के समान दुख को पर्वत के समान समझे। मित्र के भावों को जानकर उसकी आवश्यकता की पूर्ति करनी चाहिए। जो कहने का रास्ता देखते हैं, उन्हें क्षुद्र हृदय समझना चाहिए। मैत्री बाहरी नहीं, भीतरी होनी चाहिए। मित्र बहिर्मुख न देखकर अन्तर्मुख देखता है। मैत्री में कुछ पाना नहीं, वरन देना है। मैत्री त्याग है, बलिदान और आत्म समर्पण है। स्वार्थी व्यक्तियों की मित्रता स्थायी नहीं होती। फिर वे बैठकर बड़ी देर तक संलाप करते रहे।

सुग्रीव ने बतलाया कि एक दिन हम लोग यहीं बैठे बात-चीत कर रहे थे। ऊपर आकाश में एक विमान दिखायी पड़ा। उसके अन्दर एक देवी बिलख-बिलख कर रो रही थी। उसने हमें देखकर एक पोटली फेंकी। उसमें कुछ आभूषण थे। जान पड़ता है कि वह सीता देवी थीं। राम ने पोटली देखने की इच्छा प्रकट की। सुग्रीव के संकेत से हनुमान गुफा के अंदर जाकर उठा लाये। पोटली खोली। राम ने उत्तरीय उठा कर कहा—निश्चय ही यह सीता का उत्तरीय है। फिर लक्ष्मण से पूछा—'क्या तुम गहने पहचानते हो ?' लक्ष्मण ने कहा—न तो मैं कुण्डल पहचानता हूँ और न केयूर। हाँ, इन नूपुरों को अवश्य पहचानता हूँ। मैं नित्य जब उनके चरणों की वन्दना करता, तो इन्हें देखा करता था। राम को निश्चय हो गया कि ये सीता के ही वस्त्र-आभूषण हैं। उन्हें देखते ही उनकी आँखों में आँसू भर आये। वह सोचने लगे—न जाने सीता किस संकट में होंगी ? उन पर न जाने क्या विपत्ति पड़ी होगी ?

राम को दुखी देख सुग्रीव ने कहा—'आप तो बुद्धिमान हैं। भला हम क्या समझावें। आप केवल धीरज धरिये। मेरे पास बानरों की असंख्य सेना है। मैं उसे सीता की खोज में भेज दूँगा। वे आकाश, पाताल, समुद्र और भूगर्भ में घुस कर पता लगा लायेंगे। फिर हम लोग चलकर रावण को मार सीता को वापस ले आयेंगे। आप शोक न करें।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राम ने उत्तरीय से आँसू पोंछते हुए कहा—तुम मेरे मित्र हो। भला मैं तुम्हारी बात क्यों न मानूँगा ? तुमको पाकर मैं निश्चित हो गया कि तुम मेरी सहायता करोगे।

लक्ष्मण ने पूछा कि आप यहाँ अकेले कैसे रहते हैं ? क्या आपके परिवार नहीं है ? यदि आप अपना परिचय देते तो बड़ा अच्छा होता।

बाली का परिचय

सुग्रीव ने कहा—हम दो भाई हैं। मेरा बड़ा भाई बाली है। हम दोनों महेन्द्र के पुत्र हैं। पिताजी हम दोनों से बड़ा स्नेह करते थे। हम दोनों में भी बड़ी प्रीति थी। एक प्राण दो देह थे। दुर्भाग्यवश पिताजी मृत्यु शैया पर पड़ गये। अन्तिम समय उन्होंने सम्पत्ति का बटवारा कर दिया। बाली बड़ा था। इसलिए अपने गले की माला उसे ही पहनायी। वंश परम्परा के अनुसार वह राजा हुआ। हम दोनों प्रेम-पूर्वक रहते रहे। पर कालचक्र तो चलता रहता है। हमें भी कुग्रहों ने आ घेरा।

एक दिन मयदानव का पुत्र मायावी हमसे लड़ने आया। आधीरात को वह घर के किवाड़े भड़-भड़ाने लगा। हमारा उसका पैतृक वैर था। पिता ने उसके भाई दुंदुभि को मार डाला था। उसीका वह बदला लेना चाहता था। हम लोग गहरी नींद में सो रहे थे। उसकी गरज सुनकर जाग पड़े। छत पर से पूछा—कौन है ? क्या चाहता है ? उसने कहा—'मैं दुंदुभि तुमसे लड़ने आया हूँ।' भाभी ने मना किया कि रात को दरवाजा न खोलना। उससे कह दो कि सुबह आना। पर भाई को इतना धीरज कहाँ ? वह तुरन्त कोठे से उतरे।

भाई ने उसे ललकारा—'खड़ा रह। मैं अभी तेरी खबर लेता हूँ।' भाई की आवाज पाकर वह भागा। वे उसके पीछे दौड़े। मैं भी उनके साथ हो गया। वह भागता-भागता अपनी गुफा में घुस गया। भाई ने कहा कि तुम यहीं रहो। मैं उसे मार कर आता हूँ। पन्द्रह दिन तक मेरी प्रतीक्षा करना। यदि न लौटूँ तो समझना कि मायावी ने मुझे मार डाला। मैंने भी साथ जाने को कहा पर उन्होंने शपथ दिलाकर मुझे रोक दिया और कहा—'यदि तुम बच जाओगे तो परिवार तथा राज्य की देख-रेख करोगे।'

मैं एक महीने तक भाई की प्रतीक्षा करता रहा। वह न लौटा तो मैंने समझा कि बाली मारा गया। मैंने गुफा के द्वार पर एक शिला खिसका कर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रख दी और नगरी लौट आया। मैंने भाई को मृत समझ पिंड दान दिया और तर्पण किया। मंत्रियों ने राजगद्दी सूनी देखी तो मुझे बिठा दिया। मैं यथाशक्ति राज कार्य करने लगा। इसी बीच मायावी को मारकर बाली लौट आया। उसने मुझे राजगद्दी पर बैठा देखा तो बिगड़ पड़ा। मैंने कहा कि राज्य आपका है। मैं तो उसकी देख-भाल कर रहा हूँ। उसे मेरी बात पर विश्वास ही न हुआ। उसे इस बात से चिढ़ थी कि मैंने गुफा के द्वार पर शिला क्यों रख दी ? मैंने उसे समझाने का प्रयत्न किया पर उसका क्रोध शान्त न हुआ। उसने मेरी सम्पत्ति हड़प ली, स्त्री-रुक्मा छीन ली और मार कर घर से निकाल दिया। मैं केवल वस्त्र पहन कर चला आया। तब से इसी पर्वत पर रहता हूँ। वह शाप के कारण इस पर नहीं आ सकता। मैं सदा डरता रहता हूँ कि वह चुपके से किसी को भेज कर मुझे मरवा न डाले। मैंने इसीलिए हनुमान को आपके पास भेजा था।

लक्ष्मण ने पूछा—बाली को यहाँ न आने का शाप किसने दिया ? दुंदुभी से तुम्हारा क्या बैर था ! सुग्रीव ने कहा—

मायावी का भाई दुंदुभी बड़ा बलवान और भयंकर था। उसका शरीर हाथी की तरह और शिर जंगली भैंसे की तरह था। वह अपने सींगों से वृक्षों को उखाड़ फेंकता, कुरेद कर पहाड़ों को ढहा देता और ढकेल कर लोगों को मार डालता था। उसने नीलिगिरि और मलयाचल के बीच का पहाड़ उखाड़ फेंका। मलयराज ने कहा कि मैं लड़ना-भिड़ना क्या जानूँ ! मेरा साथ शान्त तपस्वियों का है। यदि तुम्हें लड़ना हो तो किष्किंधा के राजा बाली से लड़ो। वह तुम्हारे टक्कर का है।

दुंदुभी अपनी जवानी के घमंड में चूर था। वह किष्किंधा के घरों को बेझ कर गिराने लगा। उसकी गरज नगाड़े की सी थी। इसीलिए लोग उसे दुंदुभी कहते थे। बाली उस समय अन्तःपुर में था। वह क्रुद्ध हो कर बाहर निकल पड़ा। भाई को देखते ही वह भिड़ गया। दोनों अमित बलशाली और पराक्रमी थे। उनमें महीनों मल्ल-युद्ध चलता रहा। धीरे-धीरे दुंदुभी का बल क्षीण होने लगा। इधर बाली का बल बढ़ने लगा। उसके गले में पिताजी की दी हुई माला पड़ी थी। उसके प्रभाव से विपक्षी का आधा बल उसे मिल जाता था। भाई ने दुंदुभी के दोनों सींग पकड़े और बड़ी दूर तक रेलता चला गया। फिर पहाड़ से टकराकर अधमरा कर दिया। उसके मुँह और नाक से खून गिरने लगा। अधिक रक्त

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्राव होने से उसका प्राणान्त हो गया। बाली ने उस महिषासुर का शव दोनों हाथों से उठा कर ऋष्यमूक के उस पार फेंक दिया। शव मतंग मुनि के आश्रम में गिरा। उसके रुधिर से आश्रम अपवित्र हो गया। रक्त की दो चार बूँदें ऋषि के शरीर पर भी गिरीं। बाली देखने गया कि कहीं वह जीता तो नहीं है! उसे देखते ही मतंग मुनि को क्रोध आ गया। उन्होंने कहा कि मेरे आश्रम में न आना नहीं तो मैं तुम्हें भस्म कर दूँगा। यदि आश्रम के आस-पास चार योजन तक कभी आये तो तुम्हारे सिर के टुकड़े-टुकड़े हो जायँगे। बाली ने उनसे क्षमा माँगी और कहा कि मैं भूल कर भी इधर न आऊँगा। दुंदुभी का अस्थि-पंजर अब भी वहाँ पड़ा है। यदि आप देखना चाहें तो देख सकते हैं।

लक्ष्मण को उत्सुक देख राम हनुमान और सुग्रीव के साथ वहाँ पहुँचे। राम ने पैर की ठोकर मारकर उस पंजर को ऋष्यमूक के उस पार फेंक दिया। उसका कंकाल पम्पापुरी में जा गिरा। सुग्रीव ने कहा कि आप शक्तिमान हैं, पर बाली आपसे अधिक बलवान है। आपने तो सूखा कंकाल फेंका है। उसने तो जीवित शव फेंका था। उस समय यह बड़ा बोझिल था। ये जो सामने ताड़ के वृक्ष दिखायी पड़ते हैं, इन्हें वह हाथ से पकड़ कर झक-झोर देता था। यदि आप अपने बाण से इनको गिरा दें तो मैं आपको बलशाली जानूँ।

सुग्रीव की शंका दूर करने के लिए राम ने धनुष पर बाण चढ़ाया। उन्होंने एक ही बाण से सातों ताड़ के वृक्षों को काट दिया। यह देख हनुमान और सुग्रीव आश्चर्य चकित हो गये। उन्हें निश्चय हो गया कि ये हमारी सहायता कर सकते हैं। इनमें बल है, विवेक है और बुद्धि। ये राजनीति में पटु और धर्मनीति में कुशल हैं।

बाली का बध

राम ने कहा—'सुग्रीव! तुम बाली के पास जाओ। एक बार फिर कहो कि मेरा अधिकार दे दे। उससे बताना कि राम ने मुझे भेजा है। यदि वह न माने तो युद्ध के लिए आह्वान करना। आगे हनुमान को भेजो। पीछे तुम चलो। साथ में हम भी चलेंगे। पर नगर के भीतर न जायँगे। यदि आवश्यकता पड़ी तो यहीं से मदद करेंगे।

राम के समझाने से सुग्रीव कमर कस कर तैयार हो गये। उनके पीछे हनुमान, आदि बानर चले। पंपापुर की सीमा पर पहुँच कर सुग्रीव रुक गये।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हनुमान को संदेश देकर बाली के पास भेजा। मंत्री ने सूचना दी कि सुग्रीव अपना अधिकार माँगता है। बाली उस समय अन्तःपुर में मदिरा पी रहा था। उसने गरज कर कहा कि सुग्रीव से कह दो कि पुरानी बातों को दोहराने से कोई लाभ नहीं। मैंने उस बार छोड़ दिया था। अब बिना मारे न छोड़ूँगा।

तारा ने कहा—'स्वामिन्! आप भाई के साथ अन्याय करते हैं। उसकी सम्पत्ति वापस कर दीजिए। पराया धन लेकर आजतक कोई सुखी नहीं हुआ। फिर सुग्रीव ने कोई अपराध नहीं किया। भाई-भाई का बैर अच्छा नहीं। आप उससे आज लड़ने न जायँ। जब से किष्किंधा में उच्छिष्ट अस्थियाँ गिरी हैं तब से मेरी दाहिनी आँख फड़क रही है। चित्त घबड़ा रहा है। लक्षण अच्छे नहीं दिखायी देते। मैंने अंगद को पता लगाने के लिए भेजा था। उसने बताया कि ऋष्यमूक पर्वत पर दो राजकुमार आये हैं। वे वीर, पराक्रमी और तेजस्वी हैं। उनकी सुग्रीव से मित्रता हो गयी है। उन्हीं का बल पाकर तो वह आया है। उसकी रुक्मा वापस कर दीजिए। यदि मान जाय तो अच्छा है।

बाली ने कहा कि तुम कैसी भीरुता की बातें करती हो। सुग्रीव मेरा भाई नहीं, शत्रु है। वह मुझसे लड़ने आया है। मैं उससे और उसके मददगारों से भी निबट लूँगा। मैं भी देख लूँ कि वे कितने वीर हैं। मैं किसीकी धमकी में आने वाला नहीं हूँ। कोई मुझे ललकारे और मैं लड़ने न जाऊँ? डूब मरने की बात है। तुम वीर-पत्नी होकर मेरा मार्ग न रोको।

तारा ने कहा कि मैं कभी आपके मार्ग की बाधक नहीं हुई, पर आज मुझे आशंका हो रही है। आप मेरा सौभाग्य छीनना चाहते हैं। अंगद को अनाथ क्यों बना रहे हैं? मैं आपके पैर पकड़ती हूँ कि आज आप लड़ने न जायँ। बाली ने उसकी एक न सुनी। वह गर्व से मदान्ध हो रहा था। वह युद्ध के लिए तैयार होकर निकला।

पम्पा नगरी के लोगों ने सुना तो आकर मैदान में इकट्टा हो गये। वे आपस में कानाफूसी करने लगे। कुछ लोगों ने सुग्रीव से सहानुभूति प्रकट की। उन्होंने बाली को अन्यायी बतलाया। कुछ ने बाली की पीठ ठोंकी और कुछ ने सुग्रीव की। अस्तु बाली और सुग्रीव ताल ठोंक कर मैदान में आ गये। दोनों में मल्ल युद्ध होने लगा। बाली ने सुग्रीव के मुँह पर एक जोर का थप्पड़ मारा। सुग्रीव ने उसकी पीठ पर घूँसा मारा। फिर दोनों भिड़ गये। वे एक दूसरे को ढकेलने लगे। फिर दाँव-पेंच होने लगे। दोनों बलवान थे। कोई

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

किसी से कम न था। धीरे-धीरे बाली का बल बढ़ने लगा और सुग्रीव का क्षीण होने लगा। जब सुग्रीव शिथिल पड़ गया तो उसने गदा उठा ली। फिर दोनों में गदायुद्ध हुआ। राम-लक्ष्मण दूर खड़े दोनों का युद्ध देख रहे थे। इतने में बाली ने सुग्रीव की पीठ पर गदा मारी। वह गिर पड़ा। बाली ने उसे आहत जान छोड़ दिया।

सुग्रीव जब लौटकर ऋष्यमूक पहुँचा तो थक कर बैठ गया। उसका बदन पीड़ा से चूर-चूर हो रहा था। उसने राम से कहा कि मैंने पहले ही बतलाया था कि बाली महाबली है। वह जिससे युद्ध करता है, उसका आधा बल उसे मिल जाता है। उसे जीतना कठिन है। उसने इतनी जोर की गदा मारी कि हड्डी पसलियाँ चूर हो गयीं। मेरे अंग-प्रत्यंग कसक रहे हैं। मैं आपकी राह देख रहा था। जब मेरा साहस छूट गया तो भाग आया।

राम ने सुग्रीव की पीठ पर हाथ फेरा और कहा—'मित्र! तुम मुझ पर सन्देह न करो। तुम दोनों डील-डौल और रूप-रंग में एक हो। मुझे पहचानना कठिन हो गया कि तुम कौन हो और तुम्हारा भाई कौन है? यदि मैं बाण मार देता और वह भूल से तुम्हारे लग जाता तो बड़ा अनर्थ हो जाता। एक भूल से सारा काम बिगड़ जाता। तुम मेरे मित्र हो। तुम्हारा मुझे बड़ा ख्याल है। मैं तुम्हारे साथ अन्याय नहीं कर सकता। आज विश्राम करो। कल मैं इसका उपाय सोचूँगा।

राम के कोमल स्पर्श से सुग्रीव के शरीर की पीड़ा जाती रही। वह स्वस्थ हो गया। वह रात में गहरी नींद सोया। जब प्रातःकाल उठा तो उसे ऐसा जान पड़ा मानों कुछ हुआ ही नहीं। उसके शरीर में बल आ गया। स्फूर्ति का संचार हुआ। वह फिर लड़ने के लिए प्रस्तुत हो गया। राम ने भाई से कहा कि कमल-पुष्प की माला तैयार करो। चलते समय उन्होंने सुग्रीव को विजयमाला पहनायी और कहा—इसके प्रभाव से तुम्हारा बल क्षीण न होगा। मुझे पहचानने में भूल भी न होगी। यदि तुम्हें हारता देखूँगा तो उसी बाण से बाली को मारूँगा जिससे खर को मारा था।'

राम का बल और विश्वास पाकर वह पुनः लड़ने गया। बाली अपने विजयोन्माद में मस्त था। उसने सुग्रीव को फिर आया देखा तो बोला—'कल मैंने तुम्हें छोड़ दिया था। जान पड़ता है कि तेरी मृत्यु शिर पर नाच रही है। तू मेरे हाथों मरने वाला है। तू जिनका बल पाकर आया है, मैं उन्हें भी देख

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लूँगा ।' ऐसा कह कर वह सुग्रीव से भिड़ गया । दोनों में मल्लयुद्ध होने लगा। कभी बाली उसे पटक देता और कभी सुग्रीव उसको । वे गरज-गरज कर ऐसे लड़ रहे थे, मानों दो हाथी या सिंह लड़ रहे हों अथवा मेघों में संघर्ष हो रहा हो । सुग्रीव ने बड़े कल-बल-छल किये पर भाई को जीत न सका । अंत में वह भागने ही वाला था कि बाली की छाती में बाण आ लगा । वह कराह कर गिर पड़ा ।

बाली को युद्धभूमि में गिरते देख दोनों पक्षों के लोग घिर आये । उसने राम से पुकार कर कहा कि तुम मुझे मारने वाले कौन ? मेरे सामने आओ। मैं भी तो देख लूँ कि आखिर आप हैं कौन ? यह माना कि सुग्रीव आपका मित्र है । पर मेरी आपकी क्या शत्रुता है ? मैंने तुम्हारा क्या अपराध किया था ? फिर तुमने छिप कर क्यों मारा ? यदि सामने आते तो मैं आपकी भी वीरता देख लेता । तुमने जिस कारण सुग्रीव से मित्रता की, यदि मुझसे बतलाते तो क्या मैं तुम्हारी सहायता न करता ? रावण को मैं अच्छी तरह जानता हूँ। वह मेरे अखाड़े का लतियल है। मेरी बगल में वह चुपचाप दबा पड़ा रहा। सुनते हैं कि आप राजा हैं, धर्मज्ञ हैं और नीतिज्ञ हैं । पर मैं कहूँगा कि आपने मेरे साथ अन्याय किया ।

राम ने कहा—'मैं धर्म को अच्छी तरह जानता हूँ । तुमने सुग्रीव की स्त्री को छीन कर कौन सा धर्म किया ? उसका धन लेकर कौन सा न्याय किया ? धर्मशास्त्र कहता है कि अनुज वधू, बहन, पुत्र-बधू और बेटी चारों एक समान हैं । इन्हें जो कुदृष्टि से देखता है, उसको मारना अन्याय नहीं । सुग्रीव मेरा मित्र है । उसका सुख-दुख मेरा सुख-दुख है । तारा ने तुम्हें यह बात बता दी थी। तुमने उस पर ध्यान ही नहीं दिया। जब तुमने सुग्रीव को आहत किया तो वह मेरी शरण आया । शरणागत की रक्षा करना मेरा नियम है । मैंने उसे पुष्प-माला पहना कर अपने बल से भेजा । पर तुमने अपने मद में न कुछ देखा और न कुछ सुना । तुम अहंकार में चूर थे । मैंने तुम्हारा दंभ नष्ट कर दिया । हाँ! वृक्ष की ओट से मारने का कारण तुम स्वयं जानते हो । मैं अपना आधा बल तुम्हें क्यों दे देता ? शत्रु को मारने में आगे और पीछे का विचार नहीं किया जाता । यह युद्ध नीति है । यदि तुम अपनी भूल स्वीकार करो और पाप का प्रायश्चित करो तो मैं तुम्हें प्राणदान दे सकता हूँ ।

बाली ने कहा कि झुकना तो मैंने कभी जाना नहीं । मैं टूट सकता हूँ पर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
झुक नहीं सकता। पाप और पुण्य समझने की मुझ में बुद्धि नहीं। मैं शक्ति का उपासक हूँ। उसी में मेरा विश्वास है। मैं जीवन भर यही करता रहा। अब यदि बच गया तो फिर वही करूँगा। मनुष्य का स्वभाव कभी बदलता नहीं। फिर मैं तो बानर हूँ। मैं जानता हूँ कि एक दिन मरना है। वह चाहे आज हो या कल। संसार में कोई अमर नहीं। आप धर्मात्मा हैं। आपके हाथों मृत्यु होनी अच्छी है। मैं मरने से डरता नहीं। मुझे भय है कि मेरे मरने के बाद कोई तारा का अपमान न करे! सुग्रीव को आप अवश्य राज्य दें पर अंगद का ध्यान रखें। उसे कोई कष्ट न हो। मैं इन दोनों को आपके हाथों में सौंपता हूँ। ऐसा कह कर उसने प्राण त्याग दिये। मरते समय उसे कोई कष्ट न हुआ।

बाली की मृत्यु का समाचार पाकर तारा भागती हुई आई। वह पति की देह से लिपट कर रोने लगी। हाय! मैं इसी बात से डरती थी। वही डर मेरे सामने आ गया। मैंने मना किया था पर आपने माना नहीं। हाय! मैं अनाथ हो गयी। मैं अब किसका सहारा ढूँढ़ूँ?

तारा को व्यथित देखकर राम ने समझाया कि तुम किसके लिए रोती हो? बाली के शरीर के लिए या उसकी आत्मा के लिए? शरीर तो मिट्टी, तेज, वायु, जल और आकाश पाँच तत्वों से मिलकर बनता है। मरने पर पाँचों तत्त्व क्षय होकर अपने-अपने तत्त्वों में मिल जाते हैं। आत्म तत्त्व इन सबसे भिन्न है। वह सूक्ष्म है। दिव्य है! और अविनाशी है। वह कर्मानुसार देह धारण करता रहता है। संसार में कुछ नहीं रहता। केवल कीर्ति और अपकीर्ति रह जाती है।

राम के उपदेश से तारा को ज्ञान हो गया। उसे बड़ी शाँति मिली। अंगद ने पिता के शव का दाह-संस्कार किया। भाई को चिता पर रखते समय सुग्रीव को बड़ा दुख हुआ। उसे विरक्ति सी हो गयी। उसे जान पड़ा कि भाई की मृत्यु मेरे ही कारण हुई। मैंने यह कार्य अच्छा नहीं किया। उसने राम से कहा कि मुझे राज-पाट न चाहिए। आप अंगद को राजगद्दी पर बिठा दीजिए। राम ने समझाया कि जिस प्रकार पिता के मरने पर बाली ने राज्य सम्भाला, उसी प्रकार भाई के मरने पर तुम राज्य भार सम्हालो। अंगद अभी छोटा है। उसे युवराज बना दो। मंत्रियों ने भी राम की बात का समर्थन किया।

प्रवषर्ण गिरि और वर्षा काल

सुग्रीव को राजसिंहासन पर बिठा कर राम की चिंता दूर हुई। उन्होंने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लक्ष्मण से कहा कि चातुर्मास आ गया है। परिव्राजकों ने अस्थायी आश्रम बना लिए हैं। धूल उड़ाती पुरवा हवा बहने लगी है। आकाश में मेघ मँडराने लगे हैं। कल हरिशयनी एकादशी है। विष्णु भगवान गम्भीर निद्रा में सो जायँगे। इस बीच कोई शुभ काम नहीं हो सकता। सुग्रीव को भी नवीन राज्य की व्यवस्था करनी है। सीता की खोज अभी नहीं हो सकती। हमें भी सुरक्षित स्थान में ठहर जाना चाहिए। इधर पानी तेज और नित्य बरसता है। हनुमान ने बताया कि वर्षाकाल में हम लोग प्रवर्षण गिरि की कंदरा में रहते थे। स्थान सुरक्षित तथा सुविधाजनक है। वहीं कुटी बना ली जाय।

आद्रा नक्षत्र आया। आकाश में मेघ गरजे। उनकी गरज सुन कर मोर नाचने लगे। मेढक टर्राने लगे। झिल्ली झनकारने लगी। पपीहा 'पीहू-पीहू' की रट लगाने लगा। पृथ्वी ने सोंधी उसास ली। नदियों में मटमैला जल बहने लगा। सोते फूट पड़े। झरने झरने लगे। उनका शब्द घाटियों में गूँज उठा। वृक्ष धुल गये। पत्तियाँ हरी हो गयीं। लताएँ लहलहाने और कलियाँ मुसकाने लगीं। चारों ओर जीवन के लक्षण दिखायी पड़ने लगे। किसान हल-बैल लेकर चल पड़े। प्रकृति-वधू हरी साड़ी पहन प्रियतम की प्रतीक्षा करने लगी। उषा अनुरागवती हो गयी। उसे देख संध्या सुन्दरी लाज से आरक्तिम हो गयी।

सीता के वियोग में राम को कुछ अच्छा न लगता। उन्हें सुखद वस्तुएँ दुखद लगने लगीं। वह सोचते कि विरहाग्नि में भूमि को उत्तप्त होते देख सागर का हृदय उद्वेलित हो उठा। उसकी उष्ण उच्छ्वासें आकाश तक पहुँचीं। वे सघन होकर बादल बनीं। वही आँसू बहा रही हैं। वही गर्म जल सरिताओं में भर गया है। उनकी अश्रुधारा और वारिधारा में होड़ लगी थी। कोई थमना न जानती थी। सरितायें अपने जनक पर्वतों के कण्ठ से लिपटती हुई प्रियतम से मिलने की जल्दी में हैं। उनकी व्याकुलता लहरियों के मिस व्यक्त हो रही है। यह दृष्य देख कर राम सोचते कि सीता भी व्यथित होंगी। ऐसी दशा में यदि पपीहा पुकार उठता तो वे चिल्ला पड़ते थे। यदि कोयल कूक उठती तो वह भी पुकारते कि सीते कहाँ बोल रही हो ?

सावन आया। चारों ओर हरियाली छा गयी। भूमि पर हरी मखमली घास बिछ गयी। सारे जीव-जन्तु सुखी हो गये। पर राम को वह हरियाली काँटों की तरह खटक रही थी। नागिनों और केचुवों को किलबिलाते देख उनके मन में मरोड़ें उठने लगती थीं। वह खून के आँसू रो रहे थे। घास पर रेंगती हुई वीर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वधूटियाँ उन्हें रक्त-विन्दु सी प्रतीत होतीं। उन्हें जान पड़ता कि रावण ने सीता को मार डाला है। हमें जताने के लिए रक्त विन्दु इधर छिड़क दिये हैं। आँसू नेत्रों की कोरों तक आते-आते सूख जाते थे। उनका कोई देखने वाला न था। वह रह-रह कर उच्छ्वासें भरते और व्याकुल होते थे।

भादों की अँधेरी रात तो उन्हें काटने दौड़ती थी। यह वह नागिन थी, जिसके काटे का मंत्र न था। यदि चाँदनी निकल आती तो जान पड़ता कि वह काट कर उलट गयी है। यदि बादल गरजते और बिजली चमकती तो जान पड़ता कि रावण सीता को धमका रहा है। वह बेचेनी से तड़प रही हैं। वह कहते कि सीते धीरज धरो। मैं रावण को मार कर तुम्हारा बदला लूँगा। रात-दिन बादलों को घिरा देख उन्हें वेदना होती। वह लक्ष्मण से कहते कि जान पड़ता है वर्षा समाप्त न होगी। सीता तड़प-तड़प कर प्राण दे देंगी। भादों का एक-एक दिन उन्हें एक-एक महीने के समान जान पड़ता।

भाई को व्यथित देख लक्ष्मण ने कहा—'आकाश का रंग बदला है। अंधकार कम होने लगा है। आकाश में बक पंक्तियाँ उड़ने लगी हैं। तारे नील नभ में छिटकने लगे हैं। तालाबों में कोकाबेली खिल रही है। काँस फूल रहे हैं। सरिताओं का प्रवाह मंद पड़ रहा है। जल भी स्वच्छ और शीतल होने लगा है। वर्षा बीत रही है। मार्ग खुलने लगे हैं। हम लोग जल्द ही चलेंगे। लंका पहुँचने में देर नहीं। रावण का अन्त निकट है। आप चिंता न करें।

लक्ष्मण के कहने से वह ऊपर से शान्त हो जाते पर मन किसी तरह शान्त न होता था। सीता-हरण को वह अपने लिए कलंक समझते थे। महान व्यक्ति की व्यथा भी महान होती है। फिर जिस पर नयी मुसीबत पड़ी हो।

लक्ष्मण ने हनुमान से कहा कि पम्पापुर जाकर देखो कि सुग्रीव ने पता लगाने का क्या प्रयत्न किया है? उन्हें अपनी बात का ध्यान है या नहीं। तुम भाई के क्रोध को जानते हो। यों तो वह किसी पर क्रुद्ध होते नहीं, पर होते हैं तो उसे विना मारे छोड़ते नहीं। तुम स्वयं बुद्धिमान हो। हम तुमसे क्या कहें?

हनुमान ने नगरी में जाकर देखा कि सुग्रीव आमोद-प्रमोद में मग्न हैं। राज-मदिरा पीकर वह मतवाला हो गया है। वह अन्तःपुर छोड़ दरबार में आता ही नहीं। राज-काज मंत्री देख रहे हैं। हनुमान ने तारा से कहा कि सुग्रीव को समझा कर दरबार में भेजो। मुझे उनसे कुछ आवश्यक परामर्श करना है। तारा के कहने से सुग्रीव दरबार में आये। हनुमान ने कहा—'कि क्या अपने दिन भूल गये?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आप आराम से सो रहे हैं; उधर राम रो रहे हैं। आप भोग-विलास में मस्त हैं और राम चिंता में ग्रस्त हैं। मत भूलो कि जो राज भोग तुम्हें मिला है वह राम की कृपा है। तुम्हें उनका कृतज्ञ होना चाहिए। मित्रता एक ओर से नहीं वरन दोनों ओर से होती है। स्वार्थी व्यक्तियों की मैत्री टिकाऊ नहीं होती। याद रखो जिस बाण से उन्होंने बाली को मारा है, उसीसे तुम्हें भी मार सकते हैं। अच्छा हो आप अपने इष्ट-मित्रों, सम्बधियों को बुलाकर उनसे परामर्श कर लें। सेनापतियों से युद्ध की योजना पर विचार करें और मंत्रियों से सलाह ले लें। राम के कहने के पहले ही सब तैयारी कर लेनी चाहिए। सीता की खोज में अब देर करने का समय नहीं है।

हनुमान की बातें सुनकर सुग्रीव ने कहा--'वह सर्व शक्तिमान हैं। वह लंका को अकेले विध्वंस कर सकते हैं। रावण पर विजय पा सकते हैं। उसकी सेना का संहार कर सकते हैं। मुझमें क्या शक्ति जो उकी सहायता करूँ! वह केवल मुझे बड़ाई देना चाहते हैं। उनकी मुझ पर असीम कृपा है। मैं उनका बड़ा आभारी हूँ तथा आजीवन कृतज्ञ रहूँगा। हम उन्हें कैसे भूल सकते हैं? हाँ, तुमने अच्छा किया जो समय पर सचेत कर दिया। मुझे तुमसे यही आशा थी।

सुग्रीव ने मंत्रियों को बुला कर कहा कि हमारे सभी इष्ट मित्रों और सम्बन्धियों को पत्र लिखकर दूतों के हाथों भेजो। देखो कोई छूटने न पावे। विन्ध्य, मलय, मंदर, हिमालय, उदयाचल, अस्ताचल, महेन्द्र, कैलास, सुमेरु, अबुंद, नीलगिरि, आदि पर्वतों पर जहाँ कहीं बानर-लंगूर और ऋच्छ रहते हैं, उन सब को बुलाओ। उन्होंने चलते समय विशेष रूप से कहा कि देखो कोई छूटने न पावे। जो जिस शर्त पर आने को तैयार हो, उसे उसी शर्त पर लाओ। मैं सब को समझा लूँगा।

शरद ऋतु और चलने की तैयारी

दुख हो या सुख समय चलता जाता है। एक-एक दिन गिनते-गिनते वर्षा बीत गयी। शरदऋतु आ गयी। आकाश निर्मल हो गया। तारे मोती की तरह चमकने लगे। चाँदनी रूपहली और शीतल हो गयी। सरोवरों और सरिताओं का जल स्वच्छ हो गया। सारस और हंस जल-विहार करने लगे। खंजन फुदकने लगे। उनको देख कर राम को सीता की स्मृति आने लगी। उन्होंने लक्ष्मण से कहा--भाई! शरदऋतु आ गयी। शालि का रंग पीला पड़ गया। पौधे बालों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

के भार से झुक रहे हैं। सीता भी पीली पड़ गयी होंगी। वह मुख नीचा किये मलिन बैठी होंगी। भिक्षुक द्वार-द्वार घूमने लगे हैं। तपस्वियों ने आश्रम छोड़ दिये हैं। बनिजों के टाँडे चल पड़े हैं। चलो हम लोग भी सीता की खोज करें। सुग्रीव का क्या भरोसा ? वह आराम से राजभवन में सोता होगा। कदाचित हमें भूल भी गया हो।

राम को उद्विग्न देख लक्ष्मण ने कहा—'हनुमान किष्किंधापुरी गये हैं। वह सुग्रीव के समाचार लेकर आते होंगे। उन्हें हमारी बड़ी चिंता है। सुग्रीव भी हमें भूल नहीं सकते। मुझे दोनों पर विश्वास है। वे हमें क्या मिल गये मानों भरत और शत्रुघ्न मिल गये। वे इस प्रकार बातें कर ही रहे थे कि सुग्रीव आ पहुँचे। उन्होंने हाथ जोड़ कर कहा :—

मैंने आपकी कृपा से सौभाग्य के दिन देखे। मुझे जो कुछ मिला सब आप की कृपा से। मैं आपको स्वप्न में भी भूल नहीं सकता। मैंने सुना है कि रावण के सहस्रों भाई-भतीजे और नाती-पोते है। उसकी सेना में बत्तीस करोड़ योद्धा हैं। उनसे संघर्ष करने के लिए मैंने देश भर के बानर और रीछों को बुलाया है। वे सब देवताओं और गन्धर्वों की संतान हैं। वे इच्छानुसार रूप धारण कर सकते हैं। उनकी गति आकाश, पाताल, महासागर सर्वत्र है। उनके लिए कोई स्थान दुर्गम नहीं। वे टिड्डियों की तरह जहाँ बैठेंगे सबको चाट जायँगे। इस सेना के आयोजन में मुझे देर लग गयी। कृपया मुझे क्षमा करें।

राम ने कहा कि सूर्य तपता है। चन्द्र शीतलता देता है। वायु बहती है। पृथ्वी घूमती है। क्यों ? जगत के जीवों के कल्याण के लिए। वृक्ष फलते हैं। फूल खिलते हैं। नदियाँ बहती हैं। गायें दूध देती हैं। बादल बरसते हैं। क्या अपने लिए ? नहीं यह उनका स्वभाव है। पर उपकार उनकी वृत्ति है। उनका जीवन है। सज्जन भी दूसरों के लिए कष्ट उठाते हैं। पर वे उसे कष्ट नहीं समझते। तुम भी मेरे लिए प्रयत्न कर रहे हो। मुझे विश्वास है कि तुम मेरी सहायता करोगे, जिससे मैं रावण पर विजय पा सकूँ।

सुग्रीव की सेना

राम-लक्ष्मण ने देखा कि आकाश में गर्द छा गयी है। असंख्य वानर और रीछ कान के पर्दे फाड़ने वाले शब्द करते आ रहे हैं। सबके आगे हनुमान हैं। उनकी पूँछ मण्डलाकार गर्व से ऊँची उठी है। उनके पीछे यूथप और नायक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अपने-अपने दल का नेतृत्व कर रहे हैं। वे टीड़ी दल की तरह ऋष्यमूक पर्वत पर छा गये। सुग्रीव ने वीरों को विश्राम करने की आज्ञा दी। सेनापतियों और नायकों को मंत्रणा के लिए बुलाया और कहा—

'हमने आज एक विशेष समस्या पर विचार करने के लिए आपको आमंत्रित किया है। हमारे मित्र राम और लक्ष्मण अयोध्या के महाराज दशरथ के पुत्र हैं। ये पंचवटी में ठहरे थे। वहीं से रावण इनकी भार्या सीतादेवी को चुरा ले गया। उन्हीं की खोज में ये जा रहे थे कि हमारी इनकी भेंट हो गयी। हनुमान ने हमारी इनसे मैत्री करा दी। हमारी विपत्ति सुनकर ये अपना दुख भूल गये। आप जानते हैं कि बाली ने हमारे साथ अन्याय किया था। उसका विरोध करने को किसी का साहस न होता था। राम ने उसे एक बाण से मार डाला। इन्होंने खर, दूषण, त्रिशिरा, कबन्ध और विराध को भी अकेले ही मारा। ये रावण को भी सपरिवार मारने में सक्षम हैं। पर पता नहीं कि रावण ने सीता को कहाँ छिपा रखा है। ये हमारे देश से अपरिचित है। दुर्भाग्य से हमारी इनकी भाषायें भी भिन्न है। पर ये मन के भावों को बड़ी जल्दी समझ लेते हैं। मित्र होने के नाते हमारा कर्त्तव्य है कि हम इनकी सहायता करें। राक्षस हमारे जन्मजात शत्रु हैं। वे हमें जहाँ पाते हैं मारकर खा जाते हैं। उनसे सारा जनस्थान और दण्डकारण्य पीड़ित है। व्यक्तिगत रूप से तो लोग राक्षसों का विरोध करते हैं पर संगठित रूप से कोई प्रयत्न नहीं करते। सौभग्य से हमें इनका नेतृत्व मिल गया है। हमें इस अवसर को खोना न चाहिए। यदि विजय मिली तो हमारी विपत्तियों का सदा के लिए अन्त हो जायगा। उत्तर और दक्षिण भारत एक हो जायँगे। राक्षसों का प्रभुत्व न रहेगा। आप लोग सुख की नींद सो सकेंगे। बोलिए, आप लोगों की क्या राय है?'

सुग्रीव की बातें सुनकर सबके हृदय में उत्साह की तरंगें उठने लगीं। उनकी भुजाएँ फड़क उठीं। उन्होंने हाथ उठाकर एक स्वर में कहा कि हम आपके साथ हैं। अन्याय और अत्याचार का विरोध न करना कायरता है। शत्रु से बदला लेने के लिए हम दृढ़ प्रतिज्ञ हैं। फिर वे राम को ओर देखने लगे। सुग्रीव ने सेनापतियों का परिचय राम से कराया।

सबके आगे हमारे पितृ तुल्य तारा के पिता सुषेण है। इन्होंने मुझ में और बाली में कभी कोई भेद नहीं रखा। इनकी बुद्धिमत्ता की झलक आप

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तारा में देख चुके हैं। दूसरे मेरे श्वसुर रुक्मा के पिता आदरणीय रुमण हैं। इन्होंने बाली का विरोध इस कारण नहीं किया कि भाई-भाई में वैमनस्य न बढ़ जाय। तीसरे लंगूरों के राजा गवाक्ष हैं। यह पल भर में मैदानों, पठारों और पहाड़ों को लाँघ सकते हैं। इन्होंने देश भर के पर्वत छान डाले हैं। चौथे अश्वनीकुमार के पुत्र द्विविद और मयंद हैं। दोनों भाई एक रंग-रूप और बल-विक्रम वाले हैं। इनमें अपने पिता के गुणों की स्पष्ट छाप दिखायी पड़ती है। ये शल्य-चिकित्सा में निपुण हैं। पाँचवें अग्नि के पुत्र नल और नील हैं। इनका परिचय सभी मानवों और दानवों से है। ये बड़े पराक्रमी और लगन वाले हैं। जिस काम को हाथ में लेते हैं, उसे पूरा करके ही छोड़ते हैं। वास्तु कला में इनकी अद्भुत गति है।

जामवन्त का नाम तो आपने सुना ही होगा। यह ब्रह्मा के मानस पुत्र ऋच्छराज हैं। बावन अवतार के समय दो घड़ी में इन्होंने भूमण्डल की सात प्रदक्षिणाएँ कर डाली थीं। यह वयोवृद्ध भी हैं और ज्ञानवृद्ध भी। संकट के समय हम इन्हीं से परामर्श लेते हैं। इनके साथी गवय और दरीमुख हैं। हमारे अन्य नायक गन्धमादन, इन्द्रजानु, शतदल, शरगुल्म, सुमुख, दुर्मुख, शरभ, वह्नि, धूम्र, कुमुद आदि हैं। ये यथा नाम तथा गुण हैं। इनके पराक्रम का परिचय स्वयं युद्धभूमि देगी। हम इनकी आपसे प्रशंसा क्या करें ?

राम-लक्ष्मण वानर और ऋच्छों के यूथपों का परिचय पाकर बड़े प्रसन्न हुए। उनकी मुरझाई आशालता लहलहा उठी। राम ने उनसे कहा कि हमें आप ऐसे वीरों का बड़ा भरोसा है। हमें विश्वास है कि आपकी सहायता से हम असंभव को भी संभव कर सकेंगे। आप हमें दूसरा न समझें। कभी कोई बात कहने में संकोच न करें। हमें यथा समय सलाह देते रहें। हम उसका सहर्ष स्वागत करेंगे। इस समय हमारे सामने केवल एक काम है। जो व्यक्ति सीता का पता लगा देगा, उसके हम बड़े आभारी होंगे।

सीता की खोज में वानरों का प्रस्थान

सुग्रीव ने अपने सरदारों को अलग-अलग बुलाया और उन्हें विभिन्न दिशाओं में जाने के आदेश दिये। सुषेण को पश्चिम की ओर विदर्भ, दशार्ण, अवन्ती, गुर्जर, मरु, सिन्ध, गान्धार, केकय आदि राज्यों में भेजा। शतबल को उत्तर दिशा की ओर विन्ध्य, हिमालय पारकर गन्धर्व, किन्नर, यक्षलोक होकर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सुमेरु और देवलोक, जाने को कहा। विनत और रुक्मण को पूर्व की ओर तैलंग आन्ध्र, उत्कल, अंग, वंग, स्वर्णभूमि और उसके आगे चीन तक जाने को कहा। अंगद को दक्षिण दिशा में मलय कर्नाटक, केरल, तमिल और उसके आगे महोदधि तक जाने को कहा। यह महार्णव यमलोक तक चला गया है। इसीमें समुद्र परिवेष्टित लंकापुरी है। वहीं रावण त्रिकूट पर्वत पर रहता है। वहीं सीता के होने की संभावना है। उन्होंने चलते समय सबसे कहा कि आप लोग कोई वन, पर्वत, नदी, कंदरा, शिखर, गाँव, पुर, खेर, नगर ऐसा न बचे जो देखने से छूट जाय। हर भवन, मन्दिर, घर, और झोपड़ी देख डाली जाय। सबको एक महीने का समय दिया जाता है। इसके अन्दर सूचना मिल जानी चाहिए। अन्त में हनुमान को बुलाया और राम से कहा—

आप हनुमान से भली भाँति परिचित हैं। यह हमारे परममित्र और मंत्री हैं। इनके पिता केसरी वायु देवता के अवतार थे। यह उन्हीं के समान वेग-गामी हैं। इनकी सर्वत्र अबाध गति है। यह आकाश में उड़ सकते हैं, पानी में तैर सकते हैं और पाताल में जा सकते हैं। मैंने भी इनके साथ अनेक वन, पर्वत, सागर तथा देश देख डाले हैं। यह जैसे बलवान हैं, वैसे ही बुद्धिमान भी। देश, काल और पात्र का विचार करके ही काम करते हैं। इनमें काम करने की लगन है। यह धुन के पक्के हैं। जिस काम को हाथ में लेते हैं, उसे पूरा करके ही छोड़ते हैं। हमें विश्वास है कि सीता का पता लगाने में यही सफल होंगे। यदि आपको कुछ संदेश देना हो तो इनसे कह दें।

हनुमान की प्रशंसा सुनकर राम गद्गद हो गये। उन्होंने पवन सुत को निकट बुलाया और पीठ पर हाथ रख कर कहा—मेरा जब से तुम्हारा परिचय हुआ तब से घनिष्ठता बढ़ती ही जा रही है। तुमने मेरे हृदय में घर कर लिया है। मेरे अनुराग को जीत लिया है। मुझे सुग्रीव की बात पर पूर्ण विश्वास है। तुम्हीं सीता की खोज करोगे। मेरे काम के लिए लंकापुरी जाओ। यदि सीता मिलें तो यह अँगूठी दे देना। इसमें मेरा नाम मुद्रित है। इसे देखकर उन्हें विश्वास हो जायगा कि मैंने तुम्हें भेजा है। यदि रावण से भेंट हो तो कह देना कि सीता को वापस कर दो, नहीं तो अच्छा न होगा।

हनुमान शिर झुकाये संकोच से खड़े रहे। प्रभु के कर कमलों का स्पर्श पाकर उनका रोम-रोम पुलकित हो उठा। आनंद के अतिरेक में वह कुछ बोल न सके। उन्होंने अँगूठी ले ली और राम की ओर देखने लगे। प्रभु की

CC-0. Agamnigàm Digital Presevation Foundation, Chandigarh
आँख का संकेत पाते ही वह प्रणाम कर चल दिये। उन्हीं के साथ अंगद, जामवन्त, नल-नील, दुर्मुख, शरभ, कुमुद आदि सेनापति भी हो गये।

स्वयंप्रभा से भेंट

हनुमान और अंगद अपने दल-बल के साथ दक्षिण दिशा की ओर चले। बानर बड़े उत्साह से उछलते, कूदते और छलाँगे मारते जा रहे थे। वे वृक्षों, पर्वतों और मन्दिरों के शिखरों पर चढ़ कर नीचे की ओर झाँकते। यदि कहीं कुछ भी सन्देह होता तो घर के अन्दर घुस जाते और जाँच पड़ताल कर लेते थे। वे कोई झोपड़ी, कुटी, घर, भवन, मन्दिर, निवास, आश्रम, खोह, कंदरा ऐसी न छोड़ते जिसे अच्छी तरह देख न लेते हों। उन्होंने आंध्र, तमिल, केरल प्रदेशों की धूल छान डाली; नीलगिरि, मलय, अन्नमलय के शिखर और घाटियाँ मथ डालीं। वे ऊसर-बंजर, खेत, खलिहान और निर्जन स्थानों को देखते जा रहे थे। धूप ऐसी तेज थी मानों किरणों से अग्नि बरस रही हो। उन्हें प्यास लग आयी। गला सूख गया और लाटी लग गयी। वे थक कर एक ऊँचे शिखर पर बैठ गये और पानी की तलाश में इधर-उधर देखने लगे। उन्हें दूर पर एक कंदरा दिखायी पड़ी। उसमें से क्रौंच, बक, सारस, आदि जल पक्षी मँडरा रहे थे। उन्होंने अनुमान लगाया कि वहाँ अवश्य कोई जलाशय होगा। सब लोग उसी ओर चल दिये। पास पहुँचने पर एक बिवर दिखायी पड़ा। उसके अन्दर अँधेरा था। मार्ग टेढ़ा-मेढ़ा था। वे विचार करने लगे कि अब क्या करना चाहिए।

जामवन्त ने कहा कि मेरी समझ में यह कंदरा किसी जल-धारा ने बनायी है। यहाँ की शिलाएँ चूने के प्रस्तर वाली हैं। जल के साथ वह घुल कर बह गया है और कंदरा बन गयी है। कंदरा के अन्त में अवश्य कोई जलाशय होगा। हम लोगों को सावधानी के साथ एक दूसरे का हाथ पकड़ कर चलना चाहिए। ऐसा न हो कि कोई भटक जाय या छूट जाय। उनकी सलाह से सब ने अंधी कंदरा में प्रवेश किया। वह एक योजन लम्बी थी। आगे चल कर प्रकाश दिखायी पड़ा। इससे उनकी हिम्मत बँधी और आगे बढ़ने पर एक सरोवर दिखायी पड़ा। उसके पास एक उपवन था। उपवन में एक सुन्दर भवन था। उसके द्वार पर एक स्वेतवस्त्रा तपस्विनी बैठी थी। अंगद ने उसके निकट जाकर कहा—'माँ! हम लोग बड़े भूखे और प्यासे हैं। क्या हम सरोवर का जल पी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सकते और उपवन के फल खा सकते हैं ?' आप कौन हैं ? यहाँ अकेली कैसे बैठी हैं ? क्या यहाँ कोई और नहीं रहता।

अंगद के प्रश्न सुन कर तपस्विनी ने कहा कि तुम लोग स्नान और जलपान करो। फलों से क्षुधा शान्त करो। फिर मेरे पास आओ। मैं तुम्हें सारी कथा सुनाऊँगी। उसकी आज्ञा से सबने स्नान और जलपान किया। इच्छानुकूल फल खाये। फिर उसके पास जाकर बैठ गये।

तपस्विनी ने कहा कि यह भवन मयदानव का बनवाया हुआ है। उसने हेमा अप्सरा के लिए बनवाया था। हेमा इन्द्र के दरबार की गायिका थी। मय उसकी सुन्दरता पर आसक्त था। उसे वह हर लाया और यहीं एकान्त में रक्खा। उसके एक कन्या हुई। उसका नाम मंदोदरी था। मंदोदरी का विवाह रावण के साथ हुआ। आज कल वह रावण के साथ लंकापुरी में रहती है। इन्द्र को जब पता चला तो उन्होंने कुपित होकर मय को मार डाला। यहाँ का सारा वैभव हेमा को दे दिया। हेमा जीवन भर इसी भवन में रहती रही। कभी यहाँ संगीत और वाद्य की महफिलें लगती थीं। वह उपवन में विहार करती और सरोवर में जल-क्रीड़ा करती थी। आज यह भवन सूना पड़ा है। उपवन उजड़ रहा है और सरोवर सूख रहा है। मैं हेमा की सखी हूँ। मेरा नाम स्वयंप्रभा है। अब मैं ही इस भवन और उपवन की देख-रेख करती हूँ। पर मैं वृद्ध हो गयी हूँ। मुझसे अब कामकाज होता नहीं। केवल भजन करती और पड़ी रहती हूँ। बस किसी तरह जीवन के दिन गिन रही हूँ। पर यह तो बताओ कि तुम लोग कौन हो और यहाँ कैसे पहुँचे ?

स्वयंप्रभा की बातें सुन कर जामवन्त ने सारा हाल कह सुनाया। वह यह जान कर बड़ी प्रसन्न हुई कि ये रघुनाथजी के सेवक हैं। उसने कहा कि आज मेरे अहोभाग्य ! मुझे ऐसे लोगों के दर्शन हुए जो परोपकार के लिए अपने प्राण की बाजी लगा रहे हैं। आज मेरे जीवन का अन्तिम दिन है। तुम भी अपना मार्ग ग्रहण करो और मैं भी इन्द्रलोक को जाती हुँ।

उसकी बातें सुन कर जामवन्त ने कहा कि जाने के पहिले हमें निकलने का मार्ग तो बता दीजिए। हम लोग जिस मार्ग से आये थे, वह बड़ा भयंकर है। उससे लौटना कठिन है। स्वयंप्रभा ने कहा कि यहाँ आकर कोई लौटता नहीं। पर तुम सत्कार्य के लिए जा रहे हो। इसलिए मैं तुम्हारा मार्ग निर्देशन करूँगी। तुम लोग आँख मूँद कर मेरे साथ चलो। मैं तुम्हें वहीं पहुँचा दूँगी, जहाँ तुम

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जाना चाहते हो। उन्होंने आँखें मूँद ली और एक दूसरे का हाथ पकड़े हुए उसके पीछे चल दिये। थोड़ी देर में उसने कहा कि आँखें खोलो। उन्होंने जो नेत्र खोल कर देखा तो सामने महार्णव लहरा रहा था पर स्वयंप्रभा का पता न था।

संपाति से भेंट

अंगद और हनुमान बातें करते चले जा रहे थे कि हम लोग आज बुरे फँसे थे। यदि तापसी न मिलती तो निकल ही न पाते। हमारी सारी आशायें दुराशायें हो जातीं। जामवन्त ने कहा कि भगवान सबके मालिक हैं। वह संकट में कोई न कोई मार्ग बता देते हैं। उन्होंने ही स्वयंप्रभा को हमारी सहायता के लिए भेजा। हनुमान ने कहा कि इसी विश्वास पर तो हम लोग इस कार्य के लिए अग्रसर हुए हैं।

चलते-चलते वे ऐसे स्थान पर पहुँचे, जहाँ समुद्र पर्वत से टकरा रहा था। लहरों ने पहाड़ को काट कर एक सँकरी कंदरा बना दी थी। उसमें पानी भर जाता था और फिर लौट जाता था। वे उसी में एक-एक करके घुसे। अंदर बैठकर विचार कर रहे थे कि अब किधर चलना चाहिए। उनकी बोल-चाल से बानर समझ एक गिद्ध शिखर पर से बोला—'कौन बोल रहा है ? सामने आओ। नहीं तो मैं एक-एक को खा जाऊँगा। मुझे बन्दर का मांस बड़ा प्रिय है। तुम लोग यहाँ से भाग नहीं सकते। भगवान ने घर बैठे मुझे अहार भेज दिया। यदि पीछे भागे तो समुद्र में गिरोगे; यदि ऊपर चढ़े तो मैं चोंचों और पंजों से घायल कर दूँगा।

गिद्ध की बात सुनकर अंगद ने कहा—'एक पक्षिराज जटायु थे, जिन्होंने सीता को बचाने में अपने प्राण दे दिए। एक तुम हो जो सीता की खोज में बाधा डाल रहे हो। हमें मरने का दुख नहीं पर इस बात का दुख है कि हमारा काम अधूरा रह जायगा।'

अंगद की बातें सुनकर उसने पूछा—'तुम किस जटायु की बात कर रहे हो ? जटायु तो मेरा भाई था। क्या वह मर गया ? मैं वृद्ध हो गया हूँ। मेरे पंख जल गये हैं। मैं उड़ नहीं सकता। डरो मत। मेरे पास आकर सारा हाल सुनाओ। शायद मैं तुम्हारी मदद कर सकूँ।

हनुमान साहस करके उसके पास गये। उन्होंने सीता-हरण और जटायु के घायल होने का सारा समाचार सुनाया। साथ ही यह भी बताया कि हम लोग

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सुग्रीव की आज्ञा से सीता की खोज में लंका जा रहे हैं। पर यह तो बताओ कि तुम जटायु के भाई कैसे ?

गिद्धराज ने कहा—'जटायु मेरा भाई ही नहीं सगा भाई है। हम लोग अरुण के पुत्र हैं। मेरा नाम संपाति है। युवावस्था में हम लोग बड़े बली थे। हमें उड़ने का बड़ा अभिमान था। एक बार हम दोनों में होड़ लगी कि देखें कौन कितनी दूर तक उड़ सकता है ? हमने सूर्य तक पहुँचने का लक्ष्य बनाया। हम लोग उड़े तो उड़ते ही चले गये। अंत में जटायु थक गया। मुझे अपने बल का अधिक घमंड था। मैंने कहा कि तुम लौट जाओ मैं तो सूर्य तक जाकर ही दम लूँगा। मैं उड़ता ही गया। सूर्य के तेज से मेरे पंख झुलस गये। मैं यहाँ गिर पड़ा। तब से यहीं रहता हूँ। जो मिल जाता है, उसे खा लेता हूँ। मेरी भी आकाशी वृत्ति है, पर अब जीना नहीं चाहता। जब भाई की मृत्यु हो गयी तो मुझे जीने से क्या लाभ ? मुझे उसके मरने का बड़ा दुख है। मुझे समुद्र तट ले चलो। मैं उसे तिलाँजलि देकर प्राण छोड़ूँगा।

अंगद और हनुमान उसे सहारा देकर समुद्र के किनारे ले गये। उसने भाई को तिलांजलि दी। स्नान किया। जल पीकर जब स्वस्थ हुआ तो उसकी स्मरण शक्ति जाग्रत हो गयी। उसने कहा—'एक दिन मैं अहार की खोज में शिखर पर बैठा ऊपर की ओर ताक रहा था कि मुझे एक तरुणी के जोर-जोर से रोने का शब्द सुनाई पड़ा। उसे राक्षस एक विमान में लिये जा रहा था। वह मछली की तरह तड़प रही थी। मेरा अनुमान है कि राक्षस विश्रवा का पुत्र रावण ही होगा। और वह रोती हुई नारी सीता ही होंगी। रावण की लंका यहाँ से सौ योजन दूर समुद्र से परिवेष्ठित टापू पर बसी है। वहीं त्रिकूट पर्वत पर रावण का भवन है। भवन से लगी अशोक वाटिका है। उसीमें अशोक वृक्ष के नीचे सीता कुछ सोच रही हैं। तुम उन्हें देख नहीं सकते। मैं उन्हें देख रहा हूँ। चिड़ियों की दृष्टि वानरों से तेज होती है। पक्षियों में कौवे, चीलें, क्रौंच, बाज और हंस अधिक ऊँचे से जमीन पर पड़े आहार को देख लेते हैं। हंसों के ऊपर गरुड़ की गति है। हम गिद्ध गरुड़ जाति के हैं। हम अधिक ऊँचे उड़ सकते हैं और अधिक दूर की वस्तु देख लेते हैं। तुम में से जो सौ योजन समुद्र तैरने की शक्ति रखता हो, वही लंका पहुँच सकता है। यदि न हो तो लौट जाओ। मैं तुम्हारी सहायता करता पर अशक्त होने से विवश हूँ।' तुम लोग शिखर पर से दक्षिण की ओर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चलो। आगे चल कर दोनों ओर समुद्र मिलेगा वहीं अर्वुद सागर और बंग सागर मिलते हैं। आगे महार्णव है। वहीं से लंका निकट पड़ेगी।

संपाती की सलाह मान कर सब लोग पर्वत की रीढ़ पर उतरते हुए कुमारी अन्तरीप पहुँचे। समुद्र तट पर बैठ कर वे पार जाने का विचार करने लगे। किसी ने कहा मैं दस योजन जा सकता हूँ। किसी ने कहा बीस। नल ने तीस और नील ने चालिस योजन जाने का साहस किया। अंगद ने कहा कि मैं जा तो सकता हूँ पर लौटने में संदेह है। जामवन्त ने कहा कि तुम युवराज हो। सबके नायक हो। तुम्हारा जाना ठीक नहीं। फिर हनुमान की ओर देख कर कहा—'महावीर ! तुम क्यों चुप हो ? तुम पवन के पुत्र हो। तुम्हारी गति वायु के समान वेगवान है। तुम बुद्धिमान हो, बलवान हो और गुणवान हो। तुम में सेवा भाव सबसे अधिक है। तुम्हारी कार्य शक्ति असीमित है। संसार में ऐसा कौन सा कार्य है जिसे तुम न कर सको। मुझे विश्वास है कि तुम महार्णव पार कर लंका जा सकते हो, सीता का पता लगा सकते हो और सकुशल लौट सकते हो।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चतुर्थ खण्ड

हनुमान का समुद्र संतरण—

जामवन्त के उत्साहवर्धक वचन सुन कर हनुमान प्रसन्नता से फूल उठे। उनके मन में उत्साह की तरंगें उठने लगीं। उनकी पूर्व स्मृतियाँ जाग्रत हो गयीं। उनका शरीर बढ़कर पर्वत के समान विशाल हो गया। भुजदण्ड फड़कने लगे। रोयें खड़े हो गये। आँखें कमल के समान खिल पड़ीं। उन्होंने गम्भीर घोष में कहा—'कहो तो महासागर को सोख लूँ। कहो त्रिकूट पर्वत को उखाड़ डालूँ। कहो लंकापुरी को जला कर राख कर दूँ। कहो रावण को मार कर सीता देवी को ले आऊँ।'

जामवन्त ने कहा कि तुम में सब कुछ करने की सामर्थ्य है। तुम्हें केवल सीता का पता लगा लाना है। राघवेंद्र जैसा ठीक समझेंगे वैसा करेंगे। हनुमान ने कहा जैसी आपकी आज्ञा। अच्छा! जब तक मैं लौट कर न आऊँ तब तक आप लोग यहीं रहें। अंगद ने हनुमान को आश्वासन दिया। फिर वह सबको नमस्कार कर चल दिये। हनुमान को सामने पर्वत का शिखर दिखायी पड़ा। वह दौड़कर उसी पर चढ़ गये। उन्होंने देखा कि विशाल सागर लहरें ले रहा है। उनका जोश और बढ़ गया। सागर का नील रंग देख उनके सामने राम की मूर्ति आ गयी। उन्होंने प्रभु को नमस्कार किया, मुँह में मुद्रिका दबायी। कमर पर हाथ रख खड़े हुए। राम का नाम लेकर समुद्र में कूद पड़े। जिस जगह कूदे वहाँ एक बहुत बड़ा गड्ढा हो गया। चारों ओर ऊँची-ऊँची लहरें उठने लगीं। उसके छींटे किनारे पर खड़े हुए लोगों पर पड़े। उन्होंने डुबकी लगायी और भीतर ही भीतर बहुत दूर जा निकले। वे दोनों हाथों और पैरों से तैरते जा रहे थे। उनके अदम्य उत्साह को देख कर सागर ने मैनाक से कहा कि तुम अपने शृंग उठाकर पवन सुत को थोड़ा विश्राम दो। मैनाक पवन का मित्र था। उसने हनुमान से कहा—'बेटे! यात्रा लम्बी है। थक गये होगे। थोड़ा विश्राम कर लो। फिर आगे जाना।'

हनुमान ने कहा कि काम करने वाले विश्राम नहीं करते। विश्राम से आलस्य आ जाता है। आलस्य से काम बिगड़ जाता हैं। मैं आवश्यक कार्य से

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
जा रहा हूँ। आपसे फुरसत में मिलूँगा। पर आपका आग्रह भी टालना ठीक नहीं। यह कह कर उन्होंने दाहिने हाथ से शिखर का स्पर्श किया। मुहूर्त भर के लिए दम ले ली। फिर एक लम्बी श्वास खींच बिदा लेकर चल दिये। मैनाक ने कहा कि तुम्हारी लगन पक्की है। भगवान करें तुम अपने कार्य में सफलता प्राप्त करो।

सुरसा से भेंट

मैनाक से विदा लेकर वह कुछ दूर चले ही थे कि नागिन सुरसा मिल गयी। वह उनकी ओर लपकी। हनुमान ने सोचा कि सर्प का मार्ग काटना अशुभ होता है। अतः उसे बराकर दायें मुड़ तेजी से तैरने लगे। वह हनुमान के मन का भाव ताड़ गयी। वह बढ़ कर सामने पहुँची। हनुमान दूसरी ओर मुड़ गये। वह भी उधर ही मुड़ी। हनुमान जिधर मुड़ते, उधर ही वह भी मुड़ जाती। अंत में विवश होकर हनुमान ने कहा कि तुम कौन हो ? मेरा मार्ग क्यों रोक रही हो ? सामने से हटो, नहीं तो मैं तुम्हारा फन मसल दूँगा।' उसने कहा कि मुझे मामूली नागिन न समझना। मैं नागों की दादी सुरसा हूँ। मुझे भूख लगी है। मैं तुम्हें खाऊँगी। हनुमान ने कहा तुम काटना जानती हो, तुम्हारे खाने वाले दाँत कहाँ ? मुझे तुमसे भिड़ने का समय नहीं। जब लौट कर आऊँ तो खा लेना सुरसा ने कहा कि बड़े चतुर हो। हमें सोलह दूनी आठ पढ़ाते हो। मैं तुम्हारे भुलावे में आने वाली नहीं। ऐसा कह कर वह झपटी। हनुमान ने कहा कहाँ मेरा मारी भरकम शरीर और कहाँ तुम्हारा छोटा सा मुँह ! तुम मुझे कैसे खा पाओगी ? यह सुनते ही सुरसा ने बड़ा सा मुँह फाड़ दिया। हनुमान भी बड़े हो गये। सुरसा जैसे-जैसे मुँह फैलाती जाती, वैसे-वैसे हनुमान भी बढ़ते जाते। अंत में सुरसा इतनी विशाल हो गयी कि उसकी पूँछ समुद्र की तली को और फन पानी के ऊपर जा लगा। उसकी आँखें लौट कर पीछे हो गयीं। हनुमान ने मौका देख कर बदन छोटा कर लिया। उसके मुँह में घुस गये। और जल्दी से बाहर निकल आये। फिर हाथ जोड़ कर बोले—'माता जी ! प्रणाम। मैंने आपकी इच्छा पूरी कर दी। 'माँ' शब्द सुनते ही सुरसा का हृदय पिघल उठा। उसने कहा—'बेटे ! जियो। मैं तो तुम्हारी परीक्षा लेने आयी थी। तुम बुद्धिमान भी हो और शक्तिमान भी। मुझे विश्वास है कि तुम अपने काम में सफल होगे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सिंहिका वध

हनुमान ने सोचा कि तैर कर जाने में खतरा है। संभव है जल में मगर मच्छ या घड़ियाल हों। यदि कोई पैर खींच ले तो क्या होगा ? अच्छा ! आकाश मार्ग से उड़ कर क्यों न चला जाय। उन्होंने चिड़ियों की तरह हाथ फैलाये और हवा में फट-फटाते हुए बढ़े। पवन देव तो अनुकूल थे ही। वह वेग से उड़ने लगे। सहसा उनकी गति मंद पड़ गयी। उन्हें जान पड़ा कि कोई नीचे खींच रहा है। उन्होंने बड़ा जोर लगाया पर आगे बढ़ न सके। वह उसकी ओर खिचते ही चले गये। पास पहुँचने पर देखा कि छाया ग्राहिणी सिंहिका अजगर के समान उन्हें श्वासों से खींच रही है। वह निगलने को है। एक मुसीबत से छुटकारा मिला ही था कि दूसरी आ पहुँची। पर वह किंचित न घबड़ाये। उन्होंने साहस से काम लिया। मुख के पास पहुँच कर उसके जबड़े पकड़ लिए और फाड़ने लगे। पर वह ज्यों ज्यों जोर लगाते त्यों-त्यों वे रबड़ की तरह बढ़ते जाते। तब उन्होंने नखों से जबड़े फाड़ डाले। मुख चीर कर दो टुकड़े कर दिये। उसके प्राण पखेरू उड़ गये। मरते समय उसने कहा—'मैं सिंहिका राक्षसी हूँ। मैं आकाश में उड़ते हुए पक्षियों को उनकी छाया मात्र से खींच लेती हूँ। मुझसे बचकर कोई लंका में प्रवेश नहीं कर सकता। पर तुमसे मैं हार गयी। तुम सचमुच महावीर हो। तुम लंका जा सकते हो।'

हनुमान का लंका में प्रवेश

सिंहिका को मार मारुति नंदन समुद्र को पार कर समुद्र बेला पर पहुँचे। ताड़ और नारियल के पेड़ों को दूर ही से देख कर वह समझ गये कि भूमि आ गयी। तट पर खड़े होकर उन्होंने साँस ली। राम का नाम लिया। फिर एक ऊँचे टीले पर जा कर खड़े हुए। चारों ओर दृष्टि दौड़ायी। नगर के चारों ओर ऊँची प्राचीर खड़ी थी। उसमें जगह-जगह बुर्जें बनी थीं। उन पर बैठे हुए निशाचर नगरी की रक्षा कर रहे थे। भीतर जाने के लिए फाटक थे। सिंह द्वार पर आने-जाने वालों की भीड़ लगी थी। अंदर जाने वालों पर कड़ी नजर रखी जाती थी। बिना जाने बूझे कोई घुसने न पाता था। हनुमान नगर के बाहर चारों ओर घूमते फिरे।

लंकापुरी ऊँचे त्रिकूट पर्वत पर बसी थी। उसके भव्य भवन चूने से पुते चमक रहे थे। उनकी दीवालें सोने और चाँदी के पत्रों से मढ़ी थीं। उन पर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

डूबते हुए सूर्य की किरणें चमक रही थीं। उनमें चंदन के किवाड़ लगे थे। दरवाजों पर हीरे और मोतियों की झालरें लटक रही थीं। भवनों पर पताकायें फहरा रही थीं। लंकापुरी की शोभा इन्द्रपुरी से कम न थी। पर हनुमान का ध्यान उसकी ओर न था। हनुमान ने सोचा कि यदि मैं दिन के प्रकाश में जाता हूँ, तो कोई न कोई देख ही लेगा और भेद खुल जायगा। अतः सूर्य डूबने तक इधर-उधर घूमते और पता लगाते रहे।

लंकिनी से भेंट

सन्ध्या होने पर मच्छड़ बन कर हनुमान ने लंका में प्रवेश किया। वह भन्नाते हुए सर्तक दृष्टि से चले जा रहे थे कि एक निशाचरी की दृष्टि उन पर पड़ ही गयी। उसने कहा—'धूर्त ! तू कौन है ? कहाँ जा रहा है ? खबरदार ! पैर आगे न बढ़ाना। मैं लंका की अधिष्ठात्री हूँ। मेरा काम चोरों का पता लगाना है। मुझसे बचकर कोई नहीं जा सकता।' हनुमान ने उसकी बात पर ध्यान ही न दिया। उसने मच्छड़ समझ थप्पड़ उठाया। मच्छड़ एक दम विलीन हो गया। उसके स्थान में हनुमान जी प्रत्यक्ष हो गये। उन्होंने उसकी पीठ पर जोर का घूँसा मारा। उसके लगते ही वह कराह कर गिर पड़ी। उसकी आँखों के सामने अँधेरा छा गया। उसका कलेजा फट गया। मुँह से रुधिर बहने लगा उसे छठी का दूध याद आ गया। होश आने पर उसने कहा—'तुम महाबली हनुमान हो। चलते समय ब्रह्मा ने मुझसे कहा था कि तुम जब किसी बन्दर की मार से व्यथित होना तो समझ लेना कि निशाचर कुल का नाश समीप है। मेरे अहोभाग्य कि देवदूत के दर्शन पाये। जाओ, अपना काम करो।'

लंका की एक रात

सन्ध्या होते ही लंका नगरी की शोभा बढ़ गयी। घरों, बाजारों, गलियों और राजमार्गों में प्रकाश फैल गया। चारों ओर चहल-पहल मच गयी। लोग क्रय-विक्रय के लिए निकल पड़े। भैंसे, बछड़े, बकरे, भेड़े आदि पशु कटने लगे। मछली, अंडे, मांस, मदिरा, तेल, फुलेल की अधिकता थी। कहीं अखाड़े लगे थे। उनमें योद्धागण जोर कर रहे थे। कोई दंड-बैठक कर रहा था। कोई मुग्दर भाँज रहा था। कोई टहल रहा था। कोई पसीना सुखा रहा था। हनुमान

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जी यह सब देखते चले जा रहे थे। उनकी ओर देखने की किसी को फुरसत न थी। घरों से मांस पकने की गंध आ रही थी। घी और तेल की अरघानें उठ रही थीं। हनुमान जी नाक सिकोड़ते हुए बढ़े। भोजनालय में निशाचर हड्डियों से मांस नोच-नोच कर खा रहे थे। बीच-बीच में मदिरा पीते जाते थे। उन्होंने नृत्य और संगीत शालायें देखीं। उनकी वेष-भूषा विचित्र थी। नग्न एवं अर्द्धनग्न स्त्री-पुरुष हाथ मिला कर नाच रहे थे। उनके गीत समझ में न आते थे। हनुमान को यह सब देख अरुचि हो गयी। धीरे-धीरे रात बढ़ गयी। चहल-पहल कम हो गयी। बाहर के दीपक बुझ गये। लोग शयन कक्षों में चले गये।

हनुमान ने लंका के भवनों को एक-एक कर के देखा। वह कहीं खिड़कियों से झाँकते, कहीं झरोखों से। कहीं छत पर चढ़ कर देखते और कहीं प्राङ्गणों में उतर कर ढूँढ़ते। राक्षस अपनी पत्नियों के साथ सो रहे थे। उनके शरीर बड़े भयानक थे। मदिरा पीने से चेहरे विकृत हो रहे थे। कोई खर्राटे ले रहा था। कोई भैंसे की तरह फुसकार रहा था। कोई करवट के बल पड़ा था। और कोई मुँह के बल। कोई मदहोश था, कोई विक्षिप्त। नारियाँ सजी-धजी पड़ी थीं। उनके वस्त्र अस्त-व्यस्त थे। अंग प्रत्यंग वीभत्स थे। हनुमान जी उधर से मँह घुमा कर चल दिये। उन्हें सीता कहीं दिखायी न पडीं।

हनुमान ने राजभवन में प्रवेश किया। रावण की रंगशाला देखी। वह विभिन्न लोकों की सज्जा से सँवारी गयी थी। उसमें अनेक कक्ष थे। इनमें रावण की वे पत्नियाँ रहती थीं जिन्हें, वह देवलोक, गन्धर्वलोक, नागलोक आदि लोकों से विजय करके लाया था। उन्होंने रावण का शयन कक्ष भी देखा। रावण एक पलँग पर लेटा था। उसका शरीर काले पहाड़ सा लग रहा था। रोमावली शूकर के बालों की सी थी। उसके शिरों को देख कर पता न चलता था कि वह किस ओर देख रहा है? उसकी भुजाएँ ऐसी जान पड़ती थी, मानों पर्वत कंदरा में नाग लोट रहे हों। मंदोदरी पास के पलँग पर पड़ी सो रही थी। उन्होंने जितनी सुन्दरियाँ देखीं वे सब सजी-धजी थीं। इसीसे समझ लिया कि इनमें सीता नहीं हैं। वह सोच में पड़ गये कि अब क्या किया जाय? रात बीत रही थी। तारे डूब रहे थे। दीपकों का प्रकाश मंद पड़ रहा था। अतः वह राजभवन के बाहर निकल आये।

हनुमान की विभीषण से भेंट

प्रातःकाल हनुमान विभीषण के मंदिर पहुँचे। घर के बाहर फुलवाड़ी लगी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

थी। उसमें बिल्व, तुलसीदल, आम्र, कदली एवं सुगंधित पुष्पों वाले पौधे और बेलें लगी थीं। गोशाला में गायें बँधी थीं। बछड़े रँभा रहे थे। घर की दीवार पर धनुष-बाण बने थे। द्वार पर स्वर्ण पिंजर में तोता बैठा था। उन्होंने सोचा कि यह किसी साधु का घर है। उससे मिलना चाहिए। यदि इससे काम न बना तो बिगड़ भी नहीं सकता। तोते ने जो बन्दर को आते देखा तो 'सीताराम-सीताराम' रटने लगा। हनुमान ने झट से ब्राह्मण का वेश बनाया और 'नमो नारायण' ! नमो नारायण' !! कह कर आने की सूचना दी।

विभीषण ने समझा कि कोई संन्यासी आया है। उसने दरवाजा खोला, प्रणाम किया और एक सेवक को अर्घ्य एवं पाद्य लेने भेजा। हनुमान ने कहा कि आप मेरे लिए कष्ट न करें। मैं संन्यासी नहीं, ब्राह्मण भी नहीं वरन केसरी पुत्र हनुमान हूँ। विभीषण ने कहा कि आप चाहे जो हों, पर मेरे अतिथि हैं। अतिथि गृहस्थ के लिए सर्वदा पूज्य है। ऐसा कह कर उन्हें आदर के साथ अपने कक्ष में ले गया, आसन पर बिठाया और कुशल पूछी।

हनुमान ने कहा कि आप किष्किधा के सुग्रीव को जानते होंगे। मैं उनका सेवक हूँ। एक दिन हम लोग ऋष्यमूक पर्वत पर बैठे थे। इतने में दो धनुर्धारी राजकुमार आते दिखायी पड़े। मैंने बढ़ कर उनका परिचय पूछा। उन्होंने कहा—'हम अयोध्या के महाराज दशरथ के पुत्र राम और लक्ष्मण हैं। विमाता के कहने से पिताजी ने हमें चौदह वर्ष का वनवास दिया है। हमारे साथ सीता भी चली आईं। हम यहाँ पंचवटी में रहते थे। वहीं से सीता को कोई ले गया। जटायु ने बतलाया कि रावण सीता को बल-पूर्वक हरण कर ले गया है। हम उन्हीं को खोजते फिर रहे हैं।" हमने भी जटायु की बात का समर्थन किया। उनके उत्तरीय और नूपुर दिखलाये जो सीता ने विमान से हमारी ओर फेंके थे। राम ने उन्हें पहचाना और रो पड़े। हम लोगों का परिचय मैत्री में बदल गया। आप जानते हैं कि मैत्री में कोई दुराव नहीं होता। उन्होंने जो सुग्रीव की विपत्ति सुनी तो अपना दुख भूल गये। मुझे बाली को समझाने के लिए भेजा। बाली को अपने बल का बड़ा गर्व था। वह किसी भी शर्त पर सुलह करने को तैयार न था। अंत में सुग्रीव को लड़ने जाना पड़ा। दोनों में द्वन्द्व युद्ध हुआ। सुग्रीव को हारते देख राम ने एक ही बाण से बाली को मार डाला। सुग्रीव राजा हुआ अंगद युवराज हुए।

सुग्रीव ने सीता की खोज में चारों ओर अपने दूत भेजे। हम लोग इधर की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ओर आये। हमारे अन्य साथी समुद्र के उस पार पड़े हैं। मैं किसी तरह यहाँ आ पहुँचा। रात भर सीता माता को ढूँढता रहा। मैंने अनेक मद्यप, दुर्व्यसनी, मांसाहारी राक्षसों को देखा। ये शरीर के बनाव-शृंगार और भोग-विलास को ही जीवन का सर्वस्व समझते हैं। इन्हें केवल वर्तमान की चिंता है, भविष्य की नहीं। मैंने रावण का भवन भी देखा। वह भी मदहोश पड़ा था। मुझे यहाँ के नारकीय जीवन पर तरस आता है। प्रातःकाल जो तुम्हारा घर देखा तो मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ कि निशाचरों के बीच में तुम कैसे ?

विभीषण ने कहा—'भाई ! मेरा हाल न पूछो। मैं किसी तरह जीवन के दिन काट रहा हूँ। मेरी वही दशा है, जो बत्तीस दाँतों के बीच जीभ की होती है। मैंने यहाँ का रंग-ढंग देख आँखें मूँद ली और कान बन्द कर लिए हैं। नित्य हिंसा, बलात्कार, और अपहरण की घटनाएँ सुनी जाती हैं। रावण स्वयं दुराचारी है, फिर उसकी प्रजा क्यों न बिगड़ेगी ?' एक दिन बहन शूर्पणखा रोती हुई दरबार में आयी। उसने बताया कि पंचवटी के राजकुमारों ने मेरा अपमान किया है। नाक-कान काट लिए हैं। खर, दूषण, त्रिशिरा आदि को मार डाला है। भाई को यह सुन कर बुरा लगा। उन्होंने किसी से कुछ कहा-सुना नहीं। दूसरे दिन शूर्पणखा ने बताया कि भाई ने बदला ले लिया। राम-लक्ष्मण को जीत कर उनकी स्त्री छीन लाये।

हनुमान ने कहा कि आपकी बहन बड़ी कुटनी है। वह अपना अपराध राम पर लगाती है। राम तो परायी नारी को भूल कर भी नहीं देखते। वह एक पत्नी व्रती हैं। यदि ऐसा न होता तो सीता के पीछे क्यों कष्ट उठाते ? दुनिया में नारियों की कमी नहीं फिर राजाओं के लिए ? शूर्पणखा सरासर झूठ बोलती है। स्त्रियाँ झगड़ा कराना खूब जानती हैं। वह भाइयों-भाइयों को लड़ा देती हैं। राज्यों का विनाश कर देती हैं। उनके फंदे में जो न पड़े वही अच्छा। मेरी समझ में रावण ने कायरता दिखायी। यदि वह राम को जीत कर सीता को लाता तो मैं उसे वीर कहता। वह चोरों की तरह घुस कर अकेले में सीता को बलपूर्वक उठा लाया। वह राजा होने के योग्य नहीं। राजा को धर्मशील होना चाहिए। उसका अन्त समीप है। राम उसे अवश्य मारेंगे। किंतु दण्ड देने के पहले वह निश्चित कर लेना चाहते हैं कि रावण अपराधी है या नहीं। क्या सीता स्वेच्छा से उसके साथ आयी हैं ? अथवा यहाँ आकर स्वीकृति दे दी है। मेरी समझ में रावण बलात हर लाया है। यदि ऐसा न होता तो हम उन्हें

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चीखते-चिल्लाते न सुनते। सीता से मिलकर यही जानना चाहता हूँ। यदि इस विषय में कुछ जानते हो तो मेरी मदद करो।

विभीषण ने कहा कि रावण महा अभिमानी है। वह गर्व की मूर्ति है। अपने आगे वह किसी की सुनता ही नहीं। फिर भी मैं एक बार उसे समझाने का प्रयत्न करूँगा। आगे वही होगा जो भगवान की इच्छा। मैं समझता हूँ कि दोपहर हो रही है। आप थके और भूखे होंगे। भोजन और विश्राम कर लीजिए। फिर मैं सीता का पता बता दूँगा।

हनुमान ने कहा कि काम के समय मुझे न भूख लगती है और न प्यास। नींद तो मुझे आती ही नहीं। मैं जब तक काम न पूरा कर लूँगा, तब तक न भोजन करूँगा और न विश्राम। बस मुझे सीता का पता बता दो। तुम्हारी बड़ी कृपा होगी। यदि मैं बिना मिले या बात-चीत किये लौट जाऊँ तो लोगों को क्या मुँह दिखाऊँगा? मेरी बात पर किसी को विश्वास न होगा कि मैं लंकापुरी हो आया।

विभीषण ने कहा कि मेरी धर्मपत्नी बतलाती है कि सीता अशोक वन में हैं। अशोक वाटिका रावण के भवन का भीतरी उद्यान है। उसके चारों ओर पत्थरों की ऊँची दीवार बनी है। दीवार समुद्र तट पर सीधी खड़ी है। उस पर चढ़ना कठिन है। उसकी रक्षा बाहर से सैनिक औरभीतर से सैनिकायें करती हैं। उसमें जाने का रास्ता राजभवन के भीतर होकर है। वहाँ केवल नारियाँ जा सकती हैं। पुरुषों की तो गंध भी नहीं जा सकती। यदि तुम्हें जाना हो तो दक्षिण द्वार से जा सकते हो। उस ओर महासागर होने से सन्नाटा रहता है। किसीको संदेह भी नहीं हो सकता। वहीं एक गुप्त द्वार है। रावण उसीसे प्रायः जल क्रीड़ा करने रानियों के साथ जाया करता है। आजकल वह भी बन्द रहता है।

हनुमान चलने को हुए तो विभीषण ने कहा कि आज मेरे जीवन का शुभ दिवस है। मुझे विश्वास हो गया कि मुझ पर भगवान की कृपा है। बिना उनकी कृपा के संत के दर्शन नहीं होते। कृपया यह तो बताइये कि यदि मैं राम की शरण में आया तो क्या वे मुझे ग्रहण करेंगे?

हनुमान ने कहा कि राम बड़े दीनदयालु हैं। वह शरणागत वत्सल हैं। तुम्हीं देखो मैं क्या हूँ? जाति का वानर। स्वभाव का चञ्चल। काम और क्रोध का भण्डार, न रूप-स्वरूप और न हृदय सुन्दर। पापी इतना कि यदि कोई प्रातःकाल देख ले या नाम ले, तो उसे दिन भर खाने को न मिले, पर प्रभु की मुझ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पर असीम कृपा है। वह मुझ पर बड़ा विश्वास करते हैं। तभी तो यह काम मुझे सौंपा है। संदेह तभी तक है, जब तक आप उनके पास नहीं जाते। उनसे मिलते ही आपको परम शान्ति मिलेगी।

अशोक वाटिका में सीता

विभीषण को धन्यवाद देकर हनुमान उनके प्रदर्शित मार्ग पर चल दिये। वह वृक्षों और दीवालों पर इस तरह चढ़ते-उतरते कि जरा भी आहट न होती। वह कूदते-फाँदते दक्षिणी फाटक से भीतर पहुँचे। वहाँ अशोक वृक्षों की प्रधानता थी। वह समझ गये कि यही अशोक वन है। फिर चुपके से उस वृक्ष पर पहुँचे, जिसके नीचे सीता बैठी कुछ सोच रही थीं। उनके सौम्य-स्वरूप, गौर-वर्ण और क्षीण शरीर को देखते ही अनुमान लगाया-शायद यही सीता हैं। उनके शरीर पर आभूषण न थे। केवल एक पीली साड़ी थी। वह भी मैली हो गयी थी। बालों में जटायें पड़ गयी थीं। चोटी पीठ पर लटक रही थी। उन्हें विश्वास हो गया है कि यही सीता माता हैं। उन्होंने मन ही मन प्रणाम किया। फिर सोचने लगे कि अपना परिचय कैसे दें ? इतने में रावण मंदोदरी के साथ आ पहुँचा।

रावण बड़े गर्व से अकड़ता हुआ आ रहा था। उसके आगे दो दासियाँ मशालें दिखा रही थीं। पीछे अनेक दासियाँ थीं। कोई मदिराघट लिये थी, कोई छत्र ताने थी। कोई चँवर डुला रही थी। कोई सुवर्ण चौकी लिए थी। कोई ताड़ का पंखा झल रही थी। रावण मदिरा पिये था। उसके पैर लड़खड़ा रहे थे। उसे देखते ही हनुमान पहचान गये कि यही रावण है। वह पत्तों की आड़ में छिप गये।

सीता ने जो रावण को देखा तो मारे डर के थर-थर, थर-थर काँपने लगीं। उन्होंने घुटनों से पेट दबा लिया। दोनों हाथों से मुँह ढाँप कर छाती से लगाया और सिमट कर गठरी बन गयीं। रावण उनके पास आकर कहने लगा :— 'सुन्दरी ! मैं बड़े प्रेम से तुम्हारे पास आता हूँ, पर तुम बोलती तक नहीं। मेरी समझ में नहीं आता कि तुम्हें यहाँ क्या कष्ट है ? तुमको उदास देख कर मुझे बड़ा दुख होता है। मैं तुम्हें दुखी नहीं, वरन सुखी बनाने लाया हूँ। मेरे पास अतुल संपत्ति है। विशाल साम्राज्य है। सोने की लंका है। मेरा भण्डार रत्नों से भरा है। मेरे सहस्रों सेवक हैं। अग्नि, वरुण, यम, वायु आदि देवता मेरी सेवा किया करते हैं। मेरी सैकड़ों रानियाँ हैं। यदि तुम मुझ पर कृपादृष्टि करो तो

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मैं तुम्हें पटरानी बना सकता हूँ। सब रानियाँ तुम्हारी सेवा करेंगी। लंका तुम्हारी होगी। तुम लंकेश्वरी होगी। यह अतुल संपत्ति तुम्हारे चरणों में लोटेगी। तुम राम को भूल जाओ। क्यों अपना जीवन रो-रोकर नष्ट कर रही हो ? तुम्हारा फूल सा शरीर दिन-दिन मलिन होता जा रहा है। इसे क्यों सुखा रही हो ? जीवन अलभ्य है। इसे क्यों नष्ट करती हो ? मेरे बाहु तुम्हारा स्वागत करने को तैयार हैं। बोलो, क्या कहती हो ?

रावण की बातें सुनकर सीता को क्रोध आ गया। वह ऐसे व्यक्ति से बोलना भी अपमान समझती थीं। परंतु किसी की बात का उत्तर न देना अभद्रता समझ उसकी ओर पीठ करके बोलीं—'यदि तुम्हें रानी बनाना था तो जनकपुरी से क्यों चले आये थे ? अब तुम अपने वैभव का लोभ दिखाते हो। जब मैंने अयोध्या और मिथिला का वैभव छोड़ दिया तब लंका के विभव की क्या परवाह करती हूँ ? आज तुम अपने बल का बखान करते हो। पर स्वामी के सामने जाने की तुम्हारी हिम्मत न पड़ी। पंचवटी से सूने में चुरा लाये ! तुम्हें अपने कर्मों पर लज्जा नहीं आती। तुम मदांध हो। इसीसे तुम्हें दिखायी नहीं पड़ता। कहाँ सिंह और कहाँ गीदड़ ! कहाँ राम ! कहाँ तुम ! अपना मुँह जाकर दर्पण में देखो। मैं तुम्हारे घृणित प्रस्ताव को कभी स्वीकार नहीं कर सकती। मेरे कण्ठ में या तो प्रभु की भुजाएँ होंगी या तेरी तलवार। हट ! मेरे सामने से दूर हो।

सीता के अपमानजनक बचनों को सुन कर रावण चंद्रहास तलवार म्यान से खींच कर मारने दौड़ा। यह देख कर मंदोदरी ने उसका हाथ पकड़ लिया। रावण ने कहा कि इसकी यह मजाल कि मुझे अपशब्द कहे। मैं इसे बिना मारे न छोड़ूँगा। अच्छा हो तुम इसे समझा दो। इसे मैं एक महीने का और समय देता हूँ। यदि मेरी बात न मानी तो इसी तलवार से सिर उड़ा दूँगा। मंदोदरी ने कहा—अच्छा ! मैं दासियों को नियुक्त कर दूँगी। वे इसे समझा देंगी। आप भी औरतों के मुँह लगते हैं। चलिए, घर चलें।

रावण के जाते ही राक्षस-नारियों ने सीता को घेर लिया। उनके रूपरंग और आकृतियाँ विचित्र थीं। कोई बड़ दन्ता थी, कोई दीर्घ नखा। कोई दीर्घ केशिनी थी और कोई मुंडी। कोई विकृत वदना थी और कोई अंग हीना। कोई शूकर मुखी थी और कोई शृगाली। उनका नेतृत्व शूर्पणखा कर रही थी। उसने कहा—'रावण बड़ा प्रतापी है। उसकी रानी बनने में क्या हानि ? बड़ी-बड़ी देवियाँ आईं। पहले वे भी तुम्हारी तरह पतिव्रता बनती रहीं। फिर यहीं के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रंग में रँग गयीं। यह यौवन फिर न मिलेगा। इसका सदुपयोग क्यों नहीं कर लेती ? सीता उनकी बातों को विष के घूँट की तरह पीती रहीं।

त्रिजटा का स्वप्न

उसी समय त्रिजटा, जो कुछ दूर पर पड़ी सो रही थी, अचानक जाग पड़ी। अपनी संगिनी पद्मा, इन्दिरा, माला, कल्याणी आदि को जगाया और कहा—'मैंने आज एक बड़ा भयानक स्वप्न देखा है।' सखियों ने पूछा—'वह क्या ? इतने में सभी नारियाँ घिर आईं और बड़े कुतूहल से उसका स्वप्न सुनने लगीं। त्रिजटा ने कहा—'मैंने देखा कि एक बन्दर लूका लिए लंका के भवनों में आग लगा रहा है। लंका जलकर राख हो गयी है। सारी सेना युद्ध भूमि में अचेत पड़ी है। स्त्रियाँ छाती पीट कर रो रही हैं। उनका कोई पुरसाँ हाल नहीं। वंश में कोई दीपक जलाने वाला नहीं रहा। रावण की भुजाओं का पता नहीं। उसका शिर मुड़ा है। वह तेल से नहाये है। नंगे बदन, गधे पर सवार, दक्षिण दिशा को जा रहा है। इधर नगर में राम की दोहाई फिर रही है। विभीषण के राजा होने की घोषणा डुगडुगी पर की जा रही है। राम ने सीता को बुला भेजा है। वे पुष्पक विमान में बैठा कर उत्तर की ओर जा रहे हैं। मेरा स्वप्न झूठ नहीं हो सकता। यह दस दिन में सत्य होकर रहेगा। यदि तुम अपना भला चाहती हो तो सीता को तंग न करो। इन्हें अपनी सखी मानो। इनके दुख को अपना दुख समझो। आज जो मुसीबत इन पर है, वही कल तुम पर भी आ सकती है। यह सुन कर वे सब चल दीं।

जब त्रिजटा भी जाने लगी तो सीता ने उसका हाथ पकड़ कर कहा—सखी ! क्या तुम भी जा रही हो ? जरा देर मेरे पास बैठो। तुम्हें देख कर मैं अपना दुख भूल जाती हूँ। अपनी व्यथा रोकर कह देने से मन हल्का हो जाता है। दुखियों का दुख रोने से ही कटता है। पता नहीं, मेरे दुखों का कभी अन्त होगा या नहीं ? मैंने तो आग में जल जाने का निश्चय कर लिया है। यदि तुम कहीं से आग ला देती, तो मुझ पर बड़ी कृपा होती। मैं तब तक पेड़ों के नीचे लकड़ियाँ बीनती हूँ। बहन ! अब मुझ से राम का विरह सहा नहीं जाता। इधर रावण एक महीने में मार डालने की धमकी दे गया है। ऐसे जीवन से तो मर जाना भला है। रावण के हाथ मरने से तो स्वयं मरना ठीक है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

त्रिजटा ने सीता के आँसू पोंछते हुए कहा–"बहन! धीरज धरो। हर काम का एक समय होता है। यदि तुम जल कर मर गयी, तो राम क्या करेंगे? तुम्हें अपने लिए नहीं वरन् राम के लिए जीना है। यदि जीवित रहीं तो मिलने की आशा है। यदि प्राण त्याग दिये तो सिवाय पछताने के क्या होगा? जहाँ इतने दिन कष्ट उठाये हैं, वहाँ दस दिन और सही। मुझे विश्वास है कि इस बीच राम आयेंगे और रावण को विजय कर तुम्हें ले जायँगे। फिर रात में कहीं आग भी नहीं मिल सकती। रावण की आज्ञा है कि आधी रात के बाद नगरी में कहीं आग न जले। ज्योतिषी ने बताया है कि लंका में आग लगने का भय है। अच्छा! अब रात अधिक हो गयी है। पतिदेव मेरी प्रतीक्षा करते होंगे। यदि तुम्हारी यही इच्छा है तो मैं सुबह आग का प्रबन्ध कर दूँगी। तुम किसी बात की चिंता न करो।" ऐसा कह कर वह चली गयी।

हनुमान की सीता से भेंट

राक्षस नारियों के चले जाने पर सीता अकेली रह गयीं। वह आकाश की ओर ताकने लगीं। उन्होंने कहा–'यहाँ तो मेरी कोई सुनने वाला नहीं। भगवान कोई जलती हुई उल्का डाल देते तो अच्छा होता। अशोक! तुम्हारी किरणें तो अग्नि के समान लाल-लाल हैं। तुम्हीं कोई चिनगारी फेंक देते तो मैं आग लगा कर जल जाती। तुम्हारा नाम अशोक है। अपने नाम को सार्थक करो। मेरा शोक दूर करो।

हनुमान ने वृक्ष पर बैठे सीता को दुखी देखा। उनसे रहा न गया। उन्होंने मुद्रिका फेंक दी। सीता ने समझा कि वृक्ष देव ने दया कर के अंगार फेंका है। उन्होंने झपट कर उठाया। अरे! यह तो स्वर्ण मुद्रिका है। इसका हीरा कैसा दमक रहा है? यह मेरी ही तो है। इसमें तो राम नाम अंकित है। विवाह के समय परिचय में दी गयी थी। मैंने गंगा उतरते समय केवट को देने के लिए प्रभु को दी थी। पर यहाँ कैसे आयी? क्या रावण ने मुझे छलने के लिए बनवायी है? पर यह तो असली है। नकली अँगूठी ऐसी बन नहीं सकती। वह इस प्रकार के तर्क-वितर्क कर ही रही थीं कि हनुमान ऊपर से ही राम-कथा सुनाने लगे।

महाराज दशरथ अयोध्या के चक्रवर्ती राजा हुए। राम उनके ज्येष्ठ पुत्र हैं। वह राम को राज्य देना चाहते थे। पर विमाता ने अपने लड़के के लिए

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राज्य और राम के लिए चौदह साल का वनवास माँगा। राजा वचन वद्ध थे। अतः कुछ बोल न सके। राम पिता के बचनों को सत्य करने के लिए वन चले आये। उनके साथ सीता भी आईं। लक्ष्मण ने दोनों का साथ दिया। पुत्र वियोग में महाराज की मृत्यु हो गयी। भरत ने राजगद्दी न ली। वह राम को मनाने चित्रकूट आये। पर राम ने भरत को समझा कर लौटा दिया और आप पंचवटी चले आये। वहीं से रावण सीता को चुरा लाया। एक दिन हमारी उनकी भेंट हो गयी। हमने सुग्रीव से मित्रता करा दी। राम ने बाली को मार कर सुग्रीव को पंपापुर का राज्य दिला दिया और उसकी स्त्री वापस करा दी। सुग्रीव ने सीता का पता लगाने के लिए चारों ओर अपने दूत भेजे। मैं ढूंढ़ता हुआ यहाँ आ पहुँचा। चलते समय प्रभु ने कहा था कि यदि सीता मिलें तो यह मुद्रिका उन्हें दे देना।

हनुमान की बातें सुनकर सीता सोचने लगीं—'क्या मैं स्वप्न देख रही हूँ ? पर मुझे नींद कहाँ आती है ? मैं जाग ही तो रही हूँ। यह कौन है, जो मुझे रामकथा सुना रहा है ! अरे तुम सामने क्यों नहीं आते ? सीता के कहने से हनुमान पेड़ से उतरे। उनके पास गये। हाथ जोड़, दण्डवत की और पास बैठ गये। सीता ने पूछा—भैया ! तुम्हारा उनका परिचय कैसे हुआ ? हनुमान ने कहा—एक दिन हम सुग्रीव के साथ ऋष्यमूक पर्वत पर बैठे थे। हमने दोनों भाइयों को अपनी ओर आते देखा। हमें सन्देह हुआ कि कहीं बाली ने उन्हें न भेजा हो। मैं उनके पास गया। उनका परिचय पूछा और अपना परिचय दिया। प्रभु ने अपनी सेवा में ले लिया। तब से मैं उन्हीं के साथ रहता हूँ। उनकी मुझ पर असीम कृपा है।

सीता ने कहा—आज मेरे जीवन का बड़ा सौभाग्यशाली दिन है। तुमने प्रभु का समाचार दिया। तुमसे बढ़ कर मेरा सगा कौन हो सकता है? जरा यह तो बताओ कि दोनों भाई कुशल से तो हैं ? क्या वे हमारी कभी याद करते हैं ? प्रभु तो बड़े कोमल चित्त वाले हैं। वे तो सब पर दया करते हैं। पर मेरे लिए क्यों कठोर हो गये हैं ? उन्होंने इतने दिनों तक खोज-खबर न ली। क्या उन्होंने कुछ संदेश दिया है ? ऐसा कहते-कहते उनकी आँखों में आँसू भर आये। वे कुछ बोल न सकीं।

सीता को व्यथित देख हनुमान ने कहा—'माँ ! जब तक प्रभु तुम्हारी कुशल नहीं जान लेते तब तक उनकी कुशल कैसी ? ऊपर से देखने में तो वह शान्त

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जान पड़ते हैं। पर हृदय आँवे की तरह भीतर ही भीतर सुलगता रहता है। उनका शरीर क्षीण हो गया है। पर मन प्रवल है। प्रभु का प्रेम अगाध है। उसमें गम्भीरता है। उच्छृंखलता नहीं। उन्हें कोई कष्ट नहीं केवल आपके दुख से दुखी रहते हैं। वह कह रहे थे—"सीता को रावण क्या ले गया' मेरा सुख सौभाग्य ले गया। मेरी शान्ति छीन ले गया। मुझे वनवास के बारह वर्ष कुछ जान ही न पड़े। पर वियोग में जीवन भार हो गया है। सारी सुखद वस्तुएँ दुखद हो गयी हैं। दिन किसी तरह बीत जाता है। रात काटे नहीं कटती। वह कालरात्रि के समान भयानक लगती है। वासन्ती वायु लू के समान उत्तप्त जान पड़ती है। सावन की वर्षा तप्त तेल की धारा और शारदीय चन्द्रिका वृश्चिक दंश सी लगती है। दक्षिणी पवन सर्प की विषैली फुसकार और वासन्ती शोभा अग्नि की ज्वाला के समान हो रही है। तुम्हारे साथ जिन पेड़ों के नीचे सुख से घूमा करते थे, वे अब काटने दौड़ते हैं। सरोवर के कमलों को बैठ कर घंटों देखा करते थे। उनकी ओर देखने की इच्छा नहीं होती। पत्तों के बिछौने गड़ते हैं, फूल शूल हो गये हैं। मैं किसी तरह जीवन के दिन काट रहा हूँ। जब पुरुष होकर मेरा यह हाल है, तो तुम्हारी न जाने क्या दशा होगी ? उसकी याद आते ही रोयें खड़े हो जाते हैं। अपमान और ग्लानि से हृदय जल उठता है। अपना दुख किससे कहूँ ? लक्ष्मण से कहने में लज्जा आती है। वह स्वयं दुखी रहते हैं। मैं कह कर उन्हें और दुखी करना नहीं चाहता।" माँ ! आप शंका न करें। प्रभु का प्रेम आपसे कुछ कम नहीं है। पर क्या करें लाचार हैं। उन्हें अभी तक तुम्हारा पता नहीं मिला था।

राम का संदेश सुनकर सीता और व्यथित हो उठीं। अभी तक उन्हें संदेह था। उनसे एक शिकायत थी। पर अब वह भी न रही। उनकी दशा सुनकर वह रोने लगीं। हनुमान ने कहा कि आपने जहाँ इतने दिन कष्ट उठाये हैं, वहाँ थोड़े दिन और सही। मैं उन्हें जैसे ही समाचार दूँगा, वे वैसे ही सेना लेकर लंका पर चढ़ायी करेंगे। रावण को मारकर तुम्हें ले जायँगे। मैं आपको स्वयं ले जाता। पर प्रभु ने ऐसी आज्ञा नहीं दी। रावण को उसके अपराधों का वही दण्ड देंगे।

जब हनुमान चलने को हुए तो सीता ने कहा—'तुम्हें देख कर मेरा हृदय शीतल हो गया था। अब तुम भी जा रहे हो। मेरे सामने अंधकार छा रहा है। रावण की बातें तो तुमने सुनी ही होंगी। यदि राम एक महीने के भीतर न आये तो मुझे जीवित न पायेंगे। उन्हें मेरी अस्थियाँ ही मिलेंगी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हनुमान ने कहा कि आप चिन्ता न करें। समझ लें कि मुसीबत गयी। हर बात का अन्त होता है। प्रभु की क्रोधाग्नि में निशाचरों को जलते अब देर नहीं। यदि आज्ञा हो तो मैं इस उपवन के कुछ फल खा लूँ। मुझे बड़ी भूख लगी है। दो दिन से कुछ खाया नहीं। सीता ने कहा कि इस बाटिका की रखवाली राक्षस योद्धा करते हैं। वे विशालकाय और भयंकर हैं। मुझे डर है कि वे कहीं तुम्हें चोट न पहुँचायें। तुम जिस मार्ग से आये हो, उसीसे चुपके निकल जाओ।

सीता का स्नेह देख कर हनुमान फूल उठे। उनका शरीर सुमेरु पर्वत के समान देदीप्यमान हो उठा। उनके पैर तो भूमि पर थे पर हाथ अशोक वृक्ष की डालों को छूने लगे। जंघायें स्तम्भ के समान और भुजाएँ मुग्दर के समान हो गयीं। वह वीरता और शक्ति की साक्षात प्रतिमा बन गये। उनका विशाल रूप देख सीता प्रसन्न हो बोलीं—'वत्स ! चिरंजीव। मुझे विश्वास हो गया कि तुम सब कुछ कर सकते हो। तुम प्रभु के कृपा पात्र हो। तुम्हारी इच्छा पूर्ण हो।

सीता की आशीष सुनकर हनुमान फिर छोटे हो गये। उन्होंने सीता के चरण छू कर कहा—'मैं आपके सामने छोटा हूँ, पर निशाचरों के लिए कालरूप हूँ। मुझे उनका डर नहीं। केवल आपकी आज्ञा चाहिए।

बाटिका विध्वंस

सीता की स्वीकृति पाकर हनुमान बाटिका में घुस गये। उन्होंने पके-पके फल खाये। डालियाँ झकझोर कर तोड़ डाली। पेड़ों के नीचे कच्चे-पक्के फलों का ढेर लग गया। उन्होंने फूल नोच डाले और पौधे उखाड़ फेंके। रक्षकों ने उन्हें मना किया तो फलों से उनको मारा। किसी को नाखूनों से नोचा और किसी को दाँतों से काट लिया। वे रोते हुए रावण के पास पहुँचे और कहा कि न जाने कहाँ से एक बन्दर घुस आया है। उसने सारी बाटिका तहस-तहस कर दी है। रावण यह सुनते ही आग बबूला हो गया। उसने अपने बेटे अक्षय कुमार से कहा कि जाकर बन्दर को भगा दो। अक्षय कुमार दल-बल के साथ वहाँ पहुँचा। हनुमान ने कुछ को मारा, कुछ को मसल दिया और कुछ को धूल में मिला दिया। अक्षय ने जो उन्हें मारने की कोशिश की तो उसे पटक दिया और पैर रख कर छाती मसल दी। उसकी यह दशा देख

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राक्षस भागे। उन्होंने रावण से सारा हाल कह सुनाया। अक्षय के मरने का समाचार सुन रावण ने मेघनाद से कहा—'बेटे! तुम जरा देखो कि कौन सा बन्दर आ गया हैं। उसे बाँधकर लाओ। मैं भी देखूँ कि वह कौन है। उसकी इतनी मजाल कि बाटिका उजाड़े और मना करने पर मेरे बेटे को मारे।'

मेघनाद और ब्रह्मपाश

पिता की आज्ञा से मेघनाद अकेला ही अशोक बाटिका में जा धमका। उसे देख कर हनुमान गरजे। मेघनाद ने कहा कि कहाँ छिपे हो? सामने आओ। नहीं तो बाण से छेद दूँगा। उसने धनुष पर बाण चढ़ाया ही था कि हनुमान एक मोटी डाल लेकर उस पर झपटे। मेघनाद का वार खाली गया। हनुमान ने जो डाल फेंकी तो उसका रथ चूर हो गया। वह रथ से उतर पड़ा। दोनों भिड़ गये। पहले उन्होंने बायाँ हाथ मिलाया। फिर दाहिने पंजे से जोर आजमाने लगे। दोनों हाथों से वे एक दूसरे को ढकेलने लगे। पर कोई टस से मस न हुआ। दोनों बलवान थे। मल्ल-युद्ध में कुशल थे। कोई किसी को गिरा न सका। फिर दोनों में थप्पड़ और घूँसे चले। हनुमान का एक घूँसा मेघनाद की छाती में लगा। वह बेहोश होकर गिर पड़ा। हनुमान ने समझा कि वह मर गया। अतः दौड़कर पेड़ पर चढ़ गये। मेघनाद मरा न था। उसे केवल मूर्छा आ गयी थी।

जब मेघनाद की मूर्छा दूर हुई तो उसे बड़ी लज्जा आई। उसने धनुष उठाया और एक से एक तीव्र बाण छोड़ने लगा। हनुमान बड़े लाघव से दाहिने, बायें, ऊपर, नीचे मुड़ कर बच जाते थे। मेघनाद ने वायव्य अस्त्र चलाया। जोर की हवा चलने लगी। पेड़ हिलने लगे। डालियाँ टूट कर गिरने लगीं। हनुमान वायु की शक्ति झेल ले गये। मेघनाद ने वरुणास्त्र चलाया। आकाश में मेघ घिर आये। घोर जलवृष्टि होने लगी। चारों ओर अंधकार छा गया। पर हनुमान किंचित विचलित न हुए। जब वह छल-बल से जीत न पाया तो उसने ब्रह्मास्त्र छोड़ दिया। और ललकार कर कहा—'बेटा! अब कहाँ बच कर जाते हो?'

हनुमान ने सोचा कि ब्रह्मास्त्र को तो मानना ही चाहिए, नहीं तो मर्यादा ही नष्ट हो जायगी। अस्त्र का मंत्र-बल से प्रयोग हो गया। हनुमान मूर्च्छित हो पेड़ से नीचे गिरे। मेघनाद ने उन्हें तुरन्त बाँध लिया। होश आने पर उन्होंने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अपने को बँधा पाया। यदि वह चाहते तो बन्धन तोड़ डालते पर उन्होंने सोचा कि मुझे रावण से भी तो मिलना चाहिए। अतः वह मेघनाद के पीछे-पीछे चल दिये। मेघनाद बड़े गर्व से अकड़ता हुआ दरबार में पहुँचा। रावण ने कहा कि बंधन छोड़ दो। मेघनाद उन्हें खड़ा कर पिता के सिंहासन के पास अपने आसन पर बैठ गया। इधर लंकापुरी में शोर मच गया कि जिस बन्दर ने अशोक बाटिका उजाड़ी है, वह बाँध लिया गया है। वह दरबार में आया है। उसे देखने के लिए लोगों की भीड़ उमड़ पड़ी। दरबार में तिल रखने को जगह न रही। आपस में धक्का-मुक्की होने लगी।

रावण का दरबार

हनुमानजी दरबार में निर्भय खड़े थे। वह जिधर देखते उधर के लोग घबड़ा कर पीछे हट जाते। लड़के डरते थे कि कहीं बन्दर काट न ले। हनुमान को निःशंक देख रावणने कहा :—

रावण—क्यों रे! तुझे मेरा डर नहीं है? मेरे दरबार में अकड़ कर खड़ा है? तू कौन है! कहाँ से आया है? तुझे किसने भेजा है? तू ने अशोक बाटिका क्यों उजाड़ी? मेरे बेटे को क्यों मारा? क्या तुम समझते थे कि सबको धोखा देकर भाग जाओगे? देखें तुम्हें कौन बचाता है? तुमने किसके बल पर यह सब अनर्थ किया है? यदि तुम सच-सच बता दो तो छोड़ दिये जाओगे।

हनुमान—मैं पवन-सुत हनुमान हूँ। मेरी जाति बानर है। बानरों का भोजन फल-फूल ही है। हम किसीसे पूछ कर फल नहीं खाते। वन हो या उपवन हमारे लिए सब बराबर हैं। हम वृक्ष पर रहते हैं। हमें शाखा-मृग कहा जाता है। एक डाल से दूसरी डाल पर कूदना हमारा स्वभाव है। इससे कच्चे-पक्के फल नीचे गिरते ही हैं। हम क्या करें? अपने स्वभाव से विवश हैं। हमने आपकी बाटिका के सुन्दर फल देखे तो खाने की इच्छा हुई। हमने पेट भर फल खाये। आपके रक्षकों ने मुझे मारा तो मैंने भी उन्हें मारा। उन्होंने गुलेल से पत्थर फेंके मैंने फल फेंक कर मारे। सिपाहियों ने मुझे पत्थरों और डंडों से मारा तो मैंने भी उन्हें डालियों और फलों से मारा। आपके अक्षय ने मुझ पर आक्रमण किया। मैंने गिरा कर पैर रख दिया तो वह कुचल गया।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस पर आपके बड़े लड़के ने मुझे बाँध लिया। मैं यहाँ आ गया। मुझे अपने बंधन की चिंता नहीं। मुझे प्रभु का काम करना है। वह चाहे जैसे करना पड़े।

रावण–तुम्हारे प्रभु कौन ? और कैसा काम ?

हनुमान–वे मेरे ही नहीं सबके प्रभु हैं। वह अखिल ब्रह्माण्ड-नायक हैं। माया उनके बल से ब्रह्माण्डों की रचना करती है। उनके बल से ब्रह्मा विश्व की सृष्टि, विष्णु उसका पालन और शिव उसका संहार करते हैं। जिनके बल से शेष पृथ्वी का भार सँभाले हैं, जिन्होंने महाराज दशरथ के घर में मानव अवतार लिया है और जिनकी धर्मपत्नी को तुम चुरा लाये हो, मैं उन्हीं राम का सेवक हूँ।

रावण–क्या झूठ-मूठ प्रशंसा करता है। मैंने तो उनका नाम भी नहीं सुना। क्या तू ने मेरा प्रताप नहीं देखा ? इन्द्र, अग्नि, वरुण, यम सब मेरे वश में हैं। ये देखो जो लोहे के सीकचों के अन्दर से झाँक रहे हैं, वे सब दिकपाल हैं। मैंने आकाश, पाताल, भू आदि सभी लोक जीत लिये हैं। तू जिनकी प्रशंसा के गीत गा रहा है, उन्हें मैं एक साधारण मानव समझता हूँ। मेरे सामने नर की प्रशंसा करते तुझे लज्जा नहीं आती ?

हनुमान–वह नर नहीं नारायण हैं। तुमने उन्हें जनकपुरी में अवश्य देखा होगा। सुबाहु की भुजा उन्होंने ही काटी। मारीच को उन्होंने ही मारा। उसने जरूर तुमसे अपना हाल बताया होगा। उन्होंने खर, दूषण और त्रिशिरा को मारा जिनके बल का तुम्हें बड़ा गर्व था। उन्होंने ही शूर्पणखा की नाक और कान काटे। तुम उन्हें अच्छी तरह जानते हो और यदि नहीं जानते तो बहुत जल्दी जान लोगे।

रावण–उन्होंने मेरी बहन की नाक काटी, क्या तुम इसे अच्छा समझते हो ? मैंने इसीलिए उनकी सीता का हरण किया। उन्होंने मुझे छेड़ कर अच्छा नहीं किया। उन्होंने भले घर बाँयन दिया है। अब अकल ठिकाने आ गयी होगी। क्या तुम क्षमा माँगने आये हो ?

हनुमान–मैं तुम्हें समझाने आया हूँ। तुम पौलस्त्य कुल भूषण हो। ब्राह्मण वंश में जन्म लिया है। तुमने ब्रह्मा और शिव की तपस्या की। उनसे वरदान पाये। उनके बल से तुमने लोकपालों और देवताओं को जीता। तुमने अमित वैभव और नाम कमाया। तुमने करणीय और अकरणीय सभी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

काम कर डाले। तुम राजा हो। राजनीति को जानते हो। परायी नारी का अपहरण करके तुमने अच्छा नहीं किया। अच्छा हो कि सीता को वापस कर दो। प्रभु दीन दयाल हैं। वह तुम्हें क्षमा कर देंगे। तुमने जो सत्कर्म किये थे, उनका फल भोग चुके। यदि अब सत्कर्म न करोगे तो तुम्हारा वैभव नष्ट हो जायगा। जिन नदियों के उद्गम स्रोतों से नहीं होते, वे जल्दी सूख जाती हैं।

रावण—तू क्षमा माँगता है या मुझे शिक्षा दे रहा है ? क्या मेरे यहाँ उपदेशकों की कोई कमी है ? मैंने जो किया है, सब समझ बूझ कर किया है। मैं उससे हट नहीं सकता। मैंने कभी किसीकी सुनी ही नहीं। मंत्रियों की ओर देख कर कहा—'यह बन्दर मुझे समझाने आया है। अपने को बड़ा ज्ञानी समझता है। मेरा गुरु बनता है। मुझे शिक्षा देता है। जान पड़ता है कि इसकी मृत्यु आ गयी है।'

हनुमान ने कहा कि मेरी नहीं वरन तेरी मृत्यु शिर पर नाच रही है। मैं आपके भले की कहता हूँ, पर आपको बुरा लगता है। यह मतिभ्रम नहीं तो और क्या है ?

हनुमान की बातों से उत्तेजित होकर रावण ने उपस्थित वीरों से कहा कि तुम लोग खड़े क्या देख रहे हो ? इसे मार क्यों नहीं देते ? रावण की आज्ञा से उसके अंगरक्षक तलवार लेकर दौड़े। यह देख विभीषण तथा अन्य मंत्री उठ खड़े हुए। उन्होंने कहा कि दूत को मारना राजनियम के विरुद्ध है। इसे कोई दूसरा दण्ड देना चाहिए। मंत्री ने कहा कि इसके अंग-भंग कर दो। बन्दर को अपनी पूँछ बड़ी प्यारी होती है। पूँछ में कपड़े लपेट कर आग लगा दो। रावण ने कहा—'बहुत ठीक।' यह दुमकटा जब लौटकर जायगा तो अपने स्वामी को बुला लायेगा, जिनकी प्रशंसा के यह पुल बाँध रहा है, मैं भी उनके पौरुष को देख लूँगा।

लंकादहन

रावण का संकेत पाते ही लड़के अपने घरों को दौड़े। वे तेल में भिगो कर पुराने कपड़े लाये और पूँछ में लपेटने लगे। हनुमान धीरे-धीरे पूँछ बढ़ाने लगे। रावण ने कहा कि अच्छी तरह पूँछ लपेटो। कोई हिस्सा खाली न रहे। तब तो घरों में कपड़े ढूँढ़े न मिलने लगे। तेल भी चुक गया। सबने कहा इतना जलने भर को काफी है। फिर राक्षसों ने उसे नगर भर में घुमाया। वे मानों सबको

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जता रहे हों कि यदि कोई रावण का अपमान करेगा तो उसकी यही दशा होगी। हनुमान चुपके से चले जा रहे वे। लड़के उनके लातें मारते, कोई पूँछ खींचते और कोई लकड़ी कोंचते। हनुमान बड़े धैर्य से सब सहते जाते थे। वह केवल अवसर देख रहे थे। अंत में उन्हें एक ऊँचे चबूतरे पर खड़ा किया गया। एक मशालची ने पूँछ में आग लगा दी।

आग लगते ही पूँछ भभक कर जल उठी। हनुमान ने अपनी पूँछ चारों ओर घुमायी। इससे लोगों में भगदड़ मच गयी। हनुमान उचक कर दीवाल पर चढ़ गये। मण्डप में आग लग गयी। वह लपक कर रावण के भवन में जा पहुँचे। रंगशाला जलने लगी। यह देख लोग उसे बुझाने दौड़े। हनुमान एक छत से दूसरी छत पर कूद जाते। उन्हें आग लगाते देर न लगी। सारी लंकापुरी धहर-धहर जलने लगी। ऊँची-ऊँची लपटें उठने लगीं। रावण ने प्रलय मेघों से कहा कि घोर जलवृष्टि करो और बानर को बहा दो। घनघोर वर्षा ने घी का काम किया। लपटें और तेजी से उठने लगीं। सोने की दीवालें पिघल चलीं। गलियों में लाल-लाल तरल सुवर्ण बहने लगा। छतें अर्रा कर बैठने लगीं। दरवाजों खिड़कियों, छप्परों और खपरैलों के जलने से धड़ाधड़ की आवाज होने लगीं। लोग मारे डर के पास जाने का साहस न करते। अश्वशाला, गोशाला और हस्तिशालाओं में भी आग फैल गयी। रावण ने कहा कि पशुओं के बन्धन खोल दो। पर वहाँ कौन किसकी सुने ? सबको अपनी अपनी जान के लाले पड़े थे। बच्चे बिलबिला रहे थे। औरतें चीख रही थीं। लोग भाग रहे थे। चारों ओर पानी-पानी की पुकार मची थी। कुछ लोगों ने धूल डाली, कुछ ने बालू और कुछ ने पानी। कोई लकड़ियों से आग पीट रहा था और कोई अधजली वस्तुओं को बाहर निकाल रहा था। चारों ओर हाय-तोबा मची थी। कहाँ जायँ और क्या करें ? सब ओर तो आग लगी थी। रावण विवश हो लंका को जलते देख रहा था। उसका चेहरा फक था। वह चुपके से दरबार छोड़ कर चला गया। मेघनाद बौखलाया हुआ इधर-उधर भाग रहा था। उसके चेहरे पर हवाइयाँ उड़ रही थीं। सबके चेहरे उतरे हुए थे। रनिवास में कोहराम मचा था। रानियाँ मेघ-नाद को गालियाँ दे रही थीं। यह सब इसी डाढ़ीजार की करतूत का फल है। यदि यह बन्दर को बाँध कर न लाता तो लंका में आग न लगती। कोई कहता कि बानर वेश में यह कोई देवता है। कोई कहता कि जब से रावण सीता को हर लाया है, तभी से ऐसे उपद्रव हो रहे हैं। अभी तो लंका जली है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अब पूर्ण सत्यानाश हो जायगा। सीता क्या भले के लिए आई हैं ? वह लंका को चौपट करके जायँगी।

सीता से हनुमान की विदायी

हनुमान लंका में आग लगा कर समुद्र में कूद पड़े। सारी लंका जल गयी, पर हनुमान का एक रोआँ भी न जला। स्नान करने से थकावट दूर हो गयी। मन भी शांत हो गया। वह सीता के पास पहुँचे और हाथ जोड़ कर बोले—'माँ! काम हो गया। मैं अब चलता हूँ। आशीर्वाद दीजिए कि स्वामी को लेकर शीघ्र लौटूँ।' प्रभु बड़े चिंतित होंगे कि मैं अभी लौटा क्यों नहीं ?

सीता ने कहा कि मेरा रोम-रोम आशीर्वाद दे रहा है। तुमने आज वह काम किया है, जो तुम्हें अमर बनायेगा। तुम्हारी कीर्ति लोग सदा गाते रहेंगे। तुमने रावण का अहंकार चूर कर दिया। तुम पर प्रभु की कृपा सदा बनी रहे। तुम विश्व विजयी बनो।

माँ के आशीर्वाद को पाकर उनका रोम-रोम पुलकित हो उठा। उन्होंने कहा कि जैसे प्रभु ने मुद्रिका दी थी, वैसे ही आप भी कुछ परिचय चिह्न दीजिए। जिससे प्रभु को विश्वास हो जाय कि मैं आपसे मिला। सीता ने अपनी चूड़ा-मणि उतार कर हाथ बढ़ाया। हनुमान ने उसे ले ली। फिर सीता को प्रणाम करके चल दिये।

हनुमान का लंका से लौटना

हनुमान सीता से विदा लेकर वायु वेग से उड़े और पल भर में वहाँ आ पहुँचे जहाँ उन्होंने जामवन्त और अंगद आदि साथियों को छोड़ा था। उनकी मुख-मुद्रा देख कर ही लोग समझ गये कि काम बन गया। सारी बानर-मण्डली में उत्साह की लहरें दौड़ गयीं। वे उछलते-कूदते मधुवन पहुँचे। पेड़ों पर चढ़ गये और फल खाने लगे। मालियों ने दौड़कर सुग्रीव को खबर दी कि उपवन में गदर मचा है। कच्चे-पक्के फल बिछे पड़े हैं। उनके नायक युवराज और हनुमान हैं। सुग्रीव समझ गये कि हनुमान सीता की खोज लगा कर लौट आये। उसी खुशी में सबने कोलाहल किया होगा तथा उत्सव मनाया होगा। वह इस प्रकार विचार कर ही रहे थे कि हनुमान अपने दल के साथ आ पहुँचे। सुग्रीव सबको लेकर राम के पास पहुँचे। उनके साथ अनेक भालु-बानर आदि हो लिए।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राम ने सुग्रीव और हनुमान के दल को किलकारी मारते आते देखा तो उधर देखने लगे। सेनानायक ने राम को प्रणाम किया। राम ने उनकी कुशल-क्षेम पूछी। जामवन्त ने कहा कि जिस पर आपकी कृपा हो उसकी कुशल का क्या कहना ? जिसके आप अनुकूल होते हैं, उस पर देवता, मनुष्य, ऋषि, मुनि सभी प्रसन्न हो जाते हैं। वह विजयी, विनयी और गुणी हो जाता है। उसका यश त्रिलोक में फैल जाता है। आपकी कृपा से हनुमान ने वह काम किया जिसकी प्रशंसा मेरे एक मुख से नहीं हो सकती।

राम को हनुमान को प्रशंसा बड़ी प्रिय लगी। उन्होंने हनुमान को संकेत से पास बुलाया। पीठ पर हाथ रखा और पूछा कि सीता के क्या समाचार हैं ? उनका जीवन कैसे कट रहा है ? हनुमान ने कहा कि वे तो प्राण त्यागने को प्रस्तुत थीं। जब मैं पहुँचा तो वे सिर नीचा किये आँखे मूँदे आपका ध्यान कर रही थीं। उनकी आँखों से आँसू बह रहे थे। वह मन मलीन, तन क्षीण बनी रहती हैं। उनकी सबसे बड़ी शिकायत है कि स्वामी अभी तक आये क्यों नहीं। क्या मुझे भूल गये ?

मैंने कहा कि प्रभु को आपका पता नहीं था। जब मैं जाकर समाचार दूँगा तब वे अवश्य आयेंगे। उधर रावण कह गया है कि यदि एक महीने में मेरी बात न मानी तो मैं तुम्हारा शिर उड़ा दूँगा। चलते समय उन्होंने चूड़ामणि उतार कर दी और आँसू भर कर कहा—'हे स्वामिन ! आपने मेरे किस अपराध से मुझे त्याग दिया है। मुझे तो यही जान पड़ता है कि मैंने आपके वियोग में प्राण क्यों न छोड़ दिये। इसमें मेरा दोष नहीं। नेत्र प्राणों को निकलने नहीं देते। इन्हें आपके दर्शनों की बड़ी अभिलाषा है। साथ ही संतोष भी है कि आप एक न एक दिन अवश्य दर्शन देंगे। विरह में शरीर जलता है, पर आँखें अश्रु बहाकर उसे शीतल कर देती हैं।" प्रभु ! सीता के दिन बड़ी मुसीबत में कट रहे हैं। उनकी विपत्ति महान है। उसका न कहना ही ठीक है। उन्हें एक-एक पल एक कल्प के समान जान पड़ता है। स्वामिन ! जल्दी सेना सजा कर लंकापुरी को चलिए और निशाचरों को मार कर उन्हें छुड़ा लाइये। नहीं तो वह किसी समय प्राण त्याग देंगीं।

सीता के कष्टों को हनुमान के मुख से सुनकर राम की आँखों में आँसू भर आये। उन्होंने हनुमान से कहा—'तुमने सीता का समाचार देकर मेरा बड़ा काम किया। यह काम तुम्हारे बिना कोई न कर सकता था। मैं तुम्हारा बड़ा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उपकृत हूँ। मेरी समझ में नहीं आता कि तुम्हें क्या दे दूँ और मैं चाहे जो कुछ दे दूँ परतुमसे जीवन भर उऋण नहीं हो सकता। मैं केवल कामना कर सकता हूँ कि तुम्हारा यश तुम्हारा जीवन संगी बने। तुम अमर हो।

प्रभु के वचन सुन और उनके करुणापूरित नेत्र देख हनुमान ने कहा कि आपका मुझ पर बड़ा स्नेह है। मेरा अहोभाग्य कि आपने मुझे एक काम सौंपा। मुझमें सामर्थ्य कहाँ जो समुद्र लाँघ कर जाता और सीता का पता लगाता। यह तो आपकी कृपा थी। आपका विश्वास था। उसीने मुझे सफलता दी। मैंने तो एक सेवक का काम किया। आप महान हैं, जो सेवकों को इतना आदर देते हैं। ऐसा कह कर वह स्वामी के चरणों में गिर पड़े।

राम ने उन्हें उठा कर छाती से लगाया और बड़े मीठे स्वर में पूछा—'अच्छा! यह तो बताओ कि राक्षसों के होते हुए लंका में कैसे प्रवेश किया और रावण के होते हुए लंका कैसे जला डाली? मुझे यहाँ से धुआँ और चिनगारियाँ दिखायी दे रही थीं। चिड़ियाँ उड़ती हुई इधर आ रही थीं।'

प्रभु की कोमल वाणी को सुनकर हनुमान समझ गये कि राम मुझ पर बड़े प्रसन्न हैं। वह निरभिमान हो बड़ी विनम्रता से कहने लगे :—

हम लोग जब आपसे विदा होकर चले तो एक भयानक गह्वर में फँस गये। मार्ग मिलने की संभावना ही न रही। आपका स्मरण करते ही स्वयंप्रभा मिल गयी। उसने हमें समुद्र तट पहुँचा दिया। हम लोग शिखर पर बैठे बातचीत कर ही रहे थे कि संपाती हमें खाने दौड़ा। जब हमने आपका और जटायु का नाम लिया तो उसका भाव बदल गया। वह शत्रु से मित्र हो गया। उसने बताया कि अशोक वन में सीता पेड़ के नीचे बैठी हैं। उसने वह स्थान दिखाया जहाँ से लंका पहुँचना सुगम था। मैंने मुद्रिका मुँह में डाली और आपका नाम लेकर समुद्र में कूद पड़ा। पता नहीं मुझमें कौन सी शक्ति आ गयी थी, जिससे मैं तैरता चला गया। मार्ग में सुरसा और सिंहिका मिली। एक खाने दौड़ी दूसरी ने पकड़ कर घसीटा। बड़ी कठिनाई से उनसे बच पाया। लंका में रात भर सारे भवन और घर खोजता फिरा पर सीता को कहीं न देखा। प्रातःकाल विभीषण से भेंट हुई। उसने सीता का पता बताया। मैं उनके पास पहुँचा। उनसे दो बातें कहीं और सुनीं। जब चलने को हुआ तो मुझे भूख लगी। पर माताजी के पास क्या था? उन्होंने फलों की ओर संकेत किया। मैंने पके फल खाये, कच्चे गिरा दिये। मालियों ने पत्थर फेंके। मैंने कच्चे फल फेंके। इतने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में मेघनाद आया। वह मुझे ब्रह्म पाश में बाँध कर दरबार में ले गया।

पहले तो रावण ने मारने की धमकी दी। फिर मंत्रियों के कहने से पूँछ जलाने को तैयार हुआ। उन्होंने मेरी पूँछ में तेल से भिगोये कपड़ें लपेटे और आग लगा दी। मैंने पूँछ घुमायी तो लोग भागे। मैं मकानों और भवनों की छतों पर चढ़ गया। इससे सब जगह आग लगती चली गयी। मैं अटारियों से कूदता-फाँदता समुद्र में कूद पड़ा। माता से मिला और चूड़ामणि लेकर लौट आया। लौटते समय मैंने देखा कि लंका जल रही है। यह सब आपके नाम के प्रताप से संभव हुआ। आपके नाम में बड़ी शक्ति है। मेरा उसमें अमिट विश्वास है। मैं तो केवल निमित्त मात्र हुआ। शक्ति तो आपकी काम करती रही। संभव है कि इस घटना से रावण कुपित हो और सीता को मरवा डाले। ऐसा न हो कि मेरे अपराध का फल दूसरों को भोगना पड़े। महाराज! मुझे क्षमा करें और लंका चलने की तैयारी करें।

राम की सेना का प्रयाण

राम ने सुग्रीव से कहा कि सेना को तैयार करो। अब देर करने का समय नहीं। राम की इच्छा जान सारे सेनापति आ गये। वे अपने-अपने गोल के बानरों और रीछों को ले आये। राम ने सारी सेना को देखा और बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने हाथ से सबको चलने का संकेत किया। राम को प्रसन्न देख योद्धाओं का उत्साह बढ़ गया। नगाड़े बजे। सारी सेना चल पड़ी। कुछ पैदल चल रहे थे। कुछ पेड़ों और पर्वत शिखरों पर चढ़ते-उतरते चले। वे सिंह के समान गरजते और हाथी के समान चिग्घाड़ते थे। सेना के चलने से पृथ्वी हिलने लगी। समुद्र में उत्ताल तरंगें उठने लगीं। पर्वतों के शिखर डगमगाने लगे। शेषनाग के फन पर जोर पड़ा। वह फन बदलने लगे। लक्ष्मणजी ने शेष को सावधान किया। हलचल शांत हुई। समुद्र तट पर पहुँच सबने डेरे डाल दिये।

उधर जबसे हनुमान लंका जला आये तबसे निशाचरों में खलबली मच गयी। वे आपस में बातें करते कि अब राक्षसों का विनाश निकट है। जिनके एक बानर ने लंका फूँक दी और सब तमाशा देखते रहे, उनके आने पर न जाने क्या दशा होगी। उनके दिन बड़ी घबड़ाहट में बीत रहे थे। रावण से कुछ कहने का उन्हें साहस न होता था। उसके आतंक से सब भयभीत थे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सन्ध्या समय एकान्त पाकर मंदोदरी ने रावण से कहा कि आपने राम से बैर मोल लेकर अच्छा नहीं किया। मेरी विनती है कि आप सीता को वापस कर दीजिए। यदि वे लौट जायँ तो अच्छा है। सुना है कि राम की सेना समुद्र के उस पार पड़ी है। उतरने की तैयारी में है। वह किसी समय इस पार आ सकती है। नगर निवासियों के साहस छूट रहे हैं। उनमें उत्साह नहीं रहा। सब भयभीत और आतंकित हैं। उनका आपसे कहने का साहस नहीं होता। अपना पक्ष निर्बल हो रहा है। इस तरह आप राम पर विजय नहीं पा सकते।

मंदोदरी की बातें सुन रावण ने कहा–'प्रिये ! तुम व्यर्थ डरती हो। संसार में कौन योद्धा है, जो मुझसे लड़े। तुम वीर की पत्नी होकर कैसी पोच बातें करती हो ? मैं किसी से हार मानने वाला नहीं। मेरा कोई साथ दे या न दे। मैंने अपने बल पर बैर किया है। यदि शत्रु आयेगा तो उसका उत्तर मैं दूँगा। यदि बानर इस पार आ गये तो राक्षसों को घर बैठे भोजन मिलेगा। उनसे डरने का क्या काम ? रावण ने मंदोदरी को किसी तरह समझा दिया पर उसे रात भर नींद न आयी। वह सोचती रही कि न जाने क्या होने वाला है। कदाचित भाग्य हमारे विपरीत है। उसीने स्वामी की बुद्धि पलट दी है।

अगले दिन रावण ने सभा भवन में जाकर मंत्रियों को बुलाया और कहा–'राम बन्दरों और रीछों को लेकर समुद्र के उस पार पड़े है। बताओ अब क्या करना चाहिए।' उसके मंत्री खिलखिला कर हँस पड़े। उन्होंने कहा कि उस पार पड़े रहने दो। समुद्र पार करना कठिन है। इस पार आयेंगे तो देखा जायगा। जब आपने देव और दानवों को जोत लिया तो नर-बानरों की क्या चिंता ? वे किस खेत की मूली हैं ? उनकी चाटुकारी सुन रावण अभिमान से फूल उठा। उसी समय विभीषण दरबार में आया। उसने भाई को प्रणाम किया और अपने आसन पर बैठ गया। रावण ने पूछा—'भाई ! कैसे आये ? इस विषय में तुम्हारी क्या सम्मति है ?'

विभीषण का लंका-त्याग

विभीषण ने कहा–'मेरा निश्चित मत है कि यदि कोई अपना भला चाहता है तो उसे पराई नारी का संसर्ग न करना चाहिए। कामना मनुष्य को नीचे से नीचे गिरा सकती है। यदि पूर्ति में बाधा पड़ती है तो क्रोध आता है। क्रोध आने से बाधक के प्रति द्रोह की भावना उत्पन्न होती है। क्रोध में बुद्धि भी नष्ट

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हो जाती है। इस समय आपकी वही दशा है। काम, क्रोध, लोभ, मोह और मद नरक के द्वार हैं। सत्पुरुष को इनसे बचना चाहिए।

राम साधारण मानव नही हैं। वह चौदहों भुवनों के स्वामी हैं। वे काल के भी महाकाल हैं। वे ब्रह्म हैं। ऐश्वर्य शाली हैं। अनादि हैं। अनन्त हैं। अजित हैं। उनसे बैर करके कोई जीव रह नहीं सकता। आपने उन्हें पहचानने में भूल की है। उनकी धर्मपत्नी लौटा दीजिए। व्यर्थ के अहंकार में क्या रखा है?

विभीषण की बातों पर रावण ने ध्यान ही न दिया। उसने सुनी अनसुनी कर दी। माल्यवंत ने विभीषण का समर्थन करते हुए कहा कि आपको भाई की बात माननी चाहिए। वह धर्मात्मा हैं, नीतिज्ञ हैं, आपके हित की कहते हैं।

रावण ने कहा—'मेरे सामने शत्रु की प्रशंसा! दोनों एक सी बातें करते हैं। बड़े धर्मात्मा और नीतिज्ञ बने हैं। मुझे सिखाने चले हैं। शत्रु से मैत्री करने को कहते हैं। मेरा नाम मिटाना चाहते हैं। मेरा व्यक्तित्त्व खोना चाहते हैं। ये मेरे हितू नहीं शत्रु हैं। उसने अंग रक्षकों को संकेत किया कि इन्हें कान पकड़ कर निकाल दो। माल्यवंत ने कहा कि मैं तुम्हारे नाना का मंत्री रहा। कभी किसी ने मुझसे ऐसी बात नहीं की। कल के छोकड़े मुझे कान पकड़ कर निकालना चाहते हैं। इसकी आवश्यकता नहीं। मैं स्वंय चला जाता हूँ पर इसका नतीजा अच्छा न होगा।

रावण को उत्तेजित देख विभीषण ने कहा—'सुबुद्धि और कुबुद्धि दोनों का निवास मानव मस्तिष्क है। जहाँ सुमति है, वहाँ सुख है, सौभाग्य है। जहाँ कुमति है, वहाँ विपत्ति है, दुर्भाग्य है। आपकी बुद्धि मारी गयी है। आप अपनों को पराया और प्रियजनों को शत्रु समझते हैं।

विभीषण की बातें सुनकर रावण जल उठा। उसने कहा—'मेरे यहाँ रहता है। मेरा दिया खाता और पहनता है। फिर मेरी ओर न होकर शत्रु का पक्ष-पात करता है। दुष्ट! यह तो बता कि संसार में ऐसा कौन है जिसे मैंने जीता न हो। लंका में रहकर राम का पक्षपात। तू वहीं जा और राम की रीति-नीति का बखान कर। वह बड़े प्रेम से सुनेंगे। ऐसा कह उसने भाई के लात मारी। विभीषण ने हाथ जोड़ कर कहा—'आप बड़े भाई हैं। पिता के समान पूज्य हैं। आपकी यही इच्छा है तो मैं जा रहा हूँ। फिर मुझे दोष न देना। न आपको मेरी नीति पसंद है और न मुझे आपकी। फिर व्यर्थ के बाद-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विवाद से क्या लाभ ? ऐसा कह कर विभीषण चल दिया । उसने माँ से जाकर सारा हाल कह सुनाया । माँ ने कहा कि भाई के मान-अपमान का विचार न करो । यदि भगवान की शरण में जा रहे हो, तो मैं तुम्हें रोकती नहीं ।

माँ का आशीर्वाद पाकर विभीषण राम के पास चल दिये । उनके मन में उत्साह की तरंगें उठ रही थीं । वह मन में सोच रहे थे कि मैं उन चरणों के दर्शन करूँगा, जिनकी रज से अहल्या तर गयी, जिनके स्पर्श से दण्डक वन हरा-भरा हो गया ; जिनका ध्यान शंकर सदा किया करते हैं ; जिनका लालन लक्ष्मीजी सदा करती रहती हैं, जिनके अंगुष्ठ का ध्यान योगीजन सदा करते रहते हैं ।

बन्दरों ने विभीषण को आते देखा तो उसे रावण का दूत समझा । वे उसे सुग्रीव के पास ले गये । सुग्रीव ने राम को समाचार दिया कि रावण का भाई विभीषण आया है । राम ने पूछा कि तुम्हारा क्या विचार है ? सुग्रीव ने कहा कि शत्रु का क्या विश्वास ! संभव है, वह हमारा भेद लेने आया हो । मेरी राय है कि उसे बाँध लिया जाय । राम ने कहा–'मित्र ! तुम ठीक कहते हो, किन्तु मैं शरण में आने वाले को अभय देता हूँ । मेरे यहाँ आने में किसी प्रकार की बाधा ठीक नहीं । मेरे यहाँ सबके लिए स्थान है । वह चाहे जो कोई हो । यदि भेदिया होगा और छल करेगा तो लक्ष्मण उसे बिना मारे न छोड़ेंगे । कुटिल व्यक्ति यहाँ आ ही नहीं सकता । मन की निर्मलता चेहरे से ही झलकती है । संभव है, वह रावण के भय से आया हो । यदि ऐसा है, तो मैं उसकी रक्षा प्राणों की तरह करूँगा ।

हनुमान ने कहा कि विभीषण आपका भक्त है । मैं जब लंका गया था तो उसीने सीता का पता बताया था । उसकी रावण से बनती नहीं । सीता को लेकर दोनों में मतभेद हो गया है । उसने अपना इरादा भी दबी जुबान से व्यक्त किया था । मेरा अनुमान है कि वह आपसे मिलने आया है । ऐसा कह हनुमान उससे बढ़ कर मिले और हाथ पकड़ कर राम के पास ले आये ।

विभीषण ने दूर ही से राम को पहचान लिया । यह वही रूप था, जिसका वह ध्यान किया करता था । उसने दंडवत की और कहा कि रावण का भाई विभीषण आपको प्रणाम करता है । राम ने उसे उठा कर गले लगाया और कहा—मैंने आपका नाम सुना था । हनुमान ने प्रशंसा भी की थी । मुझे पता है कि तुम्हें अधर्म और अनीति से चिढ़ है । भाई की नीति-रीति तुम्हें पसंद नहीं ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मित्र ! तुम चिंता न करो। मेरे यहाँ निश्चित होकर रहो। तुमने कुसंग छोड़ा अच्छा किया। नरक में रहना अच्छा है, किन्तु दुष्ट का साथ ठीक नहीं।

विभीषण ने कहा—'आप धन्य हैं। मैंने जैसा आपको सुना था, वैसा ही नहीं वरन् उससे बढ़ कर पाया। आप दिव्य देहधारी नर-पुंगव हैं। भाई ने आपके साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया। मुझे उसके कर्मों से बड़ी ग्लानि है। हनुमान के लौट आने पर मैंने उसे बहुत समझाया। माल्यवंत ने मेरा समर्थन किया पर उसने अपमानित कर भरे दरबार से मुझे निकाल दिया। मैं यहाँ चला आया। अब वहाँ लौट कर जाने की इच्छा नहीं। मुझे अपनी शरण में रख लीजिए।

राम ने कहा—'मित्र ! तुम्हारा हृदय निष्कपट है। तुम्हारे मन से राग-द्वेष और काम-क्रोध मिट चुके हैं। तुमने भाई का साथ इसीलिए छोड़ा कि तुम्हारा मार्ग उससे भिन्न है। माता-पिता, भाई-बहन, स्वजन और परिवार से मनुष्य का राग रहता है। जो उनके ममत्व को त्याग कर भगवत्प्रेम की डोरी से मन को बाँध लेता है, वह संत है। तुम साधु हो, परहित निरत हो, सर्वगुण सम्पन्न हो। मुझे अत्यंत प्रिय हो। मैं तुम्हें कैसे त्याग सकता हूँ ?

हनुमान को देखो—ये मुझे बड़े प्रिय हैं। इन पर मैं गर्व करता हूँ। इन्होंने उपकार को अपने जीवन का ध्येय बना लिया है। इन्हें जो दुखी मिल जाता है, उसीकी सहायता करते हैं। इन्हें भी अन्याय से चिढ़ है। सुग्रीव के यह इसीलिए हितू बने क्योंकि बाली ने सुग्रीव के साथ अन्याय किया था। मेरे काम के लिए ये सदा प्रस्तुत रहते हैं। अगाध महार्णव को पार करना और लंका को जला कर भस्म करना इन्हीं का काम था। तुम इनका पराक्रम तो देख ही चुके हो। यह पानी में पैर सकते हैं, हवा में उड़ सकते हैं और भूगर्भ में जा सकते हैं। किसीके मुँह पर उसकी प्रशंसा न करनी चाहिए। पर किसी के वास्तविक गुणों का न कहना दोष है। इसीसे मुझे कहना पड़ा।

सुग्रीव भी मेरे परम मित्र हैं। ये किष्किन्धा के राजा हैं, पर राज-पाट स्त्री आदि को छोड़ कर मेरे साथ लगे रहते हैं। इनकी सेना में असंख्य वीर हैं। वे बड़े कार्यशील हैं। बात की बात में काम कर डालते हैं। ये भी आपके मित्र होंगे।

आपने जामवंत का नाम सुना होगा। ये ऋक्षाधिपति हैं। ये आयुवृद्ध भी हैं और ज्ञानवृद्ध भी। अवसर पड़ने पर हम इन्हीं से राय लेते हैं। इनकी सम्मति बड़ी अमूल्य होती है। इन्होंने ही हनुमान को लंका भेजा था। आपको इन लोगों का साथ रुचिकर होगा। ये आपके समान ही शील और व्यसन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वाले हैं। इनकी मैत्री आपके लिए हितकर होगी। मैंने कुछ मंत्रियों से आप का परिचय कराया। अन्य लोगों से कुछ दिन रहने पर स्वतः परिचय हो जायगा। आप थके होंगे। आज विश्राम कीजिए।

समुद्र संतरण की तैयारी

राम ने विभीषण से पूछा कि लंका पहुँचने के लिए समुद्र कैसे पार किया जाय ? विभीषण ने कहा कि आपके बाणों में अमित शक्ति है। एक सागर की बात क्या ? वे सैकड़ों समुद्रों को सुखा सकते हैं। अग्नि से जल सूख सकता है। सारी सेना आसानी से पार हो सकती है। पर सुखाने के पूर्व समुद्र से भी पूछ लिया जाय तो अच्छा है। वह तो आपके पूर्वजों द्वारा उत्खनित है। संभव है, वह स्वयं मार्ग दे दे। राम ने कहा—मित्र तुम ठीक कहते हो। साम नीति (मेल) ही राजनीति की धात्री है। यदि उससे काम न चले तभी भेद और दंडनीति का प्रयोग करना चाहिए।

लक्ष्मण ने कहा कि मुझे दंडनीति पसंद है, साम नीति नहीं। इस समुद्र का क्या ठिकाना ? इसे सुखाना ही ठीक है ! नहीं तो सारी सेना पार कैसे जायगी ? कर्मशील व्यक्ति भाग्य के भरोसे नहीं बैठते। हमें स्वतः प्रयत्न करना चाहिए। राम ने कहा—'भाई ! धीरज धरो। हम वही करेंगे जो तुम कहते हो, पर समुद्र के मन की भी तो जान लें। ऐसा कह वे सब लोग समुद्र के किनारे पहुँचे।

राम ने 'अपवित्रः पवित्रो वा सर्वास्थान गतोपिवा स्मरेत्पुण्डरीकाक्ष सवाह्यांतरः शुचिः' मंत्र पढ़ कर आचमन किया। अपने ऊपर जल छिड़का। भूमि पर छिड़का। आसन बिछाया। प्राणायाम् करके वरुण देवता का ध्यान किया। फिर 'ओं वरुणायनमः, ओं वरुणायनमः' मंत्र का जाप करने लगे। समुद्र आनंद से लहरें लेता रहा। एक दिन बीता। दो दिन बीते। तीसरा दिन भी बीत गया। उसके कानों पर जूँ तक न रेंगी। राम ने लक्ष्मण को बुला कर कहा—'भैया ! तुम्हारी ही बात ठीक है। मेरा धनुष-बाण लाओ। मैं अभी इसे सुखाता हूँ। मूर्ख से विनय, कुटिल से प्रीति, कृपण से उदारता, मोही व्यक्ति से ज्ञान कथन, लोभी से त्याग, क्रोधी से शांत होने की बात और कामी से हरि कथा कहना ऊसर में बीज बोने के समान व्यर्थ है।

लक्ष्मण ने धनुष-बाण लाकर दे दिया। राम ने मंत्र पढ़ कर ज्योंही अग्नि बाण का संधान किया त्योंही समुद्र से ज्वालाएँ उठने लगीं। पानी खौलने लगा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जल-जन्तु घबड़ाये। कछुवे और मगर उतराने लगे। मछलियाँ तड़पने लगीं। सर्प बिलबिलाने लगे। उन्हें दुखी देख वरुणदेव ब्राह्मण का वेष धारण कर थाल में मणि-मोती भरकर राम के सामने आये और हाथ जोड़ कर कहने लगे—'हे प्रभु ! रक्षा कीजिए। मैंने आपको पहचाना नहीं, केवल साधारण पुरुष समझता रहा। आकाश, पवन, अग्नि, पृथ्वी और जल पाँचों तत्त्व जड़ हैं। इन्हें आपकी माया ने रचा है। जड़ता इनका धर्म है। माया ने जिसको जैसा स्वभाव दे दिया, वह वैसा ही व्यवहार करता है। हम भी जड़ हैं। जड़ स्वभाव कभी बदलता नहीं। आप मायापति हैं। सर्व शक्तिमान हैं। अब आप जैसा कहें, वैसा हम करें। आपने हमें शिक्षा दी ठीक किया। जड़ व्यक्ति डाँटने पर ही ठीक काम करते हैं। यदि कोमलता दिखाओ तो सुनते नहीं, उल्टा सिर चढ़ते हैं। मेरी मर्यादा भी आपने बनायी है। मैं उसी में लहरें लेता रहता हूँ। यदि मैं पृथ्वी को परिवेष्ठित न करूँ तो मर्यादा घट जाय। आप मर्यादा पुरुषोत्तम हैं। क्या मर्यादा भंग ठीक है ?

सागर की दीन वाणी सुनकर राम ने मुस्कुराकर कहा कि तो फिर तुम्हीं कोई उपाय बताओ। तुम्हारी मर्यादा भी बनी रहे और सेना भी पार उतर जाय। वरुण देव ने कहा कि आपकी सेना में नल-नील नाम के दो शिल्पी बानर हैं। उनके फेंके हुए पत्थर पानी में तैरते रहेंगे। आपके प्रताप से वे जहाँ शिला रखेंगे वहीं स्थिर हो जायँगे। इससे पुल बँध जायगा। सब लोग आसानी से पार उतर जायँगे। मैं भी यथाशक्ति उनकी सहायता करूँगा। सेतु बन जाने से आपका नाम होगा। मेरी मर्यादा भी बनी रहेगी। इन बाणों को मेरे सुखाने में व्यर्थ न कीजिए। इनके तेज से राक्षसों का नाश कीजिए। समुद्रदेव की सलाह मान राम ने तरकस में बाण रख लिए। समुद्र शांत हो गया। वरुण देव अदृश्य हो गये।

रावण ने अपने दूतों को इस बात का पता लगाने के लिए भेजा कि विभीषण कहाँ गया है और क्या करता है ? दूतों ने राम की सेना में विभीषण का जो सम्मान देखा तो उनके होश हवास उड़ गये। बन्दर उन्हें पकड़ कर राम के पास ले आये। वे उनके कान काटने जा रहे थे कि उन्होंने राघवेंद्र सरकार की दोहाई दी। राम को दया आ गयी। उन्होंने अपने सेवकों से उन्हें छोड़ देने को कहा। चलते समय लक्ष्मण ने एक पत्र दिया। दूत जब लौटकर रावण के पास पहुँचे तो दरबार में गुम-शुम होकर खड़े हो गये।

रावण ने पूछा कि खड़े क्या हो ? बोलते क्यों नहीं ? क्या वे मेरे यश को

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सुन कर लौट गये ? जो बात हो उसे ठीक-ठीक बताओ। दूतों ने कहा कि विभीषण तो उनसे हिल-मिल गया। लोग उसे लंकेश्वर कहते हैं। राम उससे समुद्र पार करने की मंत्रणा कर रहे थे। उसने बताया कि समुद्र से प्रार्थना की जाय। शायद वह मार्ग दे दे। राम कुशासन बिछाकर समुद्र तट पर बैठे हैं। देखें समुद्र मार्ग देता है या नहीं। बन्दरों ने जो हमें आपका दूत जाना तो पकड़ कर ले गये। उन्होंने हमें तंग किया। जब हमने राम की दोहाई दी तो हमें छोड़ दिया।

राम की सेना में असंख्य रीछ और बानर हैं। वे सारे समुद्र तट पर छाये हैं। न जाने कितने शिलाओं पर बैठे हैं और न जाने कितने पेड़ों पर चढ़े हैं। एक-एक डाल पर सैकड़ों बानर लटक रहे हैं। उनके भार से डालें टूट रही हैं। पेड़ गिर रहे हैं। उनके विशाल नख और भयंकर मुख हैं। हमें तो जान पड़ा कि वे सबको चबा डालेंगे। वे दाँत कट-कटा रहे हैं। समुद्र पीने को तैयार हैं। वे पानी में आग लगा सकते हैं। हवा में उड़ सकते हैं। वे हाथ मल रहे हैं। महाराज उन्हें आज्ञा नहीं देते। सुनते हैं, समुद्र में पुल बँध रहा है।

दूतों की बातें सुनकर रावण जल उठा। उसने कहा कि मेरे रहते वह लंकेश्वर कैसा ? मैं उसे अच्छी तरह जानता हूँ। वह जन्म का भीरु है। वह लड़ना क्या जाने ? बस भजन करना जानता है। यदि उसकी बात राम ने मानी तो मेरा काम यों ही बन जायगा। उसकी सम्मति से कोई काम पूरा नहीं उतर सकता। तभी तो राम सागर के तट पर बैठे अनशन कर रहे हैं। भला समुद्र कहीं मार्ग देने वाला है! पुल बाँधना भी आसान नहीं है। यदि इस पार आयेंगे तो हमारे निशाचर उन्हें खा डालेंगे। फिर दूतों से कहा कि खबरदार अब मेरे आगे कभी शत्रु की प्रशंसा न करना, नहीं तो मैं खाल खिंचवा लूँगा। रावण को क्रुद्ध देख दूत चुप हो गये। उन्होंने लक्ष्मण का पत्र रावण को दे दिया। उसने पत्र को बायें हाथ से लेकर मंत्री को पढ़ने के लिए दे दिया। उसने स्फुट स्वर में सबको पढ़ कर सुनाया :—

'लंकेश्वर ! तुमने राम की पत्नी का अपहरण किया। इससे तुम्हारी लम्पटता का परिचय मिलता है। तुम्हें अपनी शक्ति का गर्व है। शायद उसी अभिमान में तुमने अनुचित कार्य किया। अब तुम अवश्य पश्चात्ताप कर रहे होगे। यदि ऐसा हो तो सीता को वापस कर दो। अपने भाई की तरह आकर क्षमा माँगो। राम बड़े दयालु हैं। वे तुम्हारे अपराधों को क्षमा कर देंगे। नहीं तो वह तुम्हें उसी प्रकार मारेंगे जैसे बाली को मारा है।'

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रावण पत्र सुनकर ठहाका मार कर हँसा—'वाह ! भूमि में लोटता हुआ बौना आकाश छूना चाहता है। इन तपस्वियों की बातें तो देखो। हमें नीति सिखाते हैं। पहले बैर मोल लिया। अब प्राण बचाने के लिए ऐसी बातें करते हैं। मानों हम उनसे डरते हों। अभी रावण से पाला नहीं पड़ा। जब युद्ध भूमि में आयेंगे तो बुद्धि ठिकाने आ जायगी। बाली को छल से मारा। मुझे भी उसी तरह मारने को कहते हैं। पहले अपनी कुशल नहीं मनाते।

यह सुनकर शुक नामक मंत्री ने कहा—महाराज ! यह सत्य है, पर बैठे बिठाये युद्ध का क्या काम ? सीता को लौटा दीजिए। अभी कुछ बिगड़ा नहीं है। युद्ध की विभीषिका अच्छी नहीं। उसमें जन-धन सभी स्वाहा होता है। वीरों का विनाश होता है। भूमि नष्ट हो जाती है। कृषि चौपट हो जाती है। माताएँ पुत्रहीन और नारियाँ विधवा हो जाती हैं। लड़के-बच्चे अनाथ हो जाते हैं। इस हठ में कौन सी बुद्धिमानी है ?

रावण ने कहा—'दुष्ट ! तू भी शत्रु की ओर हो गया। उन्होंने बहन की नाक काटी तो किसीने कुछ नहीं कहा। मैंने सीता का अपहरण किया तो सभी मेरी आलोचना करते हैं। जा तू भी वहीं जा, जहाँ विभीषण गया है। मुझे किसीकी परवाह नहीं। यदि शत्रु आक्रमण करेगा, तो उसका सामना मैं करूँगा।

सेतुबन्ध और रामेश्वर की स्थापना

राम की आज्ञा से जामवन्त ने नल और नील को बुला कर समुद्र पर पुल बाँधने के लिए कहा। वानरों से कहा कि पेड़ों के तनें, डालें, पत्थर और शिलाएँ उठा लाओ। आज्ञा मिलते ही वे दौड़-दौड़ कर शिलाएँ उखाड़-उखाड़ कर लाने लगे। नल-नील उन्हें सम्हाल कर रखने लगे। वानर भारी से भारी पाषाण-खण्ड लाते थे। नल-नील के हाथों छूते ही वे काष्ठ की तरह हल्के हो जाते और पानी पर तैरने लगते। हनुमान उनके ऊपर राम-नाम लिखते जाते थे। नाम के प्रताप से केवल तीन दिन में सेतु बन कर तैयार हो गया।

राम ने कहा कि यह स्थान रमणीक और पवित्र है। कैलास और मान-सरोवर की अपनी शोभा है, पर अनन्त नील-सागर की शोभा उससे कम नहीं। मेरी इच्छा है कि शंकरजी का मंदिर बन जाय। उसमें शिवलिंग की स्थापना हो। मैं आराध्य देव का पूजन करके ही लंका के लिए प्रयाण करूँगा। प्रभु की इच्छा से एक विशाल भव्य मंदिर तैयार किया गया। सुग्रीव की आज्ञा से

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हनुमान आस-पास के पण्डितों और पुजारियों को बुला लाये। नल ने काले प्रस्तर की मूर्ति गढ़ी। राम ने वेद मंत्रों के साथ मूर्ति में प्राण प्रतिष्ठा की। सहस्र घट समुद्र जल से अभिषेक किया। चंदन से 'शिव' नामांकित दस सहस्र बिल्व पत्र चढ़ाये। कर्णिकार, धतूरे आदि के पुष्प अर्पित किये। धूप, दीप और आरती की। केला, नारियल, आम, अमरूद आदि स्थानीय फल भेंट किये। अंत में स्तुति की।

राम ने कहा कि हमारे आराध्य देव शंकर ही हैं। बिना शिवजी की पूजा और स्तुति किये कोई काम न करना चाहिए। जो लोग शिव और विष्णु में भेदभाव करते हैं, वे तत्त्व को नहीं जानते। देवताओं को नमन करना भगवान को नमन करना है। फिर 'हर-हर महादेव' की जय-ध्वनि की। उनके शब्द मंदिर में गूँज उठे। सभी उपस्थित जनता ने 'हर-हर महादेव' की ध्वनि की। उनका घोष वायु-मण्डल में गूँज गया। राम को शिव-पूजन करते देख द्रविड़-प्रदेश की जनता बड़ी प्रसन्न हुई। शिव-पूजा द्रविड़-देश का प्रधान अंग था। इससे राम में लोगों की श्रद्धा हो गयी। वे राम को अपना समझने लगे। लंका-प्रयाण में वे भी सम्मिलित हुए।

लंका में प्रवेश करने पर रावण की प्रतिक्रिया

राम-लक्ष्मण आगे-आगे चले। उनके दाहिने विभीषण और बायें सुग्रीव चले। हनुमान, अंगद, जामवन्त, नल, नील, आदि पीछे चले। उनके पीछे बानरों और रीछों की सेना ढोल बजाती हुई चली। समुद्र पार कर शैल की तलहटी में सेना ने डेरा डाल दिया। बानर और रीछ पास-पड़ोस के पेड़ों पर चढ़ गये। वे फल खाने तथा तोड़कर लंका में फेंकने लगे। यदि कोई मिल जाता तो पकड़कर नाच नचाते। यदि वे राम की दोहाई देते तो छोड़ देते थे। निशाचरों ने रावण को समाचार दिया कि सेना इस पार आ गयी। समुद्र तट पर उनके डेरे पड़े हैं। वे आक्रमण की तैयारी में हैं। रावण ने पूछा कि सेना इस पार कैसे आ गयी? जब उन्होंने बतलाया कि समुद्र पर पुल बँध गया तो उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। उसके दशोंमुखों से निकल पड़ा :—

पाषाणों से पुल बँध गया! शिलायें तैरने लगीं! महार्णव पोखर बन गया। लोगों ने उसके नाम अंबुधि, जलधि, वारिधि, नीरधि, उदधि, वारीश और नदीश, व्यर्थ रख लिए हैं। अगस्त ने समुद्र को ठीक ही पी लिया था। देव और असुरों ने ठीक ही इसका मथन किया। राम ने जब पुल बँधवा लिया

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तो इसकी विशालता को धिक्कार है !' फिर सोचने लगा कि कहीं लोग मेरी हँसी न उड़ावें। अतः यह कहते हुए राजभवन को चल दिया कि सेना आ गयी तो आ जाने दो। कुओं में विष डाल दो। बाजारें बन्द करा दो। कोई भोज्य पदार्थ शत्रुओं को न मिले। पड़े-पड़े भूखों मर जायँगे। यदि लंका में घुसे तो उनकी शामत आ जायगी।

मंदोदरी ने दूतियों से सुना कि राम समुद्र तट पर डेरा डाले पड़े हैं। वह रावण का हाथ पकड़ कर अपने कक्ष में ले गयी और कहा—'स्वामिन् ! मैं आपसे एक विनती करती हूँ। उस पर ध्यान दीजिए। वैर उसीसे करना चाहिए जिसे बुद्धि एवं शारीरिक बल से जीता जाय। आपने देवताओं और दिक्पालों को अवश्य जीता, पर राम उस कोटि में नहीं आते। उनका जीतना असंभव है। सीता को लौटा दीजिए। मेरा विश्वास है कि सीता को पाकर राम लौट जायँगे।

रावण ने मंदोदरी को हाथ पकड़ कर उठाया और गले लगा कर कहा:—प्रिये ! नाहक डरती हो। संसार में ऐसा कौन है, जो मेरा सामना कर सके ? इन्द्र, वरुण, वायु, अग्नि, कुबेर, दिक्पाल आदि सभी मुझसे डरते हैं। वे मेरे सामने आने का साहस नहीं करते। इन तपस्वियों से मुझे क्या डर ? यह लड़ना क्या जानें ? तुम मुझसे स्नेह करती हो। इसीसे मेरी चिंता करती हो। वही प्रेम तुम्हें ऐसा सोचने और समझने को बाध्य कर रहा है। तुम नारी हो। नारी स्वभावतः कोमल होती है। तुम्हारा डर स्वाभाविक है। ऐसा कह कर रावण दरबार में चला गया।

रावण ने मंत्रियों से कहा—'शत्रु शिर पर चढ़ आया है। युद्ध आवश्यक हो गया है। बताइये कि युद्ध कैसे किया जाय ? मंत्रियों ने हाथ जोड़ कर कहा—'महाराज' आप तो पहले ही कह चुके कि 'नर कपि भालु अहार हमारा'। हमारे सैनिक उन्हें मार कर खा जायेंगे। जो बचेंगे उन्हें बाँध लेंगे और नित्य मार कर खाया करेंगे।

मंत्रियों की बातें सुनकर प्रहस्त ने हाथ जोड़ कर कहा:—'पिताजी, ये मंत्री चाटुकार हैं। केवल हाँ में हाँ मिलाना जानते हैं। ये बुद्धि-भ्रष्ट भी हैं। ये मंत्रणा भला क्या देंगे ? इनकी बातों से पूरा नहीं पड़ सकता। राम का एक वानर समुद्र लाँघ कर आया। उसने वाटिका उजाड़ डाली। अक्षय को मारा। लंका में आग लगा दी। किसीसे कुछ करते-धरते न बना। क्या उस समय किसी को भूख नहीं थी ? किसीने क्यों नहीं खा डाला ? मैंने लोगों को उसकी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रशंसा करते हुए सुना। जब लंका जल रही थी तो लोग तालियाँ पीट रहे थे। आपके सामने आपकी जय-जयकार करते हैं। मधुर वाणी किसे प्रिय नहीं होती ? पर ऐसी बातें शयन कक्ष में माताओं के मुख से ही अच्छी लगती हैं। राजनीति और जीवन संग्राम में स्पष्ट बचनों की आवश्यकता होती है। कार्य वह करना चाहिए, जिससे पछताना न पड़े और बात वह कहनी चाहिए, जिससे पीछे हटना न पड़े। संसार में ऐसे अनेक मनुष्य हैं, जो प्रिय वाणी कहते भी हैं और सुनते भी हैं। किंतु इससे कभी हित नहीं होता। उल्टे अहित होता है। हित की बातें कड़वी होती हैं पर उनका परिणाम मधुर होता है। अहित की बातें कोमल होती हैं पर उनका परिणाम अच्छा नहीं होता। राजनीति कहती है कि पहले दूत भेजिए। उनके आक्रमण का कारण पूछिये। यदि सीता को चाहते हों तो लौटा दीजिए। यदि लड़ना ही चाहते हों तो डट कर संघर्ष कीजिए। मैं युद्ध का समर्थन नहीं करता। इससे आप मुझे कायर न समझें। युद्ध का भी एक समय होता है। फिर हर एक से युद्ध ठीक नहीं होता।

रावण ने प्रहस्त को डाँट कर कहा—'तू कैसी बातें करता है ? क्या तू ने माँ की बातें सुनी हैं ? तुझे यह नीति किसने पढ़ायी ? विभीषण या माल्यवंत ने तो तेरे कान नहीं भरे ? अभी युद्ध आरम्भ नहीं हुआ और तेरे मन में शंका पैठ गयी। जान पड़ता है तू कुल-कलंक है। सभा से निकल जा। माँ के अंचल में मुँह छिपा कर बैठ। तुझे लड़ना न पड़ेगा। पिता की फटकार सुन वह अपने भवन चला गया।

संध्या समय रावण अपनी भुजाओं को गर्व से देखता हुआ अखाड़े में जा पहुँचा। एक ओर मल्ल युद्ध हो रहे थे। दूसरी ओर अप्सरायें नृत्य कर रहीं थीं। पखावज और मृदंग की गड़गड़ाहट गूँज रही थी। छमाछम नृत्य हो रहा था। रावण मंदोदरी के साथ सिंहासन पर बैठ कर विलास-लीला देखने लगा। सुरा और सुन्दरियों का बोल-बाला था। उसे युद्ध की कोई चिंता न थी।

सुबेल पर्वत की झाँकी

सन्ध्या समय सुवेल पर्वत पर राम का दरबार लगा। उनका शिर सुग्रीव की गोद में था और हाथ में एक बाण। उसे वह फेर रहे थे। धनुष बगल में रखा था। एक पैर का घुटना मुड़ा था। दूसरा फैला हुआ था। दाहिना पैर हनुमान दाब रहे थे और बायाँ अंगद। लक्ष्मण उनके पीछे वीरासन लगाये बैठे

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

थे। पास में तरकस रखा था। विभीषण उनके कान में धीरे से कुछ कहने लगे। राम बड़े ध्यान से सुनने लगे। इतने में दक्षिण दिशा की ओर आकाश का रंग कुछ बदलता दिखायी पड़ा। राम ने कहा कि काले और भूरे बादल उमड़ रहे हैं। मेघ मन्द्र स्वर में गरज रहे हैं। बिजली चमक रही है। जान पड़ता है कि ओले पड़ेंगे और घोर जलवृष्टि होगी।

विभीषण ने कहा—'दया निधान! ये न बादल हैं, न बिजली है और न पानी बरसने वाला है। लंका के शिखर पर रावण मंदोदरी के साथ सिंहासन पर बैठा सुन्दरियों का अखाड़ा देख रहा है। ऊपर चन्द्रातप तना है। रावण ही काली घटा है। मंदोदरी के ताटंक विद्युत हैं। पखावज और मृदंग की मधुर ध्वनि मेघों की गरज है। संगीत और नृत्य हो रहा है। वायु में उसकी मधुर ध्वनि गूँज रही है। राम ने बाण उठाया और धनुष पर रख कर फेंक दिया। उसके लगते ही छत्र कट कर गिर पड़ा। मुकुट शिर से खिसक पड़े। रावण उन्हें सम्भालने लगा। मंदोदरी के ताटंक कानों से गिर गये। इधर बाण अपना काम करके राम के पास लौट गया। उधर सब लोग घबड़ा उठे। किसी की कुछ समझ में न आया कि क्या हुआ? लोग एक दूसरे का मुँह देखने लगे। न भूचाल आया, न आँधी, न तूफान, न कोई उल्कापात हुआ और न कोई अस्त्र-शस्त्र ही दिखायी पड़ा। बाजे बन्द हो गये। नर्तकियों और गायकों में भय छा गया। सभा में सन्नाटा हो गया। लोग कानाफूसी करने लगे कि राजा के मुकुटों का गिरना तो महान अपशकुन है। रावण ने लोगों को विस्मित देखा तो हँस कर बोला—'अरे! इसमें घबड़ाने की क्या बात है? जिसके शिरों का कटना शुभ है, उसके मुकुटों के गिरने से अपशकुन कैसा? अच्छा, रात अधिक हो गयी है। आप लोग घरों में जाकर विश्राम करें। चिंता करने की कोई बात नहीं। रावण की आज्ञा से सब लोग उसके चरणो में शिर झुका कर अपने-अपने घरों को चले गये। मंदोदरी रावण को अपने शयन कक्ष में ले गयी।

राम का विराट रूप

मंदोदरी का हृदय अपशकुन की आशंका से धड़क रहा था। उसके नेत्रों में आँसू भर आये। उन्हें पोंछती हुई वह रावण से हाथ जोड़ कर बोली—स्वामिन! आपसे मैंने कई बार कहा कि राम का विरोध छोड़ दें। मुझे लक्षण अच्छे दिखायी नहीं पड़ते। आप रामको निरा मानव न समझें। राम रघुवंश मणि

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हैं। विश्वात्मा हैं। उनका एक पद पाताल, दूसरा आकाश है। शिर ब्रह्म-लोक है। अंग विभिन्न लोक हैं। नेत्र सूर्य हैं। केश मेघमाला हैं। नासिका अश्वनी कुमार हैं। पलकों का उठना-गिरना रात-दिन का होना है। कान दिशायें हैं। पवन श्वास है। वेद वाणी है। ओष्ठ लोभ है। दन्त यमराज हैं। भ्रूभंग भयंकर काल है। हँसी माया है। बाहु दिकपाल हैं। मुख अग्नि है। जिह्वा वरुण है। शिरोरुह वृक्षावलि है। हड्डियाँ पर्वत हैं। शिरायें सरितायें हैं। उदर समुद्र है। अधो इन्द्रियाँ नरक-द्वार है। अहंकार शिव है। बुद्धि ब्रह्मा है। मन चन्द्र है। चित्त विष्णु है। विराट परमात्मा ने राम का अवतार लिया है। उन्हें समझने का प्रयत्न कीजिए। इससे आपका कल्याण होगा। मेरा सौभाग्य बना रहेगा। ऐसा कह वह रावण की ओर देखने लगी।

मंदोदरी की बातें रावण ने ध्यान से सुनीं और समझीं। वह सब समझता था। पर अपने हठ के आगे किसीकी सुनता न था। वह ठहाका मार कर हँसा—'अरे! मोह बड़ा बलवान होता है। तुम मुझसे अनुरक्ति रखती हो। मेरी सदा कुशल मनाती हो। वही आसक्ति तुम्हें ऐसा कहने को बार-बार बाध्य करती है। कवियों ने स्त्रियों में साहस, चपलता, झूठ, माया, भय, अविवेक, अशौच, और निर्दयता आठ अवगुण बतलाये हैं। अभी तक मैं समझता था कि यह उनकी कपोल-कल्पना है, पर अब मुझे विश्वास हो गया कि वे सत्य कहते हैं। तुम राम को विराट भगवान का अवतार मानती हो। मैं उन्हें साधारण नर मानता हूँ। अरे! मैं समझ गया। तुम बड़ी चतुर हो। शत्रु के बहाने मेरी कीर्ति कह रही हो। हे मृगाक्षि! तुम्हारी वाणी गम्भीर एवं भाव-गर्भित है। सुनने में तो अच्छी नहीं पर समझने में सुखदायक है।

मंदोदरी ने समझ लिया है कि इन्हें मतिभ्रम हो गया है। मैं कुछ कहती हूँ। यह कुछ समझते हैं। काल शिर पर सवार है। वही ऐसा कहला रहा है।

अंगद और रावण का संवाद

अगले दिन राम ने सचिवों को बुलाकर पूछा कि अब क्या करना चाहिए। सब लोग जामवन्त की ओर देखने लगे। जामवन्त ने हाथ जोड़ कर कहा—'मेरी सम्मति है कि युद्ध आरम्भ करने के पहले रावण के पास दूत भेजा जाय। इस काम के लिए मैं अंगद को ठीक समझता हूँ। ये बाली के पुत्र हैं। बाली का रावण से पूर्व परिचय है। ये बलवान भी हैं और बुद्धिमान भी। ये इधर की

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भी बात कहेंगे और उधर की भी सुनेंगे। ये निडर हैं। बात करने में कुशल हैं। राम ने अंगद को बुलाया और कहा–'तुम अपने पिता के समान बुद्धिमान, बलवान और गुणवान हो। तुम मेरे काम के लिए रावण के पास जाओ। यह काम तुम्हीं से हो सकता है। तुम्हें समझाने की आवश्यकता नहीं। जैसा अवसर पड़े, वैसी बात कर लेना। अपना काम बन जाय और उसका भी भला हो।

अंगद ने कहा कि मैं तो किसी योग्य नहीं। आपकी मुझ पर बड़ी कृपा है, जो मुझे यह काम सौंप रहे हैं। उन्होंने शिर झुका कर राम को प्रणाम किया। फिर सबके हाथ जोड़ कर चल दिये। अंगद सिंहद्वार से घुसे ही थे कि रावण के बेटे से भेंट हो गयी। उसने कहा अकड़ते हुए कैसे जा रहे हो ? लंका में शिर झुका कर चलना पड़ता है। तुम कौन हो ? कहाँ से आये हो ?

अंगद ने कहा कि यदि तुम रावण के बेटे हो तो मैं भी बाली का पुत्र हूँ। तुम से किसी प्रकार घट कर नहीं। मैंने अकड़ किसी के हाथ बेच नहीं खायी। मैं रावण से मिलने जा रहा हूँ। मैं लड़कों से बात नहीं करता। फिर क्या था दोनों में वाद-विवाद होने लगा। उसने अंगद को मारने के लिए लात चलायी। अंगद ने उसे पकड़ कर कई बार घुमाया और दीवाल से पटक दिया। उसका शिर फट गया और भेजा निकल आया। उसकी यह दशा देख किसी राक्षस को बोलने की हिम्मत न पड़ी। अंगद जिधर जाते, उधर से लोग हट ही न जाते वरन मार्ग निर्देशन भी कर देते थे। नगर में खबर फैल गयी कि वही बन्दर फिर आ गया, जिसने आग लगायी थी। वे सोचने लगे कि भगवान न जाने क्या करने वाले हैं ? अंगद का आतंक छा गया। वह जिसकी ओर देखते, वह खड़ा सूख जाता। वह सिंह की भाँति इधर-उधर देखते चले जा रहे थे। उनकी चाल से धीरता और गम्भीरता प्रकट हो रही थी। चलते-चलते अंगद दरबार के फाटक पर पहुँचे। उन्होंने सूर्य और चन्द्र को आसा लिए द्वार-पालों के स्थान में देखा। ब्रह्मा आसन पर बैठे वेद पढ़ रहे थे। रावण का द्वार-रक्षक उन्हें डाँट रहा था। 'ब्रह्मन ! धीरे से पाठ करिये। यह अध्ययन का समय नहीं है। हे चन्द्रदेव ! तुम बहुत बोल रहे हो। यह इन्द्र की सभा नहीं है। दरबार लगने का समय है। सावधान ! महाराजाधिराज पौलस्त्य कुल-भूषण रावण आ रहे हैं।' रावण अपने सिंहासन पर बैठ गया। मंत्री, सचिव एवं सभासद अपने-अपने स्थानों पर बैठ गये। उसी समय अंगद ने भी सभा-भवन में प्रवेश किया। उसने रावण तथा उपस्थित सभासदों के हाथ जोड़े। रावण के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

संकेत से वह एक चौकी पर बैठ गये। सारी सभा उनकी ओर भय से देखने लगी।

रावण–तुम कौन बन्दर हो ?

अंगद–मैं राम का दूत हूँ।

रावण–यहाँ कैसे आये ?

अंगद–आपकी मेरे पिता से मैत्री थी। उसी मैत्री भाव से आया हूँ।

रावण–अच्छा, तो कहो, क्या चाहते हो ?

अंगद–आप पौलस्त्य कुल-भूषण हैं। आपने ब्रह्मा और शिव की तपस्या की। उन्होंने अमित बल-वैभव का वरदान दिया। उस बल को पाकर आपने इन्द्रादि देवताओं और लोकपालों को जीत लिया।

रावण–इसमें क्या संदेह है ? यह तो तुम अपनी आँखों से ही देख सकते हो। सारे देवता हाथ जोड़े खड़े हैं। जो ऐंठने वाले हैं, वे बन्दीगृह में सड़ रहे हैं।

अंगद–यह तो ठीक है, पर तुमने एक काम अच्छा नहीं किया।

रावण–वह क्या ?

अंगद–तुम सीता को क्यों चुरा लाये ?

रावण–उन्होंने मेरी बहन के नाक-कान क्यों काटे ? मैं उनसे घट कर थोड़े ही हूँ। ईंट का जवाब पत्थर से देने वाला हूँ।

अंगद–उन्होंने तुम्हारी बहन को कुदृष्टि से नहीं देखा। वह तो स्वयं प्रार्थना करने गयी थी। धमकी देती थी और सीता को खाने को तैयार थी। तुम तो सूनी पंचवटी से सीता को हर लाये। तुमने अपनी मर्यादा के अनुकूल काम नहीं किया। अच्छा हो अपनी धर्मपत्नी के साथ सीता को ले जाकर वापस कर दो। राम करुणासागर हैं। दीन वाणी सुन कर क्षमा कर देंगे। वह तुम्हें वैसे ही शरण देंगे, जैसे विभीषण को दी है।

रावण–नीच बानर ! सम्हाल कर बात नहीं करता। क्या तुझे पता नहीं कि मेरा देवताओं से जन्मजात बैर है। वे देवताओं के समर्थक हैं। यह तो बता कि तेरा पिता कौन है ?

अंगद–मैं स्वनाम धन्य बाली का पुत्र अंगद हूँ। कदाचित आप पिताजी से परिचित होंगे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रावण–किष्किंधा के राजा बाली के तुम्हीं पुत्र हो ! मैंने सुना कि राम ने बाली को धोखे से मार डाला । तुम उस पितृ-घातक के दूत बन गये । तुम्हें इस बात से लज्जा नहीं आती । तुम कुल-कलंक हो ! माता ने तुम्हें व्यर्थ जन्म दिया । तुम्हें उनसे अपने पिता का बदला लेना चाहिए था ।

अंगद–मैं तो पिताजी में और राम में कोई भेद नहीं समझता । वह मुझे वैसा ही चाहते हैं, जैसा सुग्रीव को । जिनकी सेवा करने के लिए ब्रह्मा, शिव आदि देवता तैयार हों, उनके दूत होने में वंश-मर्यादा नहीं टूटती । आप मुझे कुल-कलंक कहते हैं और अपने को कुल-पालक । यह तो समय बतलायेगा । ऐसा तो अंधे और बहरे भी नहीं कहते पर तुम तो बीस नेत्र और कान वाले हो ।

रावण–दुष्ट ! तू समझ कर बात नहीं करता । अपनी मर्यादा में रह, तू राजदूत है ! मैं सम्राट हूँ ! तुझमें इतनी शिष्टता नहीं कि राजा से कैसे बात करनी चाहिए ? मैं राजधर्म के नाते तुझे नहीं मारता ।

अंगद–आप सम्राट हैं । मैं युवराज हूँ । आप निशाचर-राज हैं । मैं बानर-राज हूँ । बात कहने का अधिकार सबको एक समान है । यदि मैं राजनीति नहीं जानता तो आप भी धर्मनीति नहीं जानते । क्या पराई नारी चुरा लाना धर्म-शास्त्र में लिखा है ? मेरा सौभाग्य या दुर्भाग्य जो आप ऐसे व्यक्ति के दर्शन हुए ।

रावण–मूर्ख ! बकवाद मत कर । मेरी बलवती भुजाओं को देख । मैंने इनसे कैलास पर्वत उठा लिया । है कोई तुम्हारी सेना में जो मुझसे लड़ने का साहस करे ? तुम्हारे राम तो नारी के विरह में सूख कर काँटा हो गये हैं । उनके भाई लक्ष्मण उसी दुख से मलीन रहते हैं । वे क्या खाकर हमसे लड़ेंगे ? विभीषण को मैं अच्छी तरह से जानता हूँ । वह तो जन्म का भीरु है । वह लड़ना क्या जाने ? वह तो भजन करना जानता है । जामवन्त लड़ सकते थे । पर वह अब अधिक बूढ़े हो गये हैं । सुग्रीव नदी के किनारे के वृक्ष हैं । अब गिरे और तब गिरे । हाँ, हनुमान एक बली बानर है । उसे हमने लंका जलाते देखा । पर वह भाग कर निकल गया । नहीं तो हम उसकी भी लम्बी खबर लेते । तुमसे हमारा क्या बैर ? तुम हमारे मित्र के लड़के हो । जैसे मेघनाद वैसे तुम ।

अंगद–आपने हनुमान को ठीक समझा । वह भागने में अवश्य पटु है । पर भगोड़े

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वीर नहीं होते। मुझे आश्चर्य है कि उसने आपके होते हुए लंका में आग कैसे लगा दी ? और बचकर निकल भी गया। वह अभी तक लौट कर पहुँचा नहीं। राम ने मुझे इसीलिए भेजा है कि मैं आपको वास्तविक वस्तुस्थिति से परिचित करा दूँ।

रावण–धन्य है अंगद ! तुम क्या करो ? तुम अपने जन्मजात स्वभाव से विवश हो। बानर नाच-कूद कर अपने स्वामी को रिझाता है। सेवा करने में बड़ा चतुर होता है। अपने स्वामी के गीत गाता है। जिसकी रोटी खाता है, उसका हक अदा करता है। तुम में यह बहुत बड़ा गुण है। मैं गुण ग्राहक हूँ। इसलिए तुम्हारी बातें सुन रहा हूँ।

अंगद–आप अवश्य गुणग्राहक हैं। इसीलिए अशोक वाटिका उजाड़ने वाले, पुत्र को मारने वाले, लंका में आग लगाने वाले बानर की आप प्रशंसा करते हैं। उसका आपने कुछ अपकार नहीं किया। उसी भावना से प्रेरित होकर मैं भी आया हूँ। वह मैंने स्वयं अपनी आँखों देखा। आप लाज और शरम को धोकर पी गये हैं।

रावण–धिक्कार तुम्हारी बुद्धि को ! यदि ऐसे न होते तो बाप को क्यों खा डालते ?

अंगद–मैंने बाप को खा डाला है और तुम्हें भी खा डालूँगा। उसने भी परायी नारी छीनी थी। तुमने भी वही किया है। कुमार्गगामियों की यही दशा होती है।

रावण–अंगद तुम बहुत बढ़ते जा रहे हो। मैं बड़े धैर्य से काम ले रहा हूँ। पर धैर्य की भी सीमा होती है। यदि तुम्हारे प्रभु बलवान हैं तो बार-बार दूत क्यों भेजते हैं ? शत्रु से मैत्री करने में लाज नहीं आती ? मेरी वीरता जाननी हो तो दिक्पालों से पूछो। मैं जब उनसे लड़ने गया तो उन्होंने अपने हाथी बढ़ा दिये। मैंने अपनी छाती अड़ा दी। उनके दाँत मूली की तरह टूट गये। जब मैं देवताओं से लड़ने गया तो वे अपने घरों को छोड़ कर भाग गये। मैंने अपने शिर काट कर अग्नि में चढ़ा दिये। तुम्ही बताओ कि इस संसार में क्या कोई मेरा मुकाबला कर सकता है ?

अंगद–पतिंगे दीपक में जल जाते हैं। दीमक लट्ठे के लट्ठे चाट जाती है। घुन अन्न के भंडार खा जाते हैं। बाजीगर खेल में अपने अंग काट डालते हैं।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पर उन्हें कोई वीर नहीं कहता । प्रभु बार-बार यही कहते थे कि शृगाल को मारने से सिंह को यश नहीं मिलता । यही स्मरण कर मैंने तुम्हारी कठोर बातें सुन लीं । नहीं तो मैं तुम्हें उठाकर पटक देता। सेना को रौंद डालता । तुम्हारी नगरी उजाड़ देता और सीता को मंदोदरी सहित राम के पास ले जाता । पर राम ने आज्ञा नहीं दी । फिर मरे को क्या मारना ? कामी, क्रोधी, रोगी, वाममार्गी, कृपण, मूर्ख, अकिञ्चन, वृद्ध, बदनाम, भगवत-विमुख और सन्तद्रोही जीते हुए मृतक के समान हैं। यह विचार कर मैं तुम्हें नहीं मारता । पर तुम मुझे उत्तेजित कर रहे हो। मैं वाली का पुत्र हूँ । मेरी धमनियों में उसीका रक्त बह रहा है ।

रावण–रे नीच ! छोटे मुँह बड़ी बात । अब तू मेरे हाथों मरना चाहताहै । जिसके बल पर भूला है, उसके न बल है, न विवेक, न वैभव और न तेज । उसमें कोई तो गुण नहीं । यदि सुयोग्य होता तो पिता क्यों घर से निकाल देता ? आजकल स्त्री के विरह में क्रांत औरमेरे भय से भ्रांत रहता है। बस इधर-उधर मेरे विरुद्ध लोगों को भड़काता फिरता है ।

प्रभु की निंदा अपने कानों से सुनते ही अंगद को क्रोध आ गया। हाथी जैसे अंकुश की मार से उन्मत्त हो उठता है, वैसे ही अंगद भी तिलमिला उठा। उसने दोनों भुजदण्ड बड़ी जोर से जमीन पर दे मारे। इससे भूमि हिल गयी। सिंहासन डगमगा गया । रावण गिरते-गिरते बचा । उसके मुकुट गिर पड़े । कुछ तो उसने सम्हाल कर शिर पर लगा लिए । किन्तु उनमें से चार अंगद ने उठा कर जोर से फेंक दिये । वे समुद्र तट पर आ गिरे, जहाँ राम सचिवों से मंत्रणा कर रहे थे । उन्हें देख बन्दर भागने लगे। क्या दिन में उल्कापात हो रहा है ? क्या रावण ने वज्र फेंका है ? राम ने हँस कर कहा कि डरने की कोई काम नहीं । ये न राहु हैं, न केतु हैं, न उल्काएँ हैं, और न वज्रपात है । ये रावण के किरीट हैं ! इन्हें अंगद ने फेंका है । जान पड़ता है, वे रावण से बिगड़ पड़े हैं । उसने अभिमान में आकर कुछ अनुचित कहा होगा । भला युवराज उसे कब सहने वाले है ?

उधर रावण ने क्रुद्ध होकर उपस्थित वीरों से कहा कि बैठे क्या देखते हो ? इसे पकड़ कर मारो । यदि इसके साथी कहीं घूम रहे हों तो उन्हें भी मारो । कोई भालू या वानर जीता न बचे । दोनों भाइयों को बाँध कर मेरे पास लाओ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रावण की बातें सुनकर अंगद ने कहा कि गला काटकर मर जा। निर्लज्ज ! तुझे शरम नहीं आती। मेरा बल देख कर तेरी छाती क्यों नहीं फट जाती ? मैं तेरे दाँत तोड़ सकता हूँ; भुजाएँ उखाड़ सकता हूँ; लंका को समुद्र में डुबो सकता हूँ। तेरी लंका गूलर के समान है। उसमें रहने वाले निशाचर भुनगे हैं। मैं वानर हूँ। मुझे फल खाने में देर न लगेगी। पर अफसोस कि राम ने मुझे आज्ञा नहीं दी। तेरी मृत्यु प्रभु के हाथों होगी। तेरे शिर कट कर युद्ध भूमि में गिरेंगे। उन्हें बन्दर और रीछ गेंद की तरह ठोकर मारेंगे।

अंगद की युक्ति-चातुरी को सुन रावण ने कहा कि तू ने झूठ बोलना कहाँ से सीखा ? बाली तो कभी ऐसी लम्बी-चौड़ी बातें न करता था। तू तपस्वियों के साथ रह कर लबार हो गया है।

अंगद ने कहा कि यदि मैंने तेरी जिह्वायें न निकाल ली तो अवश्य लबार हूँ। उसने राम का नाम लेकर अपना पैर सभाभवन में जमा दिया और कहा कि मुझे मारना तो दूर, यदि कोई मेरा पैर हटा देगा तो मैं हार मान लूँगा। राम सीता को बिना लिये वापस लौट जायँगे।

अंगद की ललकार सुन रावण ने वीरों से कहा कि मुँह क्या ताकते हो ! इसकी टाँगे पकड़ कर भूमि में पटक दो। उसकी आज्ञा पाते ही योद्धा गण झपट पड़े। वे पैर उठाने लगे। पर वह हिला तक नहीं। यह देख कर मेघनाद उठा। उसने भी बड़ा प्रयत्न किया। पर अंगद का पैर जमा तो जम ही गया। वह लौह-स्तम्भ हो गया। अश्वत्थ वृक्ष की मूल बन गया। राक्षसों का घमंड चूर हो गया। वे लज्जा से शिर झुका कर अपने आसनों पर बैठ गये। यह देख रावण खीझ कर उठ खड़ा हुआ। वह स्वयं पैर उठाने चला। उसे आते देख अंगद ने पैर हटा लिया और कहा—'मेरे पैर छूने से तेरा कल्याण न होगा। यदि भला चाहता है तो राम की शरण में जा।' यह सुन रावण अपने सिंहासन पर बैठ गया। उसका तेज मंद हो गया। मुख उदास हो गया। बोली बंद हो गयी। सभा में सन्नाटा छा गया। उधर सन्ध्या हो गयी। अंधकार बढ़ने लगा। अंगद उठ कर चल दिये। मंदोदरी रावण का हाथ पकड़ कर रनिवास में ले गयी और उसे समझाने लगी।

हे कन्त ! आपको क्या हो गया है ? मैंने आपसे कई बार कहा पर आप ध्यान ही नहीं देते। उनका एक दूत आया था। उसने अक्षय को मारा। अशोक वाटिका उजाड़ी और तुम्हारे देखते लंका में आग लगा दी। आज दूसरा दूत

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आया। उसने भरी सभा में सबका मानमर्दन किया। जिनके दूतों का यह हाल हो, उनके आने पर क्या होगा ! उसकी कल्पना से ही रोमाँच हो उठता है। अंगद ने ठीक ही कहा कि वे वाण विद्या में बड़े निपुण हैं। शिव का धनुष वही चढ़ा सके। मारीच उनके बाणों की शक्ति जानता था। इसीसे वह उनके सामने नहीं जाता था। पर आपने भेज कर उसके प्राण लिए। उनके भाई लक्ष्मण ने धनुष की कोटि से रेखा खींची। उसे आप लाँघ न सके। फिर किस बल से उन्हें जीतने की आशा करते हैं ? उन्होंने समुद्र पर पुल बाँध कर वह काम किया जो आज तक कोई न कर सका। अब तो युद्ध शिर पर आ गया है। वे युद्ध नहीं चाहते। उन्होंने इसीलिए दूत भेजे। वे शान्ति चाहते हैं। झगड़ा केवल सीता पर है। उसे वापस कर दीजिए। यदि आप संकोच करते हों तो मैं सीता को लेकर आगे चलूँ। यदि युद्ध टल जाय तो अच्छा है।

मंदोदरी की बातें रावण को कुछ जँची नहीं। उसने कहा कि तुम रोज-रोज क्या दब्बूपन की बातें करती हो। एक वीर की पत्नी होकर तुम्हें डरना ठीक नहीं। शत्रुता उन्होंने मोल ली है, मैंने नहीं। मैं उनसे घट कर नहीं, बढ़-कर हूँ। जब वे लंका पर चढ़ आये हैं, तब युद्ध अनिवार्य हो गया है। रात में विश्राम करो। कल मैं युद्ध का डंका बजवा दूँगा। देखूँगा वे यहाँ से बच कर कैसे जाते हैं ?

इधर अंगद ने लंका से लौट कर राम के चरणों में प्रणाम किया। राम ने हाथ पकड़ कर युवराज को अपने पास बिठाया। इतने में सभी लोग घिर आये। राम ने बड़े स्नेह से पूछा—'मैंने सुना है कि रावण के दरबार में कई फाटकों से होकर जाना पड़ता है। उन पर द्वार रक्षक खड़े रहते हैं। वे किसी अपरिचित को घुंसने नहीं देते। फिर तुम वहाँ कैसे पहुँच पाये ? रावण के मुकुट तुम्हें कैसे मिले जो यहाँ फेंक दिये।'

अंगद ने कहा कि यह सब आपकी कृपा से संभव हुआ। वे मुकुट न थे। आप जानते हैं कि राजा में साम, दाम, दण्ड, भेद चार गुण होते हैं। इनमें धर्म के दो और नीति के दो चरण होते हैं। रावण में उनका अभाव है। अतः वे आपके पास चले आये। फिर अंगद ने लंका की सारी घटना कह सुनायी। उसे सुन कर सब लोग बड़े प्रसन्न हुए। राम ने अंगद की पीठ ठोंकी और कहा कि मुझे तुमसे ऐसी ही आशा थी। सुग्रीव ने कहा कि तुमने और तो सब ठीक किया पर एक लड़कपन किया। यदि रावण पैर उठा देता तो क्या होता ? अंगद ने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कहा कि मुझे प्रभु के नाम का बड़ा विश्वास है। उसीने मुझे यह प्रेरणा दी। न जाने मुझ में कहाँ से शक्ति आ गयी ? इसीलिए मैंने रावण को पैर में हाथ लगाने नहीं दिया। राम उनकी बुद्धि की चतुरता देख कर हँसने लगे। उनकी हँसी में सभी बानर और भालुओं की हँसी मिल गयी। अंगद ने संकोच से शिर झुका लिया।

प्रथम दिन का युद्ध

रावण ने प्रातः होते ही युद्ध की घोषणा कर दी। हर फाटक पर वीर सैनिकों को नियुक्त कर दिया कि नगर में कोई घुसने न पाये। उसने डंका पिटवा दिया कि जहाँ कहीं कोई बानर दिखायी पड़े, वहीं उसे भून कर खा डालो।

इधर राम ने विभीषण से पूछा कि आक्रमण की क्या योजना बनायी जाय। विभीषण ने कहा कि लंका में घुसने के चार फाटक हैं। अतः सेना के चार भाग किये जायँ। प्रत्येक दल एक सेनापति के सिपुर्द किया जाय। प्रत्येक सेनापति की सहायता के लिए सौ नायक और प्रत्येक नायक के साथ दस सहस्र बानरों की सेना हो। उत्तरी द्वार पर सुग्रीव, दक्षिणी द्वार पर हनुमान, पूर्वी द्वार पर जामवन्त और पश्चिमी द्वार पर सुषेण को नियुक्त किया। सैनिकों के दल के दल चल पड़े। उन्होंने चारों ओर से गढ़ घेर लिया। बानर दीवालों, कंगूरों और पेड़ों पर चढ़ गये। वे टिड्डी-दल की तरह लंकापुरी में छा गये। वे घरों में घुस जाते और सोते हुए राक्षसों को घसीट कर बाहर ले आते। वे किसीको नाखूनों से नोचते, किसीको दातों से काटते और किसीको पूँछ में लपेट कर पटक देते थे। वे जिस घर में घुसते, वहाँ तहस-नहस कर देते। उन्हें देख कर नारियों में भगदड़ मच गयी। वे कमरों में घुस गयीं। बच्चे डर के मारे चीखने लगे। यद्यपि बानर स्त्रियों और बच्चों से न बोलते थे, पर उनका आतंक छाया हुआ था। सारी लंका में कोलाहल मच गया। रावण को समाचार मिला कि बानर और रीछ तो दीवालों से चढ़ कर घरों में फाँद रहे हैं।

रावण ने सैनिकों को बुला कर कहा कि बानरों की धृष्टता तो देखो। दीवालों को फाँदकर घरों में घुस रहे हैं। मेरे रहते उत्पात मचा रहे हैं। इनको तीर-कमान और गुलेल से मारो। बन्दर गुलेल को ही डरता है। पत्थरों से मार कर इन्हें ढेर कर दो। फिर सबको भून कर खा डालो। भुने बानर का मांस बड़ा स्वादिष्ट होता है। अच्छा हुआ घर बैठे भोजन मिल गया।

रावण की आज्ञा पाकर निशाचर तीर-कमान लेकर दौड़े। उन्हें बड़ा गर्व

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

था कि हम क्षण भर में बानरी सेना का संहार कर देंगे। पर उनके अस्त्र-शस्त्र कुछ काम न आये। बानर कभी झुक जाते, कभी उचक जाते, कभी दाहिने हो जाते, कभी बायें और कभी उन्हीं पर फाँद पड़ते थे। वे उन्हीं के पत्थरों और ढेलों को लेकर उन पर फेंकते। निशाचर भीमकाय होने से भाग न सकते थे और न मुड़ सकते थे। वे यदि किसीको पा जाते तो रगड़ कर मार डालते, भूमि पर पटक देते या गर्दन मरोड़ देते थे। निशाचरों की संख्या में बानर कई गुने अधिक थे। एक-एक पर दस-दस आक्रमण करते। वे दाँत किटकिटा कर दौड़ते और मांस नोच कर भाग जाते थे। वे मरने की परवाह न करते। यदि कोई निशाचर किसी बानर को मारता तो वह रावण की जय बोलता और यदि कोई बानर निशाचर को मार डालता तो वह राम की जय बोलता था। बानर वीरों के शिर काट कर भवनों के भीतर में फेंक देते। वे दीवालों में लगने से फट जाते। उनसे रुधिर बहने लगता।

दोनों दलों में भयानक युद्ध होता रहा। निशाचरों के लड़ने का ढंग दूसरा था और बानरों का ढंग और था। बानरों के दाँव-पेंच उनकी समझ में ही न आते थे। उनके लिए दायें-बायें आगे-पीछे का विचार ही न था। अंत में वे भाग खड़े हुए। रावण ने उन्हें भागते देखा तो डाँट कर कहा—यदि कोई युद्धभूमि से भागा तो मैं अपनी तलवार से उसे काट डालूँगा। जिंदगी भर मेरा खाते-पीते रहे, आज लड़ने का समय आया तो प्राण बचा कर भाग रहे हो।

रावण की डाँट सुन कर योद्धा वैसे ही लौट पड़े जैसे साँप चोट खाकर मारने वाले की ओर झपटता है। उन्होंने रावण के हाथों मरने की अपेक्षा युद्धभूमि में मरना ही ठीक समझा। वे प्राणों का मोह छोड़ कर बानरों और रीछों पर प्रहार करने लगे। मारो-काटो की ध्वनि मची थी। किन्तु कौन किसको मार रहा है, कुछ समझ में न आता था। निशाचरों ने राम की सेना को विचलित कर दिया। युद्ध की भयानकता देख बानर भगे। वे अपने सेनापतियों को पुकारने लगे। अरे बचाओ! अंगद कहाँ हो? हनुमान कहाँ हो?

अंगद ने सुना कि हनुमान दक्षिणी द्वार पर अकेले मेघनाद से लड़ रहे हैं तो उनकी मदद के लिए उधर जा पहुँचे। फिर दोनों ने वह भयानक मार-काट की कि निशाचरों के दाँत खट्टे कर दिये। वे कँगूरों पर चढ़ कर कलश गिराने लगे। फिर रावण के भवन में कूद पड़े। दोनों ने दो चन्दन के खम्भे उखाड़

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लिये। उन्हीं से जो मिला उसे मारा। यह देख मेघनाद ने हनुमान को ललकारा। फिर दोनों में युद्ध होने लगा। हनुमान ने मेघनाद की छाती में लात मारी। वह बेहोश होकर गिर पड़ा। उसका सारथी उसे घायल समझ कर उठा ले गया। रावण को यह देखकर बड़ा दुख हुआ। उसने कहा कि इन्द्र को विजय करने वाले वीर कैसे पड़े हो ? पिता के शब्द कानों में पड़ते ही मेघनाद सचेत हो गया। इधर सन्ध्या हुई और युद्ध समाप्त हो गया।

माल्यवंत की सम्मति

सन्ध्या समय रावण ने मंत्रियों को बुलाकर अंतरंग सभा की। उस दिन के युद्ध की परिस्थिति पर विचार किया। लड़ाई में मारे गये योद्धाओं की सूची बनायी। लगभग आधे वीर एक दिन में काम आये। उसने कहा कि सामूहिक युद्ध के स्थान पर द्वन्द्व युद्ध किया जाय। एक दिन का एक सेनापति हो। वही उस दिन सैन्य सञ्चालन करे। तभी हमारी विजय हो सकती है।

माल्यवंत रावण के नाना का मंत्री रह चुका था। वह वयोवृद्ध था। उसने कहा कि जबसे आप सीता को हर लाये हैं, तब से कोई न कोई अशुभ समाचार मिलते रहते हैं। मैंने सुना है कि वेद-पुराण जिनका यश गाते हैं, जिन्होंने मधुकैटभ, हिरण्याक्ष, और हिरण्यकश्यपु को मारा है, जो दुष्टदलन हैं, सर्वशक्ति सम्पन्न हैं, जिनकी शिव और ब्रह्मा सेवा करते हैं, वही विष्णु के अवतार राम हैं, उनसे विरोध करके वंश का नाश निश्चय है। सीता को वापस देकर संधि कर लीजिए। अभी कुछ विशेष बिगड़ा नहीं है।

रावण ने कहा कि युद्ध का डंका बज चुका। इतने वीर मारे भी गये। अब युद्ध रोकने का क्या काम ? तुम वृद्ध हो। पुराने मंत्री हो ! नहीं तो मैं बिना मारे न छोड़ता। अपना मुँह काला करके दरबार से चले जाओ। फिर कभी न आना।

रावण से तिरस्कृत होकर माल्यवंत अपना सा मुँह लेकर चला गया। उसके चले जाने पर मेघनाद ने कहा—कल के युद्ध में सैन्य सञ्चालन मैं करूँगा। मैं अधिक क्या कहूँ। पर देख लेना कि मैं क्या कौतुक करता हूँ ! मैं अपने प्रति-द्वन्द्वी को बिना मारे न छोड़ूँगा। मैंने अपने इष्टदेव से एक रथ पाया है। उसके विषय में मैं आपको बतलाना भूल गया। उसमें बैठकर युद्ध करने से मुझे कोई देख न सकेगा। मैं उनके वीरों को स्वाहा कर दूँगा।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पुत्र की बातें सुन कर रावण फूल उठा। उसे पकड़ कर छाती से लगा लिया और कहा कि तुम मेरे सुयोग्य पुत्र हो। मुझे तुम्हारे ऊपर गर्व है। मैं आशीष देता हूँ कि कल तुम विजयी हो।

मेघनाद का युद्ध

दूसरे दिन दोनों ओर की सेनायें युद्धभूमि में इकट्ठा हो गयीं। मेघनाद ने सिंह के समान गरज कर कहा—'कोशल के राजकुमार कहाँ हैं? अंगद, हनुमान, सुग्रीव और नल-नील कहाँ हैं? वह देशद्रोही विभीषण कहाँ है? मैं आज किसीको जिन्दा न छोड़ूँगा। ऐसा कह कर वह बाण बरसाने लगा। वे नागों की भाँति लपलपाते हुए चले। उनके लगते ही वानर और रीछ धड़ाधड़ गिरने लगे। उसका सामना करने का किसीको साहस न हुआ। यदि कोई आ गया तो मारा गया। ऐसा कोई योद्धा न बचा, जिसे उसने घायल न किया हो। वानरों को भागते देख उसने अट्टहास करके कहा कि है कोई वीर जो मेरा सामना करे।

उसकी ललकार सुन कर हनुमान और सुग्रीव दौड़े। हनुमान एक विशाल पर्वत उखाड़ लाये और उसके रथ पर फेंक दिया। शिला को आते देख मेघनाद आकाश में उड़ गया पर, उसका रथ चकनाचूर हो गया। उसने सारथी को मायामय रथ लाने का आदेश दिया। फिर वह राम के पास पहुँचा और अनेक दुर्वचन कह अस्त्र-शस्त्र बरसाने लगा। प्रभु ने उसके बाणों को आते देख बीच ही में काट दिया। यह देख इन्द्रजीत खिसिया गया। वह माया रथ में बैठ कर आकाश में उड़ गया और अंगार बरसाने लगा। इससे वानर और रीछ भागने लगे। वह जहाँ भागते, वहीं आग की लपटें दिखायी देतीं। फिर धूल की वर्षा होने लगी। चारों ओर अंधकार छा गया। रुधिर, मांस, मज्जा और अस्थियाँ गिरने लगीं। इधर भूमि से जल-धाराएँ फूट पड़ी। सेना में भगदड़ मच गयी। किसीकी कुछ समझ में न आया कि क्या करें और कहाँ जायँ। राम ने अपनी सेना को विचलित देखा तो एक ऐसा बाण मारा कि अंधकार छट गया। आकाश स्वच्छ हो गया। न अग्नि की लपटें रहीं और न जल-धाराएँ। फिर राम ने अपने सैनिकों की ओर देखा तो वे प्रसन्न हो उठे। उनके चेहरों की उदासी हवा हो गयी। वे हँसने लगे। उनमें नवीन स्फूर्ति आ गयी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लक्ष्मण की शक्ति और हनुमान द्वारा संजीवनी लाना

अगले दिन लक्ष्मण ने राम से कहा कि आज मैं मेघनाद को देखता हूँ। राम ने स्वीकारात्मक सिर हिलाया तथा सुग्रीव और हनुमान की ओर देखा। प्रभु की इच्छा समझ दोनों लक्ष्मण के साथ हो गये। लक्ष्मण ने मेघनाद को बढ़कर ललकारा—'क्या सिपाहियों को मार रहा है! इधर देख, मैं तेरा काल आ गया।'

लक्ष्मण के दल को बढ़ते देख मेघनाद ने भी अपने सैनिकों को बढ़ने का संकेत किया। दोनों दलों में संघर्ष छिड़ गया। वीरों ने अपनी-अपनी जोड़ी ढूँढ़ ली। विकराल युद्ध होने लगा। इधर-उधर वीर कट कर गिरने लगे। उनके शरीरों में व्रण हो गये। वे खून से लथपथ हो गये। भूमि लाल हो गयी। रुधिर की नदियाँ वह निकलीं। लक्ष्मण और मेघनाद में भिड़न्त हो गयी। दोनों अपनी बाण-विद्या दिखाने लगे। लक्ष्मण ने इतने बाण मारे कि वह जर्जर हो गया। उसके रथ की धज्जियाँ उड़ गयीं। सारथी घायल होकर गिर पड़ा। यह देख इन्द्रजीत को क्रोध आ गया। उसने 'वीरघातिनी शक्ति' छोड़ी। वह तेजस्विनी विद्युतशक्ति लक्ष्मण के लग गयी। लक्ष्मण अचेत होकर गिर पड़े। मेघनाद दौड़कर उन्हें उठाने लगा। वह चाहता था कि लक्ष्मण का शव ले जाकर पिता को दिखलावे पर लक्ष्मण को वह उठा न सका। वह लज्जित होकर चल दिया। इतने में संध्या हो गयी। युद्ध बन्द हो गया। सेनापति अपने-अपने सैनिकों को सँभालने लगे। इधर लक्ष्मण को न देख राम को चिन्ता हुई। उन्होंने अंगद से पूछा कि भैया कहाँ हैं? इतने में हनुमान और सुग्रीव उन्हें लेकर आ गये।

लक्ष्मण को मूर्च्छित देख राम उदास हो गये। दुर्घटना की सूचना मिलते ही जामवन्त, विभीषण, नल-नील, द्विविद, मयंद आदि सब आ पहुँचे। जामवन्त ने विभीषण से सलाह करके कहा कि लंका में सुखेन नाम के कुशल चिकित्सक रहते हैं। यदि कोई उन्हें बुला लाये तो उपचार हो सकता है। प्रभु का संकेत पाते ही हनुमान चल दिये। वे सुखेन को पलँग समेत सोते से उठा लाये। वैद्य-राज ने बतलाया कि इसकी औषधि सञ्जीवनी बूटी है। वह द्रोणाचल पर उगती है। वह रातोरात आ जानी चाहिए। यदि सूर्योदय तक औषधि न दी गयी तो जीवन का लौटना असंभव है। राम ने हनुमान की ओर देखा मानों कह रहे हों कि यह काम भी तुम्हीं कर सकते हो।

हनुमान ने हाथ जोड़ कर कहा—आप सोच न करें। आप कहें तो आकाश में उड़ कर चन्द्रमा से अमृत निचोड़ लाऊँ! कहिये पाताल में जाकर नागों को

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मार कर अमृत कुण्ड ले आऊँ और उसे पिलाकर लक्ष्मण को अमर कर दूँ। कहिये तो सूर्य के द्वार पर राहु की बिठा दूँ। यदि सूर्य निकलने ही न पायें तो सुबह कैसे होगी ? कहिए ब्रह्मा को पकड़ लाऊँ और लक्ष्मण को अमर होने का वरदान दिला दूँ ? कहिये स्वयं देह त्याग कर लक्ष्मण के शरीर में प्रवेश कर जाऊँ ! केवल आपकी आज्ञा भर की देर है।

राम ने कहा कि तुम में सब कुछ करने की सामर्थ्य है। तुम्हारे लिए संसार में कुछ भी असंभव नहीं। तुममें परोपकार की भावना प्रबल है। तुम सब सत्य कहते हो। इस समय तुम्हें केवल संजीवनी लानी है। हनुमान प्रभु को प्रणाम कर चल दिये।

उधर रावण को समाचार मिला कि हनुमान संजीवनी बूटी लेने द्रोणाचल जा रहे हैं। वह कालनेमि के घर पहुँचा और हनुमान का मार्ग रोकने को कहा। उसने कहा कि जब आप उन्हें लंका जलाने से रोक न सके तो भला उन्हें मैं कैसे रोक सकता हूँ ? रावण ने कहा कि रोक तो नहीं सकते पर देरी तो लगा सकते हो। यदि तुमने टाल-मटोल की तो अभी तुम्हारा सिर उड़ा दूँगा। कालनेमि ने सोचा कि इस पापी के हाथों मरने से तो राम-दूत के हाथों मरना अच्छा है। वह रावण से विदा लेकर कदली वन पहुँचा। एक सरोवर के पास कुटी बना ली तथा धूनी रमा कर बैठ गया।

हनुमान कूदते-फाँदते उस सरोवर के पास से होकर निकले। दिन भर के थके थे। यात्रा लम्बी थी। उन्होंने सोचा कि थोड़ा जल पीकर प्यास बुझा लें। निकट जाकर कपट वेशी साधु को देख प्रणाम किया और पूछा कि क्या सरोवर का जल पेय है ? कपटी मुनि हनुमान को देखते ही 'राम-राम' कह कर माला फेरने लगा। उसने कहा कि राम और रावण का युद्ध हो रहा है। मैं ज्ञानदृष्टि से यहाँ बैठा सब देख रहा हूँ। लक्ष्मण के शक्ति लग गयी है। वह मूर्छित पड़े हैं। तुम उनके लिए संजीवनी लेने जा रहे हो। इस युद्ध में राम की विजय होगी। इसमें कोई संदेह नहीं पर तुम्हें मेरे मंत्र की आवश्यकता है। सरोवर में पेट भर पानी पीलो। जल से मार्जन करो। फिर मेरे पास आओ। मैं तुम्हें दीक्षा दूँगा। इससे तुम्हें कार्य में सफलता मिलेगी।

हनुमान जैसे ही सरोवर में घुस कर पानी पीने लगे, वैसे ही एक मगरी पैर के नीचे पड़ गयी। उसने उलट कर हनुमान का पैर मुँह में भर लिया। उन्होंने बड़ी जोर से पैर झिटका तो वह बाहर जाकर गिरी। हनुमान ने उसे दाहिने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पैर की एड़ी से कुचल दिया। उसके प्राण निकल गये। वह दिव्य रूप धारण कर आकाश में यह कहते चली गयी कि कपटी मुनि से सावधान रहना।

हनुमान जल पीकर साधु के पास पहुँचे। वह अपने कमण्डल से जल देने तथा संकल्प पढ़ने लगा। हनुमान ने अपनी पूँछ में लपेट कर उसे पटक दिया। और आकाश मार्ग से उड़ चले।

द्रोणाचल पर अनेक औषधियाँ जगमगा रही थीं। हिम-मण्डित शिखरों पर दुग्ध धवल ज्योत्स्ना छिटक रही थी। शिलाओं में मणि-रत्न चमक रहे थे। वनस्पितियों पर हिमबिन्दु चमक रहे थे। हनुमान की समझ में नहीं आया कि इनमें कौन सी संजीवनी बूटी है। उन्होंने समग्र द्रोणाचल ही उखाड़ लिया और मरुत वेग से आकाश मार्ग से लौट पड़े। इधर रात के तीन पहर बीत गये। हनुमान के आने में देर हुई। राम ने लक्ष्मण का सिर उठा कर गोद में रख लिया और कहने लगे—

'भाई! तुम तो मुझसे बड़ा अनुराग रखते थे। मुझे कभी दुखी न देख सकते थे। पर आज तुम्हें क्या हो गया है? तुमने मेरे लिए अयोध्या छोड़ी। माता, पिता, भाई परिवार और पत्नी को छोड़ा। सारे सुखोंको तिलांजलि दे दी। मेरे साथ वन-वन भटकते रहे। धूप, जाड़ा, और वर्षा सहते रहे। तुमने सेवा से कभी मुँह नहीं मोड़ा। मैं लौटकर माँ को क्या मुँह दिखलाऊँगा। उन्होंने तुम्हें मेरे हाथों में सौंपा था। उठो, कुछ तो बोलो। क्या तुम मुझसे रुष्ट हो गये हो? सीता-हरण होने पर तुम्हीं धीरज बँधाते रहे, मुझे उत्साहित करते रहे। मैंने तुम्हारे बल पर रावण से युद्ध मोल लिया। हाय! तुम मुझे अकेला छोड़कर कहाँ जा रहे हो? कदाचित मैं रावण को मार डालूँ। सीता भी वापस मिल जायें। पर तुम्हारे बिना मैं अवध कैसे जाऊँगा? अयोध्यावासी क्या कहेंगे? यही न कि अपने स्वार्थ के लिए भाई के प्राण लिए। मुझे धिक्कार है। तुम्हारे ऐसा भाई मुझे कहाँ मिलेगा? उठो, नहीं तो मैं भी आत्म-घात कर लूँगा।

राम को विलाप करते देख कर बानरों और रीछों के हृदय दहल उठे। राम पर जो विपत्ति पड़ी उसकी उन्होंने कभी कल्पना ही न की थी। उनके मुख पर उदासी कभी झलकती ही न थी। आज तो उन पर बज्र ही टूट पड़ा। जब भूचाल आता है तो बड़े-बड़े पर्वत भी हिल जाते हैं; जब तूफान आता है तो विशाल वृक्ष भी टूट गिरते हैं। भाई के वियोग में राम का हृदय भी विचलित

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हो उठा। वह फूट-फूट कर रोने लगे। यदि मैं ऐसा जानता तो पिता के वचन मानकर कभी वन में न आता। सीता चली गयी थीं, चली जातीं पर भाई से तो हाथ न धोना पड़ता।

अंगद ने बताया कि हनुमानजी औषधि लेकर आ गये। राम उनकी ओर कृतज्ञता से देखने लगे। सभी रीछ और बानर घिर आये। हनुमान ने अपना बोझ सिर से उतार फेंका। सुग्रीव ने बड़कर उनका स्वागत किया। सुखेन ने औषधि पहचानी। उसे पीसकर लक्ष्मण को पिलायी। उसके पीते ही उन्होंने करवट बदली। राम की जान में जान आयी। उन्होंने कहा—'भइया! कैसी तबियत है? लक्ष्मण झट से उठ बैठे और बोले—मेघनाद कहाँ है? मैं उसे बिना मारे न छोड़ूँगा। राम ने उन्हें गले से लगा लिया। वे प्रसन्नता से खिल उठे। मानों उन्हें नया जीवन मिल गया हो। उन्हें प्रसन्न देख सबके चित्त प्रसन्न हो उठे।

राम ने सुखेन को धन्यवाद दिया और पूछा कि आपकी क्या सेवा करें? सुखेन ने कहा कि मैं वैद्य हूँ। आहतों और रोगियों का उपचार करना मेरा धर्म है। आज मेरा सौभाग्य था कि आपकी सेवा कर सका। आप चाहते तो स्वयं उपचार कर लेते। पर आपको तो मुझे सुयश देना था। आपकी मुझ पर बड़ी कृपा है। संसार में जहाँ लक्ष्मण की कीर्ति, होगी वहाँ मेरा भी नाम लिया जायगा। वैद्य को सबसे बड़ा संतोष रोगी को स्वस्थ देखने से होता है। यही उसकी अक्षय कीर्ति है। ऐसा कह कर वह चलने को तैयार हुए। राम ने हनुमान से कहा कि वैद्यराज को इनके घर वैसे ही पहुँचा दो जैसे लाये थे। मरुत सुत को केवल आज्ञा मिलने की देर थी। वह भेजकर वापस आ गये।

कुम्भकर्ण का युद्ध

रावण ने लक्ष्मण के जीवित हो उठने का समाचार सुना तो बड़ा दुखी हुआ। वह बौखलाया हुआ भाई कुंभकर्ण के पास पहुँचा। वह गहरी नींद में सो रहा था। रावण ने शहनाई बजाने की आज्ञा दी। मधुर ध्वनि सुनकर वह सुख की नींद सोने लगा। अतः ढोल और नगाड़े बजवाये गये। पर उसकी नींद न खुली। फिर हाथी मँगाये गये। वे उसका बदन दाबने लगे। बदन दाबने से उसे सुख मिला। वह जोर-जोर से खर्राटे लेने लगा। किसीने कहा कि नाक में मोटी बत्ती डालो, किसीने कहा कि मेख डालो। बत्ती से वह टस

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

से मस न हुआ। मेख ठोंकने से उसे छींक आयी। निद्रा भंग हो गयी। कच्ची नींद खुल पड़ने से वह क्रुद्ध हुआ। उसने कहा कि किसने जगाया, मैं उसे खा डालूँगा। तब तक रावण सामने आ गया। कुंभकर्ण ने उसे प्रणाम किया और पूछा—'भाई ! आप उदास क्यों हैं ? आपके मुख पर चिंता की गहरी रेखायें क्यों झलक रही हैं ? आपकी क्या आज्ञा है ?

रावण ने शूर्पणखा के प्रसङ्ग से लेकर लक्ष्मण-शक्ति तक की सारी कथा कह सुनायी। उसने बताया कि इस बीच खर, दूषण, त्रिशिरा, अक्षय कुमार, दुर्मुख, अतिकाय, अकम्पन, महोदर, कालनेमि आदि वीर मारे गये। मैंने सोचा कि यदि तुम्हें नहीं जगाता तो सारे वीरों का स्वाहा हो जायगा। मुझे तुम्हारे बल पर बड़ा गर्व है।

कुंभकर्ण ने कहा कि आपको पहले ही जगाना चाहिए था। आपने घर बैठे नाहक रार मोल ली। शूर्पणखा को आप नहीं जानते। वह विष की बेल है। झगड़ा कराने में बड़ी निपुण है। यदि आप उसके कहने पर चले तो कुशल नहीं। सीता का अपहरण कर आपने अच्छा नहीं किया। नारद ने मुझे सत्य ही कहा था। मुझे बतलाने का अवसर ही न मिला। खैर, जो होना था सो हो चुका। जो होना है, सो देखा जायगा। मैं स्वयं युद्धभूमि में जाकर देखूँगा कि वे श्याम रूप राम कौन हैं ? मेरा उन्हीं से युद्ध होगा।

रावण ने उसके खाने के लिए सौ मुर्गे, पचास बकरे, दस मेढ़ें और एक भैंसा कटवाया। पीने के लिए सौ घड़े मदिरा मँगवायी। कुंभकर्ण खा पीकर मस्त हो गया। उसे कुछ सुझाई न पड़ने लगा। वह युद्धि-भूमि की ओर अकेला ही चल पड़ा। उसने सिपाहियों से अपने अस्त्र-शस्त्र ले चलने को कहा। पर रावण ने साथ में सेना भी भेज दी। कुंभकर्ण को आते देख कर विभीषण ने राम से कहा कि आज युद्ध में भाई कुंभकर्ण आ रहे हैं। मैं आगे चल कर इनसे मिलता हूँ।

विभीषण को निःशस्त्र बढ़ते देख कुंभकर्ण खड़ा हो गया। विभीषण ने भाई को हाथ जोड़ कर प्रणाम किया। कुंभकर्ण ने उसे गले लगा लिया और पूछा—'भाई ! तुम इधर कैसे ?' विभीषण ने कहा कि मैंने भाई को न लड़ने और सीता को वापस कर देने की सलाह दी थी। इस पर वह बिगड़ पड़े। आप उनके स्वभाव को तो जानते ही हैं। उन्होंने मुझे बुरा,भला कहा, अपमान किया और भरे दरबार से निकाल दिया। मैंने माँ से पूछा और कुबेर की सलाह ली।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आप सो रहे थे। मैं ग्लानि वश इधर चला आया। प्रभु ने मुझे अपना लिया। राम युद्ध नहीं चाहते पर विवश होकर लड़ना पड़ रहा है।

कुंभकर्ण ने कहा कि तुमने जो किया सो ठीक किया। हम लोगों का मार्ग तुमसे भिन्न है। मेरे पास भाई के कार्यों की समीक्षा करने की बुद्धि नहीं। उन्हें मुझ पर बड़ा विश्वास है। मैं उनके साथ विश्वासघात नहीं कर सकता। जाओ, राम से कह दो कि तुम्हारा बैरी कुंभकर्ण खड़ा है। यदि लड़ने का साहस न हो तो लौट जायें। मैं युद्ध न चाहने वालों पर आक्रमण नहीं करता।

विभीषण के मुख से कुंभकर्ण का नाम सुनते ही बानर और रीछ झपट पड़े। वह साक्षात कज्जलगिरि ही जान पड़ता था। उसकी रोमावलि वृक्षावलि, मुख, नासिका तथा कान के विवर कंदरायें और खोहें मालूम पड़ती थीं। उसकी जंघायें साल वृक्ष के तने के समान और भुजाएँ अजगर सी जान पड़ती थीं। बन्दर उसकी पीठ, भुजाओं, कंधों और सिर पर चींटियों की तरह घूम रहे थे। वे नखों और दन्तों से उसे काट रहे थे। पर उसका शरीर वज्र के समान कठोर था। उसे कुछ जान ही न पड़ता था। केवल खुजली सी लगती थी। वह पकड़-पकड़ कर उन्हें चुटकी से मसलने लगा तथा मुँह में डालने लगा। बन्दर एक तरफ से उसके मुँह में जाते और दूसरी ओर कानों के रास्ते निकल कर बाहर आ जाते थे। उसे पहाड़ के समान अचल देख बानरों के छक्के छूट गये। तब बन्दर उस पर पत्थर फेंकने लगे। पत्थर उसके शरीर से लगकरचूर-चूर हो जाते थे। वह न मुड़ता था, न हिलता था और न जगह से टलता था। उसे ऐसा जान पड़ता मानों कोई फूल मार रहा हो या मदार की बेड़ियाँ फेंक रहा हो।

युद्ध में कुम्भकर्ण को अचल देख हनुमान, अंगद, सुग्रीव, जामवन्त नल, नील सभी दौड़ पड़े। उसने जिसे पाया उसके ही थप्पड़ और घूँसे लगाये। उसके प्रहार से अनेक बानर और रीछ मूर्छित होकर गिर पड़े। उसने सुग्रीव और अंगद दोनों को बगलों में दबा लिया और झूमता हुआ आगे बढ़ा। इतने में हनुमान ने उसकी छाती में जोर का घूँसा मारा। उसने भी हनुमान के मुक्का मारा। वह मुर्छित होकर गिर पड़ा। उधर सुग्रीव और अंगद बगल से निकल गये। वे उसके नाक और कान काट आकाश में उड़ गये। नाक और कान कटने से रुधिर की धारा बह निकली। कुम्भकर्ण ने कानों को छूकर देखा तो उसके हाथ लाल हो गये। रक्त देखकर वह उन्मत्त हो गया। उसने हाथ बढ़ाकर अंगद और सुग्रीव को पकड़ भूमि पर पटक दिया। उसने समझा कि वे मर गये।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उसके विकराल वेष और क्रोध को देखकर वानर हक्का-बक्का रह गये। ऐसा जान पड़ता था कि वह सबको मार डालेगा और कोई जीता न बचेगा। वे इधर-उधर प्राण बचाकर भागने लगे। हनुमान और सुग्रीव ने होश आने पर राम से जाकर कहा कि कुम्भकर्ण ने तो वानरी सेना में खलबली मचा दी है। लगभग आधी सेना मारी गयी। उसका बल पाकर निशाचरों की सेना बढ़ती चली आ रही है। जान पड़ता है, आज पराजय हो जायगी। उनकी बातें सुनकर राम ने लक्ष्मण और विभिषण से कहा कि तुम अपनी सेना को सम्भालो। कुम्भकर्ण को मैं देखता हूँ। ऐसा कह धनुष-बाण लेकर आगे बढ़े। उनके साथ हनुमान, सुग्रीव आदि योद्धा भी अपने साथियों को लेकर चले।

राम ने अपने धनुष की डोरी को कस कर बाँधा। फिर उसे झंकृत किया। उसकी टंकार सुनते ही राक्षस बहरे हो गये। उन्होंने एक के बाद एक अनेक तीर फेंके। वे पक्षधर पन्नगों की भाँति उड़ते हुए चले। उनके लगने से किसीके हाथ कट गये, किसीकी भुजाएँ उड़ गयीं और किसीके सिर धड़ से अलग जा गिरे। बाणों से विद्ध अनेक हाथ, पैर, रुण्ड, मुण्ड हवा में उड़ने लगे। अनेक वीर घूम-घूम कर गिरे और स्वर्गलोक को चले गये। अनेक घायल पड़े कराह रहे थे। यह हाल देख निशाचरों के पैर उखड़ गये।

कुंभकर्ण ने राम की बाण-विद्या देखी तो आश्चर्य में डूब गया। उसने कहा कि क्या सिपाहियों को मार रहे हो, मुझसे लड़ो। मैं तुम्हारा काल खड़ा हूँ। आज मैं खर-दूषण का बदला ले लूँगा। देखो युद्ध से भाग न जाना। राम ने कहा कि अच्छा पहिले शस्त्र प्रहार कर लो। ऐसा न हो कि तुम्हारी अभिलाषाएँ मन की मन में ही रह जायँ। यह सुनते ही कुम्भकर्ण राम पर अनेक अस्त्र-शस्त्र फेंकने लगा। वह जो अस्त्र फेंकता, उसे राम बड़े लाघव से काट देते। उसने दाहिने हाथ से गदा चलायी। राम ने वह भुजा ही काट दी। उसने बायें हाथ से एक बहुत बड़ा पाषाण-खण्ड फेंका। राम ने वह भुजा भी काट डाली। दोनों भुजाओं के कट जाने से वह मंदराचल के समान जान पड़ने लगा। वह राम को खाने के लिए चिग्घाड़ कर दौड़ा। राम ने उसका मुख तीरों से भर दिया। वह कालत्रोण या पुच्छल तारे के समान जान पढ़ने लगा। फिर भी मरा नहीं और वैसे ही प्रभु पर झपटा। राम ने वह बाण फेंका जो अत्रिमुनि ने दिया था। वह शिर को छेद कर अपने साथ लेता हुआ रावण के आगे जा गिरा। शिर कट जाने पर भी कुम्भकर्ण मरा नहीं। उसका धड़ दौड़ने लगा और बानरों का

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

संहार करने लगा। राम ने उसके भी दो टुकड़े कर दिये। उसका शरीर धड़ाम से गिरा। गिरते-गिरते उसने दो-चार बन्दरों के प्राण ले डाले। उसका तेज रघुनाथ के मुख में समा गया। यह देख देवता आकाश में दुंदुभी बजाने और राम का यश गाने लगे। हे प्रभु ! आपने अच्छा किया, जो इस दुष्ट को मारा। कुम्भकर्ण के मरते ही सेना भाग खड़ी हुई। राघवेन्द्र युद्धभूमि में अकेले खड़े थे। यह देख वानरी सेना 'जय जयकार' करने लगी।

रावण भाई के छिन्न-भिन्न शिर को देखकर व्याकुल हो गया। उसके मरने का समाचार पा राक्षस नारियाँ घिर आईं। वे छाती पीट-पीट कर रोने लगीं। 'हाय तुम्हें क्या हो गया ? तुम जब चलते थे, तो भूमि डगमगाती थी। तुम्हारी भुजाएँ साल वृक्ष के समान विशाल और कठोर थीं। हाय ! वे किसने काट डाली ? तुमसे देवता और दैत्य सभी डरते थे। तुम्हारे सामने कोई ठहर न सकता था। तुम अमित वैभव वाले और तेजस्वी थे। हाय तुम्हें ! आज क्या हो गया ? तुम बोलते क्यों नहीं ? बताओ हम किसके सहारे जीवित रहेंगी। रानियों का विलाप सुन रावण ने कहा कि—"रोने-पीटने का काम नहीं। वीरों की मृत्यु पर लोग रोते नहीं, उनकी कीर्ति गाते हैं। संसार में कोई अमर होकर नहीं आया। कोई आज गया और कोई कल। फिर उन्हें तो युद्धभूमि में वीर-गति मिली। वह अमर हो गये। उनके लिए शोक करना व्यर्थ है। वीरों की यही गति होती है।"

कुंभकर्ण की मृत्यु का समाचार पा मेघनाद भी पिता के पास आ पहुँचा उसने हाथ जोड़ कर कहा—'पिताजी ! आप चिंता न करें। कल मैं इनका बदला लूँगा। इस तरह विषाद करते हुए सारी रात बीत गयी।

मेघनाद-वध

अगले दिन दोनों ओर की सेनायें युद्ध-भूमि में फिर आ डटीं। वीरों ने अपनी अपनी जोड़ी ढूँढ़ ली। उनमें मल्ल युद्ध होने लगा। वे बड़ी वीरता से लड़ रहे थे। उनमें कोई हार मानना जानता ही न था। यदि कोई योद्धा विपक्षी को मार लेता तो अपने स्वामी की जय बोल उठता। पकड़ो, मारो, जाने न दो, भागने न पाये की ध्वनि आकाश में गूँज उठी।

मेघनाद अपना रथ बढ़ा कर आगे ले आया। उसे देख राम भी आ पहुँचे। मेघनाद गरज कर बाण चलाने लगा। उसने अग्नि बाण चलाया। इससे

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चारो ओर लपटें दिखायी पड़ने लगीं। राम ने वरुणास्त्र चलाया। इससे सारी अग्नि बुत गयी। मेघनाद ने वायव्य वाण चलाया। इससे तीव्र गति से वायु चलने लगी। राम ने मरुत बाण चलाया जिससे पवन उलट कर उसीकी ओर चलने लगी। मेघनाद ने ऐसे बाण चलाये जो नाग बन गये। उन्होंने चारों ओर से राम को घेर लिया और फन-फना कर काटने दौड़े। यह देख उनकी ओर के वीर घबड़ा उठे। राम ने तुरन्त ऐसे वाण चलाये जो गरुड़ बन गये। गरुड़ नागों को उठा-उठा कर खाने लगे।

जब उसका राम से कोई वश न चला तो वह जामवन्त की ओर बढ़ा। जामवन्त ने ललकारा कि दुष्ट खड़ा रह। आज मेरा भी बल देख ले। मेघनाद ने कहा कि तुम वृद्ध हो गये हो। मैं तुम्हें क्या मारूँ ? ऐसा कह उसने जामवन्त की ओर त्रिशूल फेंका। जामवन्त ने उसे कूद कर पकड़ लिया। फिर वही मेघनाद की ओर फेंक दिया। वह उसकी छाती में लगा। वह घूम कर गिर पड़ा। हनुमान ने पैर पकड़ कर उसे लंका में फेंक दिया। वह रावण के आगे जा गिरा। पिता को देख उसे बड़ी लज्जा आई। उसने कहा कि मैं देवी की पूजा करना चाहता हूँ। मैं यज्ञ का अनुष्ठान करूँगा। यदि देवी प्रसन्न हो गयीं तो कोई जीत न सकेगा। रावण ने यज्ञ की सारी सामग्री मँगवा दी। वह पर्वत की एक कन्दरा में चला गया और रुधिर तथा मांस से देवी को आहुति देने लगा।

विभीषण को जब यह समाचार मिला तो उसने राम से कहा—'प्रभु ! मेघनाद एक अपवित्र यज्ञ कर रहा है। यदि उसे सिद्धि मिल गयी तो फिर किसी के मारे न मरेगा। एक बार उसने ऐसा ही यज्ञ किया था। निकुंभिला देवी ने प्रसन्न होकर उससे वरदान माँगने को कहा। उसने कहा कि मुझे ऐसा रथ दीजिए जिस पर बैठकर मैं युद्ध कर सकूँ और मुझे कोई न देखे। देवी ने एवमस्तु कहा। साथ ही उपदेश दिया कि इसे छिपा कर रखना। महान संकट में इसका उपयोग करना। किंतु किसी ब्रह्मचारी अथवा भगवद्भक्त पर इसका प्रयोग न करना नहीं तो वह व्यर्थ, हो जायगा। पिछले दिन उसने उसीका उपयोग किया था।' इस समय उसका यज्ञ विध्वंस करना चाहिए। प्रभु की आज्ञा पाकर हनुमान, सुग्रीव, अंगद और जामवन्त उस कंदरा में गये। उनके पीछे लक्ष्मण भी धनुष-बाण लेकर जा पहुँचे। उनके साथ बानरी सेना भी गयी।

हनुमान ने भीतर जाकर देखा कि वह रक्त और मांस की आहुति दे रहा

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

है। उन्होंने उसकी व्यंग्यात्मक स्तुति की। उसने उधर कुछ ध्यान न दिया और यज्ञ करता रहा। बानर उसे इधर-उधर से काटने और नोचने लगे। कोई बाल खींच रहा था। कोई पैर घसीट रहा था। कोई हाथ पकड़कर उठा रहा था और कोई लातें मार रहा था। अपने को अपमानित देख वह क्रुद्ध होकर दौड़ा। उसने अपने त्रिशूल से अनेक बानरों को छेद डाला। फिर उनके नायकों को भी छेदने लगा। वे भागकर लक्ष्मण के पास पहुँचे। लक्ष्मण ने बाण मार कर त्रिशूल के दो टुकड़े कर दिये। यह देख उसे बड़ा क्रोध आया। वह धनुष तान कर बाण चलाने लगा। लक्ष्मण भी उसके बाणों को काटने लगे। फिर लक्ष्मण ने अपने बाण चलाये। उन्हें आता देख वह विलीन हो गया। यह हाल देख बानर डर गये। उन्हें विजय की कोई आशा न रही। लक्ष्मण ने विचार किया कि अब इसका मारना ही ठीक है। अतः वे बाण चलाये जो उन्हें अगस्त्य ने दिये थे। उन्होंने एक बाण से उसकी भुजा काट दी। बाण भुजा को लेकर उसकी स्त्री सुलोचना के आँगन में गिरा। दूसरे से सिर काट दिया। वह शिर को लेकर राम के चरणों में जा गिरा। विभीषण ने राम से बताया कि यह मेघनाद का शिर है। मरते समय उसने लक्ष्मण की प्रशंसा की—'हे वीर तुम धन्य हो! तुम्हारी माता धन्य हैं! आज तक मैं अपने को अजेय समझता था। पर तुम में अमित शक्ति है। मैं तुम्हें मान गया।' ऐसा कह उसने प्राण छोड़ दिये। उसके धड़ को उठाकर हनुमान और अंगद लंका के सिंहद्वार पर रख आये। लक्ष्मण ने जाकर प्रभु को प्रणाम किया। इतने में इन्द्रादि देवता विमानों में बैठकर आकाश में आ गये। उन्होंने वहीं से घोषित किया :—

'हे अनन्त भगवान! तुम्हारी जय हो। तुमने इस दुष्ट को मारकर देवों का कल्याण किया।

सती सुलोचना

मेघनाद की भुजा जब सुलोचना के आँगन में गिरी, उस समय वह चंदन के पलँग पर लेटी स्वामी का ध्यान कर रही थी। उसकी सेवा एक विद्याधरी कर रही थी। भुजा को गिरते देख वह आश्चर्य चकित हो गयी। दासी ने कहा कि यह भुजा कैसी? उसे देख उसका हृदय धड़कने लगा। वह पलँग से उठकर दौड़ी। मणि जटित सुवर्ण भुजबंध से स्वामी की भुजा पहचानी। उसे छाती से लगा कर विलाप करने लगी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'हाय मैं अभागिन हो गयी। मेरा सौभाग्य लुट गया। तुम्हें मारने वाला रामादल में कौन पैदा हो गया? तुम्हें वही मार सकता था, जिसने बारह वर्ष तक निद्रा, नारी और अन्न का परित्याग किया हो! मुझे विश्वास नहीं होता कि मेरा पति मारा गया। यदि मेरा पातिव्रत पूर्ण है, तो ऐ भुजे! उस मारने वाले का नाम लिख कर मेरा संदेह दूर करो। पतिव्रता के वचनों को सुन कर भुजा हिली। हाथ ने लेखनी देने का संकेत किया। वह शेषावतार की कीर्ति लिखने लगी।

'जो सर्वसृष्टि के कर्ता, धर्ता और संहारकर्ता हैं, जो अनन्त भगवान हैं, जिनकी कीर्ति सदा वेद गाते हैं, उनका यश यह निर्जीव भुजा कैसे लिखे? मेरा शिर तो भगवान राम के दर्शन करने गया है। मेरी मृत देह दुर्ग के द्वार पर पड़ी है। प्रिये! अब रोने का काम नहीं। मेरी मृत्यु मेरे दुष्कर्मों से हुई। अब तुम अन्तिम संस्कार का प्रबन्ध करो।'

सुलोचना पति की हस्तलिपि पढ़कर रोने लगी। जिस भुजा ने देवाधिदेव इन्द्र के मद को चूर कर दिया था, वह इस प्रकार भूमि पर अशक्त पड़ी है। उसकी सखी ने समझाया कि तुम तो बुद्धिमती हो। संसार की गति जानती हो। यहाँ कोई अमर होकर नहीं आता। एक न एक दिन सब मरते ही हैं। यह सुन बासुकी-कन्या उठी। उसने अपने रत्नाभूषण और पाटम्बर दान कर दिये। फिर भुजा को ले रावण के पास पहुँची। और कहा—आपके रहते मेरी यह दशा हो गयी। जो न होना था सो हो गया। पति की देह सिंहद्वार पर पड़ी है और शिर राम के चरणों में पड़ा है। कृपया उसे मँगवा दीजिए। मैं उसे लेकर सती हो जाऊँ। अब मुझे जीने से क्या काम?

पुत्र-वधू की बातें सुनकर रावण हक्का-बक्का रह गया। उसने कहा—'मैं अक्षयकुमार की मृत्यु पर नहीं रोया। भाई कुम्भकर्ण की मृत्यु का शोक हृदय को वज्र बनाकर सह लिया। आज मेरा अजेय पुत्र इन्द्रजीत भी चल बसा। बेटी! शोक को छोड़ दो। मैं कल युद्ध-भूमि में जाकर भाई और पुत्रों का बदला लूँगा उनका सिर काट लाऊँगा। उसे देख तुम प्रसन्न हो लेना। पर मैंने जो काम जन्म भर नहीं किया, उसे आज कैसे करूँ? मैं शत्रु के आगे हाथ नहीं फैला सकता। मैं शिर की भिक्षा माँगने कदापि न जाऊँगा। मेरे पुत्र सुमेरु गिरि को उखाड़ने वाले थे, पृथ्वी को गेंद के समान उठा लेते थे, वे नर-बानरों के हाथ मारे गये। यह केवल काल की कुटिलता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सुलोचना को श्वसुर की बातों से सन्तोष न हुआ। उसने सोचा कि कुम्भकर्ण, अतिकाय, महोदर तथा मेरे स्वामी को मारने वाले साधारण नर नहीं हो सकते। पिताजी को अहंकार वश कुछ सुझाई नहीं पड़ता। अतः वह मंदोदरी के पास जाकर विलाप करने लगी। उसने बतलाया कि मेरे पति की भुजा ने जो प्रभु की कीर्ति लिखी है, वह असत्य नहीं हो सकती।

मंदोदरी ने कहा कि बहू तुम ठीक कहती हो। मैं तो इन्हें समझा कर हार गयी। बेटी! शोक छोड़ कर तुम स्वयं राम के पास जाओ। आज लज्जा करने का समय नहीं है। फिर तुम्हारे श्वसुर विभीषण तो वहीं हैं। राम-लक्ष्मण एक नारी व्रती हैं। उनके पास जाने में संकोच कैसा? फिर वे तो बड़े नीतिज्ञ और धर्मज्ञ हैं। पुत्र का शिर लेकर वह क्या करेंगे। वह तो तुम्हारी ही गोद की शोभा है।

मंदोदरी की बात मानकर सुनयना राम के पास पहुँची। उस समय राम लक्ष्मण की गोद में विश्राम कर रहे थे। अन्य योद्धा आस-पास बैठे बात-चीत कर रहे थे। विभीषण ने प्रभु से हाथ जोड़कर कहा कि मेघनाद की वधू सुलोचना आपसे कुछ कहना चाहती है। वह बड़ी पतिव्रता है।

राम ने करुण दृष्टि से उसकी ओर देखा और पूछा—'सुनयने क्या! कहती हो? सुलोचना ने कहा—'हे रघुवंश भूषण! आपकी जय हो। आपके भाई ने मेरे पति को मारा। इसके लिए मैं उन्हें दोष नहीं देती। पर मेरे शिर को क्यों ले आये? उस पर मेरा अधिकार है। यदि आप उसे दे दें तो मैं उसके साथ सती हो जाऊँ।'

सुलोचना की विनती सुन राम की आँखों में आँसू आ गये। उन्होंने गद-गद कण्ठ से कहा—'भद्रे! शेषावतार लक्ष्मण के हाथों तुम्हारे पति का कल्याण हो गया। यदि तुम कहो तो मैं उन्हें जिला दूँ। वह सहस्र वर्ष की पूर्णायु पाकर संसार में सुख भोगें।'

प्रभु की दयामयी वाणी सुन कर सुलोचना ने कहा—'आप उदार और करुणा वरुणालय हैं। हमारे पति ने अपने बाहु-बल से इन्द्रादि देवताओं को जीत लिया। उन्होंने अमित वैभव कमाया। हमने जीवन के सारे भोग भोग लिए। युद्ध-तीर्थ में मेरे पति ने लक्ष्मण-याचक को अपने प्राण-दान दिये। भला मैं उनके दिये हुए दान को वापस कैसे ले सकती हूँ? इससे मेरी और मेरे स्वामी की अपकीर्ति होगी। उन्होंने आपके चरणों में प्राण छोड़े, इससे अधिक सद्गति और क्या हो सकती है? मैंने सुना है कि नदियों का जल समुद्र में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जाकर वापस नहीं लौटता, उसी प्रकार आपमें लीन होकर फिर पुनर्जन्म नहीं होता। अतः मेरी इच्छा उनके शव के साथ सती होने की है। जहाँ वह गये हैं, वहीं मैं भी जाऊँगी।

लक्ष्मण प्रभु की आज्ञा से मेघनाद का शिर सुलोचना के अंचल में डालने जा रहे थे कि सुग्रीव ने हाथ जोड़ कर कहा—'महाराज! रुण्ड-मुण्ड विहीन भुजा ने आपकी कीर्ति कैसे लिखी? मुझे इस बात पर विश्वास नहीं होता। यदि इस समय यह शिर हँस दे तो मैं इसकी बात प्रमाणित मान लूँ।

राम ने कहा कि शिर को गोद में डाल दो। मेरा विश्वास है कि यह अवश्य हँसेगा। कुतर्क करना ठीक नहीं। इससे विश्वास में कमी जान पड़ती है।

सुलोचना ने पति का शिर गोद में लेकर कहा—'स्वामिन! हँसते क्यों नहीं? अब मलिनता का क्या काम? यदि तुम्हारी मृतक भुजा प्रभु का चरित्र लिख सकती थी तो तुम हँस क्यों नहीं सकते? यदि मन, वचन और कर्म से मैंने तुम्हीं को पति माना हो और तुम्हीं से स्नेह किया हो तो इस भरे दरबार में आप क्यों चुप हैं? यदि मैं तुम्हारी यह दशा जानती तो सहायता के लिए अपने पिता वासुकी को बुला लेती।

सुनयना की बातें सुनकर शिर ठहाका मार कर हँस पड़ा। उसे सुनकर सारे बानर और रीछ उधर ही देखने लगे। सुग्रीव ने कहा कि मैं पतिव्रताओं की कहानियाँ सुना करता था पर आज अपनी आँखों स्वयं देख लिया। तुम धन्य हो! तुम लंका की कीर्ति हो! देश को तुम्हारी ऐसी नारियों पर गर्व है।

सुलोचना ने राम से प्रार्थना की कि आज युद्ध स्थगित रहे। उसने प्रभु को प्रणाम किया और उनके गुण गाती चली गयी। विभीषण उसे लंका के फाटक तक भेज आये। चंदन काठ की चिता लगायी गयी। सोलहो श्रृंगार कर लाल कपड़े पहन पति का शिर गोद में लेकर वह सती हो गयी। समस्त पुरजनों और परिजनों ने उसकी जय-जय बोली। मंदोदरी को बेटे की जलती चिता देख बड़ा दुख हुआ। वह रोती-पीटती हुई रनिवास चली गयी। उस दिन लंका में दीपक भी नहीं जले। सारी लंका ने शोक मनाया।

लक्ष्मण और रावण का युद्ध

अगले दिन प्रातःकाल रावण ने अपने सेनापतियों को बुलाकर कहा कि लड़ने की तैयारी करो। यदि कोई डरता हो तो अपने घर में बैठे। यदि कोई

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

युद्धभूमि से भागा तो उसकी कुशल नहीं। उसकी आज्ञा पाते ही सारी सेना तैयार हो गयी। फिर उसने मरुत-वेग से चलने वाले रथ को सजाने के लिए सारथी से कहा। सारथी क्षण भर में रथ सजाकर ले आया। रावण ने पूछा कि उसमें आवश्यक अस्त्र-शस्त्र रख लिये हैं या नहीं ? सारथी ने कहा कि युद्ध की सारी सामग्री प्रस्तुत है। रावण उस पर बैठ गया। उसने अग्रिम सेनापति को बुला कर कहा कि युद्ध के बाजे बजवाओ, जिससे वीरों में उत्साह आ जाय।

युद्ध के बाजे बजने लगे। सैनिकों की भुजाएँ फड़कने लगीं। वे अपने-अपने वाहनों पर बैठ, नाना प्रकार के अस्त्र-शस्त्र ले दुर्ग से बाहर आ गये। उनके भार से भूमि हिलने लगी। वृक्ष डोलने लगे। पर्वत डगमगाने लगे। सेना के चलने से धूल उड़ कर आकाश में छा गयी। वायु स्तब्ध हो गयी। अंधकार छा गया। सूर्य छिप गया। रावण ने वीरों से कहा कि तुम भालुओं और वानरों से लड़ो। मैं उन दोनों भाइयों और सेनानायकों को देखूँगा, जो अपने को वीर समझते हैं।

रावण की सेना को बढ़ते देख लक्ष्मण भी अपने सेनापतियों और सैनिकों के साथ मैदान में आ डटे। वानरों और रीछों के पास अस्त्र-शस्त्र तो थे नहीं। नख, दन्त, पत्थर, कंकड़, पेड़ों की डालें, लकड़ी के कुन्दे, हाथ और पैर ही उनके हथियार थे। दोनों ओर के योद्धा अपने प्रतिद्वन्द्वी को ढूँढ़ कर भिड़ गये। उधर से रावण की और इधर से राम की जय-जय होने लगी। कोई मल्ल युद्ध कर रहा है और कोई पत्थरबाजी। बन्दर किसीको नोच लेते हैं। किसीको काट खाते हैं। किसीका पेट फाड़ कर आतें निकाल लेते, उन्हें गले में डालते और नरसिंह लीला करते हैं। पकड़ो, मारो, पछाड़ो की ध्वनि गूँज रही है। कोई किसीकी सुनता नहीं। सब युद्ध के रंग में मस्त हैं। केवल बीच-बीच में जय-ध्वनि की किलकार सुनायी दे जाती है। रामादल के युद्ध करने का एक कारण था। उसमें विजय की आकांक्षा थी। निशाचरों के सामने लड़ने का कोई उद्देश्य न था। विजय करके कुछ पाना न था। वे केवल रावण की आज्ञा का पालन कर रहे थे। वानर-दल सेवा-दल था। वे परोपकार की भावना से लड़ रहे थे। वे अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध लड़ रहे थे। इसी कारण वानरों और भालुओं का उत्साह तीव्र हो रहा था किन्तु निशाचरों का जोश ठण्ढा हो रहा था।

रावण ने अपनी सेना को विचलित देखा तो वीरों को उत्साहित किया। 'मैं सहायता के लिए आ गया।' रावण को बढ़ते देख सुग्रीव, हनुमान, अंगद,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जामवन्त भी आगे बढ़े। वे पत्थर और ढेलों को उस पर फेंकने लगे। पर उसका शरीर वज्र के समान कठोर था। पत्थर फूट कर चूर-चूर हो जाते और डालें टूट कर गिर पड़ती थीं। वह अपने रथ पर अचल बैठा रहा। जब बानरों के उत्पात बढ़े तो वह एक-एक की खबर लेने लगा। यह देख बन्दर भगे। वे हनुमान, सुग्रीव, और अंगद को पुकारने लगे।। जब ये लोग बढ़े तो वह बाण बरसाने लगा। वे बाण पक्षधारी नागों की भाँति बीरों को डसने लगे। उसने इतने बाण चलाये कि सारी भूमि और आकाश मण्डल बाणों से भर गया। बानरों और भालुओं के शव ढेर के ढेर लग गये। रथ चलाना कठिन हो गया। उसने सब सेनानायकों के दस-दस बाण मारे। वे घायल होकर भागे। उन्हें भागते देख बानरी सेना में भगदड़ मच गयी। चारों ओर कोहराम मच गया। वे राम-लक्ष्मण को पुकारने लगे।

सैनिकों की पुकार सुन लक्ष्मण धनुष-बाण ले रावण के सम्मुख पहुँचे और कहा कि तू रीछों और बानरों को क्यों मार रहा है ? इधर देख, मैं तेरा काल आ गया।

लक्ष्मण का बोल सुनकर रावण ने कहा कि मैं तो तुझे ही ढूँढ़ रहा था। तुम्हीं ने मेरे पुत्र को मारा था। मैं आज उसका बदला ले लूँगा। ऐसा कह उसने प्रचण्ड बाण छोड़े। लक्ष्मण ने उन्हें बीच में ही काट कर तिल प्रसून के समान गिरा दिये। रावण जो बाण फेंकता लक्ष्मण उसे काट देते। उन्होने बड़े लाघव से बाण छोड़े। इससे सारथी घायल हो गया। रथ नष्ट हो गया। जब रावण अरक्षित हो गया तो बाण सीधे उसके शिरों में प्रवेश करने लगे। शिरों में लगे बाण ऐसे जान पड़ते थे, मानों पर्वत शिखरों के बिलों में नाग घुस रहे हों। रावण लक्ष्मण की बाण विद्या देख घबड़ा उठा। उसने ब्रह्मा की दी हुई शक्ति चलायी। वह लक्ष्मण के आकर लगी। लक्ष्मण अचेत होकर गिर पड़े। रावण उन्हें उठाने लगा। पर उठा न सका। यह देख हनुमान, सुग्रीव एवं अंगद दौड़े। उसने हनुमान की पीठ पर मुक्का मारा। हनुमान घुटनों के बल गिरे पर बच गये। उन्होंने भी क्रुद्ध होकर रावण की छाती में घूँसा मारा। उसके लगते ही उसकी आँखों के सामने अँधेरा छा गया। सचेत होकर उसने कहा—'मेरा मुक्का खा कर बच गये। मैं मान गया कि तुम बलवान हो। सचमुच महावीर हो।' हनुमान ने कहा कि मेरा प्रहार सह कर तू बच गया। मेरे बल को धिक्कार है। तब तक सन्ध्या हो गयी। युद्ध समाप्ति के बाजे बज

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उठे। अंगद और सुग्रीव लक्ष्मण को उठा कर राम के पास ले गये। राम ने उनके कान में कहा—'भाई ! क्या बात है ? तुम तो काल के भक्षक हो। तुम कैसे अचेत हो ? राम के शब्द सुनते ही लक्ष्मण उठ बैठे। ब्रह्म-शक्ति आकाश में विलीन हो गयी।

धर्म रथ का वर्णन

सन्ध्या समय विभीषण ने राम से कहा कि रावण मरुत-रथ पर बैठ कर युद्ध करता है। आप दोनों भाई पैदल लड़ते हैं। आपके पदत्राण भी नहीं है। शत्रु बलवान है। वह ब्रह्मा और शिव का वरदान पाये हुए है। उसको इस प्रकार जीतना कठिन है। आप भी रथ पर बैठ कर युद्ध कीजिए।

विभीषण को चिंतित देख राम ने कहा कि रावण के पास जो रथ तुम देखते हो, वह भौतिक रथ है। विजय तो आध्यात्मिक रथ से मिलती है। वह बाहर से दिखायी नहीं पड़ता। तुम मेरे सखा हो और मेरे लिए शंकित हो। अतः मैं उसका वर्णन करता हूँ।

यह शरीर ही सबसे बड़ा रथ है। आत्मा इसका रथी है। ईश्वर विश्वास सारथी है। शौर्य और धैर्य रथ के दो चक्र हैं। सत्य इसकी ध्वजा और शील इसकी पताका है। पाँच कर्मेन्द्रियाँ और पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ इस रथ के खींचने वाले दस अश्व हैं। परमात्मा की इच्छा समझ कर्म क्षेत्र में कूदना युद्ध क्षेत्र है। कर्म-वीरकी तलवार संतोष और ढाल विरक्ति है। दान उसका फरसा, बुद्धि उसकी शक्ति, विज्ञान उसका धनुष है। अनेक प्रकार के संयम-नियम बाण है, स्थिर मन तरकस और विप्र सेवा कवच है। शत्रु अपने से बाहर कोई नहीं। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और अहंकार ही उसके शत्रु हैं। इनको जीतने के लिए जीवन संग्राम में अग्रसर तो सब होते हैं, पर विजय किसी-किसी को ही मिलती है।

विभीषण ने कहा कि जिस धर्म-रथ की चर्चा आप करते हैं, वह मेरी समझ में नहीं आयी। कृपया स्पष्ट कीजिए जिससे मैं भी जीवन में उसका उपयोग कर सकूँ। राम ने कहा कि उस धर्म-रथ की व्याख्या जैसी संतों ने की है, वही मैं बतलाता हूँ। यह सिद्धान्त और तर्क का विषय नहीं वरन क्रियात्मक है।

चक्र–(धैर्य और शौर्य) जीवन संग्राम में निर्भयता से प्रवेश करना ही शौर्य है। भय उसीको होता है, जो कायर है, कापुरुष है और बलहीन है। सुख या दुख में विकार न होना धैर्य है। जीवन मार्ग में अनेक कठिनाइयाँ एवं बाधाएँ पड़ती

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हैं। मनुष्य उनसे विचलित हो जाता है। असीम कठिनाई में उसका धैर्य छूट जाता है। अधीर व्यक्ति कर्म-क्षेत्र से विरत हो जाता है। अतः धर्म-रथ के दोनों चक्र धैर्य और शौर्य समान तथा दृढ़ होने चाहिए। रथ का सारा भार उन्हीं पर रहता है। यदि वे दृढ़ न हुए तो रथ चरमरा कर बैठ जाता है। यदि वे समान न होंगे तो उनकी सम गति न होगी।

ध्वजा पताका—सत्य इस रथ की ध्वजा और शील पताका है। सत्य सब धर्मों में श्रेष्ठ कहा गया है। यह सब धर्मों का मूल है। अतः यह ध्वजा के समान व्यक्ति के ऊपर लहराता रहे। लोग उसकी बात का विश्वास करें। असत्य बोलने वालों की प्रतिष्ठा नहीं होती। शील से प्रयोजन व्यक्ति के सदाचरण से है। आचरण ही मनुष्य को श्रेष्ठ बनाता है। सदाचारी व्यक्ति ही समाज में सम्मानित होता है। शील की पताका दूर से ही फहराती है। जिस प्रकार रथ की ध्वजा-पताका कट कर गिर जाने से वीर की पराजय सूचित होती है, उसी प्रकार सत्य और शीलहीन व्यक्ति भव रूपी शत्रु से पराजित समझा जाता है। युद्ध में शत्रु के रथ की ध्वजा-पताकाएँ नष्ट हो जाने से सेना में भय उत्पन्न हो जाता है। सेनानी को पराजित जानकर उस दल के सैनिक प्रायः भाग खड़े होते हैं। माया के सेनानी भी सर्वप्रथम सत्य और शील को ही नष्ट करते हैं। उनके नष्ट होने पर धर्म के अन्य अंग-उपांग नष्टप्राय हो जाते हैं। संसार जिगीषु पुरुष में सत्य और शील दोनों दृढ़ होने चाहिए।

अश्व—बल, विवेक, दम और परहित इस धर्म-रथ के चार अश्व हैं।

बल—बल से अभिप्राय शारीरिक और मानसिक बल से है। शारीरिक बल में बाहु-बल, सैन्य-बल और धन-बल आता है। मानसिक-बल में बुद्धि-बल और बैराग्य-बल आते हैं। मानसिक-बल ही आत्मबल है। जिसमें आत्म-बल नहीं, वह कोई कार्य नहीं कर सकता। धर्म-साधना में आत्म बल का होना परम आवश्यक है।

विवेक—सत-असत, कार्य-अकार्य, हित-अनहित और सार-असार का ज्ञान विवेक कहलाता है। विवेकी पुरुष सत का ग्रहण करता है, असत् का त्याग करता है। क़रणीय करता है, अकरणीय नहीं। हित की बात करता है, अहित की नहीं। उसका लक्ष्य परमहित की ओर रहता है। वह सार वस्तु को ग्रहण करता है असार को त्याग देता है। मनुष्य में विवेक का होना आवश्यक है। अविवेकी पुरुष धर्म की ओर उन्मुख नहीं होता।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दम–इन्द्रियों का बलपूर्वक निग्रह करना दम है। मोक्ष साधक के लिए इन्द्रिय निग्रह ही धर्म कहा गया है। इन्द्रियाँ अपने विषयों में लीन रहती हैं। मन को उनसे हटाकर आत्म-चिंतन में लगाना दम है। आँखें सुन्दर वस्तु देखना चाहती हैं, कान प्रिय वाणी सुनने को उत्सुक रहते हैं, जिह्वा स्वाद के लिए लालायित रहती है और त्वचा कोमल अंग का स्पर्श करके सुखी होती है। जिसने इन्द्रियों को वश में नहीं किया, वह धर्म-रथ को खींच नहीं सकता।

परहित–दूसरे को निस्वार्थ भलाई करना परहित है। यह बड़ा भारी धर्म माना गया है। यह बलवान अश्व रथ खींचने में सहायक है। बल से प्राणमय कोष की और विवेक से विज्ञानमय कोष की पुष्टि होती है। ये चारों कोष जब तक स्वस्थ न होंगे, तब तक धर्म-रथ की गति नहीं हो सकती। बली, इन्द्रिय निग्रही, परहित व्रती और विवेकी पुरुष ही धर्म-रथ के भार को वहन कर सकता है। जो व्यक्ति निर्बल हैं, विषयासक्त हैं, पर द्रोही और अविवेकी हैं, वे शौर्य और धैर्य के होते हुए भी कुछ साधना नहीं कर सकते ? इनसे धर्मरथ नहीं खिच सकता। फिर ये अश्व क्षमा और दया रूपी रस्सी से जुड़े होने चाहिए। जिस प्रकार रज्जु से घोड़े अपने वश में रहते हैं, उसी प्रकार क्षमा और दया से बल-विवेकादि भी अपने वश में रहते हैं।

सारथी––भगवद्भजन (शिव-भक्ति) ही धर्म-रथ का सारथी है। यदि सारथी चतुर है तो शत्रु पर विजय संभव है। चतुर सारथी से कुछ बतलाना नहीं पड़ता। वह स्वयं रथी की रक्षा करता है। रथ को बहकने नहीं देता एवं सुपथ पर चलाता है। सैनिक, सेनानी, शस्त्रास्त्र तथा रथ के नष्ट हो जाने पर भी सुविज्ञ सारथी रथी की रक्षा करता है। भगवान का भजन करने वाला साधक भी संसार में गिरता नहीं, वरन् संसार-रिपु को जीत कर मोक्ष पाता है। अतः कर्म-क्षेत्र में संघर्ष करते हुए भगवान का भजन भी करते रहना चाहिए। युद्ध करो साथ में ईश्वर को न भूलो।

चर्म (विरक्ति)––मोह और माया जीव के शत्रु हैं। काम, क्रोध और लोभ उनके प्रबल सेनानी हैं। ये तीनों जीव को सदा पीड़ित करते रहते हैं। काम के अस्त्र नारि-नयन हैं। क्रोध के कठोर वचन, लोभ के दम्भ और इच्छा ही अस्त्र हैं। शत्रुओं के इन प्रहारों से बचने के लिए विराग की ढाल चाहिए। सुख-सम्पत्ति आदि काम के सहायक हैं। इनसे जीव तभी बचता है, जब उनके प्रति विरक्ति हो। इन शत्रुओं को मार कर ही हरिभक्ति रूपी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विजय मिल सकती है। इस भक्ति के बाधक, सुख, सम्पत्ति, परिवार और महत्ता हैं। इनका क्षेत्र विषय-सुख है। इस सुख का छोड़ना ही वैराग्य है। यह बुद्धिबल पर निर्भर करता है।

कृपाण (संतोष)--पास के शत्रु पर कृपाण से प्रहार किया जाता है। जो सुख-सामग्री प्राप्त है, उतने से बस कर लेना संतोष है। संतोष दुधारी कृपाण है। यह दाहिने, बाँये और सामने मार करती है। काम, क्रोध, और लोभ मनुष्य के बायें, दाँये और सामने रहते हैं। काम का बल नारी है। वह सदा वाम भाग में रहती है। क्रोध का बल परुष वचन है। वह सम्मुख रहता है। लोभ का बल इच्छा है। लोभ का व्यवहार दाहिने हाथ से होता है।। अतः वह दाहिनी ओर से आक्रमण करता है। संतोष रूपी कृपाण से तीनों मारे जाते हैं।

दान (परशु)--श्रुति की आज्ञा है कि अपने ऐश्वर्य के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को दान करना चाहिए। दान चाहे श्रद्धा से हो, चाहे अश्रद्धा से, लज्जा से हो अथवा भय से, पर उसे देना चाहिए। धन की उत्तम गति दान ही कही गयी है। दान यदि सात्विक हो तो अत्युत्तम है। जिसमें बदले की भावना नहीं रहती, जो देश, काल और पात्र का विचार करके दिया जाता है तथा उपकृत के प्रति नहीं दिया जाता, वह दान सात्विक कहा जाता है।

दान से दुख कट जाते हैं। दान से शत्रु मित्र बन जाते हैं। दान से पाप कट जाते हैं। परशु से मार्ग का अवरोध करने वाले झाड़-झंखाड़ काट दिये जाते हैं। रथ का मार्ग वृक्षों और पर्वतों से प्रायः अवरुद्ध हो जाता है। पाप ही वन और पर्वत हैं। अतः जो कार्य परशु करता है, वही दान भी करता है। तलवार पास के शत्रु पर ही काम दे सकती है, पर परशु दूर के शत्रु को भी मार सकता है। उसका प्रयोग फेंक कर भी किया जा सकता है। जो तलवार से नहीं कटता वह परशु से कट जाता है। सुख-साधन का आकर्षण तो संतोष रूपी कृपाण से कट जाता है, परन्तु प्राप्त सुख-साधन की ममता को दूर करने में वह असमर्थ है। उसे दान-परशु से दूर कर सकते हैं।

बुद्धि (शक्ति)--बुद्धि ब्रह्म स्वरूपा है। उसका देवता ब्रह्मा है। शक्ति का देवता भी ब्रह्मा है। अतः दोनों एक हैं। वह अमोघ है। मनुष्य की बुद्धि सात्विकी और तीव्र होनी चाहिए। सात्विकी बुद्धि प्रवृत्ति और निवृत्ति,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य तथा भय और अभय को ठीक-ठीक समझती है। शास्त्रानुकूल आचरण करने वाला व्यक्ति निर्भय रहता है। शास्त्र-विरुद्ध चलने वाला व्यक्ति सदा भयभीत रहता है। बुद्धि ही बन्धन में डालती तथा मोक्ष भी दिलाती है। बुद्धि यदि तीव्र (पैनी) होगी तो वह माया के वृक्ष को काट सकती है। तभी संसार-युद्ध में विजय मिलती है।

विज्ञान (कोदण्ड)–धनुष यदि कठोर है तो झुकाने से नहीं टूटता। श्रुति ने धनुष को महाशस्त्र और भगवत-उपासना को बाण बताया है। विज्ञान से तात्पर्य विशुद्ध विज्ञान है। ज्ञान भी दो प्रकार का होता है। एक 'सोऽहमस्मि' है। इसका अनुभव योगी ध्यानस्थ होकर करते हैं। पर यह अहं भाव उत्पन्न करता तथा काम-क्रोध आदि शत्रुओं का शिकार बन जाता है। विशुद्ध विज्ञान वह है, जिसमें ज्ञान प्राप्त होने पर भी भक्ति का आश्रय लिया जाता है। यह अनुभवजन्य होता है। साधना से प्राप्त नहीं होता।

त्रोण (मन)–मन निर्मल और अचल होना चाहिए। विषय रूपी मल मन को मलिन करता रहता है। मलिन मन को कभी शान्ति नहीं मिलती। मन की मलिनता भक्ति-जल से दूर हो सकती है। मन चंचल होता है। जैसे चंचल अश्व को बाँध देने से उसकी गति मन्द हो जाती है, उसी प्रकार मन को भगवत-चरणों में भक्ति की डोरी से बाँध देने पर वह अचल हो जाता है। निर्मल मन ही अचल हो सकता है। वही ब्रह्म को प्राप्त कर सकता है। वही अक्षय त्रोण है। उसके बाण माया के सेनानियों को मारने के लिए सक्षम हैं।

शिलीमुख (शम, यम, नियम)–संतों ने शम, यम और नियम को मन रूपी त्रोण में सुरक्षित रखे हुए बाण बतलाया है।

शम–अन्तःकरण तथा अन्तर इन्द्रियों को वश में रखना 'शम' है।

यम–चित्त को धर्म के कार्यों में लगाने वाले कर्मों का साधन 'यम' है।

नियम–शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान (भगवत शरण) पाँच नियम हैं। शौच से अभिप्राय मन, वाणी, शरीर, स्थान और आहार-व्यवहार की शुद्धता है। जल से शरीर, सत्य से मन, तप से वाणी और ज्ञान से बुद्धि शुद्ध होती है।

कवच (गुरु भक्ति)–विप्र और गुरु की पूजा ही अभेद्य कवच है। जिस पर गुरु की कृपा होती है, उस पर माया काम नहीं करती। गुरु का आशीर्वाद

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तभी मिलता है, जब वह प्रसन्न होता है। उसके प्रसन्न करने का उपाय उसकी सेवा है। गुरु को भगवत्‌रूप समझना चाहिए। ब्राह्मण की सेवा भी करना विधेय है क्योंकि वह ब्रह्म ज्ञानी होता है। उसकी सेवा और आशीर्वाद से मनुष्य ब्रह्म की ओर उन्मुख रहता है। माया उन्हीं को आकर्षित करती है, जो उसकी ओर देखते हैं। जो उससे विमुख हो भगवान के चरणारविंद देखते हैं, उनसे वह दूर रहती है।

मित्र ! जिस व्यक्ति के पास ऐसा धर्म-रथ होता है, उसे कोई जीत नहीं सकता। वह अजेय होता है। वह महा दुर्जय संसार-शत्रु को जीतने में समर्थ रहता है। विभीषण ने कहा कि आप ठीक कहते हैं। यह रथ तो भवसागर के पार ले जाने वाला है। पर वास्तविक युद्ध के लिए लौकिक रथ की आवश्यकता पड़ती है।

राम-रावण युद्ध

अगले दिन जब रावण युद्ध के लिए चला तो उसके शिर पर गिद्ध मँडराने लगे। वह देवी को प्रणाम करने गया। देवी की प्रतिमा से अश्रुपात हो रहा था। यह देख उसके मन में शंका हुई। पर वह देवी के हाथ जोड़ कर चल दिया। उसने सेना को आगे बढ़ने का हुक्म दिया। युद्ध का डंका बजा। सैनिक गण अस्त्र-शस्त्र लेकर अपने वाहनों पर बैठने लगे। सहसा एक भयानक शब्द हुआ। उसे सुनते ही हाथी और घोड़े भड़क गये। कोई वीर हाथी से गिरा और कोई घोड़े से। जल्दी में उनके हाथों से अस्त्र-शस्त्र गिरने लगे। रावण जब रथ पर बैठा तो अपशकुन होने लगे। गधे रेंकने लगे, सियार हुवाने लगे और कौवे 'का-का' करने लगे। यह देख मंत्री ने कहा कि आज युद्ध में जाना ठीक नहीं। लक्षण अच्छे नहीं दिखायी पड़ते। उल्लू का बोलना साक्षत् काल का आह्वान है। रावण ने मंत्री को झिड़क कर कहा कि क्या पोंगापंथी की बात चलायी है ? शकुन का विचार बणिक और ब्राह्मण करते हैं। वे लाभ-हानि का हिसाब लगाते तथा शिर पर मौर धर कर विवाहने जाते हैं। वीर लोग शकुन-अपशकुन का विचार नहीं करते। वे प्राणों को हथेली पर रख कर युद्ध करते हैं। वे युद्ध का ही वरण करते और विजय कीर्ति को घर लाते हैं। जब शत्रु शिर पर गरज रहा है, तो घर पर बैठ रहना कायरता है।

इधर देवताओं ने राम से प्रार्थना की अब इस दुष्ट को मारने में देर न

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

करनी चाहिए। इसने हमें महान कष्ट दिये हैं। सीता बड़े दुख में एक-एक पल काट रही हैं। यह सुन कर राम ने जटाजूट बाँधे। कमर में तरकस और हाथ में धनुष-बाण लेकर तैयार हो गये। यह देख देवगण प्रसन्न हो उठे। वे 'जय-जयकार करने तथा पुष्प बरसाने लगे। इन्द्र ने सारथी से कहा कि राम के पास रथ लेकर पहुँचो। मातलि दिव्य रथ को सजा और अश्व जोत कर राम के पास पहुँचा और बोला—'महाराज ! आप पैदल युद्ध न करें। रावण लंका का राजा है। आप अवध के राजा हैं। वह रथ पर बैठ कर आया है। आप भी रथ पर बैठ लीजिये। उसकी बात सुन राम मुस्कुराते हुए रथ पर बैठ गये। देवताओं ने दुंदुभी बजायी।

राम को रथ में बैठे देख कर बानर और भालुओं का उत्साह दूना हो गया। वे किलकारी मारकर निशाचरी सेना पर टूट पड़े। भयंकर युद्ध होने लगा। दोनों ओर से पत्थर, ईंटें, ढोंके, अस्त्र-शस्त्र आदि चलने लगे। रावण ने माया फैलायी। बानरों को निशाचरी सेना में राम और लक्ष्मण दिखायी पड़ने लगे। जितने राक्षस उतने ही राम। बन्दरों के हाथ रुक गये। उन्होंने अस्त्र-शस्त्र फेंकना बन्द कर दिया। वे स्तब्ध खड़े रह गये। हनुमान ने राम की ओर देखा। राम ने अपने बाण से माया काट दी। बानरों का भ्रम दूर हो गया। फिर उन्होंने कहा कि तुम चिंता न करो रावण को मैं देखता हूँ। फिर उन्होंने मातलि से रथ बढ़ाने को कहा।

राम को आते देख रावण ने कहा—'तुम्हीं अयोध्यानाथ दशरथ के पुत्र राम हो ? तुम्हीं ने मेरी बहन की नाक काटी ! तुम्हीं ने खर, दूषण और त्रिशिरा को मारा। तुम्हीं ने मामा मारीच का वध किया ! तुम्हीं ने हनुमान को भेज कर लंका में आग लगवाई ! तुमने मेरे भाई कुंभकर्ण को मारा ! आज मैं उन सबका बदला तुमसे ले लूँगा। क्या तुम्हें मेरा डर न था ? क्या तुम इतने अपराध करके बच जाओगे ? क्या तुमने मेरी कीर्ति और वैभव नहीं सुना ? मैंने देवता, गन्धर्व, नाग, किन्नर, मानव और दानव सभी को जीत लिया। मैंने आकाश, पाताल और पृथ्वी में अपना प्रतिद्वंद्वी नहीं रखा। अपने अपराधों का प्रायश्चित करो और क्षमा माँगो तो मैं तुम्हें छोड़ सकता हूँ।

रावण के उग्र वचन सुन राम ने कहा—'तुमने ऋषियों के यज्ञ में विघ्न डाले। मुनियों की समाधि भंग की। दीन-हीन पशुओं का वध किया। तुम्हारे अत्याचारों से आश्रम और कुटीर शून्य हो गये। तुमने गाँव उजाड़े। राज्यों को

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लूटा। नारियों का अपहरण किया। उनका शील भंग किया। तुमने अनेक कुकृत्य किये हैं। तुम्हारे पाप का घड़ा भर चुका है। मैं तुम्हारे दुष्कृत्यों को सुनता रहा, पर मैंने तुम पर आक्रमण नहीं किया। जब मेरी अनुपस्थिति में तुमने सीता का अपहरण किया तब भी मैंने चढ़ाई नहीं की। मैंने अंगद को भेजा। उसने तुम्हें समझाया। पर तुम तो अपने मद में अंधे हो रहे हो। तुममें दम्भ की मात्रा अधिक हो गयी है। मैं आज तुम्हारे उस दंभ को दूर कर दूँगा। मैंने तुम्हारे साथ कोई अन्याय नहीं किया। पर तुमने मेरे साथ अन्याय किया। तुम जिसे कीर्ति कहते हो, मैं उसे अपकीर्ति समझता हूँ। संसार में तीन प्रकार के पुरुष होते हैं। इनमें एक पाटल के समान होते हैं, जो सुन्दर पुष्प देते हैं। उसमें सुगन्धि तो होती है पर न रस होता है और न माधुर्य। दूसरे प्रकार के व्यक्ति रसाल की तरह होते हैं। उसकी मंजरी सुगंधिमय होती है। फल रस-मय और मधुर होते हैं। तीसरे व्यक्ति कटहल की तरह होते हैं। वे केवल फल देते हैं। उनमें पुष्प और रस की कमी रहती है। ऐसे ही वाचाल पुरुष केवल मुख से अंट-संट बका करते हैं। उनमें कार्य करने की क्षमता नहीं होती। वे कुछ करके नहीं दिखाते। दूसरे वे हैं, जो कहते भी हैं और करते भी हैं। तीसरे कर्म-शील व्यक्ति होते हैं। वे कृती होते हैं। कार्य करके दिखला देते हैं, कभी कुछ कहते नहीं।

राम की वक्तृता सुन रावण ने कहा कि मुझे तुमसे नीति नहीं सीखनी है। वरन तुम्हें सिखानी है। तुम्हारी बुद्धि तुम्हारे लिए और मेरी बुद्धि मेरे लिए है। प्रत्येक व्यक्ति अपने को बुद्धिमान समझता है। तुम्हारा मार्ग और है, मेरा मार्ग और है। रावण झुकता नहीं, वरन झुकाता है, रोता नहीं रुलाता है, डरता नहीं डराता है। यदि अपने प्राण बचाना चाहते हो तो अयोध्या लौट जाओ।

राम ने कहा कि मैं क्षमा माँगने वाले को शरण देता हूँ, पर अपराध करने वालों को बिना दण्ड दिये छोड़ता नहीं। युद्ध में पहले मैं आक्रमण नहीं करता। पहले तुम अपना पराक्रम दिखा लो, फिर मेरा देखना।

रावण ने कहा कि मैं तुम्हारी इच्छा की अवश्य पूर्ति करूँगा क्योंकि तुम अतिथि हो। उसने तीव्र बाण चलाये। राम ने उन्हें बीच ही में काट दिये। इस पर रावण ने शक्ति फेंकी। राम ने बाण द्वारा वह रावण के पास ही लौटा दी। रावण ने अग्नि बाण फेंका जिसने आग की लपटें निकलने लगीं। राम ने वरुणास्त्र छोड़ा। इससे जल वृष्टि होने लगी और आग बुझ गयी। रावण जो

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बाण छोड़ता राम उसे काट देते। उसने अनेक दाँव-पेंच किये पर सफलता न मिली। मातलि के रथ हाँकने की कुशलता से रावण के बाण व्यर्थ ही जाते थे। यह देख उसने पाँच बाण फेंके। एक सारथी के लगा और चार घोड़ों के लगे। उन्हें घायल होते देख राम ने कहा कि इससे तुम्हारा मनोरथ सिद्ध नहीं हो सकता। अच्छा सम्हलो, अब मैं तुम्हारी सहन शक्ति देखता हूँ।

राम ने डोरी कसी और बड़ी लाघवता से बाण छोड़ने लगे। वे विषधर नागों की भाँति उड़ते हुए चले। एक ने सारथी को डसा, दूसरे ने ध्वजा काटी, तीसरे ने पताका, चार बाणों से चारों घोड़ों को मार दिया। तीन बाणों से रथ चकनाचूर ही गया। यह देख रावण बड़ा खिन्न हुआ। उसने सारथी को दूसरा रथ लाने को कहा। रथ आ जाने पर उसने भयंकर बाण वृष्टि की। चारों ओर घना कुहरा छा गया। सूर्य का प्रकाश मंद पड़ गया। रावण का बल बढ़ गया। उसने सेना का संहार आरम्भ कर दिया।

राम ने क्रुद्ध होकर कराल बाण छोड़े। वे रावण के शिरों को छेदते हुए इधर से उधर निकल गये। शिर फूट जाने से रक्त बहने लगा। रक्त को देख कर उसने भो भयंकर अस्त्र छोड़े पर राम पर कोई असर न हुआ। उसके सारे मनोरथ विफल हो गये। राम उसकी भुजाएँ और शिर काटने लगे। भुजाएँ और शिर कटते पर फिर जुड़ जाते थे। आकाश में शिर और भुजाएँ उड़ती हुई ऐसी जान पड़ती थीं मानो अनेक राहु-केतु उदय हो गये हैं। रावण ने भी सहस्रों बाण चलाये। उसने बाणों से रथ को तोप दिया। क्षण भरके लिए राम का रथ दिखायी न पड़ने लगा। यह देख सारी सेना व्याकुल हो उठी। उधर आकाश में देवता भी घबड़ा उठे।

राम को बड़ी देर तक युद्ध करते देख विभीषण सामने आया। उसने कहा कि तूने सुर, नर, मुनि सभी को शत्रु बना रखा है। तपस्या करके तुझे वरदान क्या मिले तू अपने को अमर समझने लगा। पर अब तेरा काल आ गया है। ऐसा कह उसने रावण के गदा मारी। इससे वह गिर पड़ा। उसके दाँत टूट गये। रावण विभीषण पर झपटा और दोनों में ललकार-ललकार कर मल्ल युद्ध होने लगा। दोनों लड़ते-लड़ते थक गये। पर कोई एक दूसरे को गिरा न सका। विभीषण ने कहा कि तेरी मृत्यु तो राम के हाथों लिखी है। मैं तुम्हें मार कर क्यों पाप अपने शिर पर लूँ। ऐसा कह वे दोनों अलग हो गये।

रावण फिर रथ पर बैठ कर युद्ध करने लगा। उसने मायावी रूप धारण

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कर लिया। राम की सेना में जितने बानर और रीछ थे, उतने ही रावण भी हो गये। जब बानरों ने असंख्य रावण देखे तो उनके छक्के छूट गये। एक रावण को जीतना ही कठिन था, अब अनेक रावणों को कौन जीतेगा ? वे घबड़ा कर भागने लगे। 'राम, बचाओ ! लक्ष्मण, बचाओ हनुमान कहाँ हो ? रक्षा करो। रक्षा करो।' राम ने एक ही बाण से माया काट दी। नकली रावण का पता न रहा। केवल असली रावण रह गया। यह देख बानर और भालु लौट पड़े। वे बड़े-बड़े पाषाणखण्ड उठा कर रावण पर फेंकने लगे। इससे निशाचर भागने लगे। बानरों ने जाकर रावण को घेर लिया। वे चारों ओर से प्रहार करने लगे। वे नखों और दन्तों से काटने लगे। इससे रावण को क्रोध आया। उसने तीव्र बाण मार कर हनुमान, अंगद और सुग्रीव को घायल कर दिया। वे अचेत होकर गिर पड़े। वीर बानरों को मूर्छित देख जामवन्त दौड़े। उन्होंने रावण की छाती में कस कर लात मारी। उसके आघात से रावण रथ से गिर पड़ा। उसे मूर्च्छा आ गयी। इधर सन्ध्या हो गयी। यह देख उसका सारथी उतरा। उसने रावण को रथ में डाल लिया और राजभवन ले गया। फिर उसके उपचार का उपाय किया। इधर बानरों की मूर्च्छा भी दूर हो गयी। वे राम के पास पहुँचे। प्रभु ने उनकी ओर देखा। इससे उनका श्रम दूर हो गया। उन्होंने रात भर विश्राम किया।

रावण बध

आधी रात बीत जाने पर रावण की मूर्च्छा दूर हुई। उसने सारथी को पास में बैठा देख कर कहा—'दुष्ट! मुझेयुद्ध भूमि से क्यों उठा लाया ? तुझे धिक्कार है ! तू मूर्ख है ! तुझे इतना भी ज्ञान नहीं कि यह मेरे वीरत्व पर लाञ्छन है'। सारथी ने कहा—'महाराजाधिराज ! सन्ध्या हो गयी थी। युद्ध समाप्त हो चुका था। मैं आपको युद्धक्षेत्र में अरक्षित कैसे छोड़ आता ? प्रातः होगी। युद्ध फिर होगा। चिंता की क्या बात है ?

प्रातः होते ही रावण युद्धभूमि में जा पहुँचा। नारायणी सेना भी अस्त्र-शस्त्र लेकर बढ़ी। बानरों को आते देख रावण ने माया फैलायी। अनेक भूत, प्रेत, पिशाच, और योगिनी प्रकट हो गयीं। उनके एक हाथ में तलवार और दूसरे में खोपड़ी थी। वे कपालों में रुधिर भरकर पी रहे थे। फिर हाथ में हाथ मिलाकर नाचने लगे। मारो और काटो की भयंकर ध्वनि गूँज उठी। वे मुँह

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फैला कर भालु और वानरों को खाने दौड़े। वानर मारे डर के इधर-उधर भागने लगे। वे जहाँ जाते उन पर तप्त बालू की वर्षा होती। रामादल में हाय-हाय मच गयी। ऐसा कोई वीर न बचा, जिसे उसने घायल न किया हो। फिर वह बड़ी जोर से गरज कर बोला—'यदि किसी वीर में साहस हो तो मेरे सामने आये।

उसने अनेक हनुमान बना डाले। वे पत्थरों को लेकर दौड़े और चारों ओर से राम को घेर लिया। उनकी लाँगूलें कमान की भाँति ऊपर उठी हुई थीं। उनके मुख से मारो-मारो की ध्वनि हो रही थी। यह देख राम हँसे। उन्होंने एक बाण मारा। उससे सारी माया दूर हो गयी। अंधकार छट गया। सूर्य चमकने लगा। वानर और रीछ प्रसन्न हो उठे। वे किलकारी मार कर 'राम की जय' बोलने लगे।

राम ने क्रुद्ध होकर प्रचण्ड बाण छोड़े। इससे उसके अंग-प्रत्यंग कटने लगे। एक ओर से राम उन्हें काटते जाते थे, दूसरी ओर से वे फिर जुड़ते जाते थे। राम काटते-काटते थक गये, पर काट न पाये। सब लोग यह तमाशा देखने लगे। अंत में राम ने विभीषण की ओर देखा। मानो पूछ रहे हों कि क्या उपाय किया जाये ?

विभीषण ने नाभिकुण्ड की ओर संकेत किया। प्रभु समझ गये कि रावण की कुण्डलिनी में अमृत है। उसने तप और योग साधन करके कुण्डलिनी जगा ली है और अमृत भर लिया है। उसीके बल से जी रहा है और मरता नहीं। इधर रावण ने एक के बाद एक अनेक तीर मारे। पर राम उन्हें बचाते गये। अन्त में राम ने वह बाण निकाला जो अगस्त ने दिया था। वह रावण की नाभ में जाकर लगा। नाभि फट गयी। बाण की अग्नि से अमृत सूख गया। राम ने तीस बाण और चलाये। वे सर्पों की भाँति लहलहाते हुए चले। वे दशों शिरों और बीसों भुजाओं को छेदते हुए ले उड़े। रावण के भवन में शिरों और भुजाओं को मंदोदरी के आगे रख कर बाण राम के तरकस में लौट आये। रावण का धड़ युद्धभूमि में इधर-उधर दौड़ रहा था। उसके भार से पृथ्वी हिलने लगी। पर्वत डगमगाने लगे। राम ने एक बाण और मारा। इससे धड़ के भी दो टुकड़े हो गये। रावण का तेज राम के मुख में समा गया। यह देख ब्रह्मा और शंकर जी प्रसन्न हो उठे। उन्होंने रावण को वरदान देकर बड़ी भूल की थी। राम ने वह भूल सुधारी। उन्होंने कहा कि मानवों को ऐसे वरदान कभी न देना

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चाहिए, जो अपने को ही कष्ट देने लगें। देवों ने आकाश से शंख ध्वनि की। हे राम ! आपने इस दुष्ट को मारा बड़ा अच्छा किया। हम लोग अब निश्चित हो गये। आपकी जय हो ! जय हो !! जय हो !!

मंदोदरी का शोक

पति की भुजाओं और शिरों को देख मंदोदरी मूर्च्छित होकर गिर पड़ी। यह देख दासियाँ दौड़ीं। वे जल की छींटे देने तथा पंखा झलने लगीं। इतने में अन्य रानियाँ भी घिर आईं। वे छाती पीट-पीट कर रोने और रावण के प्रताप का वर्णन करने लगीं :—

हे नाथ ! तुम्हारे भय से पृथ्वी डगमगाती थी। शेष और कच्छप तुम्हारे भार को न सह सकते थे। तुम्हारे बल के सामने देव, गन्धर्व, किन्नर और नागों के बल क्षीण हो जाते थे। तुम्हारे तेज के सामने सूर्य, चन्द्र और तारे फीके लगते थे। लोकपाल तुम्हारे डर से काँपते थे, काल तुम्हारे वश में था। तुमने युद्ध में अग्नि, वरुण, पवन और इन्द्र को भी जीत लिया था। तुम्हारे सामने कोई योद्धा खड़े होने का साहस न करता था। हाय ! वही आप निःसहाय पड़े हैं। शोक ! वंश में कोई रोने वाला न रहा। अब तुम्हें जल कौन देगा ? तुम्हारा मृतक कर्म कौन करेगा ? क्या तुम्हारा शव युद्ध-भूमि में सड़ेगा ? क्या उसे गिद्ध और शृगाल नोच-नोच कर खायँगे ? स्वस्थ होकर मंदोदरी ने कहा :—

"मैंने आपको अनेक बार समझाया, विनती की, रोकर कहा; पर आपने मेरी बात पर ध्यान ही न दिया। आपको गर्व हो गया था। वही गर्व आपकी मृत्यु का कारण बना। मैंने पहले ही कहा था कि राम को आप साधारण मानव न समझें। वह साक्षात् विष्णु के अवतार हैं। वह संसार में रमे राम हैं। ब्रह्मा, शिव आदि देवता भी जिन्हें झुकते और प्रणाम करते हैं, उनसे वैर ठान लिया। अन्त में उन्हीं के हाथों तुम्हारा कल्याण हुआ। प्रभु ने तुम्हें स्वर्गधाम दिया। तुम्हें वह गति मिली, जो देवताओं को भी दुर्लभ है।"

इधर राम ने विभीषण से कहा कि तुम जाकर मंदोदरी को समझाओ। भाई का अन्तिम संस्कार करो। तुम्हीं इस कुटुम्ब में बचे हो। और तुम्हीं उसके उत्तराधिकारी हो। तुम्हारी सहायता के लिए हनुमान और सुग्रीव जायँगे। विभीषण ने जाकर मंदोदरी से कहा—'अब रोने से कोई लाभ नहीं। जो होना था सो हो गया। मैंने उन्हें बहुत समझाया। तुमने भी कोई कोर-कसर नहीं

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

की पर वह सुनते कब थे ? उन्होंने अपने आगे किसीकी बात मानी ही नहीं। संसार में सब कुछ अनिश्चित है। पर मृत्यु निश्चित है। मृत्यु को भी एक बहाना चाहिए। उनकी मृत्यु राम के हाथों लिखी थी। वह स्वयं इस बात को जानते थे। पर उन्हें विश्वास ही न होता था। वही अविश्वास उनके लिए घातक सिद्ध हुआ। अब देर करने का काम नहीं। अस्तु लकड़ी की चिता लगायी गयी। विभीषण ने विधिवत दाह-संस्कार किया। मंदोदरी आदि नारियों ने तिलांजलि दी। तीन दिन तक लंका में शोक मनाया गया। त्रिजटा ने यह संवाद जाकर सीता को दिया। रावण की मृत्यु और राम की विजय का समाचार सुन वह अत्यन्त प्रसन्न हुई। उन्होंने त्रिजटा को गले लगा लिया।

राम ने लक्ष्मण सुग्रीव, हनुमान आदि वीरों से कहा कि लंका जाकर विभीषण का राजतिलक करो। अब प्रश्न यह था कि विभीषण के साथ कौन सिंहासन पर बैठे ? सुग्रीव ने कहा कि मंदोदरी अभी जीवित है। यह अधिकार उसे ही मिलना चाहिए। विभीषण की सहमति से मंदोदरी सिंहासन पर बैठी। लंका-निवासियों ने दोनों की जय बोली। साथ ही राम की भी जय-जयकार की। उन्होंने कहा कि राम बड़े उदार हैं। लंका विजय करके भी उन्होंने यहाँ का राज्य नहीं लिया। विभीषण और मंदोदरी को ही सारे अधिकार दे दिये। राम महान हैं।

सिंहासन पर बैठ कर सबसे पहले मंदोदरी ने अपनी सेविकाओं को आज्ञा दी कि सीता को प्रेम से ले आओ। उन्हें स्नान करा के नवीन वस्त्र-आभूषण पहना दो। मंदोदरी की आज्ञा से सेविकाएँ सीता को सजा कर एक पालकी में ले आयीं। उसके चारों ओर वेतपाणि रक्षक कर दिये। आगे पालकी में सीता चलीं। पीछे मंदोदरी और विभीषण चले। सारे लंका निवासी उनके पीछे होते गये।

सीता को देखने के लिए नागरिक उमड़ पड़े। वानरों और रीछों की भी भीड़ लग गयी। सभी सीता के दर्शन करना चाहते थे। मंदोदरी ने राम से कहा कि अपनी सीता को लीजिए। हमें दुख है कि इतने दिन इन्हें कड़े नियंत्रण में रहना पड़ा। स्वामी के कारण आपको महान कष्ट हुआ। उसके लिए मैं आपसे क्षमा माँगती हूँ। आप तो दयालु हैं। सब पर दया करते हैं।

सीता की अग्नि परीक्षा

राम ने उपस्थित जनता को सम्बोधित करते हुए कहा—'जो नारी बारह

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महीने पर-पुरुष के घर में रही हो, उसे मैं कैसे ग्रहण कर सकता हूँ ? सीता मेरी नहीं रहीं । वह परायी हो चुकीं ।

राम के मुख से इस प्रकार के शब्द सुनकर सीता पछाड़ खाकर गिर पड़ीं । उन्होंने इस बात की कभी कल्पना भी न की थी । जिसके लिए सीता ने इतने कष्ट उठाये और राम ने इतना भीषण रक्तपात किया । क्या उसका यही परिणाम था ?

लंका की नारियों ने स्वयं ही सीता की मर्यादा देखी थी । उन्होंने रावण से बातचीत करना तो दूर कभी उसकी ओर देखा तक न था । उनके प्रति राम के ऐसे वचन सुनकर बड़ा खेद हुआ । उन्होंने कहा कि पुरुष बड़े कठोर होते हैं । वे अपने आचरण पर विचार नहीं करते । नारी को सदा शंका की दृष्टि से देखते हैं । मंदोदरी ने कहा कि सीता शुद्ध और पवित्र हैं । मेरे स्वामी ने कभी इनका अंग स्पर्श नहीं किया । वह जब सीता के पास गये, सदा मुझे लेकर गये । वह प्रार्थना ही करते या धमकाते रहे, पर कभी हाथ नहीं लगाया । मैं इसका प्रमाण हूँ । सीता के साथ सदा दो दासियाँ रहती रही हैं । त्रिजटा और सरमा इसकी साक्षी दे सकती हैं ।

राम ने कहा कि यह तो सीता पर निर्भर करता है । वह जहाँ चाहें जा सकती हैं । पर मैं तो तभी ग्रहण कर सकता हूँ, जब अग्नि परीक्षा हो जाय । यदि अयोध्या चलना है तो परीक्षा देनी होगी ।

सीता ने किंचित रोष न किया । उन्होने देवर से काष्ठ की चिता लगाने और प्रज्वलित करने को कहा । यह सुनकर लक्ष्मण की आँखों में आँसू भर आये । सारी जनता शोक मग्न हो गयी । राक्षस नारियाँ तो रोने लगीं । हनुमान, सुग्रीव, जामवन्त, अंगद सब चुप खड़े देखते रहे । उनका कुछ कहने को साहस न हुआ । बड़ों की आलोचना कौन करे ? राम की इच्छा से लक्ष्मण ने चिता लगायी और जला दी । सीता को अग्नि-प्रवेश करने में न भय हुआ न विषाद । उन्होंने हाथ जोड़ कर अग्नि देव को प्रणाम किया और कहा—

'यदि मन, वचन और कर्म से मैंने राम ही से स्नेह किया हो तो सबको गति देने वाले अग्निदेव तुम चंदन के समान शीतल बन जाओ । मैं अपने सदाचार का प्रमाण क्या दे सकती हूँ, वचन ही प्रमाण हो सकते हैं । पर स्वामी को मुझ में सन्देह है । उसका निराकरण आवश्यक है ।' ऐसा कह सीता चिता में प्रवेश कर गयीं । सीता का कलंक और मिथ्यात्व तो जल गया पर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उनका बाल बाँका न हुआ ।। अग्नि देव स्वयं प्रकट हो गये । उन्होंने सीता का हाथ पकड़ कर राम के हाथों में वैसे ही दे दिया, जैसे क्षीर सागर ने इन्दिरा का हाथ विष्णु के हाथों में दिया था ।

यह देख जनता के हर्ष का ठिकाना न रहा । सब लोग तालियाँ पीटने और सीता की जय बोलने लगे । आकाश से पुष्प वृष्टि होने लगी । देवता-गण "राम की जय-जयकार" करने लगे । इन्द्र ने कहा कि रावण को मार कर आपने देवताओं का बड़ा कल्याण किया । हम सब बन्धन से मुक्त हो गये । आपने सबका निस्तार कर दिया । हम आपकी क्या सेवा करें ! राम ने कहा कि आपने रथ भेजकर मुझे विजय दिलायी । अपना रथ लीजिए और एक काम करिये । इन्द्र ने कहा कि आज्ञा दीजिए । राम ने कहा कि रथ पर जाकर अमृत वर्षा करो । इन बानरों और भालुओं को जिला दो, जिन्होंने मेरे लिए प्राण दिये हैं । इन्द्र ने तथास्तु कह कर अमृत वृष्टि की । सारे बानर और रीछ तो उठ पड़े, पर निशाचर सोते ही रहे । वे राम के हाथों मरे थे । अतः उनकी मुक्ति हो गयी थी । वे भगवान में मिल चुके थे ।

इन्द्र के चले जाने पर विभीषण ने राम से हाथ जोड़ कर कहा :—

"आपने मुझ पर बड़ी कृपा की । कृपया घर चल कर उसे भी पवित्र कर दीजिए । कुछ दिन विश्राम करके अवधपुरी चले जाइयेगा । इन सैनिकों ने युद्ध में बड़ी सेवायें की हैं । राजकोष में अमित धन भरा है । अभी तक इसका दुरुपयोग ही होता रहा । यदि इसका कुछ सदुपयोग हो जाय तो अच्छा है । यदि आप इसे बानरों और भालुओं को बाँट दें, तो बड़ी कृपा हो । मुझे धन की क्या आवश्यकता ! यदि यह रहेगा तो अनर्थ ही करेगा । फिर यह सब आप ही का तो है ।

राम ने कहा-मित्र ! तुम ठीक कहते हो । जो तुम्हारा धन है, वह मेरा है । हममें और तुममें कोई भेद नहीं । पर मैं इसे अवध कैसे ले जा सकता हूँ ? मेरे वनवास की अवधि समाप्त हो रही है । केवल तीन दिन शेष हैं । भरत मेरे लिए चिंतित होंगे । यदि मैं समय पर न पहुँचा तो वह प्राण दे देंगे । यदि तुम अवध शीघ्र पहुँचाने का कोई प्रबन्ध कर सको तो बड़ा अच्छा हो ।'

प्रभु की आज्ञा पाकर विभीषण पुष्पक विभान में वस्त्र, आभूषण, रत्न, रजत और सुवर्ण मुद्रायें भर लाये ! फिर आकाश में ऊपर जाकर उन्हें भूमि पर गिरा दिया । बानरों और भालुओं ने अपनी-अपनी रुचि के अनुसार वस्त्र-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आभूषण पहन लिए। फिर वे राम के पास उन्हें दिखाने जा पहुँचे। उन्होंने मणि, मुक्ताओ और रत्नों को फल समझ कर मुँह में डाला। पर जब वे दाँतों से तोड़ने लगे तो उन्हें कोई स्वाद न मिला। इससे उन्हें उगल दिया। बानरों की यह लीला देख राम-लक्ष्मण हँसने लगे। इस प्रकार सब लोग आनन्द और विनोद में विभोर हो गये।

विभीषण ने राम से कहा कि आप इस पुष्पक विमान से अयोध्या जा सकते हैं। इसकी गति आपकी इच्छानुसार होगी। इसमें सभी लोग आसानी से बैठ सकते हैं।

राम ने चलते समय सेनापतियों, भालुओं तथा बानरों को बुला कर कहा—'तुम सबने हमारी बड़ी सेवा की। मेरे लिए घरबार छोड़ कर युद्ध में जूझते रहे। मैं यह भी जानता हूँ कि आपने हमारी निस्वार्थ सेवा की है। हम आपके बड़े कृतज्ञ हैं। हम जीवन भर सबके आभारी रहेंगे। आप सुखपूर्वक अपने-अपने घर जायँ, बाल-बच्चों से मिलें। वे सब बड़े दुखी होंगे और प्रतीक्षा करते होंगे। यदि कोई आवश्यकता पड़े तो कहला भेजियेगा। संकोच करना ठीक नहीं। एक बात विशेष कहनी है कि हमें भूल न जाइयेगा। और कुछ नहीं तो स्मृति बनाये रखियेगा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पञ्चम खण्ड

लंका से अयोध्या प्रत्यागमन

राम, सीता और लक्ष्मण पुष्पक विमान पर बैठ गये। हनुमान, सुग्रीव, जामवन्त, अंगद, नल, नील आदि मंत्री भी साथ चलने को उत्सुक थे। राम ने उन्हें बैठने का संकेत किया। उन्होंने जिसकी प्रबल इच्छा देखी, उसीको आँख के संकेत से बुला कर बिठा लिया। प्रभु की इच्छा से विमान उत्तर दिशा की ओर चल दिया। विमान चलते समय सब लोगों ने राम और सीता की जय बोली। राम ने सीता से युद्धभूमि की ओर संकेत करके कहा—यहीं लक्ष्मण ने मेघनाद को मारा था। वह देखो कुम्भकर्ण का अस्थिपंजर अब भी पड़ा है। वह समुद्र तट पर रावण की चिता की राख पड़ी है। हनुमान और सुग्रीव ने लंका के जो भवन ढहा दिये थे, उनके पत्थर लुढ़के पड़े हैं। वे देखो बानरों और रीछों के मारे हुए निशाचर ढेर के ढेर पड़े हुए हैं। उनकी लाशें सड़ रही हैं। उनसे दुर्गन्ध आ रही है।

आगे देखो सेतु बँधा हुआ है। इसे नल-नील ने हमारे सैनिकों की सहायता से बनाया था। वह देखो शिव-पार्वती का मंदिर है। इन्हें यहीं से प्रणाम कर लो। विमान फिर किष्किन्धा के ऊपर से होकर उड़ा। राम ने सीता को बतलाया कि यह सुग्रीव की किष्किन्धा नगरी है। वह पम्पा सरोवर और मतंग ऋषि का आश्रम है। उसके पड़ोस में ऋष्यमूक पर्वत है। यहीं सबसे पहले हनुमान से भेंट और सुग्रीव से मैत्री हुई। यदि सुग्रीव सहायता न करते तो हम तुम्हें न पा सकते थे। फिर विमान अगस्त्य, सुतीक्षण, शरभंग, और अत्रि के आश्रम पर से उड़ता हुआ प्रयागराज पहुँचा। राम ने सीता से कहा कि तीर्थराज को प्रणाम करो। विमान भरद्वाज के आश्रम में उतरा। सीता ने गंगाजी की विधिवत पूजा की और चुनरी चढ़ाई।

राम ने हनुमान से कहा कि तुम आगे चलकर भरत को सूचना दो। फिर भरद्वाज से आज्ञा लेकर राम श्रृंगवेरपुर पहुँचे। निषादराज ने जो आने का समाचार पाया तो दौड़कर मिला। राम ने उसे गले लगा लिया। वह भी प्रभु के साथ अयोध्या जाना चाहता था। प्रभु ने उसे भी बिठा लिया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हनुमान और भरत की भेंट

राम के वनवास की अवधि बीत गयी। केवल अन्तिम दिन शेष रहा। अवध के नर-नारी सोचने लगे कि प्रभु अभी तक नहीं आये। माताएँ एक-एक दिन गिन रही थीं। आज उनके मन रह-रह कर खिल रहे थे। उनकी बाई आँखें फड़क रही थीं। कौसल्या को ऐसा जान पड़ता कि कोई राम के आने की सूचना देने ही वाला है। शीतल, मंद, सुगन्ध पवन चलने लगी। सरयू का जल निर्मल हो गया। उसमें तरंगें उठने लगी। वृक्ष लहलहा उठे। कलियाँ खिलने लगीं। पक्षी चहचहाने लगे। सारा वातावरण किसीके स्वागत के लिए उल्लसित हो उठा। भरत की दाहिनी भुजा और आँख फड़की। वह सोचने लगे कि प्रभु क्यों नहीं आये ? क्या वे मुझे भूल गये ? क्या उन्होंने मुझे कपटी समझा ? पर ऐसा नहीं हो सकता। उनका स्वभाव तो बड़ा कोमल है। मुझे विश्वास है कि वे अवश्य आयेंगे। उन पर कोई आपत्ति तो नहीं आ पड़ी ! वह कुछ खिन्न हो उठे। इतने में ब्राह्मण वेश में हनुमान आ गये।

हनुमान ने नन्दिग्राम में भरत को कुशासन पर बैठे देखा। उनका शरीर दुर्बल था, पर कान्ति फूट रही थी। आँखों में अश्रु भरे वह कुछ सोच रहे थे। उनका रंग-रूप बहुत कुछ राम से मिल रहा था। अतः हनुमान ने मधुर वाणी में कहा— जिन प्रभु का आप ध्यान कर रहे हैं, वह सीता और लक्ष्मण समेत लंका विजय करके आ रहे हैं।

हनुमान के प्रिय वचन सुनते ही भरत ने हनुमान को अपने पास बिठा लिया और पूछा—आप कौन हैं ? कहाँ से आ रहे हैं ? प्रभु कहाँ हैं ? उन्होंने क्या कहा है ?

हनुमान ने कहा—मैं राम का सेवक मारुति पुत्र हूँ। मेरा नाम हनुमान है। मैंने प्रभु को प्रयागराज में छोड़ा। वह आज रात भरद्वाज के आश्रम में विश्राम करेंगे। कल प्रातःकाल पुष्पक विमान से आयेंगे। उन्होंने मुझे समाचार देने के लिए भेजा है।

भरत ने कहा भाई ! तुमसे मिल कर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। तुमने बड़ा शुभ संवाद सुनाया। मेरी समझ में नहीं आता कि मैं तुम्हें क्या दे दूँ ? । फिर कुछ देकर तुमसे उऋण नहीं हो सकता। तुम धन्य हो, जो सदा प्रभु के निकट रहते हो। क्या प्रभु मेरी कभी याद करते हैं ?

हनुमान ने कहा आप परम विनीत और शीलवान हैं। आपका प्रेम तो

देव-दुर्लभ है। आप तो राम के स्वभाव को भली भाँति जानते हैं। वे तो कभी किसीको भूलते नहीं। फिर आप तो उनके गुण गाते ही रहते हैं। आप धन्य हैं ! जिन पर प्रभु की असीम कृपा है। अच्छा, मैं प्रभु को समाचार दे दूँ, तब तक आप उनसे मिलने का उपक्रम करें।

भरत प्रसन्न हो अयोध्या पहुँचे। उन्होंने रनिवास में जाकर माताओं को शुभ संवाद सुनाया। फिर मंत्रियों और गुरु को समाचार दिया। धीरे-धीरे नगर भर में प्रभु के आने की बात फैल गयी। सब लोग धूम-धाम से स्वागत की तैयारियाँ करने लगे। गलियों और सड़कों की सफाई होने लगी। भवन और बाजार सजाये जाने लगे। ध्वजा, पताकाएँ फहराने लगीं। मालाएँ गूँथी जाने लगीं। आरती सजने लगीं। सबमें उत्साह की लहर दौड़ गयी।

भरत गुरुजनों और मंत्रियों को संग ले नगर के बाहर मैदान में जा पहुँचे। उनके पीछे नगरवासियों और सेवकों की भीड़ लग गयी। सुहागिनें मांगलिक गीत गाने लगीं। कुमारियाँ अंचलों में पुष्प भर कर अट्टालिकाओं पर चढ़ गयीं। उनके आनंद की सीमा न थी। उनकी प्रसन्नता स्वरों में फूट रही थी।

पुष्पक विमान से जब अयोध्या के राजभवन झलकने लगे तो राम ने कहा—मेरी प्रिय जन्मभूमि आ गयी। यह जो चाँदी की पट्टी की तरह दिखायी दे रही है, वह सरयू नदी हैं। मैंने अनेक नगर और पुरियाँ देखी हैं पर वे मुझे इतनी प्रिय नहीं जितनी अयोध्या। उसके सामने देवपुरी भी कुछ नहीं हैं। यहाँ की रज बड़ी कोमल और पवित्र है। ऐसी समतल और उर्वर भूमि संसार में कहीं न मिलेगी। मुझे यहाँ के लोग बड़े प्रिय हैं। वे मुझसे बड़ा स्नेह करते हैं। देखो ! मेरे आने का समाचार पाकर वे कितने प्रसन्न हैं ! उनका कोलाहल उनके हृदयों के उल्लास को व्यक्त कर रहा है। ऐसा कहते-कहते प्रभु की इच्छा से विमान नीचे को उतरने लगा। उसे उतरते देख सब लोग 'राजा रामचन्द्र की जय' बोलने लगे। सारा वायुमण्डल 'जय ध्वनि' से गूँज उठा। राम सीता का हाथ पकड़ कर सिंहासन से उतरे। फिर लक्ष्मण, विभीषण, जामवन्त, सुग्रीव, अंगद आदि मंत्री और सेनापति उतरे। सबके उतर जाने पर राम ने पुष्पक से कहा—तुम्हारे कारण मैं बड़ी सुविधा से समय पर आ गया। तुम अपने स्वामी के पास जा सकते हो। मेरी ओर से उन्हें धन्यवाद देना। पुष्पक ने कहा—आज मेरा और मेरे निमार्ण करने वाले विश्वकर्मा का परिश्रम सुफल हो गया। मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि आपकी कुछ सेवा कर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सका। आप जब मेरी याद करेंगे तभी मैं आपकी सेवा में स्वयं आ जाऊँगा।

भरत ने राम को उतरते देखा तो दौड़ कर गले में माला पहनायी। चरणों में गिर पड़े और रोने लगे। राम ने उन्हें उठाकर गले से लगा लिया और कहा—भाई! अब रोने का क्या काम? मैं तो आ गया! राम ने पहले गुरु को प्रणाम किया। फिर वे मंत्रियों, ब्राह्मणों एवं गुरुजनों से मिले। इधर भरत और शत्रुघ्न सीता और लक्ष्मण से मिले। राम क्षण भर में सबसे मिल लिए। प्रत्येक व्यक्ति को यही जान पड़ा कि प्रभु हमसे मिल रहे हैं। उन्होंने हाथ जोड़ कर राम तथा उनके साथियों का स्वागत किया। राम ने अपने साथियों से गुरु की ओर संकेत करके कहा कि इन्हें प्रणाम करो। ये हमारे कुलगुरु हैं। इनकी कृपा से ही मैंने रावण पर विजय पायी। फिर वशिष्ठ जी से कहा कि इन मित्रों ने संकट काल में हमारी बड़ी सहायता की। इन्होंने निशाचरों की विशाल सेना छिन्न-भिन्न कर डाली। यदि ये न होते तो शायद आपके दर्शन दुर्लभ हो जाते। ये मुझे भरत के समान ही प्रिय हैं।

सुमन्त गुरु की आज्ञा से पहले ही रथ सजा कर ले आये थे। उसी में बैठ राम, सीता और लक्ष्मण नगरी की ओर चले। उनके पीछे मंत्री, साथी, सैनिक और सेवक गण चले। मार्ग में दोनों ओर लोग पंक्तिबद्ध खड़े थे। बालक आगे थे। बड़े-बूढ़े पीछे। छज्जों पर युवतियाँ खड़ी थी। वे राम-सीता पर पुष्प बरसा रही थीं। राम की जय-जयकार हो रही थी। चलते-चलते रथ राजद्वार पर रुका। माताओं ने बढ़कर आरती उतारी और बड़े स्नेह से अंदर ले गयीं। राम सब माताओं से मिले पर कैकेयी से बार-बार मिले और कहा—'माँ! आपके आशीर्वाद से मैं सकुशल लौट आया। यदि मैं वन न जाता तो रावण को कैसे मारता और देवताओं का कष्ट कैसे दूर होता? आपकी कृपा से वह काम हो गया, जो अन्यथा असंभव था। आपने मुझे कीर्ति दी पर मेरे कारण आपको अपयश मिला। यह सब भाग्य का खेल था। उस पर किसी का वश नहीं चलता।

सबसे मिलने के पश्चात राम कनक-भवन गये। उस रात कनक-भवन की शोभा दर्शनीय थी। मांगलिक गीतों और वाद्यों से सारा भवन गूँजता रहा। सारी नगरी में हर्ष और उल्लास छा गया। यह अवधवासियों के जीवन का सर्वोत्तम दिन था। वे अपने भाग्य की प्रशंसा कर रहे थे। हमारे जीवन में ही युगुल सरकार वन से लौट आये और हमें दर्शन दिये। हम पुरवासी धन्य हैं।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राम का सिंहासनारोहण

अगले दिन वशिष्ठजी की आज्ञा से मंत्रि-परिषद बुलायी गयी। पुरजन और परिजन भी सभा में आमंत्रित किये गये। भरत ने राम की चरण पादुकाएँ लाकर उन्हें पहना दी और हाथ जोड़ कर कहा--'भैया ! आपने जो धरोहर मुझे सौंपी थी, उसकी रक्षा मैंने यथाशक्ति की। अब आप उसे सम्हालिए। राम ने ज्यों ही पादुकाएँ पहनीं, त्यों ही सभा-मण्डप तालियों की गड़गड़ाहट से गूँज उठा। सबने हर्ष ध्वनि करके भरत का समर्थन किया। गुरु ने वैशाख कृष्ण सप्तमी राज्याभिषेक की तिथि बतलायी। राम ने शिर झुकाकर मौन स्वीकृति दी। सब लोग तिलक की तैयारी में लग गये।

गुरु की आज्ञा से कोसल, कासी, मिथिला, अंग, वंग, कामरूप, पांचाल, केकय, विदर्भ, अवन्ती, आदि के राजाओं को सूचनाएँ भेजी गयीं। सुग्रीव की आज्ञा से अंगद, हनुमान, नल, नील आदि तीर्थों एवं पवित्र नदियों का जल ले आये। राज्याभिषेक की सामग्री बात की बात में इकट्ठा हो गयी। शत्रुघ्न की आज्ञा से सेवकों ने राजभवन सजाया। अवधवासियों ने सारी नगरी सजायी। उस दिन युवकों और बालकों का उत्साह देखने योग्य था। उन्हें वह दिन भी याद आ रहा था जब कैकेयी के हठ से उनकी उमंगों पर पाला पड़ गया था।

राम ने भरत की जटाएँ अपने हाथ से उतारी। नाइयों ने राम, लक्ष्मण के बाल बनाये। सेवकों ने केवड़ा-जल से उन्हें स्नान कराया। माताओं ने राजसी वस्त्र-आभूषण पहनाये। पुरोहितों ने चंदन लगाया, मालाएँ पहनायीं और शुभ कामनाएँ कीं। सीता को बारहो आभूषण पहनाये तथा सोलहो शृंगार किये गये। उस समय वह साक्षात लक्ष्मी जान पड़ती थीं।

शुभ मुहूर्त में वशिष्ठ जी ने वेद मंत्र पढ़कर राम सीता को रत्न जटित सुवर्ण सिंहासन पर बैठने को कहा। विप्रों ने तीर्थों का अभिमंत्रित जल उन पर छिड़का और शान्ति पाठ किया। वामदेव, कश्यप, जावालि, कात्यायन, गौतम आदि ऋषियों ने भी वशिष्ठ के साथ रामचन्द्र का अभिषेक किया। याज्ञिक ब्राह्मणों, कुमारियों, मंत्रियों सेनापतियों, एवं महाजनों ने औषधियों के रस से राजा राम का अभिषेक किया। मंत्री ने राजमुकुट पहनाया। गुरु ने तिलक लगाया। शत्रुघ्न ने श्वेत छत्र ताना। सुग्रीव और विभीषण चँवर डुलाने लगे। भरत और लक्ष्मण राम के दाहिने एवं बायें दण्ड लेकर खड़े हो गये।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हनुमान चरण धोने लगे। मातोंओं ने आरती उतारी। उपस्थित जनता ने जय-ध्वनि के साथ पुष्प वर्षा की। शंख, भेरी, शहनाई, नगाड़े आदि बाजे बजने लगे। इस प्रकार बड़ी धूम-धाम से राम का राज्याभिषेक सम्पन्न हो गया। सबकी इच्छाएँ पूरी हो गयी। उनके आनन्द का ठिकाना न था।

राज्याभिषेक के पश्चात् राम ने ब्राह्मणों और याचकों को सुवर्ण-रजत, मुद्राएँ, वस्त्र आभूषण, गौ, अश्व, गज, रथ आदि दान में दिये। सुग्रीव को सुवर्ण हार, अंगद को रत्न-जटित भुजबन्ध, जामवन्त को मणिमाला, नल-नील को मौक्तिक माल, अन्य सेनानायकों को वस्त्र-आभूषण एवं अभ्यागतों को दान-मान से सम्मानित किया। सीता ने अपना अमूल्य मणिहार उतार कर राम की ओर देखा। राम ने कहा—प्रिये ! तुम जिसे चाहो उसे दे सकती हो। सीता ने हनुमान की ओर स्मित से देखा। हनुमान उनके चरणों में शिर झुका कर बैठ गये। सीता ने उनके गले में हार पहना दिया।। पवन पुत्र ने उसकी एक मणि तोड़ अपने मुख में रख ली और दाँतों से चबाने लगे। यह देख सारी सभा में ठहाका मच गया। प्रभु मुस्कुराये और सीता भी हँसने लगीं। उपस्थित जनता ने राम और सीता की जय के साथ हनुमान की भी जय बोली।

राजतिलक होने पर बन्दीजन राम की स्तुति करने लगे। हे महाराज-धिराज! आपकी जय हो। आप नर वेश में साक्षात् नारायण हैं। आपका श्याम रूप अद्भुत है। हमने कभी कोई ऐसा व्यक्ति देखा ही नहीं। वस्तुत आप निराकार और निर्विकार है, पर भक्तों के लिए साकार बन जाते हैं। आप अज हैं, अनादि हैं और अविनाशी हैं। आप एक होकर भी अनेक रूप धारण कर लेते हैं। आप सर्व शक्तिमान हैं। आप साक्षात् ब्रह्म हैं। यह सीता जो आपके वाम भाग में विराजमान हैं, आपकी माया हैं। ये सृष्टि की रचना, उसका पालन और विनाश आपके संकेत मात्र से करती हैं। यह जड़ और चेतन जगत, नर, नाग, किन्नर, देव, गन्धर्व आदि काल, कर्म और गुण के अनुसार संसार चक्र में पड़े रहते हैं। वे कर्मनुसार अनेक योनियों में जन्म लेते, कर्म का फल भोगते और मरते रहते हैं। इस भव-बन्धन से वही छूट पाता हैं, जिस पर आपकी कृपा होती है। आपका रूप वही पहचान पाता है, जिसे आप दिखा देते हैं। हम तो श्रुत ज्ञान के भरोसे केवल आपके गुण गाते हैं। वेद भी आप का यश गाते कभी थकते नहीं। अन्त में 'नेति नेति' कह देते हैं। आपके ये अनुचर धन्य हैं, जिन्हें आपकी सेवा करने का सौभाग्य मिला। इनकी भक्ति धन्य है!

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आपने अहंकारी रावण को मारा। उसे अपने शारीरिक बल का बड़ा अभिमान था। उसने सारे भौतिक सुख प्राप्त कर लिये थे। उसने ऋषियों, मुनियों एवं देवतुल्य साधुजनों को तंग कर रखा था। उसने देवताओं को बन्दी-गृह में डाल दिया था। वह अपने को अजेय समझता था। आपने उसे विजय कर संसार के सामने एक आदर्श रख दिया। आप मानव जाति के रत्न हैं, पुरुषोत्तम हैं। आपके समान न कोई हुआ है और न होगा। हम भी आपके गुण गाकर अपने को धन्य समझते हैं। आपकी जय हो ! जय हो !! जय हो!!!

बन्दीजनों के पश्चात् चार मुनिकुमार आये। वे साक्षात् ब्रह्मा-कुमार जान पड़ते थे। उन्होंने महाराज को दण्डवत की। राम ने उन्हें बैठने के लिए एक उच्च आसन दिया। फिर वे हाथ जोड़ कर कहने लगे :—

वेद कहते हैं कि विश्व एक अश्वत्थ वृक्ष है। साधारण अश्वत्थ के बीज मिट्टी में मिले रहते हैं। वे ताप और जल के संयोग से अंकुरित होते, वायु, जल और प्रकाश को पाकर बढ़ते, पल्लवित होते, पुष्प और फल देते, कुछ काल तक हरे-भरे रहते और फिर सूख जाते हैं। प्रत्येक वृक्ष में असंख्य बीज होते हैं। प्रत्येक बीज में ऐसे ही वृक्ष उत्पन्न करने की शक्ति होती है। इस प्रकार बीज से वृक्ष और वृक्ष से बीज का क्रम चलता रहता है। यह अनादि काल से चला आया है और अनन्त काल तक चलता रहेगा। पहले बीज था या वृक्ष कोई निश्चित रूप से नहीं कह सकता। इसी प्रकार यह विश्व अनादि और अनन्त है। इसकी मूल अव्यक्त है, पर विश्व व्यक्त है। मूल ऊपर की ओर और शाखायें नीचे की ओर फैलती हैं। विश्व की सृष्टि अण्डज, पिण्डज स्वेदज और जरायुज चार रूपों में दिखायी पड़ती है। मिट्टी, जल, वायु, तेज और आकाश पाँच तत्व इसके पाँच स्कंध हैं। प्रत्येक स्कन्ध से पाँच-पाँच शाखायें फूटी हैं। मिट्टी से अस्थि, मांस, नाड़ी, त्वचा और रोम पाँच शाखायें निकलती हैं। जल तत्व से थूक, लार, स्वेद, रक्त और वीर्य का निमार्ण होता है। अग्नि से क्लान्ति, आलस्य, निद्रा, भूख और प्यास लगती है। वायु में धावन, उच्छलन, संवर्धन, स्पर्श और संकोचन शक्ति होती है। आकाश तत्व में काम, क्रोध, लोभ, मोह और मत्सर की भावना निहित है। इस प्रकार विश्वतरु की पचीस शाखायें हैं। छठा मन स्कंध सीधा चला गया है। इससे अनेक वृन्त फूटते हैं। इन शाखाओं में लगने वाले असंख्य पत्र मन की वासनाएँ हैं। वासनाओं में संकल्प और विकल्प रूपी फूल खिलते हैं। कुछ पुष्प फल देकर झड़ जाते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अन्य यों ही सूख जाते हैं। वासनाओं से सुख-दुख रूप फल मिलते हैं। यदि फल मन के अनुकूल होता है, तो सुख मिलता है और यदि मन के प्रतिकूल होता है तो दुख होता है। सुख मधुर फल है, दुख कटु फल है। इस वृक्ष पर माया रूपी बेल चढ़ी रहती है। वह सबको आच्छादित किये रहती है। यह बड़ी प्रबल है। जब तक माया है, तभी तक संसार है। वही वासनाओं को जन्म देती है। जीव उनकी प्राप्ति के लिए कर्म करता है। कर्म फल के पाप और पुण्य दो बीज होते हैं। इनका स्वाद चखने वाले जीव-पक्षी वृक्ष पर नीड़ बना कर बसते हैं। अज्ञानी उन मीठे, कसैले तथा तिक्त फलों को खाते और मगन रहते हैं। ज्ञानी केवल दर्शक की भाँति देखते और कटु समझकर उड़ जाते हैं। वे अनन्त आकाश को भेद कर सूर्य-मण्डल एवं उसके आगे ब्रह्म में लीन हो जाते हैं।

कुछ लोग कहते हैं कि हमने इस विश्व वृक्ष (व्यक्त जगत) और उसकी मूल (अव्यक्त जगत) को जान लिया है। वे दंभी और अहंकारी कहे जाते हैं। इसका जानना महान दुष्कर है। कुछ लोग उसे समझते तो हैं पर कहने में अपने को असमर्थ पाते हैं। एक तीसरे प्रकार के भक्त हैं, जो भगवान को सर्व शक्तिमान समझ अपने को उनकी दया पर छोड़ देते हैं। उन्हें जानने और न जानने की चिंता ही नहीं होती। वे केवल आपकी उपासना कर आप में लीन हो जाते हैं। वह अश्वत्थ वृक्ष आप ही हैं, अन्य कोई नहीं।

आप उस पूर्ण ब्रह्म के अवतार हैं। आप विश्व में सर्वत्र रमे हुए हैं। इसीलिए आपका नाम राम है। हमें आपका यह राज रूप प्रिय है। आपने नर अवतार लेकर संसार को धर्म का मार्ग दिखलाया। आप धर्माधिराज हैं। आप की जय हो! जय हो!! जय हो!!!

मुनि कुमारों के चले जाने पर सर्वांग भस्म मण्डित योगिराज ने राजसभा में प्रवेश किया। वे साक्षात् शंकर के अवतार जान पड़ते थे। उन्होंने राम को इस प्रकार वन्दना की :—

हे सीता-रमण राम आपकी जय हो। आप अवध के ही राजा नहीं वरन् संसार के राजाधिराज हैं। आप नरेश हैं, सुरेश हैं और रमेश हैं। आपने रावण को मारकर पृथ्वी का भार हर लिया। ऋषियों और मुनियों के मार्ग का कण्टक निकल गया। वह एक रोग था, जो क्षय से समान बढ़ता ही जाता था। आपने उस अहंकारी का मद ही नहीं चूर किया वरन् बाणों की अग्नि से निशाचरों को भी जला दिया। आपका तेज और पराक्रम युद्धभूमि में ही दिखायी पड़ा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आप अवध मण्डल के रत्न नहीं वरन् आर्यावर्त के रत्न हैं। आपने अवतार लेकर पृथ्वी का गौरव बढ़ा दिया। आपने लोगों के मोहांधकार को दूर कर दिया। इस जगत का मानव कांचन और कामिनी के मोह जाल में फँसा रहता है। उसकी इच्छाएँ कभी तृप्त नहीं होतीं। आपने अपने चरित्र से कुवासनाओं से दूर रहने का पाठ पढ़ाया। मानव योनि भोगयोनि नहीं वरन कर्म योनि है। आपके चरित्रों का अनुकरण करने से सांसारिक विषयों से तितिक्षा हो जाती है। आपके चरित्रों की कथा का रसास्वादन करने वाले विषय-रसों को मल-मूत्र के समान त्याग देते हैं। उनके मन में राग-द्वेष और मान-सम्मान की भावना नहीं रहती। वे योगादि कर्मों का भरोसा छोड़ केवल आपका स्मरण करते हैं। वे नियम पूर्वक आपके चरण कमलों का ध्यान करते एवं मकरन्द का पान किया करते हैं। वे सदा आपके नाम का जप किया करते हैं। कृपा करके मुझे भी वरदान दीजिए कि कुछ सुकर्म करके मैं भी आपका प्रियपात्र बन जाऊँ। मुझे न सुवर्ण चाहिए न रत्न, केवल भक्ति चाहिए।

उत्सव लगभग एक महीने चलता रहा। सब लोग आनन्द में इतमें लीन हो गये कि उन्हें पता ही न लगता था कि कब दिन होता है और कब बीत जाता है। अवधवासियों का तो कहना ही क्या, दक्षिणावर्त के बानर और भालु भी इतने मग्न थे कि उन्हें अपने बाल-बच्चों की सुध न रही। भगवान जिस पर कृपा करते हैं, उसकी यही दशा हो जाती है। जो भगवान का स्मरण करते हैं, वे सब कुछ भूल जाते हैं। उनकी तथा उनके घर की देख-रेख स्वयं भगवान करते हैं।

बन्दरों और रीछों की विदायी

एक दिन राजा रामचन्द्र ने अपने सब सखाओं को बुलाया और कहा—"आपने हमारी बड़ी सेवा की। हमारा दुर्दिन में साथ दिया। जहाँ हमारा कोई न था, वहाँ हमारे लिए प्राण देते रहे। हम आपके ऋणी हैं। हमें अपने भाई, कुटुम्बी, परिजन, पुरजन, राज्य तथा सम्पत्ति इतनी प्रिय नहीं जितने आप हो। अब सब लोग अपने-अपने घर जाकर प्रियजनों से मिलो। वे तुम्हारी याद कर रहे हैं। हाँ, अपने कर्तव्यों का पालन करना। किसी से बैर न रखना। सबको अपना समझना। सब प्राणियों को यदि ईश्वर का अंश समझोगे तो सब अपने हो जायँगे। द्वैत का भाव मन से निकाल दोगे तो सदा परम सुखी रहोगे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सब मित्र तथा सेवक प्रभु की ओर देखने लगे। उनसे कुछ कहते सुनते न बना। मारे स्नेह के वे विह्वल हो गये। प्रभु ने उनका स्नेह देख अनेक प्रकार से समझाया। सबसे पहले भरत ने वस्त्र-आभूषण मँगा कर सुग्रीव को पहनाये। फिर लक्ष्मण ने विभीषण, जामवन्त, नल, नीलआदि को पहनाये। जब अंगद के पहनाने का समय आया तो अंगद ने कहा—'अब मेरा किष्किंधा में कौन है, जो मैं वहाँ जाऊँ ? पिताजी मरते समय मुझे आपकी गोद में छोड़ गये। मैं आपकी ही शरण में रहना चाहता हूँ। आपकी सेवा करता रहूँगा। कृपा कर आप मुझे जाने को न कहें।

अंगद की बातें सुन कर राम ने उन्हें छाती से लगा लिया। उनकी आँखों में आँसू भरआये। उन्होंने बड़े स्नेह से अपनी मणि-माला अंगद के गले में तथा उत्तरीय कंधे पर डाल दिया। फिर कहा—'अंगद ! अब सुग्रीव को ही अपना पिता समझो। मेरे स्थान में इन्हीं की सेवा करना। तुम युवराज हो। सुग्रीव के बाद तुम्हें ही किष्किंधा का राज्य सम्हालना है। राम ने सबको समझा-बुझाकर बिदा कर दिया। सब भाई उन्हें दूर तक पहुँचा कर लौट आये। हनुमान सुग्रीव से आज्ञा लेकर लौट पड़े। सुग्रीव ने कहा—हनुमान तुम बड़े भाग्यवान हो। राम ने तुम्हें अपनी शरण में रख लिया। अन्त में निषाद राज को भी समझा-बुझाकर बिदा कर दिया और कहा—"तुम तो पास ही रहते हो। तुम होली-दीवाली अकसर आ सकते हो। तुम तो हमारे सगे हो। हमसे किसी प्रकार अलग नहीं। तुम्हारे कुटुम्बी तुम्हारी राह देख रहे होंगे। उन्हें जाकर सुखी करो।

राम राज्य

राम के सिंहासन पर बैठते ही सारी नगरी में आनन्द छा गया। वर्षों की उदासी दूर हो गयी। नित्य नवीन उत्सव मनाये जाते थे। लोगों के हर्ष का ठिकाना न था। राम के वियोग में घर शून्य हो गये थे। वाटिकाएँ उजड़ चुकी थी। हाटें और बाजारें सूनी पड़ी रहती थीं। देव मन्दिर भी उत्सव विहीन हो गये थे। रामके आ जाने से उनकी काया ही पलट गयी। उपवन हरे-भरे हो गये। बेलें लहलहाने लगीं। फूल खिलने लगे। उन पर भौंरे मँडराने लगे। मधुमक्खियाँ मधु के छत्ते बनाने लगीं। कोयलों और पपीहों की बोली सुनायी पड़ने लगी। बसन्त पूर्ण रूप से आ गया। ऐसा प्रतीत होता था मानों राम के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चले जाने पर पशु-पक्ष भी कहीं वन में चले गये थे। सरोवर जो शुष्कप्राय और कान्तिहीन हो गये थे, जल से लबाबल भर गये। उनमें जल पक्षी क्रीड़ा करने लगे। पुष्करिणियों में कमल और कोकाबेली के पुष्प खिलने लगे। घाटों पर नर नारियों की भीड़ जमने लगी। परित्यक्त स्थल विहारस्थल हो गये। शून्य मन्दिरों में जहाँ चमगादड़ों ने अपना अड्डा जमा लिया था, जगमगाने लगे। उनमें प्रातः और सायं आरती होने लगी। घंटे-घड़ियाल बजने लगे। भजन पूजन, कथा-वार्ता होने लगी। जो नाट्यशालाएँ श्रीहीन पड़ी थीं, उनमें जीवन आ गया। कलाकारों में उत्साह आ गया। वास्तुकार मूर्तियाँ गढ़ने लगे, चित्रकारों ने तूलिका उठायी और कवियों ने लेखनी। उन सबका ध्येय एक मात्र राम-गुण-गान था।

राजा राम के राज्य में सब सुखी थे। उन्हें किसी बात की कमी न थी। वह त्रेता युग था। लोग सच्चरित्र थे। उनकी इच्छाएँ कम थीं। उनमें ईर्ष्या-द्वेष न था। वे दूसरों के सुख में सुख पाते थे। वे आत्म-सन्तुष्ट थे। प्रकृति भी उनके अनुकूल थी। सूर्य ग्रीष्म में उतना ही तपता जितनी अन्नादि को पकाने की आवश्यकता होती। वर्षा समय से होती। अतिवृष्टि और अनावृष्टि कभी न होती। चोरी और डाके का नाम भी न सुनायी पड़ता। हाटों और बाजारों में एक भाव, एक दाम वस्तुएँ बिकती थीं। कोई मोल-भाव न करता। यदि किसी की गाँठ में पैसा न होता तो भी वह आश्यकता की वस्तु पा जाता था। विक्रेता जानते थे कि पैसा फिर मिल जायगा। लोगों को दूसरों की बात का विश्वास था। यदि किसी का पैसा या गहना गिर जाता तो उसे कोई उठाता न था। जब वह व्यक्ति लौटकर आता तो अपनी वस्तु वहीं पा जाता था। लोग धर्म भीरु थे। वे सदा शंकित रहते कि भूल या प्रमाद से अधर्म न हो जाय। सभी लोग पूर्णायु भोग कर मरते थे। अकाल मृत्यु होती ही न थी। शारीरिक व्याधियाँ कम थीं। उनके उपचार का समुचित प्रबन्ध भी था।

राजा राम धर्म के प्रतीक थे। त्याग तथा शील उनके प्रमुख गुण थे। वे साधु-संतों का सम्मान करते थे। वे प्रजा का पालन पुत्रवत करते थे। उन्होंने अपने चरित्र से धर्म की स्थापना की। उन्हें अपनी वंश मर्यादा का बड़ा ध्यान था। वह अपने पूर्वजों के यश पर किसी प्रकार का कलंक न लाने देना चाहते थे। राज्य को वह धरोहर समझते थे। यह उन्हें पूर्वजों से मिला था। उसकी रक्षा करना वह अपना कर्तव्य समझते थे। उन्हें अपनी तथा दूसरों की मर्यादा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

का बड़ा ध्यान था। राम-राज्य में वर्ण और आश्रम की मर्यादा का पालन होता था। अपने धर्म का पालन करने से सब सुखी थे। यथा राजा तथा प्रजा।

राम राज्य में सभी मनुष्य धर्मवान, पुण्यवान, धीमान और गुणवान थे। वे दूसरों के गुणों को ग्रहण करते थे। उनमें विवेक था। सत् का ग्रहण और असत् का त्याग करना जानते थे। उनके पारस्परिक व्यवहार सीधे-सादे थे। उनमें दम्भ और कपट की कहीं गंध न थी। कोई किसीसे ईर्ष्या-द्वेष न रखता था। सबकी समदृष्टि थी। विषमता का नाम न था। इसी कारण वैर-भाव कहीं न था। सबने सबको मित्र समझ लिया था। शत्रु न होने से विजय का प्रश्न ही न उठता था। केवल अपने मन पर विजय पाना ही लोगों का लक्ष्य था।

राज्य परिषद

एक दिन महाराज सिंहासन पर विराज मान थे। सारी सभा मंत्रियों, सचिवों, सभासदों और नागरिकों से भरी थी। वे राम के मुखारविंद की ओर देख रहे थे। राम ने शिर उठा कर कहा :—

उपस्थित सभ्य गण ! आपने हमें सिंहासन पर बिठा कर अपने स्नेह का परिचय दिया। पर राज्य का भार उठाना तभी संभव है जब कि आप लोगों का सहयोग हो। हम नहीं चाहते कि आप मौन रहें और अपनी कठिनाइयाँ न कहें। राज्य सुचारु रूप से तभी चल सकता है, जब आप अपने विचारों को निर्भयता से व्यक्त करें। यदि राज्य में कहीं अन्याय हो, अनीति हो, तो मुझसे कहने में संकोच न करें। यद्यपि मंत्रिमण्डल प्रत्येक कार्य में हमें सम्मति देता रहता है। फिर भी कर्मचारियों से प्रमाद होना सम्भव है। यदि आप सबके सामने कहने में संकोच करें तो एकान्त में कह सकते हैं।"

एक मंत्री ने कहा—महाराज ! आप हमारे पूर्ण रक्षक हैं। आप दीन प्रतिपालक और पर दुख-कातर हैं। आप सारी प्रजा का पालन पुत्र की तरह करते हैं। फिर आपसे किसीको क्या शिकायत हो सकती है ? हमें तो चारों ओर आपकी कीर्ति ही सुनायी पड़ती हैं। इस वंश में अनेक राजा हुए। कोई सत्यवादी था तो कोई धर्मात्मा।' कोई पराक्रमी था और कोई दिग्विजयी, कोई प्रजापालक था और कोई दानी। पर आप जैसा कोई नहीं हुआ। आप में सभी गुण एकत्र हैं। आप चन्द्र के समान दर्शनीय हैं। आपकी कीर्ति ज्योत्स्ना के समान निर्मल है। आपके चरित्र भागीरथी के समान पवित्र और अमृत के

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

समान मधुर हैं। आप भीतर बाहर एक है। आप जैसा कहते हैं, वैसा करते हैं। आपके शासन में रहकर हम गौरवान्वित हैं। आप धन्य हैं। ?

सन्ध्या समय उन्होंने गुप्तचरों से पूछा कि नगर के क्या समाचार हैं ? पुरजन हमारे सम्बन्ध में क्या चर्चा करते हैं ? एक चर ने कहा :—

मैं कल रात गलियों में घूमता हुआ एक घर के पास से निकला। घर में मंद प्रकाश था। एक दम्पत्ति परस्पर बातें कर रहे थे। मैं दरवाजे पर कान लगा कर खड़ा हो गया। उसकी स्त्री पति से कह रही थी—'स्वामिन् ! आप तो ऐसे सुन्दर लगते हैं, मानों कमल नयन रामचन्द्र हों। मैं तुम्हें पाकर जीवन में धन्य हो गयी। मेरी शुभेच्छा है कि आपका नाम वैसा ही उज्वल रहे जैसा राम का है।' उसके पति ने कहा—"सुभगे ! तुम धन्य हो। तुम्हारे विचार पवित्र हैं। पति में परमेश्वर की झलक पाना पतिव्रता नारियों का धर्म है। किन्तु कहाँ मैं और कहाँ राजा राम ? कहाँ दीपक और कहाँ सूर्य ? कहाँ गीदड़ और कहाँ सिंह ? कहाँ नाला और कहाँ गंगा ? कहाँ मैं नारकीय कीड़ा और कहाँ भगवान राम। दोनों की क्या तुलना !

एक दूसरे चर ने बताया कि आज प्रातःकाल जब मैं सरयू में स्नान करके लौट रहा था, तो एक स्त्री अपने बालक को दूध पिलाते हुए कह रही थी :— बच्चे सुख से दूध पी लो। क्योंकि वह फिर तुम्हें दुर्लभ हो जायगा। अवधपुरी में रहने वालों का पुनर्जन्म नहीं होता। हम धन्य हैं, जो राजा राम के राज्य में पैदा हुए।

तीसरे चर ने कहा—आज एक युवती वीणा पर प्रभु के गुणगान कर रही थी। उसके गीत का भाव था कि हम लोग धन्य हैं, जिनका पालन राजा राम पुत्र की तरह करते हैं। उन्होंने बानरों और भालुओं की सहायता से समुद्र पर पुल बाँध दिया। रावण और कुंभकर्ण जैसे बलवान राक्षसों को मारा। उनके चरित्र अलौकिक हैं।

राम ने कहा—यह तो अपने लोग कहते हैं, पर अन्य लोगों के क्या विचार हैं ? भाई ! संसार बड़ा विचित्र है। यहाँ होम करते हाथ जलते हैं। फूल में काँटे और रस में कीड़े दिखायी पड़ते हैं। निंदा-स्तुति, यश-अपयश का द्वन्द्व तो साथ-साथ चलता है। यदि दस प्रशंसा करते हैं तो एक-दो निंदा भी। कुछ लोगों को दूसरों की निंदा और परिवाद में आनन्द मिलता है। पर हमें उनकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। उनकी बातें हमें ध्यान से सुननी चाहिए। आत्म-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सुधार का यही सर्वोत्तम मार्ग है। यदि हम अपने प्रियजनों के अनुशंसात्मक वचन ही सुनते रहें, तो अपने दोष न देख सकेंगे। हमें अपने विरोधियों की आलोचनाएँ उसी प्रकार ध्यान से सुननी चाहिए, जितनी मित्रों और सहयोगियों की चाटूक्तियाँ। फिर कुछ लोग ऐसे होते हैं, जो राजा की तब तक जय-जय-कार करते हैं, जब तक वह पदारूढ़ रहता है। गद्दी छोड़ते ही उसकी क्षय-क्षय (मुर्दावाद) बोलने लगते हैं।

सीता परित्याग

सभा विसर्जित होने पर प्रभु अपने कनक-भवन चले गये। सीता ने उनका बढ़ कर स्वागत किया। प्रेम से हाथ पकड़ कर पलँग पर बैठाया। राम ने सीता की ओर स्नेह भरी दृष्टि से देखा और कहा—देवी ! तुम इस समय बड़ी कान्ति-मयी प्रतीत होती हो। जान पड़ता है कि तुम तेजस्वी संतान को जन्म दोगी। इस समय तुम्हारी जो इच्छा हो, उसे कहने में संकोच न करो। मैं यथाशक्ति उसकी पूर्ति करूंगा। शास्त्र कहता है कि गर्भवती नारी की इच्छाओं की पूर्ति होने से मनोनुकूल पुत्र की प्राप्ति होती है। अव्यवस्थित और असंतुष्ट व्यक्ति की संतान सदा कुण्ठाग्रस्त रहती है। उसमें मानसिक विकार उत्पन्न हो जाते हैं। मानव का मस्तिष्क भ्रूणावस्था से ही बनता और बिगड़ता है। संस्कारों के बीज इसी अवस्था में अंकुरित होते हैं। वे ही कालान्तर में विकसित हो जाते हैं। इसी कारण शास्त्रों में पुंसवन और गर्भाधान संस्कारों का विधान किया गया है।

सीता ने लज्जा से शिर झुका लिया और मधुर मुस्कान से बोलीं—"आपकी मुझ पर बड़ी कृपा है, जो मेरा इतना ध्यान रखते हैं। मुझे सब कुछ तो प्राप्त है। मेरी किसी वस्तु के प्रति कोई इच्छा नहीं। मैं तो केवल आपको प्रसन्न रखना चाहती हूँ। हाँ, कभी-कभी एक अभिलाषा जाग्रत हो उठती है।

प्रभु ने कहा—प्रिये ! वह क्या है ? निःसंकोच भाव से कहो। सीता ने कहा कि वनवास की अवधि में हमें आश्रमों का जीवन बड़ा पसंद आया। हमें अनसूया, लोपामुद्रा और भगवती भागीरथी की स्मृति आती रहती है। हम उनके साथ सुखपर्वक रहे, उनका आतिथ्य ग्रहण किया पर उन्हें कुछ दे न सके। मेरी इच्छा है कि मैं उनसे फिर मिलकर कुछ वस्त्र-आभूषण भेंट करूँ। मैं पुण्य सलिला भागीरथी में स्नान करना चाहती हूँ। हम लोग चौदह वर्ष वन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में रहे पर प्राकृतिक शोभा का आनन्द न ले सके। अवध के राजभवन का जीवन तो बन्दीगृह सा प्रतीत होता है। यदि प्रकृति के मुक्त वातावरण में कुछ दिन रहने को मिलते तो बड़ा अच्छा होता।

राम ने कहा—सुभगे ! तुम्हारा विचार उत्तम है। वन में विहार करने वाली शुकी स्वर्ण-पिञ्जर में दुखी ही रहती है। स्वातंत्र्य जीवमात्र को प्रिय है। बन्धन चाहे जिस प्रकार का हो, बन्धन ही है। फिर एक बार जो मुक्त वातावरण में रह कर श्वास लेता है, उसे घर बंधन ही लगता है। मैं तुम्हारी इच्छा की पूर्ति अवश्य करूँगा। गुरुजनों की ऐसी आज्ञा भी है। पर मैं तुम्हारे साथ न चल सकूँगा। राजा का मुख्य धर्म प्रजापालन है। यदि मैं राजधानी से दूर चला गया तो राज्य में गड़बड़ी हो सकती है। आन्तरिक विद्रोह तथा बाह्य आक्रमण की शंका बनी रहती है। हाँ ! मैं तुम्हारे जाने का समुचित प्रबन्ध कर दूँगा।

राम ने उसी समय सुमंत को बुला कर कहा कि महारानी गंगा स्नान करने जाना चहती हैं। उन्हें स्नान करा लाओ। यदि मार्ग में कोई आश्रम पड़े तो इन्हें दिखा देना। यदि यह वहाँ रहना चाहें तो दो-चार दिन ठहर जाना। ऐसा कह कर वह अपने शयनकक्ष में चले गये।

विश्राम करने के पूर्व गुप्तचर उन्हें नगर की सूचना देते रहते थे। यदि कोई कष्ट में होता तो राम उसके दूर करने का उपाय करते। उस रात दुर्मुख ने अन्तःपुर में आकर कहा—भैया, रामचन्द्र ! फिर उसने दाँतों तले जीभ दबायी और कहा—नहीं, राजा रामचन्द्र ! राम ने कहा—तुम तो हमारे पुराने अनुचर हो। तुमने हमें गोद में खिलाया है। तुम्हारे मुख से जैसा भैया शब्द प्रिय लगता है, उतना राजा नहीं। इसमें आत्मीयता झलकती है। अच्छा यह तो बताओ कि आज कैसे आये ?

दुर्मुख ने कहा कि दरबार में तो भीड़ लगी रहती है। आज जब अन्य दूत अपनी-अपनी बातें सुना रहे थे, तो मैं भी कुछ कहना चाहता था पर चुप रहा। मुझे सबके सामने कहने में संकोच हुआ। अतः मौन ही रहा।

राम—अच्छा, कहो, क्या कहते हो ?

दुर्मुख—मुझे कहने में लज्जा आती है।

राम—अरे, अपनों से लज्जा कैसी ! फिर तुम तो वृद्ध हो।

दुर्मुख—मैं पिछले दिन सरयूतट से आ रहा था। मार्ग में एक धोबी अपनी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्त्री को डाँट रहा था। वह आपका नाम लेकर चिल्ला रहा था।

राम—मेरा नाम ! क्यों ? चुप क्यों हो गये ? निर्भय होकर कहो !

दुर्मुख—उसने धोबिन के लात मारी और क्रोध मै कहा—'हमारे घर से निकल। वहीं जाकर रह, जहाँ दिन भर बिताया है। मैं तेरी टाँगें तोड़ दूँगा और घर में घुसने न दूँगा। मुझे राजा राम न समझना। वे महाराज हैं, चाहे जो कुछ करें। उन्हें सब शोभा देता है। उन्होंने सीता को घर में बिठा लिया, जो रावण के अन्तःपुर में चौदह महीने बनी रहीं।

यह दुःसंवाद सुनते ही राम पर मानो वज्र सा गिर पड़ा। वे सन्न रह गये। उनके मुख से सत्य-कृष्ण कुछ न निकला। उन्होंने दुर्मुख को बिदा कर दिया। वह अपनी शैया पर चुपचाप लेट गये। उन्होंने न अन्न ग्रहण किया और न दूध पिया। केवल जल पीकर रह गये। उस रात उन्हें नींद न आयी। केवल करवटें बदलते रहे। उनका मन चिन्ता-सागर में डूबता और उछलता रहा। वह आत्मचिंतन करने लगे।

क्या मैंने सीता को ग्रहण करने में भूल की ? क्या सीताहरण मेरे वंश और मेरे नाम पर कलंक न था ? उसे धोने के लिए ही मैंने रावण का सपरिवार संहार किया। मैंने सीता को तभी ग्रहण किया, जब उनके चरित्र की प्रशंसा त्रिजटा तथा स्वयं मंदोदरी ने की। जब मैंने सीता से अग्नि में प्रवेश करने को कहा तो लंकानगरी के लोगों की आँखों में आँसू भर आये। मैं जानता हूँ कि जनकनन्दनी पवित्र हैं। पर दुर्जनों का मुँह कौन बंद कर सकता है ? वे तो सत्कविता और सद्बनिता में कलंक ही ढूँढ़ा करते हैं। उन्हें क्या कहा जाय ? वे अपनी प्रकृति से विवश है। पर जान पड़ता है कि धोबी ही ऐसा नहीं कहता वरन् अन्य लोग भी कहते हैं। प्रजा मेरे इस काम की निंदा करती है। मैंने प्रजा को प्रसन्न रखने का बीड़ा उठाया है। अतः सीता को निर्वासित करने में ही मेरा भला है। मैं ऐसा कोई काम नहीं करना चाहता, जिसकी लोग निंदा करें। मैं वह उदाहरण रखना चाहता हूँ, जो आदर्श हो।

ब्राह्म वेला में ही सुमंत ने आकर कहा कि रथ तैयार है। राम ने कहा कि भाइयों को बुला लाओ। उनसे कुछ परामर्श करना है। महारानी से कह दो कि चलने की तैयारी कर लें। भाइयों के आ जाने पर राम ने अवरुद्ध कण्ठ से गुप्तचर की बात बतायी और अपना निर्णय कह सुनाया। फिर वह भरत की ओर देखने लगे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भरत ने कहा कि एक धोबी के कहने से आप भाभी को छोड़ रहे हैं। उस मूर्ख की बुद्धि ही कितनी ! आप छोटे-बड़े, भले-बुरे सबको प्रसन्न रखना चाहते हैं। यह असम्भव है। दुनिया कुत्ते की पूंछ की तरह टेढ़ी है। वह सदा टेढ़ी ही रहेगी। कभी सीधी न होगी। मैं स्वयं भुक्त भोगी हूँ। उन्होंने मुझ पर सन्देह किया। मेरी माँ को गालियाँ दीं। पिताजी पर दोषारोपण किये। केवल आपने मेरा हृदय पहचाना। इससे परिवार विघटित होने से बच गया। संसार बड़ा विचित्र है ! यह किसीको फूलते-फलते नहीं देख सकता। लोग भाइयों को लड़वाते हैं, मित्रों में द्वेषाग्नि भड़काते है; घर में कलह कराते हैं और राज्यों को संघर्ष करा के सत्यानाश करते हैं। क्या सीता आपको प्रिय नहीं हैं ? क्या गार्हस्थ जीवन का सुख अपेक्षित नहीं है ? मैं प्रजा की ऐसी बातें मानने को तैयार नहीं।

भरत की आवेग पूर्ण बातें सुन राम ने कहा—"मुझे सीता प्रिय हैं। तुम सब प्राणों के समान प्रिय हो। पर कीर्ति मुझे सबसे अधिक प्रिय है। मैं सबको छोड़ सकता हूँ। अवध त्याग सकता हूँ, सीता का परित्याग कर सकता हूँ; पर-लोक निदा नहीं सुन सकता। शास्त्र कहता है कि संभावित व्यक्ति के लिए अपयश मरण से बढ़ कर है।" ऐसा कह कर उन्होंने शत्रुघ्न की ओर देखा।

शत्रुघ्न ने कहा—भैया ! इसमें दो मत नहीं हो सकते। मेरा विचार वही है जो दादा का है। ऐसा कह कर उन्होंने शिर नीचा कर लिया और मौन हो गये। इस पर राम ने लक्ष्मण से कहा—भाई ! मुझे तुम पर बड़ा विश्वास है ! यदि तुम न जाओगे तो मैं ही कहीं चला जाऊँगा। मेरे लिए एक ही मार्ग अवशेष है। ऐसा कहते हुए उनके अश्रु गिरने लगे।

भाई को दुखी देख लक्ष्मण तुरन्त अन्तःपुर चले गये। उन्होंने सीता के चरण छुए और कहा—"रथ तैयार है। शीघ्रता कीजिए। नहीं तो सूर्योदय हो जायगा और पहुंचने में धूप होगी।" दासी ने वस्त्र और आभूषणों की पेटिका रथ में रख दी। लक्ष्मण ने सहारा देकर भाभी को रथ पर चढ़ाया और स्वयं सुमंत के पास बैठ गये। वल्गा का झटका पाते ही अश्व वायुवेग से चल पड़े। नगर निवासियों को पता ही न चला कि रथ किसे और कहाँ लिये जा रहा है ?

रथ तीव्र गति से चल रहा था। वायु के शीतल झकोरे लगने से सीता को कुछ विश्रान्ति मिली। वह उपवनों के लतागुल्मों और पशु-पक्षियों को देखती

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चली जा रही थीं। फिर कटीली झाड़ियाँ और ऊसर भूमि मिलने लगी। सीता का मन उन्हें देख उदास हो गया। प्रियतम के अभाव में उन्हें सब कुछ सूना लगने लगा। लक्ष्मण भी मन-मलीन बैठे थे। उनकी मुख-मुद्रा देख वह और भी चकित हो गयीं। उन्हें अमंगल की आशंका होने लगी। वह स्वामी के कल्याण के लिए देवी-देवता मनाने लगीं। तीसरे पहर गंगा तट आया। घोड़े स्वतः रुक गये और हिनहिनाने लगे। सुमंत ने कहा कि गंगा मैया आ गयीं। यह सुनते ही लक्ष्मण के होश हवास उड़ गये। उन्होंने दोनों हाथों से अपनी आँखें मूँद लीं और रथ के डंडे के सहारे झुक गये।

सीता ने लक्ष्मण को झकझोर कर कहा—भैया! बोलते क्यों नहीं? क्या मुझ से कोई अपराध हुआ? इस पर भी जब लक्ष्मण कुछ न बोले तो सीता ने परिस्थिति की गम्भीरता समझी। उन्हें निश्चय हो गया कि स्वामी ने मुझे त्याग दिया है। देवर केवल पहुँचाने आये हैं। उन्होंने फिर कहा—"भैया! सोच न करो। इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं। केवल मेरे भाग्य का दोष है। आर्यपुत्र से कह देना कि मुझे आपकी इच्छा स्वीकार है। आप मुझे निर्दोष समझते हैं, मेरे लिए यही गौरव की बात है। लोकापवाद के डर से आपने मुझे छोड़ दिया। इसके लिए मैं आपको दोष नहीं देती, पर मैं भी एक प्रजा हूँ। मेरा भी आपको ध्यान रखना था। आप सुखी रहें, आपकी प्रजा सुखी रहे। मैं उसी में सुखी हूँ, जिसमें आपको सुख है। पर मैं यही कहूँगी कि आपने दाम्पत्य जीवन को ठुकरा करा अन्याय किया। जिस सिद्धान्त को लेकर आप चल रहे हैं, वह आदर्श नहीं।" ऐसा कह कर सीता रथ से उतर पड़ीं।

लक्ष्मण ने उन्हें प्रणाम किया। सुमंत ने घोड़ों की बाग मोड़ी और रथ घुमा कर अयोध्या लौट गये। अवध में कानाफूसी होने लगी कि राम ने सीता को नाहक छोड़ दिया। यदि त्यागना ही था, तो लंका से क्यों लाये थे?

आश्रम में लव-कुश का जन्म

सूर्य ढल रहा था। सीता की व्याकुलता बढ़ रही थी। रात में कहाँ आश्रय मिलेगा? भयानक जीव-जन्तुओं से कैसे रक्षा होगी? वहाँ न कोई अपना था और न पराया। वेदना से शरीर शिथिल हो रहा था। चिंता से मस्तिष्क फटा जा रहा था। वह मन ही मन कहने लगीं :—

हाय! मेरा जन्म किस अशुभ घड़ी में हुआ, जो जीवन भर रोते ही बीता।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मैं बड़े घर में पैदा हुई और बड़े घर ब्याह कर भी आयी। क्या बड़े घर में होने का यही फल है ? यदि मैं कंगाल के घर हुई होती तो अच्छा था। इस वैभव ने ही पराभव दिखाया। अयोध्या के राजभवन में प्रवेश करते ही सिर पर ओले गिरे। वन के चौदह वर्ष बड़ी कठिनाई में बीते। किन्तु दुर्भाग्य को इतने से ही संतोष न हुआ। मेरे पूर्व जन्म के पाप रावण के रूप में उदय हुए। स्वामी से विछोह हुआ। लंका में निशाचरों के बीच भयानक यंत्रणाएँ सहनी पड़ीं। तब इसी आशा में प्राण बनाये रही कि भाग्य कभी न कभी तो पलटा खायगा। आत्म विश्वास ने सहारा दिया। रावण मारा गया। स्वामी की विजय हुई। मैं उनके साथ अयोध्या लौटी। सिंहासन पर बैठ कर समझी थी कि मेरा सौभाग्य-सूर्य उदय हुआ। किन्तु दुर्दैव ने फिर भी साथ न छोड़ा। अन्त में देवर यहाँ निर्जन में छोड़ गये। हाय ! मैं क्या करूँ ? किससे कहूँ ? भगवती वसुन्धरे ! तुम मेरी साक्षी हो। मैं निष्कलंक हूँ। पर जब प्रियतम ने ही विश्वास छोड़ दिया तो किस पर भरोसा करूँ ! इस जीवन से तो मर जाना ठीक है। माँ गंगे ! अन्त में तुम्हीं सबको शान्ति देती हो। मुझे भी शरण दो। ऐसा कह कर वह कगार पर पहुँची और धारा में कूद पड़ीं।

संयोग-वश वाल्मीकि जी वहीं तट पर सन्ध्या कर रहे थे। उन्होंने झमाके का शब्द सुना तो समाधि भंग हो गयी। वह भी धारा में कूद पड़े और सीता को डूबने से बचा लिया। सुकुमार शरीर और राजसी वस्त्राभूषण देख उन्हें समझने में देर न लगी। सीता के स्वस्थ होने पर उन्होंने कहा :—

तुम क्यों प्राण दे रही हो ? भगवान ने यह अलभ्य जीवन इस तरह खोने को नहीं दिया। तुम्हारे जीवन का ध्येय अभी पूर्ण कहाँ हुआ ? तुम्हारे गर्भ में शुद्ध रघुकुल की संतान है। उसकी रक्षा करना तुम्हारा धर्म है। कर्त्तव्य से च्युत होना अधर्म है, पाप है। कदाचित अपने को निराश्रय देख कर ही तुमने आत्महत्या करने का संकल्प किया था। जान पड़ता है कि अभी तुम्हें कुछ दिन और जीना है। तुम अपना नया जन्म समझो। आज से तुम मेरी बेटी हुई। चलो मेरे आश्रम चलो। यद्यपि मैंने संन्यास ले लिया है पर तुम्हें पाकर मुझे गृहस्थ जीवन का सुख मिल जायगा। आश्रम में अनेक शिष्य और शिष्यायें हैं। वे तुम्हारी सेवा-सुश्रुषा करेंगी।

महर्षि के सौम्य रूप को देख और उनकी स्नेहमयी वाणी सुनकर सीता को वैसा ही सुख मिला, मानो पिता जनक ही मिल गये हों। उन्होंने ऋषि को

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रणाम किया और कहा—'आप महर्षि हैं ! त्रिकाल दर्शी हैं। आपकी आज्ञा शिरोधार्य है। फिर वह वाल्मीकि जी के पीछे-पीछे चल दीं।

वाल्मीकि ने सीता के रहने के लिए आश्रम में अलग कुटी बनवा दी। उनकी सेवा सुश्रूषा और सद्भावना का सीता पर बड़ा प्रभाव पड़ा। कुछ ही दिनों में वह तापसी जीवन की अभ्यस्त हो गयीं। समय पाकर उनके दो यमज पुत्र पैदा हुए। ऋषि ने उनके जातकर्म और नामकरण संस्कार किये। जो पहले हुआ उसका नाम कुश और जो बाद में हुआ उसका नाम लव रखा गया। महर्षि ने उनका लालन-पालन ही नहीं किया वरन् क्षत्रियोचित शिक्षा भी दी। उन्होंने पिता का धर्म निबाहा और गुरु का भी। दोनों कुमार उन्हें ही अपना सर्वस्व समझने लगे। वे बड़े मेधावी और कुशाग्र बुद्धि वाले थे। अल्प समय में हीं उन्होंने अनेक विद्यायें सीख लीं। धनुर्वेद में तो पारंगत हो गये। वे जंगली पशुओं का आखेट भी करते थे। महर्षि ने उन्हें स्वरचित राम-कथा कण्ठस्थ करा दी। उनके कण्ठ बड़े सुरीले और मधुर थे। जब वे श्लोकों का सस्वर पाठ करते तो मनुष्य क्या पशु-पक्षी भी उनके स्वर पर मुग्ध हो जाते तथा पास आ कर खड़े हो जाते थे। दोनों की जोड़ी देखने लायक थी। एक श्यामल और दूसरा गौर। एक में राम की झलक थी और दूसरे में सीता की। दोनों हाथी के बच्चों की तरह क्रीड़ा करते तो सीता फूली न समाती थीं। ऐसे पुत्रों को पाकर वह अपना जीवन सार्थक समझने लगीं। बाल्मीकि भी उन्हें देख आनन्द मग्न हो जाते। उनका वैराग्य भूल गया। वात्सल्य में उन्हें वह आनन्द मिलने लगा, जो ब्रह्म के साक्षात्कार से मिलता था।

राम का पश्चात्ताप

सीता को त्याग देने पर राम का मन उचाट हो गया। उनको एक अभाव का अनुभव होने लगा। वह यंत्रवत राज्य कार्य करते थे पर मन किसी में न लगता था। वह अधिक समय चुप रहते। केवल आवश्यकता पड़ने पर गिने चुने शब्दों में बोलते। उनके प्रत्येक कार्य से संयम झलकता था। सीता की स्मृति उनके हृदय-पटल से विलीन न होती। सीता अपहरण के समय तो उन्हें रावण पर क्रोध आता था। उसके प्रतिकार के लिए वह लक्ष्मण से प्रायः कहा करते थे। मंत्रियों से परामर्श करते, लंका पर आक्रमण करने की योजनाएं बनाते तथा सीता को फिर पाने की आशा रखते थे। अब तो दोष अपना ही था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वह सबके सामने खुल कर रो भी न सकते थे। वे एकान्त में बैठते, सीता के गुण गाते और अपने को धिक्कारते--मैंने अयोध्या का राज्य नाहक लिया। यदि मैं राजाधिराज न होकर साधारण नागरिक होता तो मान-सम्मान की इतनी भावना न होती और लोकापवाद की चिंता न होती। संसार में जो जितना बड़ा है, उसे उतने ही महान कष्ट है। वह जानते थे कि सीता निष्कलंक है। उन्हें त्याग कर सीता के प्रति अन्याय हुआ। उन्हें यह सोच-सोच कर महान वेदना होती पर किसीसे कुछ कह न सकते थे। सीता परित्याग की अग्नि उनके मन में सुलगती ही रहती थी।

राम की यह दशा नगर-वासियों से छिपी न रह सकी। वे परम दुखी हुए। उन्हें राम से सहानुभूति थी। पर वे क्या कर सकते थे? राम से कहने का किसी को साहस न होता था। वह अपने मनोभाव जताना भी न चाहते थे। जब राम उनसे मिलते तो ऐसे मुस्कुरा देते मानो कुछ हुआ ही नहीं। सब लोग यही कहते कि राम महान पुरुष हैं। उनमें अमित धैर्य है। वे सहिष्णुता की मूर्ति हैं। हाँ, वे लोग उस धोबी को अवश्य गालियाँ देते, जिसके कहने से यह महान त्रासदी घटी थी। वह भी अपनी करनी पर लज्जित था। यहीं पर मनुष्य को कहना पड़ता है कि हमारे सौभाग्य और दुर्भाग्य का निर्माण किसी अदृष्ट शक्ति द्वारा होता है। उस पर अपना वश नहीं।

रामाश्वमेध

एक दिन राम ने भाइयों को बुलाकर कहा कि सीता परित्याग के पाप से मुक्त होने के लिए मैं राजसूय यज्ञ करना चाहता हूँ। हमारे पूर्वज इस प्रकार के अनेक यज्ञ करते रहे हैं। सरयूतट पर खड़े स्तूप आज भी उनकी कीर्ति गाथा गा रहे हैं।

लक्ष्मण ने कहा कि राजसूय यज्ञ में अनेक राजाओं से युद्ध करना पड़ता है। व्यर्थ नरसंहार होता है। वह किस लिए? केवल नाम के लिए। आपका नाम संसार में यों ही विख्यात है। रावण और बाली जैसे वीरों पर जो विजय मिली है, वह क्या कम है? मेरी समझ में यदि अश्वमेध का अनुष्ठान किया जाय तो अच्छा है। अनेक राजा हमारे अधीन हैं। हमारा कोई शत्रु नहीं। यदि कोई विरोध करेगा तो उसे हम पराजित कर लेंगे। भरत और शत्रुघ्न ने भी लक्ष्मण की बात का समर्थन किया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महाराज ने गुरु वशिष्ठ, वामदेव, जाबालि आदि ऋषियों को बुलाया और अपना विचार प्रकट किया। ऋषियों और पण्डितों की सम्मति से यज्ञ की सामग्री जुटायी गयी। जब यज्ञ की तैयारी होने लगी तो वशिष्ठ जी ने कहा—

यज्ञादि शुभ कर्मों के विधान में पत्नी का होना शास्त्र में आवश्यक माना गया है। अर्द्धांगिनी के बिना यज्ञ निष्फल है। पर सीता कहाँ मिलें और उन्हें कौन लेने जाय ? पता नहीं कि वह जीवित हैं या नहीं ! कुछ पण्डितों ने दूसरा विवाह करने की सलाह दी। किंतु राम ने उसे अस्वीकार कर दिया। उन्होंने कहा कि विवाह केवल एक होता है। यदि स्त्री के लिए पातिव्रत का विधान है, तो पुरुष को भी एक पत्नी-व्रती होना चहिए। दोनों के लिए नियम एक होना चाहिए। मैं दोहरी आचरण संहिता का विरोधी हूँ। जो लोग अनेक विवाह कर लेते हैं, उनके घर में कभी शान्ति नहीं रहती। इससे अनाचार, ईर्ष्या-द्वेष आदि दुर्भावनाएँ पनपती हैं। अन्त में निश्चित हुआ कि सीता की सोने की प्रतिमा बनायी जाय। यज्ञ के समय वही सिंहासन पर प्रतिष्ठित कर दी जाय। इससे काम चल सकता है। राम ने यह बात मान ली। एक स्वर्णकार ने सोने की वैसी ही प्रतिमा गढ़ दी जैसी कि सीता थीं। मूर्ति देखने से ऐसा जान पड़ता था मानो बोलना ही चाहती हो।

यज्ञ का समारम्भ हुआ। सीता की सुवर्ण प्रतिमा सिंहासन पर प्रतिष्ठित कर दी गयी। अश्वमेघ का घोड़ा सजा कर लाया गया। उसकी विधिवत पूजा की गयी। फिर वह छोड़ दिया गया। उसकी रक्षा के लिए शत्रुघ्न सेना लेकर चले। घोड़ा स्वछंद गति से कुलाँचें मारता हुआ चल दिया। वह खेतों, खलिहानों, वनों, उपवनों और फुलवाड़ियों को रौंदता चला जा रहा था। उसे रोकने का किसीको साहस न होता। यदि घोड़ा रुक जाता तो सिपाही भी रुक जाते और यदि वह चल देता तो सिपाही भी चल देते थे। वह अनेक राज्यों में घूमता फिरा। वह जिस राज्य से होकर निकलता वहाँ के लोग उसका स्वागत करते तथा शत्रुघ्न को भेंट देते थे। यदि कोई विरोध करता तो उससे लड़ना पड़ता था।

चलते-चलते घोड़ा मधुपुरी पहुँचा। मधुपुरी का राजा लवणासुर था। वह मधु का पुत्र था। मधु का रघुवंशियों से पुराना बैर था। उसकी रानी कुम्भीनसी रावण की बहन थी। राम ने उसकी बहन शूर्पणखा के नाक-कान काट लिये थे। इससे वह चिढ़ा था लवणासुर ने घोड़े को बाँध लिया और सिपाहियों को मार

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कर भगा दिया। उसके त्रिशूल के सामने कोई ठहर न सका। सिपाहियों ने जाकर शत्रुघ्न से सारा हाल बताया। संयोगवश वहीं च्यवन ऋषि का आश्रम था। शत्रुघ्न ने आश्रम में जाकर ऋषि को प्रणाम किया। ऋषि ने उन्हें विश्राम करने के लिए आश्रम में स्थान दिया तथा घायलों की चिकित्सा की। उन्होंने रात में लवण की कथा शत्रुघ्न से बतलायी।

लवण आपके पूर्वजों का वैरी है। आपके पितामह मान्धता थे। वे बड़े बली और पराक्रमी थे। वह देश-देशान्तरों को विजय करने के पश्चात स्वर्ग को भी जीतने जा पहुँचे। इन्द्र ने मान्धाता से कहा—"जब तक आप पृथ्वी के समस्त राजाओं को नहीं जीत लेते तब तक देवताओं के राजा नहीं हो सकते। मान्धाता ने कहा कि पृथ्वी पर ऐसा कौन है, जो मेरा शासन न मानता हो? इन्द्र ने कहा कि मधु का पुत्र लवण ही तुम्हारे वश में नहीं है। राजा लज्जित हो कर लौट आये। उन्होंने दूत द्वारा लवण से कहला भेजा कि मेरी अधीनता स्वीकार करो, नहीं तो युद्ध के लिए तैयार हो जाओ। लवण ने दूत को मार डाला। इससे मान्धाता क्रुद्ध हो गये। उन्होंने मधुपुरी पर चढ़ायी कर दी। लवण ने उन्हें भी मय सेना के मार डाला। जब तक उसके हाथ में त्रिशूल है तब तक उसे कोई नहीं मार सकता। यह त्रिशूल उसके पिता को बड़ी तपस्या के बाद शंकर ने दिया था। लवण उसे सदा अपने पास रखता है। वह केवल प्रातःकाल शौचादि या वायुसेवन के समय उसे नहीं धारण करता। उसी समय वन से लौटते हुए तुम उसे मार सकते हो।

शत्रुघ्न अगले दिन नगर के तोरण द्वार पर जा पहुंचे। दिन चढ़ने पर लवणासुर शिकार लादे हुए यमुना पार से लौटा। शत्रुघ्न ने उसे ललकारा। उसने शिकार फेंक दिया और शत्रुघ्न पर गदा फेंक कर मारी। शत्रुघ्न ने उसके वार को बचा लिया। फिर वह बाण चलाया जो राम ने दिया था। बाण छाती में लगा। वह घायल होकर गिर पड़ा। सिपाहियों ने विजय का शंखनाद किया और घोड़ा लेकर चल दिये।

वाल्मीकि आश्रम और लव-कुश

मधुपुरी से कूदता-फाँदता घोड़ा वाल्मीकि आश्रम पहुँचा। लव ने उसे चरते देख कर भाई से पूछा कि यह कौन-पशु है? कुश ने कहा कि क्या तुमने नहीं पढ़ा कि लम्बी गर्दन, कंधे पर बाल, खड़े कान, शृंग विहीन और गुच्छेदार

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पूंछ वाला चतुष्पद अश्व होता है। आओ, इस पर सवारी करें। दोनों ने पास जाकर उसकी पीठ थपथपायी। घोड़े ने गर्दन झुकाली। उन्होंने देखा कि उसके मस्तक पर स्वर्णपट्ट लटक रहा है। उसमें लिखा था कि कौसल्या के वीर पुत्र श्रीरामचन्द्र हैं। उन्हीं ने यह घोड़ा छोड़ा है।

लव–इसके क्या अर्थ हैं ?

कुश–इसका अर्थ यह है कि रामचन्द्र ने अश्वमेध किया है। वह वीर पुत्र हैं। वीर शिरोमणि हैं। यदि कोई अपने को वीर समझता हो तो इसे पकड़े।

लव–तो क्या हम लोग वीर नहीं हैं ?

कुश–क्यों नहीं ?

लव–तो भैया ! मैं इसे पकड़ कर बटवृक्ष की जड़ से बाँधे देता हूँ। देखता हूँ, इसे कौन छुड़ा कर ले जाता है ?

एक सिपाही–अरे बालक ! इस घोड़े को छोड़ दो। हम तुम्हें चढ़ने के लिए दूसरा घोड़ा देंगे।

लव–हम इसी पर चढ़ेंगे, दूसरे पर नहीं।

दूसरा सिपाही–यह महाराज रामचन्द्र का अश्व है। यह यज्ञ का घोड़ा है। इसे पकड़ने वाले को हमें दण्ड देना पड़ता है।

कुश–यह समझ कर ही हमने घोड़ा बाँधा है। इसके मस्तक पर जो कुछ लिखा है, उससे वीरों का अपमान होता है। क्या राम की माँ ने ही उन्हें दूध पिलाया है ? क्या हमने अपनी माँ का दूध नहीं पिया ?

सिपाही–तुम बालक हो। इसीलिए समझाते हैं। हम तुम्हें क्या दण्ड दें ?

लव–हमें बालक न समझना हम छोटे हैं पर लोहे के चने हैं। यदि साहस न हो तो अपने मालिक को बुला लाओ।

कालजित सेनापति ने जो दोनों बालकों की बातें सुनी तो दंग रह गया। उसने सिपाहियों से कहा कि इन पर अस्त्र न चलाओ। केवल इन्हें पकड़ कर ले चलो।

कुश–खबरदार ! दूर रहना, नहीं तो तीरों से सबको छेद देंगे।

सिपाहियों ने उनकी बात पर ध्यान न दिया। वे ज्यों ही आगे बढ़े त्यों ही दोनों बाणवृष्टि करने लगे। सेना के पैर उखड़ गये। जब शत्रुघ्न पहुँचे, तो उन्हें भी आहत कर दिया। सेनापति का उनसे लड़ने का साहस न हुआ।

लव-कुश से पराजित होकर कायर सिपाही भागकर अयोध्या पहुँचे। उन्होंने

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सारा हाल महाराज से कह सुनाया। राम ने हनुमान और लक्ष्मण को दल-बल के साथ चेतावनी देकर भेजा कि बालकों को समझा बुझाकर घोड़ा ले आओ। यदि न मानें तो उन्हें पकड़ कर लाओ। हम भी देखना चाहते हैं कि वे दोनों वीर कौन हैं ?

लक्ष्मण ने आश्रम में जाकर लव-कुश को देखा। उनकी मुखाकृति में भैया और भाभी की झलक मिली। रंग भी वही। रूप भी वही। उनसे कुछ कहने-सुनते न बना। यह वही स्थान था, जहाँ वह सीता को छोड़ गये थे। यह वही बट-वृक्ष था, जिसकी छाया में रथ रोका था। वह असमंजस में पड़ मौन हो गये।

हनुमान ने कहा कि बच्चे ! घोड़ा छोड़ दो, नहीं तो हम तुम्हें अपनी पूंछ से बाँध लेंगे।

लव—हम अक्षयकुमार नहीं है, जिसे तुमने लांगूल में लपेट कर पटक दिया था। कदाचित तुम्हें अपनी पूंछ से लंका जलाने का अभिमान होगा ! लंका तो जानकी के शाप से जली थी। तुममें क्या शक्ति जो हमसे लड़ो। हमारा युद्ध सेवकों से नहीं है। अपने स्वामी को बुला लाओ। हम भी देखें कि वे कितने वीर हैं ? हनुमान ने विचार किया कि बालक ठीक कहते हैं। छोटों से लड़ने में बड़ों की क्या शोभा ? हारने पर अपयश और जीतने पर निंदा। ऐसा समझ वह भी चुप हो गये।

हनुमान और लक्ष्मण को चुप देख सैनिको ने कोलाहल मचाया। स्वामी की आज्ञा है कि दोनों बालको को बाँध लो। कहीं भागने न पावें। सैनिकों को आँधी की तरह बढ़ते देख दोनों वीर धनुष-बाण लेकर खड़े हो गये। उन्होंने जृम्भकास्त्र का स्मरण किया। मंत्र पढ़ते ही आकाश में अन्धकार छा गया। उसमें विजली की तरह अस्त्र चमकने लगे। ऐसा जान पड़ा कि आकाश में अनेक धूमकेतु उदय हो गये हों। उनका प्रयोग विद्युत की भाँति हो गया। सारी सेना मूर्छित हो कर गिर पड़ी।

जो सिपाही दूर खड़े तमाशा देख रहे थे, वे भाग कर अयोध्या पहुँचे। उन्होंने सारी घटना कह सुनायी। रामचन्द्र यह सुनकर आश्चर्य में पड़ गये। वह सोचने लगे कि दिव्यास्त्रों का प्रयोग करने वाले हमारे ही पुत्र हो सकते हैं। ये अस्त्र विश्वामित्र जी ने मुझे दिये थे। विश्वामित्र को उनके गुरु कृशाश्व से मिले थे। अन्य कोई व्यक्ति इनके सम्बन्ध में कुछ नहीं जानता। हाँ, स्मरण आता है कि सीता ने राजभवन में चित्र देखते समय अभिलाषा व्यक्त की थी कि

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वे दिव्यास्त्र हमारी संतान को मिलें। सीता का परित्याग किये पन्द्रह वर्ष हो गये। उनकी आयु का अनुमान भी सिपाही यही लगाते हैं। कदाचित वाल्मीकि आश्रम में सीता ने पुत्रों को जन्म दिया है। ठीक है, गुरु शिष्य से और पिता पुत्र से ही पराजित होता है। यह मेरे लिए अपमान नहीं, वरन गौरव का विषय है। ऐसा विचार करते ही पुत्रों को देखने की लालसा बलवती हो गयी। उन्होंने भरत तथा सुमंत से वहीं चलने को कहा।

सुमंत को वाल्मीकि आश्रम पहुँचने में देर न लगी। उन्होंने देखा कि सारी सेना ऐसे पड़ी है मानो सो रही हो। अश्व वृक्ष की जड़ से बँधा था। यह बाल्मीकि मुनि का ही आश्रम था।

राम के आने का समाचार पाकर दोनों वीर कुटी के बाहर आये और धनुष-बाण तानकर खड़े हो गये। राम ने हंसों की सी जो युगुल जोड़ी देखी तो उनका संदेह जाता रहा। उनके हृदय में वात्सल्य भाव उमड़ पड़ा। उनका धनुष-वाण हाथ से छूट कर गिर पड़ा। वह अचेत हो गये। लव-कुश ने उनके मुकुट उतार लिए और जाकर माँ के चरणों में चढ़ा दिये।

सीता ने रघुवंश के राजमुकुट पहचाने। उन्होंने दोनों हाथों से अपना सिर पीट लिया और कहा—हाय! तुमने मुझे विधवा कर डाला। ये तो स्वामी के मुकुट हैं। हाय! मैं पतिघातनी हुई। दुनिया न जाने क्या कहेगी? हे अन्तर्यामी! यदि राम के सिवाय मैंने किसी पुरुष का स्वप्न में भी ध्यान न किया हो; यदि मनसा, वाचा और कर्मणा से पातिव्रत में मेरी अचल निष्ठा हो तो सारी सेना जीवित हो उठे। सीता के ऐसा कहते ही सारे वीर उठ पड़े।

महर्षि वाल्मीकि जो कहीं तीर्थ-यात्रा पर बाहर गये थे, उसी समय आ पहुँचे। राम ने उन्हें दण्ड प्रणाम किया। महर्षि ने आशीर्वाद दिया। फिर वह राम को आश्रम में ले गये और यथोचित सत्कार किया। रामचन्द्र महर्षि के सामने बच्चों की तरह खड़े थे। उनकी दृष्टि नीची थी। आँखों से पश्चाताप के आँसू बह रहे थे। महर्षि ने राम की दशा देखी तो उनके हृदय का सारा रोष जाता रहा। उन्होंने कहा:—

राजन! जो होना था सो हुआ। इसमें किसी का वश नहीं। मैं जानता हूँ कि तुमने सीता का परित्याग अपने सुख के लिए नहीं किया। तुमने सीता को नहीं वरन् अपना हृदय ही निकाल दिया। तुमने जो कुछ किया, वह अन्य कोई नहीं कर सकता। आपने एक आदर्श पुरुष के अनुरूप ही किया। ये लव और कुश

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सीता की संतान हैं। सीता ने इन्हें इसी आश्रम में जन्म दिया। अब तक मैंने इनकी देख-भाल की। अब इन्हें ले जा सकते हो। फिर उन्होंने लव और कुश से राम को प्रणाम करने के लिए कहा और बताया कि यही राघवेन्द्र तुम्हारे पिता हैं। मैं तो केवल पोषक था।

राम ने दोनों बालकों को छाती से लगा लिया और परम सुखी हुए। उनकी आँखों से प्रेमाश्रु गिरने लने। कण्ठ वाष्प-गदगद हो गया। थोड़ी देर के लिए वे आत्म विभोर हो गये। फिर हाथ जोड़ कर वाल्मीकि से कहा—

मुनिवर! आप त्रिकालज्ञ हैं। आप जानते हैं कि किस परिस्थिति में मुझे कब क्या करना पड़ा? सीता के निष्पाप होने में मुझे किंचित सन्देह न था। अग्नि-परीक्षा करके मैंने लोगों का भ्रम दूर कर दिया था। केवल लोक-निंदा के भय से सीता को त्यागना पड़ा। आपने मेरे ऊपर बड़ी कृपा की जो इनका पालन-पोषण किया। आप दयालु हैं। आप धन्य हैं! मैं आपके उपकार को जन्म-जन्मान्तर नहीं भूल सकता। ऋषिवर! आप मुझे क्षमा करें। अब आप जो आज्ञा दें, मुझे वही स्वीकार है।

महर्षि ने सीता को बुला कर कहा—बेटी! ये तुम्हारे स्वामी हैं। तुम्हारा इनका सम्बन्ध जन्म-जन्मान्तर का है। यदि ये दिवा हैं तो तुम द्यौ हो; यह नारायण हैं तो तुम लक्ष्मी हो; यदि यह ब्रह्म हैं तो तुम इनकी माया हो, यह राम हैं, जो तुम्हीं में रमण करते हैं। तुम इनसे कभी भिन्न नहीं, इन्होंने तुम्हें शरीर से परित्याग किया पर मन से नहीं। इन्होंने भूल की। इसका इन्हें महान पश्चात्ताप है। तुमने महान कष्ट उठाये। अपने असीम सहन शक्ति का परिचय दिया। तुममें धैर्य गुण की विशेषता है। इसीलिए लोग तुम्हें धरती की पुत्री कहते हैं। अब तुम इनके साथ जा सकती हो और इनके हृदय का भार हलका कर सकती हो।

सीता ने कहा—महात्मन्! आप ठीक कहते हैं। पर मेरे धैर्य बँधाने वाले तो आप ही हैं। स्वामी को क्षमा करना मेरे धर्म के विपरीत है। यह तो राजा हैं। इन्होंने वही किया, जो राजा को करना चाहिए। मैं भी वही करूँगी जो नारी को करना चाहिए। नर और नारी के अधिकार समान हैं। वे प्रेम पर आधारित हैं। यदि पुरुष स्त्री को छोड़ सकता है, तो स्त्री भी पुरुष को छोड़ सकती है। हाँ इस संसार में पुरुष तो एकाकी रह सकता है, पर स्त्री को लोग जीने नहीं देते। अतः मेरे लिए अब मृत्यु ही श्रेयस्कर है। माँ बसुन्धरे! अपनी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
गोद में मुझे आश्रय दो। मुझे अपने अंचल में छिपा लो, जिससे मेरा मुख कोई न देख सके। मुझे इस दुनिया से घृणा हो गयी है।

सीता के ऐसा कहने पर भूमि में दरार पड़ गयी। सीता उसी में समा गयीं। लोग खड़े-खड़े मूर्तिवत देखते रहे। राम पकड़ने दौड़े तो सीता ने कहा—इस जन्म में मैं तुम्हें मिलने की नहीं। अब अगले जन्म में भेंट होगी। तुम्हें राज्य प्रिय है। तुम इसका सुख भोगो। राम यह देख स्तम्भित रह गये। वाल्मीकिजी ने कहा कि ईश्वर की लीला विचित्र है!

राम अपने पुत्रों तथा अश्व को लेकर लौट आये। जब लोगों ने यह समाचार पाया तो हर्ष से विह्वल हो उठे। माताओं ने बच्चों को गले लगाया। हर्षातिरेक से कौसल्या का वक्षस्थल फूल उठा। उनके स्तनों में दूध भर आया। वे बार-बार उनके मुख को देख रही थीं। लव को देख कर उन्हें सीता की उस समय की याद आयी, जब वह ब्याह कर आयी थीं। वही मुखाकृति झलक रही थी। कुश में वही लावण्य था, जो राम में उस समय था, जब वह विश्वामित्र के साथ गये थे। उन्हें खेद था कि बहू सीता नहीं लौटीं।

महाराज ने गुरु से पूछा कि अब क्या होना चाहिए? वशिष्ठ जी ने अन्य ऋषियों की सम्मति लेकर कहा कि यज्ञ पूर्ण हो गया। पूर्णाहुति हो जानी चाहिए। महाराज रामचन्द्र ऋषि-मण्डली के साथ घोड़े को लेकर सरयूतट पहुँचे। वशिष्ठ जी ने वेदमंत्रों से जल अभिमंत्रित किया। फिर उस जल को चौंसठ घड़ों में भर कर घोड़े को नहलाया गया। राम ने अभिमंत्रित खड्ग से अश्व का बलिदान कर दिया। वह स्वर्गधाम को चला गया। सौभाग्यवती नारियों ने राजा रामचन्द्र का अभिषेक कराया। सभी मुनिगणों तथा अभ्यागतों ने महाराज को आशीष दी। महाराज ने सभी अभ्यागतों का यथोचित सम्मान किया। उन्हें दान-मान से संतुष्ट किया। ब्राह्मणों, अंधे, लूले-लगड़ों एवं निर्धनों को भोजन कराया और उन्हें दक्षिणा देकर विदा किया। इस प्रकार धूम-धाम से यज्ञ समाप्त हुआ।

लक्ष्मण का काल

एक दिन राम—लक्ष्मण राज-भवन में बैठे बातचीत कर रहे थे। उसी समय एक तपस्वी राम से मिलने आया। राम ने उसका आदर सत्कार किया और पूछा कि आपके आने का क्या कारण है? उसने कहा—'मुझे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आपसे एकान्त में कुछ परामर्श करना है। राम ने लक्ष्मण से कहा कि तुम द्वार-पाल के साथ जाकर दरवाजे पर खड़े हो जाओ। भीतर किसीको आने न देना। यदि कोई भीतर आया तो उसे मृत्यु दण्ड मिलेगा। एकान्त पाकर तपस्वी ने कहा—मुझे ब्रह्मा ने आपके पास भेजा है। आपके नर अवतार का कार्य समाप्त हो गया। अब अपने लोक की देख-रेख कीजिए। राम ने कहा कि मैं भी यही सोच रहा था। मनुष्य मरणशील प्राणी है। उसे एक दिन अवश्य मरना है। मैंने भी जन्म लिया है, अतः शरीर त्याग करना आवश्यक है।

तपस्वी और राम में जब बात हो ही रही थी, उसी समय दुर्वासा ऋषि आ पहुँचे। उन्होंने कहा मुझे राम से मिलना है। मेरे आने की सूचना उन्हें शीघ्र दो। लक्ष्मण ने कहा—महाराज एकान्त में एक तपस्वी से संलाप कर रहे हैं। इस समय कोई अन्दर नहीं जा सकता। आप थोड़ी देर प्रतीक्षा करें। दुर्वासा ऋषि ने कहा—अरे! वह तपस्वी नहीं वरन उनका काल है। मुझे जल्दी उनसे भेंट कराओ। यदि तुम सूचना न दोगे, तो मैं तुम्हें शाप दे दूँगा। लक्ष्मण असमंजस में पड़ गये। यदि मैं अन्दर जाता हूँ, तो राजा की आज्ञा का उल्लंघन होता है और यदि नहीं जाता तो दुर्वासा मुझे शाप देकर भस्म कर देंगे। यदि भाई का काल आया है तो मेरा भी आ गया। अतः उन्होंने भीतर जाकर राम को सूचना दी कि महर्षि दुर्वासा आपसे मिलने आये हैं। यह सुनकर राम ने काल को विदा कर दिया और स्वयं दुर्वासा से मिलने आये। दुर्वासा ने कहा कि आज मेरे हजार वर्ष का तप पूरा हो गया। मैंने देखा कि काल आपके पास आ रहा है। मैंने जल्दी की कि आपको इसकी सूचना दे दूँ। पर वह आ ही गया। मृत्यु अवश्यम्भावी है। ऐसा कह कर वह चले गये।

दुर्वासा के चले जाने पर रामचन्द्र बड़े उदास हो गये। उन्हें दुखी देख कर लक्ष्मण ने कहा—आप मेरे लिए शोक न करें। मुझे अवश्य दण्ड दीजिए। यदि आप प्रतिज्ञा का पालन न करेंगे तो नरक जायेंगे। भाई की बातें सुनकर राम ने मंत्रियों, और पुरोहितों को बुलाया तथा सारा वृत्तान्त कह सुनाया।

वशिष्ठ जी ने कहा—आपके कुल का क्षय निश्चित है। काल बड़ा प्रबल है। उसे कोई टाल नहीं सकता। आप लक्ष्मण का त्याग कर दीजिए। उनके लिए यही सबसे बड़ा दण्ड है। राम ने लक्ष्मण से कहा-भाई! धर्म की रक्षा करने के लिए मुझे तुमको छोड़ना पड़ रहा है। मैं विवश हूँ।

राम के ऐसा कहने पर शोक से विह्वल लक्ष्मण सीधे सरयू तट पर जा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
पहुँचे। उन्होंने आचमन करके सरयू में समाधि ले ली। उनके मुख से श्वास निकली और नाग रूप से सरयू में विलीन हो गयी।

राम का परम धाम गमन

लक्ष्मण का परित्याग कर देने से रामचन्द्र को महान शोक हुआ। उन्हें अपना जीवन भार लगने लगा। उन्होंने भरत को बुला कर कहा कि अब मैं शरीर त्याग करना चाहता हूँ। मुझे किसीको अवध का उत्तराधिकारी बनाना है। मेरी इच्छा है कि तुम्हारा राज्याभिषेक कर दूँ। किन्तु भरत ने हाथ जोड़ कर कहा—मैं आपके बिना कैसे जीवन धारण कर सकता हूँ! लव और कुश अब सुयोग्य हो गये हैं। उन्हीं का राजतिलक किया जाये!

महाराज रामचन्द्र ने मंत्रियों, सचिवों ब्राह्मणों और कुल गुरु को बुलाया। उनके समक्ष अपना प्रस्ताव रख दिया। उस सभा में निश्चय किया गया कि कोसल देश की राजधानी कुशावती में कुश का और श्रावस्तीपुरी में लव का राज्याभिषेक हो। शत्रुघ्न के पुत्र सुबाहु को मथुरा का और शत्रुघाती को विदिशा का राज्य दिया गया। भरत के पुत्र तक्ष को तक्षशिला का तथा पुष्कल को पुष्कल का राजा बनाया गया। लक्ष्मण के पुत्र चन्द्रकेतु को कारुपथ का राजा घोषित किया गया। इस प्रकार राज्य का विभाजन कर और उनमें सुयोग्य व्यक्तियों को बिठा कर आन्तरिक झंझटों से छुटकारा पाया।

रामचन्द्र के स्वर्गारोहण का समाचार पाकर सारे रीछ-वानर तथा अनेक नायक आ पहुँचे। वे सभी स्वर्ग जाने को तैयार हो गये। राम ने विभीषण से कहा कि तुम लंका में धर्म से कल्पान्त राज्य करो। सुग्रीव ने अंगद को किष्किन्धा का राजा बना दिया। विभीषण ने राम की आज्ञा शिरोधार्य की। राम ने हनुमान से कहा—तुम अयोध्या के कोतवाल हो। मेरे बाद तुम्हें इसकी रक्षा करनी चाहिए। तुम इस पृथ्वी पर तब तक रहो, जब तक भक्ति रहे। महाप्रलय के अन्त में सर्वनाश होने पर दिव्यलोक को आना। तुम चिरंजीवी हो। फिर राम ने प्रजाजनों से पूछा—तुम क्या चाहते हो? मैं तुम्हारी क्या सेवा करूँ? राम के वचन सुनकर नगर निवासियों ने कहा—हम तो आपके साथ आये थे और आप ही के साथ परम धाम जायँगे। प्रभु ने कहा—एवमस्तु।

अगले दिन प्रातःकाल राम रेशमी वस्त्र धारण कर ब्राह्मणों के साथ वेदमंत्रों का उच्चारण करते हुए सरयू की ओर चले। उनके साथ वेद, गायत्री, ओंकार

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आदि भी शरीर धारण कर चले। उनके पीछे सारी प्रजा, बानर और रीछ प्रसन्न होकर चले।

रामचन्द्र के सरयू तट (स्वर्ग द्वार) पहुँचने पर देवता आकाश से पुष्प बरसाने और नगाड़े बजाने लगे। ब्रह्माजी ने कहा—हम देवतागण आपका स्वागत करते हैं। ब्रह्मवाणी सुन कर भगवान रामचन्द्र अपने भाइयों और प्रजा-जन समेत अन्तर्धान हो गये। बानर और रीछ जिन देवताओं के अंश से उन्पन्न हुए थे, उन्हीं में लीन हो गये। रामचन्द्र के परम धाम गमन करने पर वहाँ के पशु-पक्षी भी स्वर्गधाम चले गये। अगले कई वर्षों तक लगातार सरयू में भयंकर बाढ़ें आयी जिससे अयोध्या नगरी भी बह गयी। उसका कोई चिह्न शेष न रहा। वर्तमान अयोध्या की खोज महाराज विक्रमादित्य ने पण्डितों और प्राचीन पुस्तकों के आधार पर करायी। प्राचीन स्थानों पर नवीन मंदिरों की स्थापना हुई।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh